अवधी ग्रन्थावली

खण्ड - एक

सम्पादक

जगदीश पीयूष

अवधी ग्रन्थावली

खण्ड - एक

सम्पादक

जगदीश पीयूष

अवधी ग्रन्थावली खण्ड-1

(लोक-साहित्य-खण्ड)
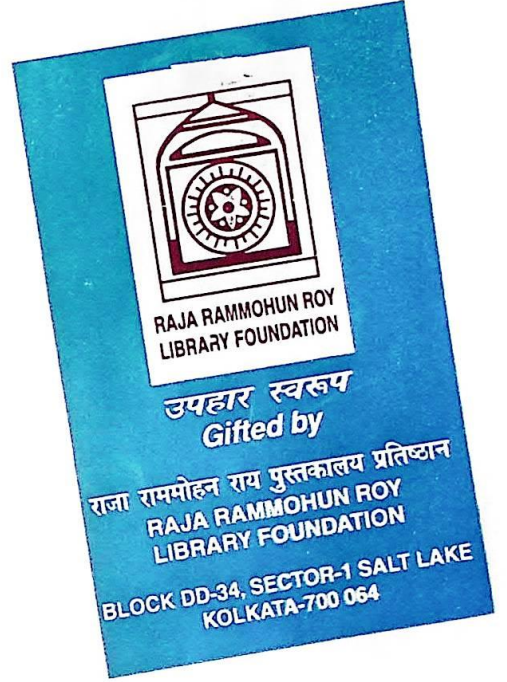
अवधी ग्रन्थावली

खण्ड-1

(लोक-साहित्य-खण्ड)

सम्पादक
जगदीश पीयूष

वाणी प्रकाशन

वाणी प्रकाशन

ज्ञान के विविध आयामों के प्रकाशक

वाणी प्रकाशन का 'लोगो' विख्यात चित्रकार मक़बूल फ़िदा हुसेन की कूची से

वाणी प्रकाशन, 4695, 21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
वाणी प्रकाशन, अशोक राजपथ (पटना कॉलेज के सामने), पटना (बिहार)

AWADHI GRANTHAWALI-1

Edited by Jagdish Peeyush

An Anthology of Awadhi traditional and modern literature

ISBN : 978-81-8143-900-0

अवधी ग्रन्थावली

भाग-1

(लोक-साहित्य-खण्ड)

●

डॉ. विद्याविन्दु सिंह

अध्यक्ष : **सम्पादक मण्डल**

●

डॉ. रामबहादुर मिश्र

संयोजक : **सम्पादक मण्डल**

●

सम्पादक मण्डल

- डॉ. जय सिंह व्यथित
- डॉ. हरिशंकर मिश्र
- डॉ. चम्पा श्रीवास्तव
- कमल नयन पाण्डेय
- डॉ. राधेश्याम सिंह
- डॉ. राधा पाण्डेय
- डॉ. सिया राम
- डॉ. मुहम्मद अखलाक
- अनुराग आग्नेय
- डॉ. परेश पाण्डेय

सम्पादक

जगदीश पीयूष

सम्पादकीय

अवधी साहित्य/संस्कृति की विलुप्त होती जा रही अकूत सम्पदा बटोर लेने की ललक मेरे मन में सन् 1970 से है इसकी घोषणा हमने 1973 में प्रकाशित 'नीराजना' कविता संग्रह में की थी, जिसकी भूमिका हिन्दी कविता के हिमालय पं. सुमित्रानन्दन पन्त ने लिखी थी, इसी वर्ष हमने लोक साहित्य के उद्धारक पं. रामनरेश त्रिपाठी पर एक पुस्तक 'रामनरेश त्रिपाठी : एक युग एक व्यक्ति' सम्पादित की जिसमें लोक साहित्य के कार्य पर विस्तार से जानकारी मिली। लोकमेधा के वरिष्ठ कथाकार श्री मार्कण्डेय, अवधी अध्येता श्री श्रीकृष्ण दास जी व डॉ. मत्स्येन्द्र शुक्ल आदि की प्रेरणा से मैंने 1976 में लोकायतन शोध पत्रिका का सम्पादन/प्रकाशन किया, जिसके दो अंक प्रकाशित हुए और लोक साहित्य के हस्ताक्षर लेखक/पत्रकार पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, राजस्थान के डॉ. महेन्द्र भानावत आदि ने मुझे अवधी पर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया।

लोक साहित्य के मनीषियों की प्रेरणा से मैंने 1976 में **'अवधी अकादमी'** संस्था का गठन किया और 1978 में अवधी के प्राण कवि सन्त मलिक मुहम्मद जायसी की मजार पर अमेठी में एक आयोजन किया, जिसमें रामकथा के वरिष्ठ पत्रकार लेखक श्री लल्लन प्रसाद व्यास का हमें बहुत ही सहयोग मिला। डॉ. भगवती प्रसाद सिंह, डॉ. रमाशंकर तिवारी, डॉ. जगदीश गुप्त, कथाकार शैलेश मटियानी, डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र की अधिवेशन स्थल की स्मृतियां आज भी ताजा लगती हैं। वरिष्ठ साहित्यकार श्री मार्कण्डेय, श्री रवीन्द्र कालिया, सुश्री ममता कालिया, सहित सौ से अधिक लेखकों/ कवियों, समीक्षकों ने महाकवि की मजार पर पहुंच कर अवधी भाषा के मूल्यांकन और संरक्षण पर तीन दिन तक विमर्श किया। श्री लल्लनप्रसाद व्यास के साथ मैं तत्कालीन कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री वी.डी.जत्ती, प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई, बाबू जगजीवन राम आदि राजनेताओं से भी मिला। बाबू जगजीवन राम ने हमें खूब प्रोत्साहित किया और अधिवेशन का उद्‌घाटन करने का निमंत्रण सहर्ष स्वीकार किया, उनका करकारी कार्यक्रम घोषित भी हो गया, परन्तु तत्कालीन अमेठी के सांसद के विरोध के कारण उन्हें कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। यह भी बड़ी बात हुयी कि तब अधिवेशन का उद्‌घाटन अवधी के लिये सक्रिय जनपद सीतापुर के नैमिषारण्य तीर्थ के महामण्डलेश्वर स्वामी नारदानन्द जी महाराज ने किया और कहा कि जायसी सन्त थे, वे चाहे हिन्दू हों या मुसलमान। सन्तों की जाति धर्म सिर्फ सन्त होना ही है। इस अवधी महाकुम्भ में मारीशस के श्री सुरेश रामवरण ने भी भाग लिया था। इसी अवसर पर प्रकाशित **अवधी स्मारिका** जिसे बाद में **अवधी साहित्य : सर्वेक्षण और समीक्षा** नाम से जारी किया गया। सम्भवतः पहली बार विश्वविद्यालयों में अवधी अध्ययन की ओर विद्वानों का ध्यान खींचा। लखनऊ तथा अवध विश्वविद्यालय में यह पुस्तक सन्दर्भ ग्रन्थ के रूप में स्वीकृत की गई।

अवधी अकादमी का दूसरा अधिवेशन बहराइच में हुआ जिसमें आधुनिक अवधी के श्रेष्ठ कवियों

पं. वंशीधर शुक्ल, गुरुप्रसाद सिंह मृगेश, डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र मधुप, पारस भ्रमर, जुमई खां आजाद, आद्या प्रसाद उन्मत्त, रूपनारायण त्रिपाठी आदि को सम्मानित किया गया। अवधी कवि सम्मेलन और श्रावस्ती में विचार गोष्ठी हुयी, जिसमें अनेक प्रस्ताव पारित किये गये। मात्र दो वर्षों की उत्सवधर्मिता ने अवधी प्रेमियों को सोते से जगाया, उसके बाद तो अवधी साहित्य को आगे लाने में अनेक विद्वान सक्रिय हुए। प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने तो सर्वाधिक ठोस कार्य किया और लखनऊ विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में अवधी को जोड़ा, डॉ. रामशंकर त्रिपाठी, डॉ. राधिका प्रसाद त्रिपाठी, डॉ. जनार्दन उपाध्याय आदि के प्रयत्न से अवध विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में अवधी को स्थान मिला, कानपुर विश्वविद्यालय में भी अवधी आयी। अनेकों शोध कार्य हुए।

आज अवधी अध्ययन के लिए सर्वाधिक आधारभूत कार्य डॉ. बाबूराम सक्सेना का शोध ग्रन्थ **अवधी का विकास** है, सक्सेना जी ने जमीनी स्तर अवधी के विकास क्रम को रेखांकित किया। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी का शोध ग्रन्थ प्रारम्भिक अवधी पर है। त्रिपाठी जी ने काफी प्राचीन अवधी पाण्डुलिपियों पुस्तकों को खोज निकाला। बाबा पुरुषोत्तम दास के जैमिनी अश्व मेघ भाषा पर सर्वप्रथम उन्होंने ही लिखा। अवधी लोकगीतों पर डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय का पहले से सामने था। डॉ. त्रिलोकीनाथ दीक्षित, डॉ. त्रिलोकीनाथ सिंह डॉ. शंकरलाल यादव काफी अरसे से अवधी के लिए कार्य कर रहे थे।

इसी बीच अवधी से सम्बन्धित कई संस्थाएं और कई लोग आगे आये, लखनऊ में अवधी अध्ययन केन्द्र के बहाने प्रकाशित **'बिरवा'** पत्रिका ने आधुनिक अवधी साहित्य पर कई अंक निकाले, फैजाबाद में राजबहादुर द्विवेदी ने नये प्रकाशनों/सम्मेलनों द्वारा एक दशक तक अवधी का डंका पीटा, सीतापुर में डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र मधुप ने अकेले ही कई ग्रन्थों का सम्पादन किया। लखीमपुर में महाकवि पं. वशीधर शुक्ल के सुपुत्र डॉ. सत्यधर शुक्ल प्रति वर्ष सम्मेलन आयोजित करने लगे, एक अच्छा सम्मेलन सुल्तानपुर में डॉ. जयसिंह व्यथित ने कराया, उ.प्र. हिन्दी संस्थान ने जायसी मेला की तर्ज पर जायस में संगोष्ठी करायी और अवधी अकादमी के साथ सुलतानपुर में जायसी पंचशती का आयोजन हुआ। कादीपुर में डॉ. आद्याप्रसाद सिंह प्रदीप ने कई अवधी प्रेमी साहित्यकार पैदा किये और हैदरगढ़ में डॉ. रामबहादुर मिश्र की अनवरत सक्रियता से अवधी कार्यकर्ता एक मंच पर जुटने लगे, उनकी **'अवध ज्योति'** एक मशाल की तरह निरन्तर जल रही है। उन्होंने अवधी त्रिधारा का सम्पादन करके आज की अवधी की नयी त्रयी स्थापित की और गीत गजल तथा विभिन्न विधाओं पर कार्य शुरू किये। श्री सुरेन्द्रनाथ अवस्थी की प्रेरणा से **'यह माटी अवधरानी है'** नामक ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ। अवधी अकादमी ने कभी जायसी, कभी अमेठी, कभी सुल्तानपुर में परिचर्चायें कीं, परन्तु एक बड़ा कार्य हुआ बोली-बानी पत्रिका का प्रकाशन। बोली-बानी ने अवधी पर 12 अंक निकाले जिसमें आधुनिक अवधी के लगभग दो सौ कवियों की रचनाएं सामने आयीं, जौनपुर प्रतापगढ़, फैजाबाद की अवधी पर विशेष अंक आये। लोकगीतों, लोक कथाओं पर अंक निकाले और **अवधी ग्रन्थावली** की भूमिका बनी तथा बड़े पैमाने पर अवधी कार्यकर्ता एक मंच पर आये।

हम साफ तौर पर बताना चाहते हैं कि न तो हम लोक विशेषज्ञ हैं, न ही किसी विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, न शोध छात्र और न ही पं. रामनरेश त्रिपाठी जैसे धुन के पक्के लोकसम्पदा के गुनगायक। लोक साहित्य के अनेक विद्वानों ने अपनी बोलियों के लिए बड़ा कार्य किया है, श्री विजय दान देथा इसके उदाहरण हैं। डॉ. श्याम परमार, देवेन्द्र सत्यार्थी, झवेरी जी, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, पं. बनारसीदास चतुर्वेदी आदि ने भिन्न भिन्न क्षेत्रों में बड़े कार्य किये, परन्तु अवधी में इसके शोध छात्रों ने ही ज्यादा कार्य किया। डॉ. बाबूराम सक्सेना, डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, डॉ. महेश प्रताप

अवस्थी, डॉ. इन्दु प्रकाश पाण्डेय, डॉ. विद्याबिन्दु सिंह को अपने मानक शोध कार्य के कारण अधिक ख्याति मिली। प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने चुन-चुन कर ऐसे विषय स्वीकृत किये कि अवधी के हर अंग पर कुछ कार्य हो जाय, परन्तु मैं इन सब की पंक्ति में बैठने की भी योग्यता नहीं रखता। हां इन सज्जनों ने हमें प्रोत्साहित किया, अपने द्वारा खोजी गई कहानियों, लोकगीतों, कहावतों, लोकोक्तियों को न केवल निस्पृह भाव से प्रकाशित करने को दिया बल्कि 'और लै जाव' की रट लगाये रहे। प्रो. दीक्षित, डॉ. विद्या बिन्दु सिंह, महेश प्रताप अवस्थी, आद्या प्रसाद प्रदीप और भाई रामबहादुर मिश्र ने ऐसा कई बार किया, तभी तो लगभग चार हजार पृष्ठों का अवधी का यह विपुल वैभव आपके सामने है। हम तो अवधी साहित्य माँगते-मँगाते रहे। किसी पत्रिका/अखबार में छपा देखा, झट से सहेज लिया, पुस्तकों में संग्रहीत देखा तो लेखक, सम्पादक से पूछ लिया। इसीलिये अवधी ग्रन्थावली के प्रकाशन का श्रेय उन्हीं मनीषियों को है जो हमें प्रोत्साहन और सहयोग दे रहे हैं। हमने कभी भी किसी सरकार या संस्था से एक पैसा अनुदान नहीं माँगा, ताकि अवधी का वैरागी स्वभाव दीनता न अनुभव करे, जबकि इस सामग्री को कम्प्यूटर में कैद करने में ही काफी खर्च आया, लेकिन सन्तों/सूफी सन्तों की कृपा से अचानक इस ग्रन्थावली को प्रकाशित करने का **'वाणी प्रकाशन'** ने प्रस्ताव किया तो मन को बहुत ही सुख मिला।

अवधी ग्रन्थावली खण्ड-1

अवधी ग्रन्थावली का खण्ड एक वाचिक लोक साहित्य को समर्पित है, कोशिश की गयी है कि लोक गीतों के विभिन्न स्वरूपों की बानगी एक स्थान पर केन्द्रित मिले। जैसे संस्कार गीत, श्रमगीत, जातीय गीत, संतों के गीत, फाग गीत आदि। अवधी क्षेत्र में प्रचलित मुहावरों को भी काफी संख्या में प्रस्तुत किया गया है।

इस खण्ड में लोक साहित्य पर सुधी विद्वानों द्वारा काफी विमर्श प्रस्तुत किया गया है। अवधी के स्वरूप और क्षेत्र की जानकारी दी गई। लोक साहित्य और अवधी साहित्य को लेकर लम्बी भूमिका लिखी गई है, डॉ. बाबूराम सक्सेना, प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित, डॉ. त्रिलोकीनाथ सिंह आदि के आलेख प्रस्तुत खण्ड की उपलब्धि हैं। इस खण्ड के सम्पादक मण्डल की अध्यक्ष हैं डॉ. विद्या बिन्दु सिंह, जिनका साहित्य के क्षेत्र में भी बड़ा काम है, और संयोजन किया है डॉ. रामबहादुर मिश्र ने। प्रस्तुत खण्ड के सम्पादक मण्डल में विद्वान अवधी साहित्य मर्मज्ञों व प्रेमियों का सहयोग मिला है।

यद्यपि अवधी के लोक भण्डार के लिए यह खण्ड लगभग पांच सौ पृष्ठों का ही है जबकि अवधी लोक साहित्य हेतु हजारों पृष्ठों की जरूरत है, जिसे फिर कभी पूरा किया जा सकता है।

हम अपने सभी शुभचिन्तकों सहयोगियों के प्रति आभारी हैं।

—जगदीश पीयूष

अनुक्रम

समीक्षा-खण्ड

अवधी लोक साहित्य की भूमिका

जगदीश पीयूष

युग-युगान्तर से अपनी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा साहित्यिक गौरव-गरिमा के लिए सुविख्यात अवध की धरती अपनी प्रभा से आप ही देदीप्यमान है। इष्ट भक्ति, कर्मभक्ति, लोकभक्ति, सदाचार भक्ति, राष्ट्रभक्ति और उदात्त मूल्यादर्श भक्ति का जैसा मनोहारी-मंगलकारी काव्य-साहित्य कोष अवधी क्षेत्र में काव्यांकित मिलता है वैसा कदाचित् दूसरी हिन्दी उपभाषाओं में उपलब्ध नहीं। सम्भवतः इसीलिए मानसकार तुलसी ने अवध प्रदेश को बैकुण्ठ धाम से भी उत्तम और श्रेष्ठ स्वीकार किया है, जिसका गौरवगान गंगा-यमुना की लोल लहरियों से क्षण-प्रतिक्षण किया जाता है। अवधी इसी अवध-प्रदेश की और उसके आस पास अत्यन्त महत्वपूर्ण एंव वैशिष्टपूर्ण भाषा/बोली है। भाषा-भाषियों में अवधी को तीसरा-स्थान प्राप्त होने का सुयोग प्राप्त है। भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से भी अवधी पूर्वी हिन्दी बोलियों में एक प्रकृष्ट और प्रतिनिधि बोली है। एक विस्तृत भू-भाग में बोली जाने तथा अपार जनसमुदाय के विचार-विनिमय का साधन होने के कारण इसे भाषा के पद पर भी प्रतिष्ठापित किया जा सकता है।

नामकरण

अवध शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृति के 'अयोध्या' शब्द से मानी जाती है। ध्वनि-परिवर्तन की दृष्टि से संस्कृत साहित्य में प्रयुक्त यह अयोध्या शब्द पालि भाषा में उज्झह प्राकृत भाषा में अउज्झा तथा आगे चलकर अपभ्रंश में अवज्झा हो गया है। कालान्तर में मुसलमान आक्रमणकारी ध्वनि सुगमता की दृष्टि से अउज्झा और अवज्झा शब्द का उच्चारण क्रमशः अयुध्या तथा अवध्या रूप में करने लगे।

आगे चलकर लोदी वंश के शासनकाल तक इस शब्द का उच्चारण 'अउध' एवं 'औध' रूप में होने लगा। स्पष्ट है कि वर्तमान शब्द 'अयोध्या' से 'अउध', 'औध' तथा 'ओध' का ही विकसित और परिवर्तित रूप 'अवध' है। इसी 'अवध' शब्द में सम्बन्ध सूचक 'ई' प्रत्यय जुड़ने से 'अवधी' शब्द निष्पन्न हुआ है। 'शब्द निर्मिति' के अनुसार 'अवधी' का अर्थ हुआ ''अवध की'' या 'अवध से सम्बन्धित'। इस प्रकार सामान्य और बोली विशेष के अर्थ में 'अवधी' से अवध क्षेत्र की बोली एवं भाषा का ही बोध होता है। अस्तु, अवध क्षेत्र में बोली जाने के कारण इसका नाम 'अवधी' पड़ा। वस्तुतः यह नाम स्थान-परक ही हैं।

(क) नामकरण का औचित्य

डॉ. सरजार्ज अब्राहम ग्रियर्सन ने अवधी के अन्य नाम पूर्वी, कोसली, एवं बैसवाड़ी प्रस्तावित किये हैं।[1] किन्तु ये नाम युक्ति-युक्त और पूर्णतः निर्दोष नहीं कहे जा सकते। पूर्वी नाम स्थान सापेक्ष होने के कारण ठीक नहीं है। क्योंकि पूर्वी नाम के द्वारा बघेली, छत्तीसगढ़ी तथा बिहारी की भोजपुरी बोलियों का एक

साथ बोध होने लगता है। अस्तु, यह नाम अतिव्याप्ति दोषयुक्त और भ्रमात्मक है। 'कोसली' कोसल राज्य की भाषा का नाम हो सकता है। अवध का प्राचीन नाम 'कोसल' अवश्य था, किन्तु उसकी निश्चित भौगोलिक सीमाओं से अपरिचित होने के कारण अवधी के लिए कोसली नाम देना कदापि उपयुक्त नहीं है। इसमें भी अतिव्याप्ति दोष है।

इसके अतिरिक्त 'बैसवाड़ी' तो अवधी के अन्तर्गत एक सीमित क्षेत्र 'बैसवाड़ा' के लिए प्रयुक्त हो सकती है, जिसमें लखनऊ उन्नाव, रायबरेली, और फतेहपुर जनपद के कुछ भाग आते हैं। जो पश्चिमी अवधी से भिन्न नहीं है। बैसवाड़ी को अवधी का समानार्थी, उसकी एक उपबोली मानना ही अधिक उपयुक्त है। डॉ. हरदेव बाहरी का मत है कि अवधी का एक छोटा सा भू-भाग 'बैसवाड़ा' ही बैसवाड़ी का क्षेत्र है। इस नाम में अव्याप्ति दोष रह जाता हैं इसलिए अवधी नाम ही सर्वथा उपयुक्त हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि उक्त सभी नाम वस्तुतः असंगत और दोषपूर्ण हैं। किसी में अतिव्याप्ति दोष है तो किसी में अव्याप्ति। एतदर्थ अवध क्षेत्र के ऐतिहासिक महत्व को अक्षुण्ण रखते हुए और इसके अधिकांश भू-भाग में बोली जाने के कारण, प्रत्येक दृष्टि से अवधी नाम ही वैज्ञानिक, सर्वमान्य, बहुप्रचालित तथा अधिक उपयुक्त है। निश्चय ही पुरा-मध्य और आधुनिक - इन सभी कालों में अवधी व्यक्ति-समाज राष्ट्र और मानव जीवन की अभिरुपिणी, आख्यायिनी, निदर्शिनी और परिचायिनी रही है, और हैं। वह अपनी महाप्राणता, सात्विकता, उदात्तता-जीवन्तता से सर्वथा संवलित और समुल्लसित हैं। इसे किसी अन्य नाम से अभिहित करना न्यायसंगत नहीं हैं।

भाषा के अर्थ में अवधी नाम का सबसे प्राचीन प्रयोग अमीर खुसरो के नुहसिपर ग्रन्थ में हुआ है। उसके बाद अबुलफजल के 'आइने अकबरी' में भी यह नाम भाषा के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। साहित्य रचना में इस बोली के शब्दों के रूप 11वीं सदी के आस-पास मिल जाते हैं। रोडाकृत 'राउलबेलि' पुरानी अवधी की प्रथम उपलब्ध रचना है। कालान्तर में यही अवधी बोली ऐतिहासिक विवृत्ति की भूमिका और साहित्यिक उन्मेष की उद्‌भाविका बनी।

(ख) क्षेत्र विस्तार

किसी भी भाषा अथवा बोली की सीमा-रेखा अथवा क्षेत्र निर्धारित करना नितान्त दुष्कर कार्य है। इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट विभाजक रेखा या ज्यामितीय रेखा खींचना भी सम्भव नहीं है। फिर भी भाषाओं एवं बोलियों की आकृति तथा प्रकृति के आधार पर उसके क्षेत्र का निर्धारण किया जा सकता है। भाषा और बोली के क्षेत्र निर्धारण को जटिल और दुष्कर बताते हुए डॉ. ग्रियर्सन ने कहा है - 'किसी भाषा की व्याप्ति अथवा उसके क्षेत्र की सीमा निर्धारित करना साधारण काम नहीं है। सामान्यतः जब तक विशेष रूप से जाति एवं संस्कृति में अन्तर न हो या कोई बड़ा पहाड़ अथवा बड़ी नदी प्राकृतिक बाधा उपस्थित न करे, तब तक भारतीय सीमा-सम्बन्धी रेखाओं को पृथक करना सरल कार्य नहीं है।

जहाँ तक अवधी के क्षेत्र-विस्तार का प्रश्न है इसके नाम से ऐसा लगता है कि वह केवल अवध क्षेत्र की बोली है, परन्तु यह बोली अवध क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। जहाँ एक ओर यह अवध क्षेत्र के अन्तर्गत आनेवाले कतिपय जनपदों में नहीं बोली जाती वहीं दूसरी ओर अवध के बाहर के कुछ जनपदों में इस बोली के भाषा-भाषी पाये जाते हैं। हरदोई जनपद को छोड़कर अवध के लखीमपुर, खीरी, बहराइच, गोंडा बाराबंकी, लखनऊ, सीतापुर, फैजाबाद, जनपद की टाण्डा तहसील के पूर्वी भाग को छोड़ कर, सुलतानपुर, उन्नाव, रायबरेली, प्रतापगढ़ इलाहाबाद, फतेहपुर, जौनपुर में केरात तहसील को छोड़कर मिर्जापुर, का पश्चिमी भाग तथा कानपुर के पूर्वी किनारे की पट्‌टी तक अवधी का क्षेत्र विस्तार है। उक्त जनपदों के अतिरिक्त मिश्रित रूप में अवधी बिहार के मुसलमानों विशेषतः मुजफ्फरपुर के तथा नेपाल

की तराई के रुम्मनदेई तथा बुटवल के कुछ हिस्सों में भी बोली जाती है। अवधी का क्षेत्र विस्तार लगभग 38400 वर्ग मील अर्थात 76800 वर्ग किलोमीटर है।

डॉ. सर जॉर्ज अब्राहम ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण के अनुसार अवधी बोलनेवालों की कुल जनसंख्या 1,6143548 थी। लेकिन 1971 ई0 की जनगणना के अनुसार यह संख्या बढ़कर दो करोड़ तिरासी लाख उनतालीस हजार पाँच सौ बावन हो गई थी। वर्तमान समय के शोधकर्ताओं के अनुसार यह संख्या आज साढ़े तीन करोड़ से भी ऊपर बतायी जाती है।

अवधी के उत्तर में नेपाली, पश्चिमी में कन्नौजी, दक्षिणी पश्चिमी में बुन्देली, दक्षिणी में बघेली, दक्षिणी-पूर्वी में छत्तीसगढ़ी और पूर्व में भोजपुरी बोली जाती है। अपनी प्रकृष्ट साहित्यिक सम्पदा, धार्मिक श्रेष्ठता तथा भौगोलिक विस्तार के कारण ही वह विभाषा अथवा उपभाषा के पद की अधिकारिणी है। दोहा, चौपाई, बरवै आदि छन्दों, अनेक काव्य परम्पराओं, कहावतों, मुहावरों एवं अन्यान्य प्रवृत्तियों द्वारा इसने हिन्दी वाड्.मय की उल्लेखनीय श्री वृद्धि की है। अवधी भाषा में लगभग पचास हजार से अधिक देशज शब्द हैं।

अवधी काव्य-परम्परा अत्यन्त प्राचीन, पुष्ट तथा प्रामाणिक है। उसका प्रारम्भ मुल्लादाऊद की रचना चन्दायन से हुआ, जिसका रचनाकाल सम्वत् 1436 वि0 है। यद्यपि उनसे पूर्व अमीर खुसरो (सं. 1341 वि.) की कुछ अवधी कविताएँ भी उपलब्ध हैं किन्तु संख्या में नगण्य होने के कारण विद्वान उन्हें अवधी का प्रथम कवि मानने में संकोच करते हैं।

हिन्दी-साहित्य की प्रमुख काव्यधाराओं प्रेमाख्यानक काव्य, सन्तकाव्य रामकाव्य, कृष्णकाव्य तथा रीतिकाल धाराओं में - प्रथम तीन का इतिहास तो अवधी का ही इतिहास मानना समीचीन लगता है क्योंकि इसमें अवधी काव्यों की ही प्रमुखता है। इन्हीं काव्यधाराओं से अवधी को जो समृद्धता तथा परिपुष्टता प्राप्त हुई है वह निश्चय ही अनुपमेय हैं। जायसी का पद्मावत और महाकवि तुलसी का रामचरितमानस अवधी कविताधारा का कीर्ति-स्तम्भ है जिनपर अवधी ही नहीं हिन्दी को भी गर्व है। जायसी और तुलसी की समाजव्यापिनी दृष्टि ने अवधी को बहुत बड़ी व्यावहारिक शक्ति प्रदान की थी। इसके अतिरिक्त कृष्णकाव्य और रीतिकाव्य भी अवधी में लिखा गया है परन्तु उसकी संख्या अपेक्षाकृत कम है। मध्ययुग में आकर इसीलिए अवधी प्रमुख साहित्यिक भाषा नहीं बनी रह सकी। लालदास का हरिचरित्र, माधव कवि का विनोद सागर, चरनदास का ब्रजचरित, ब्रजवासीदास का ब्रजविलास तथा रघुनाथदास रामसनेही का विश्राम सागर आदि ग्रन्थ जहाँ अवधी की कृष्णकाव्यधारा का प्रतिनिधित्व करते हैं, वहीं रहीम, यशोदानन्दन, नरहरि, बैताल, घाघ तथा भड्डरी एवं गिरिधर कविराय आदि की रचनाएँ रीतिकालीन प्रवृत्तियों का ब्यौरा प्रस्तुत करती हैं।

अवधी में प्रबन्ध-काव्यों की शृंखला वद्धता ही उसे अन्य विभाषाओं की तुलना में उच्चासन पर आसनस्थ करने के लिए पर्याप्त हैं। पद्मावत तथा रामचरितमानस जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के महाकाव्य जहाँ भक्तिकाल की गौरवपूर्ण निधि हैं, वहीं जानकीप्रसाद कृत 'रामनिवास रामायण' तथा रसिक बिहारी कृत रामरसायन-रीतिकाल के प्रबन्ध-काव्य हैं। लालचदास का भागवत दशम स्कन्ध, मंचित का कृष्णायन तथा कविसिंह का 'बहुला-व्याघ्र-संवाद' आदि अवधी के प्रमुख प्रबन्ध-काव्य हैं। आधुनिक युग में तो प्रबन्ध-काव्यों की एक लम्बी शृंखला हैं। पं. द्वारिकाप्रसाद मिश्र का कृष्णायन, विद्यापति महाजन का, गांधीचरितमानस, गुरुप्रसाद मृगेश का पारिजात, शीतल सिंह गहरवार का श्री सीताराम चरितमानस आदि अवधी की मणिमाला के रत्न हैं। इसके अतिरिक्त अवधी के मुक्तक काव्यकारों की संख्या तो अनगिनत है, जिनमें छायावाद का वाग्वैभव, प्रगतिवाद की प्रगतिशीलता, प्रयोगों की नवीनता, तथा राष्ट्रीयता, सामाजिक जड़ता, आर्थिक विषमता, राजनीतिक विद्रूपता विश्व बन्धुता तथा मानवीय जीवन मूल्यों की

उदात्तता के अनुगूँज भी विद्यमान है।

ग-क्षेत्रीय रूपान्तर एवं उपबोलियाँ

क्षेत्रीय रूपान्तर को ध्यान में रखते हुए डॉ. बाबूराम सक्सेना ने अवधी की तीन उपबोलियाँ स्वीकार किया है। 1. पश्चिमी अवधी। 2. केन्द्रीय या मध्यवर्ती अवधी, 3. पूर्वी अवधी। जिसका विभाजन इस प्रकार किया है–

1. **पश्चिमी अवधी**–जिसके अन्तर्गत लखीमपुर खीरी, सीतापुर, लखनऊ उन्नाव तथा फतेहपुर आते हैं।

2. **केन्द्रीय मध्यवर्ती अवधी**–इसमें बहराइच, बाराबंकी तथा रायबरेली जनपद का क्षेत्र आता है।

3. **पूर्वी अवधी**–यह बोली रूप - गोंडा, फैजाबाद, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, जौनपुर तथा मिर्जापुर जनपद में प्रचलित है।

परन्तु डॉ. सक्सेना के इस विभाजन में भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण कम, भौगोलिक आग्रह अधिक दृष्टिगत होता है, अन्यथा लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली और बाराबंकी को भाषिकदृष्टि से पृथक करने का कोई औचित्य नहीं है। साथ ही उन्होंने बहराइच, बाराबंकी और रायबरेली जनपद को केन्द्रीय अवधी के अन्तर्गत रखा है जो उचित नहीं है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने भी क्षेत्रीय रूपान्तर की दृष्टि से अवधी की 6 उपबोलियों मानी हैं। 1. मिर्जापुरी 2. बिहारी अवधी 3. बनौधी अवधी 4. पूर्वी अवधी 5. उत्तरी अवधी 6. बैसवाड़ी अवधी।

डॉ. सक्सेना की भांति डॉ. भोलानाथ तिवारी का विभाजन भी शुद्ध रूप से भौगोलिक ही है। निश्चित ही प्रत्येक जनपद की अवधी में कुछ न कुछ भेदक लक्षण अवश्य ही दृष्टिगत होता है। डॉ. त्रिलोकीनाथ सिंह की मान्यता है कि अवधी की तीन उपबोलियां स्पष्ट रूप से मानी जा सकती हैं। 1. पूर्वी दक्षिणी 2. उत्तरी मध्यवर्ती 3. पश्चिमी-दक्षिणी। इसी प्रकार डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र 'मधुप' ने अवधी की तीन उपबोलियाँ ही स्वीकारी हैं–1. पश्चिमी अवधी 2. पूर्वी अवधी (आदर्श अवधी) 3. दक्षिणी या बघेली अवधी।

उपबोलियों के सन्दर्भ में डॉ. धीरेन्द्र वर्मा का विचार कुछ अधिक न्याय-संगत प्रतीत होता है - "अवधी तथा ब्रज नाम की कोई एक बोली नहीं है, वरन ये कई बोली रूपों के सामूहिक नाम के बोधक हैं।

इस प्रकार यह कहना असंगत न होगा कि अवधी के विविध क्षेत्रीय रूपों की एक सुनिश्चित और स्पष्ट अवधारणा आज भी नहीं बन पायी है। एतदर्थ हम अवधी के मात्र तीन क्षेत्रीय रूप - 1. पूर्वी अवधी 2. पश्चिमी अवधी 3. बैसवाड़ी अवधी ही स्वीकार करना समीचीन समझते हैं। 1. पूर्वी अवधी–गोण्डा, फैजाबाद, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, जौनपुर, मिर्जापुर बहराइच जनपद इसके अन्तर्गत आते हैं।

2. पश्चिमी अवधी - लखीपुर खीरी, सीतापुर, लखनऊ, बाराबंकी और फतेहपुर जनपद आदि क्षेत्र इसके अन्तर्गत आते हैं।

3. बैसवाड़ी अवधी - उन्नाव और रायबरेली जनपद में मुख्य रूप से बैसवाड़ी अवधी व्यवहृत होती है। चन्द्रभूषण त्रिवेदी, रमई काका शिवरत्न शुक्ल, रामस्वरूप मिश्र आदि इसके प्रसिद्ध कवि हैं।

समग्र अवधी-साहित्य का साहित्यिक सर्वेक्षण करने के लिए अध्ययन की सुगमता को ध्यान में रखते हुए हम अवधी साहित्य को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं - 1. अवधी का लोकसाहित्य 2. आधुनिक अवधी-काव्य। सर्वप्रथम अवधी के लोकसाहित्य का विवेचन ही समीचीन होगा।

अवधी लोक-साहित्य

लोक एवं लोकसाहित्य - व्याख्या एवं परिभाषा

लोक शब्द संस्कृत के 'लोकृदर्शने' धातु से धज प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ है देखना, जिसका लट्लकार में अन्यपुरुष एकवचन का रूप 'लोकते' है। अतः 'लोक' शब्द का शाब्दिक अर्थ हुआ देखनेवाला। इस प्रकार वह समाज जन-समुदाय जो इस कार्य को करता है, लोक कहा जायेगा। साधारण जनता के अर्थ में इसका प्रयोग ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर किया गया है। ऋग्वेद में लोक के लिए जन शब्द का प्रयोग भी उपलब्ध होता है। उपनिषदों में अनेक स्थानों पर 'लोक' शब्द व्यवहृत हुआ है। ''जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण' में यथार्थ ही कहा गया है कि यह लोक अनेक प्रकार से फैला हुआ है। प्रत्येक वस्तु में यह प्रभूत या व्याप्त है। कौन प्रयत्न करके भी इसे पूरी तरह से जान सका है। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में लोक शब्द का व्यवहार जीव तथा स्थान दोनों अर्थों में किया गया है। पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी लोक तथा सर्वलोक शब्दों का उल्लेख किया है। सर्वत्र विभाषा गोः सूत्र में भी लोक और वेद शब्द आया है।

इससे ज्ञात होता है कि पाणिनी ने वेद से पृथक लोक की सत्ता स्वीकार की है। महर्षि व्यास ने महाभारत में लिखा है कि यह ग्रन्थ अज्ञानरूपी अन्धकार से अन्धे होकर व्यथित लोक (साधारण जनता) की आँखों को ज्ञान रूपी अंजन की शलाका लगाकर खोल देता है। भगवद्गीता में लोक तथा लोकसंग्रह आदि अनेक शब्दों का प्रयोग अनेक स्थानों पर किया गया है। भगवान श्रीकृष्ण ने लोक संग्रह पर बड़ा बल दिया है।

लोकसाहित्य के अध्येताओं ने भी अपने अपने ढंग से लोक शब्द के व्याख्यायित किया है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार- लोक शब्द का अर्थ जन-पद पर ग्राम्य नहीं है, बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई वह समूची जनता है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत रुचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जानेवाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं। और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासित और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं। डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय के अनुसार 'आधुनिक सभ्यता से दूर अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली तथाकथित अशिक्षित एवं असंस्कृत जनता को लोक कहते हैं, जिनका आचार-विचार एवं जीवन परम्परायुक्त नियमों से नियन्त्रित होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि जो लोग संस्कृत तथा परिष्कृत लोगों से प्रभावित हुए बिना अपनी प्राचीन अवस्था में वर्तमान हैं, उन्हें लोक के अन्तर्गत रखा जायेगा।

लोक साहित्य

लोक साहित्य शब्द 'फोक लिट्रेचर' का अनुवाद है। यह अंग्रेजी के अनुकरण पर आया है। फोक का पर्याय लोक और लिट्रेचर का साहित्य। लोकसाहित्य की व्याख्या हिन्दीसाहित्य-कोश में अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार से किया है।

1. एक ऐसा साहित्य जो असभ्य और अनपढ़ लोगों के विषय में लिखा गया है।
2. जंगली जातियों के जीवन से सम्बन्धित साहित्य।
3. ग्रामीण या गाँवों के लोगों का साहित्य।
4. लोक-साहित्य किसी काल विशेष का न होकर युग-युग से चला आता हुआ, वह साहित्य है जो हमें जन-जीवन के बीच प्रायः मौखिक रूप में ही प्राप्त होता रहा है।

5. लोक-साहित्य वह साहित्य है जिसमें हमारे अपढ़ समाज के लिए मनोरंजन की व्यापक सामग्री प्राप्त होती है। मनुष्य कठिन परिश्रम के पश्चात थोड़ा-सा समय अपने मनोरंजन के लिए चाहता है। वही मनोरंजन मानव गीत गाकर, कथा सुनकर-सुनाकर प्राप्त करता है।

इस तरह 'लोकसाहित्य' शब्द एक व्यापक भाव की व्यंजना करता है। मानव के सम्पूर्ण रीति-रिवाज, आचार-विचार और उसके व्यवहार का स्वरूप जो किसी प्रकार के बन्धनों से जकड़ा नहीं होता, वरन् जिन व्यवहारों के द्वारा मानव स्वतंत्र रूप से एक आत्मसन्तोष प्राप्त करता है, आदि इस लोक-साहित्य के अन्तर्गत आते हैं।

इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोसल साइन्सेज में फोकलोर का शाब्दिक अर्थ असंस्कृत लोगों का ज्ञान कहा गया है। श्री मरेट का विचार है कि लोक-साहित्य एक गतिशील विज्ञान है। श्री जी.एल. गोमे ने इसे ऐतिहासिक विज्ञान (फोकलोर इज ए हिस्टारिकल साइंस) माना है। हमारी प्राचीन परम्पराएँ नष्ट नहीं होती, मिटती नहीं, बल्कि आगे बढ़ती जाती हैं। उनके रूप चाहे जीवन के साथ बदल जावें, पर वे गत्यात्मक ही रहती हैं। इसी कारण लोक को सर्वदेशीय, सर्वकालीन और सर्वसम्मत कहा गया है।

बैटकिन (Betkin) का विचार है कि 'फोकलोर कोई बहुत प्राचीन दिनों की या दूर की वस्तु नहीं है, बल्कि वह एक जीती-जागती भावना है जो हमारे बीच आज भी जीवित है। लोक साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. सत्येन्द्र ने लिखा है - "लोकवार्ता शब्द विशद् अर्थ रखता है। समस्त आचार-विचार, जिसमें मानव का परम्परित रूप प्रत्यक्ष होता है और जिसके स्रोत लोकमानस में पाये जाते हैं तथा जिनमें परिमार्जन और संस्कार की चेतना काम नहीं करती। लौकिक, धार्मिक, विश्वास, धर्म-गाथाएँ कथाएँ, लौकिक गाथाएँ कहावतें पहेलियाँ सभी लोकवार्ता के अंग हैं।" डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी के अनुसार - पितृ परम्परागत जीवन-यात्र की पद्धति जिन सामाजिक अनुष्ठानों, विश्वास, विचारों तथा वाङ्मय से अपने अलौकिक प्रकाश को प्राप्त करती हैं, वह अँग्रेजी में फोकलोर है। डॉ. भोलानाथ तिवारी लोकायन शब्द ही लोकसाहित्य के लिए अधिक उपयुक्त मानते हैं। पर ग्राम-साहित्य केवल ग्रामों को लोगों से सम्बन्धित साहित्य होगा, जबकि लोक-साहित्य का सम्बन्ध नगर और शहर दोनों से भी है।

अवधी लोकसाहित्य का वर्गीकरण

लोक साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. सत्येन्द्र ने अपनी पुस्तक लोकसाहित्य विज्ञान में लोकसाहित्य को दो प्रमुख भागों में विभक्त किया है।

लोक साहित्य

लोकवार्ता साहित्य

लोकवार्ता साहित्य वह है जिसमें किसी समुदाय विशेष की लोकवार्ता की अभिव्यक्ति हुई है। अथवा जो स्वयं लोकवार्ता का एक अनुष्ठान अंग है। इस क्षेत्र से बाहर का लोकसाहित्य इतर लोकसाहित्य है।

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोकसाहित्य को अधोलिखित पाँच भागों में विभक्त किया हैं।

1. लोकगीत (फोक लिरिक)
2. लोकगाथा (फोक बैलेड्स)
3. लोककथा (फोक टेल्स)
4. लोकनाट्य (फोक्र ड्रामा)
5. लोकसुभाषित (फोक सेइंग्स)

डॉ. उपाध्याय के मतानुसार लोकसुभाषित के अन्तर्गत मुहावरे, लोकोक्तियाँ, सूक्तियाँ, बच्चों के

गीत, पालने के गीत, खेल के गीत आदि सभी प्रकार के विषयों का अन्तर्भाव किया जा सकता है। डॉ. सरोजनी रोहतगी ने अवधी का लोकसाहित्य पुस्तक में लोकसाहित्य का विभाजन निम्न प्रकार किया है।

1. लोकगीत
2. गाथाएँ
3. लोककथाएँ, लोरियाँ, बुझौवल।
4. लोकमंच, नौटंकी, रहस-नृत्य आदि।
5. लोकोक्तियाँ, मुहावरे व पहेली।
6. लोक-विश्वास, टोने, टोटके, ढकोसले, व्रत, उपवास, अनुष्ठान आदि।

डॉ. श्रीराम शर्मा एवं डॉ. राजेश्वर चतुर्वेदी लेखक द्वय ने भी लोक साहित्य को पाँच भागों में विभक्त किया है -

1. लोकगीत
2. लोककथा
3. लोकगाथा
4. लोकनाट्य
5. लोकसुभाषित

मानव-जीवन में 16 संस्कारों का विधान स्वीकार किया गया है। पुत्र-जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यन्त यह संस्कार ही लोक जीवन के प्रमुख अंग हैं। विशेष रूप से इनकी अभिव्यक्ति लोकगीतों में ही पायी जाती है। अवध में प्रायः प्रत्येक संस्कार पर लोकगीतों के गाने की परम्परा शताब्दियों से अनवरत चली आ रही है। संस्कार-गीतों के अतिरिक्त जाँत के गीत 'जँतसार', धान लगाने के समय लगवही, तथा बुआई, कटाई, बोझा ढोने के गीत, पनिहारिनों के गीत, किसी वंशावली की वीरता के गीत, तथा ऋतु - सम्बन्धी विविध गीतों को गाने की परम्परा अवधी जनजीवन में चतुर्दिक प्राप्त होती है। इसी तरह घर की वृद्धा स्त्रियों द्वारा अनेकानेक तथा-कहानियों, लोरियों, व्रत-उपवास सम्बन्धी कहानियों, गाथाओं आदि द्वारा जनमानस अपने मनोरंजन की सामग्री एकत्रित करता चलता है। समय-समय पर नाटक, नौटंकी, स्वांग, रहस आदि मनोरंजन के साधनों द्वारा भी वह अपना मनबहलाव करता चलता है। शिक्षित न होने के बावजूद भी वह अपने गम्भीर अनुभवों का प्रकटीकरण मुहाविरों लोकोक्तियों और पहेलियों द्वारा करता रहता है जिससे उसकी ज्ञानराशि संचित और अक्षुण्ण बनी रहती है। धार्मिक-अनुष्ठानों टोने-टोटकों व्रतोपवासों आदि द्वारा उसकी धर्म-भीरुता, आस्तिकता का स्पष्ट निरूपण पग-पग पर देखा जा सकता है। लोकमानस के समग्र जीवन का लेखा-जोखा ही लोकसाहित्य रूपी तिजोरी में उपलब्ध रहता है।

(क) लोकगीतः परिभाषा, वर्गीकरण एवं स्वरूप

लोकगीतों का इतिहास उतना ही पुराना है, जितनी पुरानी मानव-विकास की कहानी। प्राचीनकाल में प्राकृतिक शक्तियों पर विजय पाने के लिए मानव ने पारस्परिक सहयोग को सर्वाधिक प्रश्रय दिया था। मानव की सहयोग-भावना ने प्राकृतिक विपदाओं पर विजय पायी। तब से मानव-हृदय ने भी पारस्परिक स्नेह, सौहार्द और सहयोग का मूल्य जाना। ये भावनाएँ ही लोकगीतों की उन्मुक्त अभिव्यक्ति के अनिवार्य आदान बन गये। विभिन्न ऋतुओं एवं पर्वों पर गाये जानेवाले लोकगीत मानव के सामूहिक श्रम, उल्लास एवं संघर्ष की कथाएँ हैं। जहाँ तक लोकगीतों को परिभाषाओं में बाँधने का प्रश्न है वह विराट् है, अनन्त है और अगाध है। भारतीय विद्वानों के साथ-साथ पश्चात्य विद्वानों ने भी अपने-अपने विचार से विभिन्न

प्रकार उसे परिभाषित करने का प्रयास किया है, परन्तु किसी भी परिभाषा में पूर्णता नहीं है, सभी परिभाषाओं का आलोड़न-बिड़ोलन करने पर, लोकगीत क्या है? इस प्रश्न का उत्तर स्वयमेव प्राप्त हो जाता है।

कतिपय परिभाषाएँ निम्नवत हैं -

1. पाश्चात्य विद्वान डॉ. ग्रिम के अनुसार - 'ए फोल्क सांग कमपोजेज इटसेल्फ' अर्थात् लोकगीत स्वतः उत्पन्न हुआ है।

2. पिर्लेली ने अभिमानव के उल्लासमय संगीत को ही लोकगीत कहा है।

This Primitve Spontension music has been called Folk Song.

3- Ralpha V. Williams - कहते हैं कि लोकगीत न तो नया होता है, न पुराना। वह तो संसार के एक वृक्ष के समान है, जिसकी जड़ें भूतकाल की धरती में काफी गहरी धँसी हुई हैं, परन्तु जिसमें प्रतिक्षण नवीन डालियाँ पल्लव और फल लगते रहते हैं।

A Foldk Song is neither new Nor old, it is in the past, but which continually puts forth new branches new leaves, new fruits.

लोकगीत ग्राम्य संस्कृति के जागरूक प्रहरी हैं। इस दृष्टि से लोकसाहित्य के सशक्त हस्ताक्षर पं. रामनरेश त्रिपाठी के अनुसार - "ग्रामगीत प्रकृति के उद्‌गार हैं। उनमें अलंकार नहीं, केवल रस हैं, छन्द नहीं केवल लय हैं। सूर्यकरण पारीख एवं नरोत्तम स्वामी का मत है - 'आदिम मनुष्य-हृदय के गानों का नाम लोकगीत है। देवेन्द्र सत्यार्थी का विचार है कि 'लोकगीत किसी संस्कृति के मुंहबोलते चित्र हैं। श्री गुलाबराय लोकजीवन को लोक-भावना की अभिव्यक्ति मानते हैं। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रामगीतों को आर्येतर सभ्यता के वेद मानते हैं। डॉ. सत्येन्द्र का विचार है कि लोक मानवीय कृतित्व की वह सामान्य धरोहर है - जो विश्वमानव की भूमि पर प्राप्त हुई है।

उपर्युक्त परिभाषाओं को आधार मानकर कहा जा सकता है कि -

1. लोकगीत मानव-हृदय की प्रकृत अभिव्यक्ति हैं।
2. भावों को प्रकट करने के लिए वाणी के लयात्मक स्वरूप को लोकगीतों में प्रमुखता दी जाती है।
3. लोकगीत सामूहिक गान प्रवृत्ति के परिचायक हैं।
4. लोकगीतों में लोकमानस के लोकरंजन की भावना सन्निहित होती है।
5. लोकगीतों में जीवन की विभिन्न रागात्मक वृत्तियों की अभिव्यक्ति होती है।
6. लोकगीत मानव-सभ्यता और संस्कृति के विकास-पथ पर प्रकाश डालते हैं।
7. लोकगीतों का कोई विशेष न रचनाकार है और न रचनाकाल है, वह सामूहिक रचना है। लिपिबद्ध न होने के कारण समय-समय पर नवीन भावना-कोंपले निकलती रहती हैं।
8. वेदों की तरह लोकगीत भी श्रुत हैं। जिस प्रकार वेद सुनकर रटे जाते हैं। उसी प्रकार लोकगीत भी एक से दूसरे कान तक संचरण करते रहते हैं।
9. लोकगीत लोकानुरंजन के साथ-साथ मानवीय कर्मों के जाग्रत प्रेरणा स्रोत हैं।
10. जिस प्रकार वेद शिष्ट समुदाय के पथ-प्रदर्शक हैं, उसी प्रकार लोकगीत भी सामान्य जीवन की नीतियों का सांगोपांग नियमन करते हैं।
11. लोकगीत क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति के आदर्श-वाक्य का अनुपालन करते हैं, उनमें नित्य निरन्तर नवीन पंक्तियाँ, नवीन भाव जुड़ते रहते हैं।
12. लोकगीतों की शैली सहज होती है तथा उनका प्रधान गुण लयात्मकता तथा गेयता होती है।

(ख) अवधी लोकगीतों का वर्गीकरण

अवधी लोकगीतों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्यता का अभाव है। विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से लोकगीतों का वर्गीकरण किया है, परन्तु अभी तक कोई भी वर्गीकरण सर्वमान्य नहीं हो सका है। प्रमुख कारण यह है कि उनका वर्ण्य विषय इतना व्यापक है कि वर्गीकरण करना कठिन हो जाता है, कुछ न कुछ कमी अवश्य रह जाती है। अवधी लोकगीतों के वर्गीकरण की परम्परा पं. रामनरेश त्रिपाठी के वर्गीकरण से आरम्भ होती है। उनका वर्गीकरण सदोष होते हुए भी अपना ऐतिहासिक महत्व रखता है। पं. रामनरेश त्रिपाठी ने लोकगीतों को ग्यारह वर्गों में विभक्त किया है।

1. संस्कार-सम्बन्धी गीत
2. चक्की और चरखे के गीत
3. धर्म-गीत
4. ऋतु-सम्बन्धी गीत
5. खेती-सम्बन्धी गीत
6. भीख माँगने से सम्बन्धित गीत।
7. मेले-सम्बन्धी गीत
8. जाति-गीत
9. वीर-गाथा
10. गीत-गाथा
11. अनुभव के कथन।

उपर्युक्त वर्गीकरण पर सम्यक् दृष्टिपात करने पर स्पष्ट प्रतीत होता है कि त्रिपाठी जी का यह वर्गीकरण वैज्ञानिक नहीं है। चक्की और चरखे के गीतों का अन्तर्भाव डॉ. उपाध्याय द्वारा प्रतिपादित श्रम सम्बन्धी गीतों में हो जाता है। धर्मगीत व्रत गीतों का ही दूसरा नाम है। खेती, भिखमंगे और मेले के गीतों की कोई अलग श्रेणी नहीं है। वे विविध गीतों के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। वीरगाथा और गीत-गाथा को लोकगाथा के अन्तर्गत ही रखा जा सकता हैं अनुभव के वचनों को हम सूक्ति का अनुभूतिपूर्ण उक्ति मात्र कह सकते हैं, लोकगीत, नहीं। इस प्रकार त्रिपाठी जी के 11 भेदों को मात्र छः भेदों के अन्तर्गत ही समाहित किया जा सकता है। लोकगीतों के पारखी पं. सूर्यकरण पारीक ने लोकगीतों का क्षेत्र-विस्तार दिखाते हुए उन्हें 29 भागों में विभक्त किया है।

1. देवी देवताओं और पितरों के गीत
2. ऋतुओं के गीत
3. तीर्थों के गीत
4. व्रत उपवास एवं त्यौहारों के गीत
5. संस्कारों के गीत
6. विवाह के गीत
7. भाई-बहन के प्रेम गीत
8. साली सालेल्या (सरहज) के गीत
9. पति-पत्नी के प्रेम के गीत
10. पनिहारियों के गीत
11. प्रेम के गीत

12. चक्की पीसते समय के गीत
13. बालिकाओं के गीत
14. चरखे के गीत
15. प्रभाती गीत
16. हरजस - राधा-कृष्ण के प्रेम के गीत
17. धमालें - होली के अवसर पर पुरुषों द्वारा गेय गीत।
18. देशप्रेम के गीत
19. राजकीय गीत
20. राजदरबार, मजलिस, शिकार, दारू के गीत
21. जम्मे के गीत
22. सिद्ध पुरूषों के गीत
23. वीरों के गीत
24. वीरों के गीत - ऐतिहासिक गीत
25. गवालों के गीत
26. हास्य-रस के गीत
27. पशुपक्षी सम्बन्धी गीत
28. शान्त-रस के गीत
29. गाँवों के गीत (ग्राम गीत)
30. विविध नाट्य गीत।

इसके अलावा डॉ. कुलदीप ने लोकगीतों का अध्ययन उनके पांच भाग बनाकर किया है-

1. संस्कारों के गीत 2. ऋतु-महीनों और तीज त्यौहारों के गीत। 3. पारिवारिक, सामाजिक व सामयिक गीत 4. कृष्ण सम्बन्धी गीत 5. अन्य गीत। डॉ. श्याम परमार ने भास्कर रामचन्द्र भालेराव के मत का उल्लेख करते हुए उनके द्वारा प्रतिपादित लोकगीतों का वर्गीकरण निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभक्त किया है -

1. संस्कार विषयक गीत
2. माहवारी गीत
3. सामाजिक, ऐतिहासिक गीत
4. विविध गीत।

डॉ. श्रीराम शर्मा ने अपने शोध-प्रबन्ध के अन्तर्गत लोकगीतों के वर्गीकरण का वैज्ञानिक आधार प्रस्तुत किया है-

1. गायक वर्ग, जैसे - रानी, पुरुष, बालक, शिशु के आधार पर ।
2. लोकगीतों के कलात्मक वैविध्य के आधार पर ।
3. गायन पद्धति के आधार पर ।
4. लोकगीतों के रूपात्मक वैविध्य के आधार पर ।
5. उपयोगिता के आधार की दृष्टि से।
6. जातीय दृष्टि से।
7. अवस्था भेद से
8. वस्तुभेद से।

9. रूप भेद (प्रबन्ध, मुक्तक) से।

10. प्रकृति भेद (युद्ध, नृत्यगीत, नाट्य गीत आदि) से।

उक्त वर्गीकरण में देश-काल व्यक्ति तीनों का सम्यक् विचार किया गया है, अस्तु यह वर्गीकरण वैज्ञानिकता के पर्याप्त निकट कहा जा सकता है।

इसी सन्दर्भ में डॉ. आशा कुलश्रेष्ठ ने अपने शोध-प्रबन्ध में लोकगीतों का पर्याप्त वैज्ञानिक वर्गीकरण प्रस्तुत किया है जो विविध शीर्षकों में विभक्त है।

प्रस्तुत वर्गीकरण में देश, काल और व्यक्ति के अतिरिक्त वस्तु अथवा वर्ण्य-विषय को भी आधार बनाया गया है।

1. ऋतु गीत और मास-गीत विभिन्न महीनों में मनाये जाने वाले त्यौहार एवं व्रतों से सम्बन्धित अनुष्ठानों के अवसरों पर गाये जानेवाले गीत।
2. संस्कार-सम्बन्धी गीत- पुत्र जन्म विवाह आदि।
3. श्रम-सम्बन्धी गीत-चक्की पीसते समय के गीत झाडू लगाते समय के गीत, चरखा कातते समय के गीत तथा बोझा उठाते समय के गीत।
4. विविध अनुष्ठानों के अवसरों के गीत-देवी के गीत, जहानपीर के गीत आदि।
5. भीख माँगने के गीत।
6. बच्चों के खेल के गीत।
7. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय चेतना के गीत।
8. ऐतिहासिक गीत- सन् 1857 के गीत, अँग्रेज-जाट सम्बन्धी गीत, विदेशी वस्तु बहिष्कार गीत, नमक कानून भंग आदि से सम्बन्धित।
9. नौटंकी आदि लोकनाट्यों के गीत।
10. सामयिक गीत- फेरीवालों के गीत, परिवार नियोजन तथा चुनाव प्रचार के गीत।
11. चरित्रगीत
12. प्रेम गीत।
13. रसिया
14. जाति विशेष के गीत
15. विविध गीत-लोरी आदि।

अन्ततः लोक साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय द्वारा किये लोकगीतों के वर्गीकरण का सम्यक अनुशीलन कर लेना भी समीचीन होगा। उनका विचार है कि जिस प्रकार काव्य का विभाजन गीतिकाव्य और प्रबन्धकाव्य के रूप में किया जाता है, उसी प्रकार लोकगीतों का विभाजन भी उनके वर्ण्य विषय के आधार पर गेय गीत (लिरिक्स) और प्रबन्ध गीत (बैलेड्स), दो भागों में किया जा सकता है। गेय गीत वे छोटे-छोटे गीत हैं जिनमें कथावस्तु का प्रायः अभाव होता है। उनकी गेयता ही उनकी आत्मा है। इस श्रेणी के गीतों में संस्कार, ऋतु और व्रत-सम्बन्धी गीत आते हैं। प्रबन्ध-गीत वे गीत हैं जिनमें कथावस्तु की ही प्रधानता रहती है। उनमें भी गेयता होती है, परन्तु उसका स्थान गौण है। डॉ. उपाध्याय ने भारतीय तथा पाश्चात्य-लोक साहित्य का गम्भीर मनन तथा अनुसंधान करने के उपरान्त लोकगीतों को निम्नांकित छः श्रेणियों में विभक्त किया है।

1. संस्कार-सम्बन्धी गीत- जैसे पुत्र जन्म, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह, गवना तथा मृत्यु- सम्बन्धी गीत।
2. ऋतु-सम्बन्धी गीत-कजली, हिंडोला, होली, चैता, बारहमासा आदि।

3. व्रत सम्बन्धी गीत - जैसे नागपंचमी, बहुरा, गोधन, पिंड़िया तथा छठी माता सम्बन्धी गीत।
4. देवता सम्बन्धी गीत - जैसे - राम, कृष्ण, शिव, दुर्गा, पार्वती तथा हनुमान-सम्बन्धी गीत।
5. जाति सम्बन्धी गीत - जैसे अहीरों के गीत, दुसाधों के गीत, चमारों के गीत, गोड़ों के गीत, कहारों के गीत, धोबियों के गीत आदि।
6. श्रम-सम्बन्धी गीत-रोपनी, सोहनी, जँतसार, चरखा तथा कोल्हू आदि।

डॉ. उपाध्याय का यह दृढ़ मत एवं विश्वास है कि भारत के साथ ही संसार के अन्य देशों के लोकगीतों का भी वर्गीकरण उपर्युक्त आधार पर किया जा सकता है। अतः प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक की सम्मति में भी डॉ. उपाध्याय का उपर्युक्त वर्गीकरण सर्वाधिक वैज्ञानिक तथा सुव्यवस्थित है। इसमें प्रायः सभी प्रकार के गीतों का प्रतिनिधित्व हो जाता है। लोक साहित्य के सभी प्रख्यात विद्वानों ने भी इसी श्रेणी विभाजन को ही विशेषतः स्वीकार किया है। डॉ. उपाध्याय ने इसी श्रेणी विभाजन की सुव्यवस्थित और वैज्ञानिक तालिका भी प्रस्तुत की है।

(ग) प्रमुख अवधी लोकगीतों का संक्षिप्त परिचय

अवधी लोकगीतों को हम उनके उद्देश्यों के आधार पर मुख्यतः दो भागों में विभक्त कर सकते हैं।

(अ) अनुष्ठान-सम्बन्धी गीत (ब) पर्व तथा सामाजिक उत्सव सम्बन्धी गीत

(अ) अनुष्ठान सम्बन्धी गीत

हिन्दू धर्म शास्त्रें में मानव जीवन के षोडस संस्कारों को मान्यता प्रदान की गयी है। गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त कोई न कोई संस्कार होता ही रहता है। परन्तु षोडश संस्कारों में पुत्र जन्म, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह, गौना तथा मृत्यु प्रमुख संस्कार हैं। मृत्यु संस्कार के अतिरिक्त सभी अवसरों पर स्त्रियाँ अपने मधुर कण्ठों से गीत गाकर अपने हृदय का उल्लास और आनन्द प्रकट करती हैं। जहां इन संस्कार के गीतों में उल्लास और प्रसन्नता की भावना हिलोरें लेती है, वहाँ मृत्यु गीतों में विषाद की अमिट रेखा भी विद्यमान होती है। यहाँ कतिपय प्रमुख संस्कार गीतों का संक्षिप्त विवेचन भी कर लेना वाँछनीय है।

1. सोहर - पुत्र जन्म के उल्लास के अवसर पर गाये जानेवाले गीत सोहर कहलाते है। रामचरितमानस में भी राम - जन्म के समय सोहर गाये जाने का उल्लेख है। सोहर शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के सूतिका गृह, प्राकृत के सुइहर से हुई होगी। इसे सोलहो या सोहला भी कहते हैं। गीतावली में तुलसी ने सोहिला शब्द का प्रयोग किया है।

सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो सब जग आज।
पूत सपूत कौसिला जायों, अचल भयो कुल राज।

इसे ही तुलसी ने मंगलगीत भी कहा है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने सोहर शब्द की व्युत्पत्ति 'शोभन' शब्द से स्वीकार किया है। शोभन से सोभिया/सोहिल।

सोहर के रूप में परिवर्तित होता हुआ रस रूप में प्रयुक्त होने लगा।

सोहर के अन्तर्गत केवल जन्म से सम्बन्धित भाव ही नहीं, मानव जीवन से सम्बन्धित अन्य भाव भी आते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर गीत मानवीय अन्तर्द्वन्द्वों और उसके फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाले भावों का सुन्दर परिचय देते हैं। सोहर गीतों का भाव बहुत व्यापक है। इनमें सरिया, दोहद (साध) रोचना, पालना, कठुला, झुनझुना, बधाई और छठी-सभी प्रकार के और सभी अवसरों के गीत गाये जाते हैं। रति-प्रसंग से गर्भाधान लेकर के समय गर्भिणी के शरीर व मुख का पीला पड़ना, दोहद अर्थात् अनेक वस्तुओं के खाने की इच्छा, नाना वस्त्राभूषणों के पहनने की साध, दाई को बुलाना, दाई

का नखरे करना, नेग के लिए मचलना, नाई का रोचना लेकर जाना, चौक, बधावा, जन्म, छठी, मुन्डन, कर्णछेदन, नामकरण, अन्नप्राशन आदि सोहरों के विविध विषय हैं।

सोहर गीतों के विषय अनगिनत है। पुत्र कामना, बन्ध्यापन से निराशा तथा आत्महत्या का प्रयास, गंगा तथा देवी माता से पुत्र कामना-याचना, व्रतोपवास, ननद-भाभी का नेग का झगड़ा, ननद का बधावा, छठी पूजना, देवरानी-जेठानी तथा सासु के नखरे और नेग, देवर से पुत्रोत्पत्ति, बधाइयाँ, आशीष, आदि भी सोहर के प्रमुख विषय हैं, जिनसे सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के सोहर अवध में गाये जाते हैं। एक बन्ध्या-स्त्री की भावनाओं का बहुत ही कारुणिक चित्र बड़ा ही वैज्ञानिक आविचित्र है। सन्तति लालसा कितनी उद्दाम है, एक सोहर गीत में यही भाव द्रष्टव्य है -

लोपी पोती ओबरिया जगर-मगर करै,
सखिया बिन रे सन्तति घर सून मै केहि का जगावों।
राजा के दुआरे एक चेरिया, त चेरिया बलक लिहै,
चेरिया अपना बलक हमें देतिउ मैं जिउ समुझावउँ।
नोनवा त मिला ई उधरवा, तेल व्यवहरवा
रानी कोखिया क कवन उधार चहत नहिं पावै।
अरे-अरे नगर के बढ़ई बेगिहि चलि आवहु।
बढ़ई गढ़ि लावौ काठै कै पुतरिया, मैं पलना झुलावौं।
तेलवा लगावैं बुकउना, नयन भरि काजर
रानी उलटि-पलटि पुतरी चूमै पुतरिया नाहीं बिंहसैं
अरे-अरे काठे कै पुतरिया तू रोइ सुनउतिउ
पुतरी सुनतें नगरिया के लोग, बंझिन घर सोहर।

कितना हृदय-द्रावक चित्र है, शायद शिष्ट साहित्य में ऐसी भावामिव्यंजना दुर्लभता से मिले।

2. मुण्डन गीत

मुण्डन हिन्दू परिवार में अत्यन्त उल्लासमय तथा धार्मिक कृत्य माना जाता है। मुंडन-कर्म को संस्कृत में चूड़ाकर्म की संज्ञा दी गई है। इस अवसर पर प्रायः स्त्रियों द्वारा देवी-गीत गाया जाता है। देवी शक्ति की प्रतीक हैं और वे समस्त आसुरी शक्तियों का दमन करती हैं। इस अवसर पर गीतों द्वारा देवी का आह्वान किया जाता है। कहीं कहीं इस अवसर पर सोहर गाने की ही प्रथा है। इस अवसर पर बालक की माता के मायके से उसका भाई 'पियरी' तथा वस्त्रभूषण आदि लेकर आता है। ननद (बालक की बुआ) नेग के लिए मचलती हैं। नाई मुण्डन करने का पारिश्रमिक बहुत बढ़-चढ़ कर मांगता है। मण्डन शुभ मुहूर्त में ही किया जाता है। अवध में मुण्डन का कार्य प्रायः गंगा के किनारे, (प्रयाग, वाराणसी या मानिकपुर) या देवी धाम (शीतलन, मैहर, विन्ध्याचल) में ही सम्पन्न होता है। अवध में मुण्डन का कार्यक्रम उल्लासपूर्वक एवं धूमधाम से सम्पन्न किया जाता है। एक मुण्डन गीत की कुछ पंक्तियां दर्शनीय-

इन लटुरिन पै बलि जाउँ, लाल के मूँड़ना।
सुरही गैया कै गोबर मंगायन झुक आँगना लिपायेन।
नगर बुलावा देवायेन लाल जी कै मूँड़ना।
मोतियन चौक पुरायेन, लाल जी कै मूँड़ना।

चन्दन पटुली डरायेन, लाल जी कै मूँड़ना।
चौक ललन बैठारेन, लाल जी कै मूँड़ना।
दादी उनकै लटुरी मुड़ावै, बाबा खर्चे दाम, लालजी कै .... ।

अवध में कहीं-कहीं मूण्डन के बाद कर्णछेदन का संस्कार भी होता है, परन्तु इसको उतना महत्व नहीं दिया जाता जितना मुण्डन को दिया जाता है। शिशु जब कुछ खाने या चाटने लायक हो जाता है तो अन्नप्रासन का संस्कार भी मनाने की परम्परा है। इस दिन सरिया और सोहर गीत ढोलक मंजीरा बजाकर गाया जाता है तथा नेगियों को (बुआ, बहन) नेग देकर सन्तुष्ट किया जाता है। सामर्थ्यानुसार बन्धु-बान्धवों को भोजन भी कराया जाता है।

3. यज्ञोपवीत या जनेऊ गीत

इसे उपनयन संस्कार भी कहा जाता है। जनेऊ शब्द यज्ञोपवीत का अपभ्रंश रूप है। जन्म, जनेउ और विवाह ये तीनों अवधी लोकजीवन के महत्वपूर्ण संस्कार हैं। जनेउ के गीतों को भीखी गीत अथवा बरुआ गीत भी कहा जाता है। जिसका जनेउ हो रहा होता है उसे ब्रह्मचारी की संज्ञा से अभिहित किया जाता है, कार्यक्रम के समय वह काँख में तख्ती दबाकर बनारस विद्याध्ययन के लिए जाता है। गुरुकुल की परम्परा अनुसार वह पहले अपनी माता से तथा बारी-बारी से सभी सगे-सम्बन्धियों से भिक्षा की याचना करता हे। बाद में उसे घर में ही विद्वान, बाबा, आजा नाना आदि से वेदाध्ययन करने के लिए मनाया जाता है, लौटा लिया जाता है। जनेउ गीत की कुछ पंक्तियाँ दर्शनीय हैं -

मँड़ये मा ठाढ़े कवन रामा हिरिफिर चितवैं पलक नहीं मारैं
कहाँ गई आजी हमारि, भिक्षा लइ डारैं।
छिन एक विलंबौ दुलरूआ, घड़ी एक विलवौ,
कइके हम सोरहौ सिंगार भिक्षा लइ डारब हो।

इसी तरह परिवार के हर सदस्य-माता, पिता, बहिन, काकी, दादी, फुआ आदि का नाम ले लेकर गीत गाया जाता है जो बड़ी देर तक चलता है। भीख का कार्यक्रम सम्पन्न हो जाने के बाद बरुआ अपने सभी परिजनों (आजी, दादी, काकी, माता आदि) से मार्ग-व्यय तथा पाथेय की माँग करता है, परन्तु समझा-बुझा कर उसे आदरपूर्वक घर में ही पढ़ने की सलाह दी जाती है। इस तरह 7-8 घंटे कार्यक्रम चलने के बाद यज्ञोपवीत कार्यक्रम समाप्त होता है। सभी सगे सम्बन्धी भोजनोपरान्त विवाह का कार्यक्रम सम्पन्न करने के लिए बारात की तैयारी करते हैं। दूसरे दिन बारातियों के साथ दूल्हा विवाह करने के लिए ससुराल जाता है। रात भर कार्यक्रम चलने के बाद विवाह होता है। जनेऊ गीत की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं -

लाओ न आजी मोरी सेतुआ अउरू गुरू लेडुआ।
जैहों मैं काशी बनारस वेद पढ़ि अउवै।
काहै क जइहौ नाती कासी काहे बनारस
घर ही मा बाबा विदवान वेद पढ़ैं हैं।
इसी प्रकार सभी (दादी, काकी, नानी, बुआ) का नाम लेकर जनेउ गीत गाया जाता है।

4. विवाह गीत

षोडश संस्कारों में विवाह संस्कार को वैसे तो सर्वत्र महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है किन्तु भारत,

विशेषतः अवधी जनमानस में विवाह के प्रति जो उदात्त भाव है, प्रायः अन्य देशों में वैसा दृष्टिगत नहीं होता। हमारे यहाँ विवाह दो स्त्री-पुरूषों व दो शरीरों का ही नहीं दो आत्माओं का मिलन, यहाँ तक कि सात जन्मों का परस्पर सम्बन्ध माना जाता है। वैवाहिक कार्यक्रम के अवसर पर सर्वत्र आनन्द और उत्साह के साथ ही पवित्रता और भव्यता का वातावरणा छाया रहता है। अवध-प्रदेश में विवाह की पवित्रता और स्थायित्व बनाये रखने के लिए संस्कार आवश्यक माने जाते हैं। यहाँ तक कि अप्रशस्त्त, पैशाच, राक्षस, गन्धर्व और असुर विवाहों की सामाजिक स्वीकृति के लिए भी संस्कार अनिवार्य माने जाते हैं। कन्या और वर के बीच किसी प्रकार के संघर्ष या वैषम्य के समाधान के लिए संस्कारों की अनिवार्यता समझी जाती है। समाजशास्त्रियों के अनुसार विवाह के उद्देश्य तथा कार्य हैं - 1. स्त्री पुरूषों के यौन सम्बन्ध का नियन्त्रण तथा वैधीकरण 2. सन्तानोत्पत्ति, संरक्षण, पालन, तथा शिक्षण 3. नैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक कर्तव्यों का पालन।

अवधी लोकजीवन में वैवाहिक कार्यक्रमों के अवसरों पर कई प्रकार के शास्त्रोक्त एवं लौकिक कृत्यों का सम्पादन किया जाता है, और प्रत्येक अवसर पर विविध प्रकार के लोकगीत बड़ी श्रद्धा और आस्था के साथ गाये जाते हैं। गीत गाने की परम्परा कन्या व वर दानों पक्षों में बड़ी उमंग के साथ निहित रहती है, परन्तु कन्या पक्ष के गीतों में अधिक सरसता व माधुर्य रहता है। कन्या पराया धन है - उसे दूसरे घर जाना है अतः गीतों में करुणा और वेदना का भाव अधिक दृष्टिगत होता है। ये गीत बहुत ही हृदय विदारक होते हैं, साथ ही गीतों की ध्वनि के साथ ही नाना प्रकार के आयोजन भी सम्पन्न होते रहते हैं। बिना गीत के तो कोई कार्यक्रम होता ही नहीं। दोनों पक्ष के गीत अधिकतर समान होते हैं, पर कन्या पक्ष के कुछ गीत अलग भी होते हैं जैसे - द्वारचार गीत, विवाह, कन्यादान, भावर, सिन्दूरदान, कलेवा, सोहाग गीत, गौना तथा विदाई गीत आदि।

अवधी जन-जीवन में सोहरगीतों की तरह ही विवाह गीतों का विषय भी अत्यन्त विस्तृत और व्यापक है। माता-पिता को पुत्री के हाथ पीले करने की चिन्ता, वर खोजने की बाध्यताएँ तथा परेशानियाँ, योग्य वर की तलाश, वर के घर से कन्या के घर की दूरी का प्रश्न, दान-दहेज की समस्या, पिता की आर्थिक तंगी, इत्यादि विषय भी विवाह गीतों में बड़ी सहजता करुणा तथा वेदना के साथ गाये जाते हैं। वर की खोज में निकले हुए एक कन्या के पिता की करुणा-कहानी उसकी मर्मान्तिक वेदना अधोलिखित पंक्तियों में दर्शनीय है -

उत्तर हेरयों दखिन हेरयों, ढूँढ़यों मैं कोसवा पचास रे।
बेटी के बर नाही पायों मालिनि, मरि गयों भुखिया पियास रे।
बैठो न बाबूजी चनन चौकिया, पियो न गेडुअवा जुड़ पानि रे।
कइसन घर बर चाही ये बाबू कइसरन चाही दमाद रे।
सभवा बैठ हम समधी जे चाही, जैसे तरैया में चांद रे।
मचिया बैठल हम समधिन चाही, खोलि-खोलि बिरवा चबाति।
सातहिं पांच हम देवर जे चाही, ननदी के चाही अकेल।
दमदा के चाही सब कर नायक, सभा बिंच पंडित होय रे।

विवाह के समय सुहागिन स्त्रियाँ ही सभी शुभ कार्यो का सम्पादन करती हैं, पाँच या सात स्थितियों को मिलकर कार्य करना शुभ माना जाता है। बारात के आने पर सर्वप्रथम अगुवानी के गीत गाते हैं। बारातियों की गीतों से आवभगत की जाती है फिर द्वारचार के समय द्वारचार का गीत गाकर दूल्हे का स्वागत किया जाता है, इसके बाद भाती खवाई जाती है, तत्पश्चात विवाह का कार्यक्रम सप्तपदी, भाँवर

आदि का कार्यक्रम होता है। अवध में परिवारीजनों द्वारा कन्या और वर का पाँव पूजने की प्रथा है। कन्या का पिता 'कन्यादान' करने लगता है तो कन्यादान के गीत गाये जाते हैं। बारातियों के भोजन के समय ज्योंनार गीत भी गाये जाते हैं। जिसे अवध में गाली गीत भी कहते है। प्रातः उठने पर कलेवा और खिचड़ी के गीत गाये जाते हैं। खिचड़ी के बाद बारात की विदाई का कार्यक्रम प्रारम्भ हो जाता है।

लगन चढ़ने के बाद कन्या-पक्ष और वर-पक्ष, दोनों जगह गीत गाने का क्रम प्रारम्भ हो जाता है। सायंकाल गृहकार्यों को निपटाने के बाद घर-गाँव की स्त्रियाँ विवाह होने के दिन तक सामूहिक रूप से बैठकर विवाह गीत गाती है। सबसे पहले देवी-गीत, बाद में शिव, राम, कृष्ण आदि से सम्बन्धित विवाह गीत गाती हैं, फिर वर-वधू से सम्बन्धित गीत गाये जाते हैं। इसके बाद उबटन गीत, हल्दी गीत, तेल गीत, माड़ौ छवाने के गीत, भात गीत, लावा भुँजाई गीत, अगवानी गीत, कन्यादान सम्बन्धी गीत, लावा परछने के गीत, भाँवरो के समय के गीत, कोहर वर के गीत, बाती मिलाने के गीत, गाली गीत या ज्योंनार गीत, कन्या सोहाग गीत तथा सेहरा गीत, वर के जामा पहनने के गीत, कुँआ पूजने के गीत, नकटा, बारात सजावट के गीत, परछन गीत, इत्यादि समय-समय पर ढोलक बजाकर गाये जाते हैं। कभी-कभी कुछ स्त्रियाँ नृत्य भी करती हैं।

(ब) पर्व तथा सामाजिक उत्सवों के गीत

अवधी जन-जीवन पर्वों और सामाजिक त्यौहारों से परिपूरित है। पग-पग पर लोकजीवन में राग-रागिनियों के मध्य उल्लास और आनन्द की भावना दृष्टिगोचर होती रहती है। अवधी जनमानस में पर्वों तथा उत्सवों सम्बन्धी गीतों का विशाल भण्डार प्राप्त होता है। सुविधा की दृष्टि से इनका वर्गीकरण निम्नवत् किया जा सकता है -

1. **धार्मिक गीत :** धर्म सम्बन्धी गीतों में मुख्यतः देवी गीत, शीतला माता के गीत, दुर्गा माता के गीत शिव निर्गुण, हनुमान नाग आदि गीतों के साथ भजन गीतों की भी लम्बी सूची विद्यमान है।

2.**ऋतु-सम्बन्धी गीतः** चैता-सावन (बिरना बजरी), फाग (राम होली, कृष्ण होली) तथा बारहमासा आदि है।

3. **श्रम सम्बन्धी गीत :** जँतसार लगवही निरवही कटनी कोल्हू के गीत, चरखे के गीत तथा धान कूटने के गीत आदि।

4. **जाति सम्बन्धी गीत :** अहीर गीत (बिरहा) मल्लाह (बिरहा) तेली, कंहार, चमार, धोबी, भड़भुजा तथा पचरा आदि के गीत।

5. **विविध गीत :** मेला-गीत, बालगीत, लोरियाँ तथा खेलगीत आदि प्रमुख हैं।

1. धार्मिक गीत

अवधी लोकगीतों में धार्मिक गीतों का अपना एक अलग और महत्त्वपूर्ण स्थान है। लोकगीतों के माध्यम से सामाजिक मान्यताएँ धार्मिक परम्पराएँ व जनजीवन की आस्था तथा विश्वासों का प्रकटीकरण समय-समय पर होता रहता हैं। अवधी लोकजीवन आये दिन गंगा-माता, तुलसीमाता, हनुमान, शिव, नाग आदि की पूजा उपासना करता ही रहता है। इसके अतिरिक्त वह वृक्षों, पत्थरों, पशु पक्षियों तथा वनस्पतियों की पूजा-अर्चना भी बड़े विश्वास के साथ सम्पन्न करता है। यहाँ तक कि पारिवारिक मृतात्माओं व पूर्वजों के प्रति भी पूज्य भावों की अभिव्यक्ति निरन्तर करता रहता है। देवियों में प्रमुख रूप से शीतलामाता, दुर्गामाता, भगवान शिव, माँ पार्वती, गणेश जी, इन्द्र, हनुमान जी, काली माता, नाग देवता, सूर्य भगवान, अग्नि देवता, पवन देव, धरती माता, ग्राम देवता, ग्राम देवियाँ आदि के प्रति भी

श्रद्धानत होकर अपने तथा अपने परिवार की कल्याण कामना के लिए आरजू-मिन्नत करता रहता है। उक्त देवी देवताओं से सम्बन्धित अनेकानेक गीत, भजन तथा निर्गुण गा-गाकर पूजा-उपासना करता हुआ जीवन-यापन करता है। अवधी लोकमानस धार्मिक गीतों के द्वारा अपना सम्पूर्ण जीवन प्रसन्नता पूर्वक व्यतीत करता है। अभावों में भी वह सुखानुभूति करता है।

2. ऋतु-सम्बन्धी गीत

अवधी प्रदेश में अलग अलग ऋतुओं अथवा महीनों में अलग प्रकार के गीतों के गाने की परम्परा है। यहाँ फाल्गुन माह में फाग, फगुआ, चौताल गीत गाया जाता है तो चैत्र मास में चैता, धमार, मल्हार गाकर जनमानस अपना मनोरंजन करता है। सावन मास में सावन, विरना, कजरी तथा आल्हा का गायन स्थान-स्थान पर दृष्टिगत होता है। इसके अतिरिक्त कुछ गीत ऐसे भी हैं जो बारहों मास गाये जाते हैं। जिन्हें बारहमासा कहा जाता है। जायसी ने अपने पद्मावत में भी बारहमासा लिख कर नागमती के विरह वर्णन की मार्मिक व्यंजना किया है। कतिपय ऋतु-गीतों का संक्षिप्त परिचय निम्नवत है -

क. चैता - चैत्र मास में गाये जाने वाले गीतों को 'चैता' कहा जाता है। इसमें अन्य गीतों की अपेक्षा अधिक मनोहरता तथा हृदय-द्रावकता विद्यमान होती है। इसका वर्ण्य विषय संभोग तथा वियोग श्रृंगार होता है। इसके गाये जाने का ढंग भी दो प्रकार का है, एक तो साधारण चैता है, जिसमें कोई व्यक्ति विशेष बिना किसी वाद्ययन्त्र की सहायता के लयपूर्वक गाता है। दूसरे प्रकार का चैता वह है जो सामूहिक रूप से वाद्य-यन्त्रों की सहायता से गाया जाता है। प्रायः इसके गानेवाले दो दलों में विभक्त हो जाते हैं पहले दलवाले व्यक्ति प्रथम पंक्ति को गाते हैं तो दूसरे दलवाले उसके टेक को समवेत स्वर में तार स्वर में गायेंगे। इस प्रकार गाने का क्रम बहुत देर तक चलता रहता है। गाते-गाते गवैये भावावेश में घुटनों के बल खड़े होकर अहो रामा या हो रामा की गगन भेदी ध्वनि से समस्त वायुमण्डल प्रतिध्वनि कर देते हैं। संयोग श्रृंगार, प्रेम-सम्बन्धी गीत, पति-पत्नी की प्रणय-कलह, ननद-भावज का प्रेमालाप तथा व्यंग्यालाप, आदि विषय प्रमुखता से गाये जाते हैं। यथा -

गमकील फुलवा फुलाने हो रामा चैतहि मास।
रंगीन फुलवा फुलाने हो रामा चैताहि मास।
फुलवा फुलान बिरिछ हरसाने पात पात लहकाने हो राम चैतहि मास।

कोकिल बोल सुधारस भीने, बौर झौर झुपसाने हो रामा चैतहि मास।।

(ख) सावन - इसे झूला गीत भी कहते हैं। सावन के महीने में झूला झूलते समय स्त्रियाँ प्रायः यह गीत गाती हैं। बिरना तथा कजरी भी सावन के महीने में ही गाये जाते हैं। सावन समीप आते ही अवध में नवेली बहुएँ प्रायः अपने-अपने मायके में नागपंचमी का त्यौहार मनाने के लिए अवश्य जाती है। मायके में वे पूरी स्वतंत्रता के साथ सहेलियों के समूह में झूला झूलती और झुलाती हैं तथा अनेकानेक प्रकार के विषयों से समन्वित झूला-गीत गाती हैं। किसी गीत में भाई के आगमन की प्रतीक्षा होती है तो किसी में पिता से शीघ्र मिलने की लालसा, तो किसी में सहेलियों के साथ मिलकर झूला झूलने की मर्मस्पर्शी भावव्यंजना। सावन सच पूछिये तो त्यौहारों का महीना ही है। इसी में कजरी तीज, नागपंचमी, रक्षाबन्धन आदि ऐसे पर्व होते हैं कि बहुओं को मायके जाना अत्यावश्यक लगने लगता है। ऐसी दशा में यदि कोई भाई या पिता अपनी लाडली को लिवा लाने नहीं गया तो मानो उन पर वज्राघात हो जाता है। ऐसी मान्यता है कि उस माता-पिता तथा भाई की छाती वज्र से भी कठोर है जिसकी बेटी का सावन ससुर-गृह में व्यतीत हो - बजर कै छतिया माई केरी जेकरी बिटिया कै ससुरे मां सावन होय।"

(ग) बिरना : सावन मास में झूला झूलते समय बहनें जो गीत भाई को सम्बोधित करके गाती

हैं उसे बिरना कहते हैं। बिरना बड़ा ही कारुणिक और मार्मिक गीत होता है। भाई और बहन का कथोपकथन ही इसमें प्रमुखता से होता है। बहन अपने भाई तथा माता-पिता को तरह-तरह के तानें मारती है भाई उसका जवाब देता है। परन्तु बहन हर हाल में भाई के घर पहुँचने को आमादा रहती है। जो बहन किसी कारण से मायके नहीं जा पाती उसके सास-ससुर, देवर, जेठ तथा जेठानियाँ उसे व्यंग्य वाणों से आहत करती हैं। प्रायः यही इस गीत का प्रमुख विषय होता है।

(घ) **कजली :** अवध में इसे 'कजरी' भी कहते हैं। यह गीत अक्सर श्रावण मास में कारे-कारे कजरारे बादलों के नभाच्छन्न होने पर गाया जाता है। काले-काले बादलों की कालिमा के समय गाये जाने से इस गीत का नाम कजली पड़ गया है। सावन मास की शुक्ला तीज को पड़ने के कारण भी इसे 'कजली तीज' नाम दिया गया है। यह गीत वैसे तो पूरे अवधी प्रदेश में गाया जाता है, परन्तु मिर्जापुर की कजली विशेष प्रसिद्ध है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार 'लीला रामनगर की भारी, कजली मिर्जापुर सरनाम।'

अवधी प्रदेश में यह गीत विशेषत श्रावण मास में ही गाया जाता है। इसकी विषय वस्तु मुख्यतः प्रेम से सम्बन्धित है तथा विप्रलभ और संभोग दोनों प्रकार का शृंगार इसके प्रत्येक गीत में विद्यमान होता है। पति के आगमन की प्रतीक्षा, ननद-भावज का हास-परिहास, करुण भावों की हृदयद्रावक व्यंजना, आदि इन गीतों में विशेष रूप से दृष्टिगत होते हैं। एक कंजली गीत की कुछ पंक्तियाँ दर्शनीय हैं -

सइयां विलमि रहे परदेसवा, सपनेहु दीख सुरतिया ना।
सावन मास गरज घन बरसै, आवै झुकी अँधेरिया ना।
बिन पिय जिय रहि रहि तरसावे, चमचम चमकै बिजुरिया ना।
पिया-पिया रट रहृयो पपिहरा, कूँ कूँ करत कोइलिया ना।
भारी हूक उठत जियरा में, सूनी देखि सेजरिया ना।
तुम बिनु नाथ कटै नहि रतिया, तड़फों जैसे मछरिया ना।

(ड.) होली

होली हिन्दू-जन समुदाय का अत्यन्त लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण त्यौहार है। लहलहाती फसल देखकर किसान इस अवसर पर झूमने लगता है। जीवन के बड़े से बड़े गमों, वेदनाओं, विपदाओं को भूल कर वह फागुन के रंग में रंगीन हो जाता है। दुख-दर्द को भुलाकर फगुआ गीतों की तान में तान मिलाकर वह नाच उठता है। होली गीतों में प्रायः राधा-कृष्ण की होली का वर्णन ही विशेष रहता हैं, पर अवध क्षेत्र में राम, सीता और शिव का भी होली गीतों में वर्णन किया गया है।

राम के बालरूप का सुन्दर वर्णन ढोलक और झाँझ के साथ होली गीतों में मिलता है। कहीं कहीं होली पर गाली गाने की प्रथा है। गीत में 'अररर अररर कबीर' लगाकर भी गाया जाता है। होली गीत अनेक नामों से प्रसिद्ध है। जैसे होली, फाग, फगुआ, चौताल आदि। ये गीत उमंग और उत्साह से परिपूर्ण होते हैं। लोग प्रेमपूर्वक एक दूसरे पर रंग छोड़ते हैं, गुलाल-अबीर छोड़ते है। गीतों में हास-परिहास के साथ कहीं-कहीं विरह का भाव भी दृष्टिगत होता है। होली गीतों के साथ चौताल और उलारा भी अवध में गाने की परम्परा है। एक होली गीत की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

जमुना तट श्याम खेलैं होरी । जमुना तट ......।
केहिके हाथे म सोहे पिचकारी, केहिके हाथ अबीर झोरी। जमुना...।
कान्ह के हाथे मा सोहे पिचकारी, राधा के हाथ अबीर झोरी। जमुना.।
केहिके हाथे मा सोहे रंग गुलेली, केहिके माथे मा टीका मुँदरी।
दाऊ के हाथे मा सोहे रंग गुलेली, राधा के हाथे मा टीका मुँदरी। जुमना..।

(च) बारहमासा

यह ऐसा लोकगीत है जो साल के बारहों महीने में अवसरानुकूल गाया जा सकता है। इन गीतों में बिरहानुभूति का बड़ा रोमांचकारी चित्र उकेरा गया होता है। जायसी के पद्मावत में नागमती का विरह वर्णन बारहमासा शैली में ही लिखा गया है। इसमें लोकजीवन की अन्तःकरण की गहन अनुभूतियों की अभिव्यंजना पायी जाती है। बारहमासा गीतों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। अनेक सन्त कवियों ने बारहमासा गीत का गायन किया है। अवधी क्षेत्र में प्रायः आषाढ़ मास से इसका गायन प्रारम्भ हो जाता है और सभी महीनों की विचित्र मनोदशाओं का क्रमशः उल्लेख किया जाता है कि कहीं-कहीं चैत्र मास में भी इसके गाने की परम्परा है। बिरहिणी नारी के लिए बारहों महीने का प्रत्येक क्षण बड़ा ही कष्टकारी और गम्भीर अनुभूतियों और मनोवेदनाओं से युक्त होता है। उसको एक-एक पल घुट-घुट कर मसोस-मसोस, कर बिताना पड़ता है। विरहिणी स्त्री अपने प्रियतम का स्मरण कर अहर्निशि रोती-कराहती रहती है।

विरह-व्यथिता नारी निरन्तर आहें भरती हैं। वर्षा-ऋतु तो उसे कुछ ज्यादा ही कष्ट प्रदान करती है। उसका छप्पर टप-टप टपकता रहता है, पति की अनुपस्थिति में उसे कौन छवायेगा? घर-गृहस्थी के कार्य कौन करेगा? आदि चिन्ताएँ उसे जलाती रहती हैं। जाड़े की रात और गर्मी का दिन उसे पहाड़ सा लगता है -

अंगना तौ मोरे लेखे मधुवन, डुणुही भई है पहाड़।
सेजिया तौ मोरे लेखे नागिन बिनु पिया घै घै खाय।

इसी प्रकार

नहीं आये हमारे श्याम ।
जेठौ न आये, असाढ़ौ न आये, तरे कई भुभुरि ऊपर कै धाम।
सावन न आये, भादौं नहि आये, वहि चलीं नदिया, उमड़ि चले नार।
क्वारौ न आये, कातिक नहीं आये, उई गई जुन्हैया छिटकि रहे तार।
अगहन न आये, पूस नहीं आये, तार काँपै गुड़आ ऊपर काँपै सेज
माघ न आये, फागुन नहि आये पड़त गुलाल खेलैं सखि फाग।
चैतौ न आये वैसाखौ न आये, फरि गये आम, फूलि रहैं टेसू।

3. श्रमगीत

अशिक्षित होने के बावजूद लोकमानस अत्यन्त प्रसावन है। उसके पास मनोरंजन करने के लिए तनिक भी समय नहीं है। वह दिन भर घर गृहस्थी के काम में लगातार लगा रहता है। ऐसी दशा में श्रमपरिहारार्थ तथा मनोरंजनार्थ वह काम करते समय कुछ न कुछ गाता रहता है, गुनगुनाता रहता है। ऐसा करके वह काम ज्यादा कर लेता है, उसकी क्रियाशीलता बढ़ जाती है और न थकता है, न काम करने से ऊबता है। कार्य करते-करते जो गीत गाये जाते हैं उन्हें श्रमगीत कहा जाता है। कतिपय श्रमगीत विशिष्ट हैं, जो निम्नवत हैं -

(अ) **जँतसार** - चक्की या जाँत पीसते समय जो गीत स्त्रियाँ गाती हैं उन्हें जँतसार गीत कहा जाता है। अवध में प्रायः आटा पीसने का काम स्त्रियों के जिम्मे होता है, यह काम बहुत ही श्रमसाध्य होता है। जो स्त्री जाँत से आटा पीसने का काम करती है वह पसीने से तर बतर हो जाती है, तथा समय भी बहुत लगता है। अवध के गाँवों में प्रायः रात्रि चार बजे से ही चक्की चलने की घुरुर-घुरुर आवाज आज

भी सुनी जा सकती है। आज इस वैज्ञानिक युग में भी लगभग 10 प्रतिशत घरों में स्त्रियाँ जांत चलाकर आटा तैयार करती हैं। कालक्षेपनार्थ तथा श्रमपरिहारार्थ स्त्रियाँ गीत अवश्य गाती हैं। ये गीत करुण रस से ओत प्रोत होते हैं। इसमें कहीं विरहिणी नारी के हृदय की वेदना मुखरित होती है, तो कहीं पति-परित्यक्ता नारी के मन की टीस विद्यमान है तो कहीं सास अथवा ननद के अत्याचारों से प्रपीड़ित नारी के हृदय की वेदना आँसुओं के साथ अविरल गति से प्रवाहित होती दृष्टिगत होती है। गीतों में कोमलता और मधुरता भी होती है जो जाँत की गति के साथ गतिमान होती है। जँतसार गीत का एक उदाहरण द्रष्टव्य है, जिसमें कोई नवेली दुल्हन जाँत चला रही है। उसका भाई उससे मिलने आया है, सास की डर से वह जांत पीसना बन्द नहीं कर सकती है, उधर भाई से मिलने की उत्कण्ठा उसे विह्वल कर रही है, अन्ततः वह चलनी के गेहूँ से ही जल्दी समाप्त हो जाने की याचना करती है जिससे वह अपने भाई से मिल सके-

अरे हाली-हाली चुकउ चलनी के गेहुँआ रे ना।
मोरा भइया मिलनवा का ठाढ़ा रेना।

येन-केन-प्रकारेण वह भाई से मिलती है। अपने अन्तस की वेदना भाई से किन शब्दों में बयाँ करती है, यह देखने का विषय नहीं, सुनने और हृदयंगम करने का विषय है -

कै मन कूटौं भइया, कइ मन पीसौं रे ना।
भइया कइ मन रीधौं रसइयाँ रे ना।
सासू पनियाँ पताल से भरावैं रे ना।
सासू खाँची भर बसनाँ मँजावैं रे ना।

(व) निरवही गीत : खेतों की निराई-गुड़ाई को निरवही कहा जाता है। प्रायः बोयी गयी फसलों से इतर कुछ खर-पतवार खेतों में अपने आप उग आते हैं जिन्हें निरायी गुड़ायी करके खत्म किया जाता है, जिसमें श्रम और श्रमिक दोनों की आवश्यकता पड़ती है। इस कार्य के लिए स्त्रियाँ अधिक उपयुक्त पड़ती हैं। निराई करने के लिए जब 8-10 स्त्रियाँ खेतों में एक साथ एकत्र होती हैं तो श्रम परिहारार्थ, कालक्षेपनार्थ व मनोरंजनार्थ जो गीत गाती हैं उसे निरवही, तथा धान की रोपाई के समय जो गीत गाती हैं उसे 'लगवही' कहा जाता है। प्रायः निरवही और लगवही दोनों की विषय वस्तु एक ही होती है। दोनों में करुण-रस की ही प्रधानता होती है। दोनों गीत लम्बे होते हैं इसलिए निरवही करते समय काफी देर तक चलते हैं। इन्हें लोकगीत के बजाय यदि लघु लोकगाथा का नाम दिया जाय तो अधिक उपयुक्त होगा। आश्चर्य की बात तो यह है कि इतने लम्बे-लम्बे लोकगीत उन अनपढ़, गँवार स्त्रियों को कण्ठस्थ कैसे रहते हैं? जो गाते समय पर्त दर पर्त कदलि-गाभ की तरह ऐसे खुलते जाते हैं कि भूल-भटक होने का प्रश्न ही नहीं उठता। सम्भवतः ऐसा इसलिए कि ये गीत उनकी आत्मा के गीत होते हैं, उनका भोगा हुआ यथार्थ होता है। उनमें नारी-जीवन की करुण-गाथा होती है। इनका कथानक कुछ और नहीं, मुगलों का अत्याचार, अबला का उद्धार, सास-बहू के टन्टे व अत्याचार, पति-पत्नी के आचरण और अविश्वास, अग्नि-परीक्षा, सतीत्व और सौतियाडाह आदि हृदय विदारक कहानियों का स्पष्ट लेखा-जोखा ही विद्यमान होता है। एक निरवही गीत की कुछ पंक्तियाँ दर्शनीय है—

अपने ओसारे वसुमति मुँडवा जे मीजैं, बाबू कै परिगै नजरिया रेना।
की वसुमति तुँहु सँचवा कै ढारी की गढै सुधरा सोनरवा रे ना।
एक मूँठा काढ़े दूसर मूँठा काढ़ै, तिसरे मा पावै इन्दल मुँड़वा रे ना।
इंदल का मुड़वा लिहिन अँचरवा, झझकि के चढ़ी महोफवा रे ना।

भल किहा बाबू तू भल किहाँ, अपने दुआरे किहाँ रँड़वा रे ना।
बरै लागी लकड़ी, धधाकै लागी वसुमति, बाबू मीजैं दुइनौ हँथवा रे ना।
जौ हम जानित वसुमति अस छल क़रिबू, काहे मारित सग दम दवा रे ना।

(स) कोल्हू के गीत - कुछ समय पूर्व तेली जाति के लोग कोल्हू से तेल निकालने का काम करते थे, और श्रम शमनार्थ कुछ गीत गाया करते थे। इन गीतों में प्रायः संयोग, वियोग और करूण की प्रधानता होती है। इनमें अधिकांशतः तेलियों के जीवन का चित्रण होता है।

(द) चरखा गीत - प्राचीन काल में चरखे से सूत कातने का प्रचलन प्रत्येक परिवार में विद्यमान था। स्त्रियों की जीविका का एक मात्रा साधन भी था। विधवाएँ सूत कातकर अपना पेट पालती थीं। प्रोषिति पतिकाएँ सूत कातकर अपना समय व्यतीत करती थीं। चरखे के लाभकारी पहलू को देखकर ही गांधी जी ने चरखा चलाने पर विशेष बल दिया था। गीत की कुछ पंक्तियाँ दर्शनीय हैं -

धरि गये चनन चरखवा सिरिज गज ओबरि हो राम।
दिन भर कतबई चरखवा ओहरियाँ ओठघाँइ देबै राम।
रामा सांझ खनी सुबई मइया जी के कोरवा त प्रभु बिसराई देबै हो।

4. जाति-सम्बन्धी गीत

अवध में जाति भेद के आधार पर भिन्न-भिन्न जातियों के भिन्न-भिन्न गीत प्राप्त होते हैं। इन गीतों में उनकी पारम्परिक परम्पराओं, मनोभावों, आकाँक्षाओं तथा रीतिरिवाजों की झाँकी स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होती है, जिससे इन गीतों का महत्त्व और अधिक बढ़ जाता है। इनमें अहीर, मल्लाह, तेली, धोबी, कँहार, चमार, भड़भुजा आदि के गीत प्रमुख हैं और इनके नृत्य भी प्रायः समान ही होते हैं, तथापि विषयों में कुछ भिन्नताएँ अवश्य पायी जाती हैं। कुछ प्रमुख जातियों के गीतों का वर्ण्य विषय द्रष्टव्य है।

1. अहीरों का बिरहा गीत : बिरहा अहीरों का राष्ट्रीय गीत है। इसमें विरह वर्णनों की अधिकता होती है इसीलिए इसे बिरहा कहा जाता है। यह दो प्रकार का होता है पहला चार कड़ी वाला और दूसरे में रामायण, महाभारत या भरथरी आदि की कथाओं और गाथाओं का वर्णन रहता है। बिरहा गाने की एक विशेष राग है। कानों में उंगली डालकर नगाड़ा और बाँसुरी वाद्य यन्त्र के सहारे इसे गाया जाता हैं। अवकाश के क्षणों में बिना वाद्यों के भी गाया जाता है। कोमल भावनाओं के क्षणों के साथ-साथ वीर और शृंगार रस की भी अभिव्यक्ति बड़ी मनोहारी होती है। ये गीत खेतों में काम करते समय, हल जोतते समय, भैंस चराते समय, रास्ता चलते समय तथा विवाहादि अवसरों पर श्रम शमनार्थ व मनोरंजनार्थ गाये जाते हैं। बारहों महीनों को उद्देश्य करके बारहमासी बिरहा भी गाया जाता है। इसकी रागिनी कुछ इस प्रकार की होती है -

लागे मसवा असाढ़ भरिगे नदिया और नार
कैगे रातिव दिनवा गाढ़ वे ननद के बिरना।
लागे मसवा सवन् धरवा नाहीं बा सजन।
सन-सन चला था पवन, वे ननद के वीरना।

अथवा

भूखि के मारे बिरहा बिसरि गा,
भूलि गई कजरी कबीर
देखि के गोरी कै उभरा जोबनवा
अब उठैथै करेजवा मा पीर।

बिरहा गाने के बाद प्रायः लहरा भी गाया जाता है। लहरा में अश्लीलता का पुट अधिक होता है-

नजिराय गई बलमा मैं तोरे अंगना, तेरी लाख रूपैया मोरी हीरा कंगना।
तेरी सोने की अँगूठी, मोरा बाला जोबना, नजिराय गई बलमा मैं तोरे अंगना।

2. कहारों का गीत

कहारों के गीत को 'कहरवा' भी कहते हैं। कहार जाति के लोग पायः पालकी ढोते, पानी भरते तथा विवाह आदि अवसरों पर विविध प्रकार के स्वाँग करते समय इन गीतों को गाते हैं। इन गीतों की ध्वनि और लय प्रायः एक सी होती है। उदाहरणार्थ-

काली भवानी कलकतवा कै रानी, काला कलसे राख्यू ना।
कालकतवा मा कहार क तनि कुशल से राख्यू ना।
काली क चढ़ै राम करिया खँसियवा
महारानी जी क न, चढ़ै हरदी कै धरिया, महारानी जी क ना।
काली क गावौं, भवानी का गावौं अरे मरी का गावौं न।
करिया बझना का सुमिर के अरे मरी का गावौं न।

3. धोबियों के गीत

धोवियों के गीत भी बिरहा गीत के समान ही होते हैं, परन्तु थोड़ा सा लय और गति में अन्तर होता है। धोबियों का व्यवसाय चूँकि श्रमसाध्य होता है, इसलिए उनका गीत भी गाने में कुछ अधिक मशक्कत करनी पड़ती है। वैसे तो धोबी लोग काम करते समय अथवा अवकाश के क्षणों में अपना गीत गाते हैं परन्तु विशेष रूप से पुत्र जन्मोत्सव तथा वैवाहिक कार्यक्रमों के अवसरों पर विशेष साज-सज्जा एवं ढोलक हारमोनियम और मृदंग आदि वाद्ययंत्रों के साथ गाते हैं, तो अजीब समाँ बँध जाता है। एक गीत की कुछ पंक्तियाँ दर्शनीय हैं -

निबिया कै पेड़वा जबै नीक लागै जब निबकौरी न होय।
मालिक जब निबकौरी न होय।
गेहुँवा कै रोटिया जबै निक लागै, घिउ से चभोरी होय।
मालिक घिउ से चभोरी होय।
अच्छा धोबिया जबै निक लागै, धोवै बकुला कै पाँख।
मालिक धोवै बकुला कै पाँख।
अच्छा समिया जबै निक लागै, नौकर का खुस कै देय।
मालिक नौकर का खुश कै देय।

4. पचरा गीत : पचरा दुसाधों का गीत है। जब किसी व्यक्ति पर देवी सवार होती हैं तो उसे ओझा लोग पचरा गाकर देवी की मानमनौती करके उतारते हैं। ऐसा न करने पर देवी नाराज हो जाती है और उस व्यक्ति को दण्डित करती हैं। दुसाधों अथवा जन-जीवन को पूर्ण विश्वास है कि समस्त आधि भौतिक दुःख दर्द, पचरा गाकर ठीक किया जा सकता है। व्यक्ति को पूर्ण स्वस्थ करने के लिए दुःसाथ लोग प्रायः सुअर या खँसी (बकरी का बच्चा) की बलि चढ़ाते हैं और गीत गाते हैं -

छोटी-छोटी छोरिन के बाकी डेलरिया फुलवा लौढ़ौ ना।
केकरि होउ तुहुँ, छोटी छोटी छोहरी कि फुलवाँ लोढ़ौ ना।
देवी मलिया फुलवरिया की फुलवा लोढ़ौ ना।

5. तेलियों के गीत : तेलियों का गीत विरह-प्रधान होता है। यह तेली जाति का जातीय गीत है। प्रायः विवाहादि संस्कारों पर तेली स्त्रियाँ ढोलक बजाकर इसे गाती हैं। उदाहरणार्थ कुछ पंक्तियाँ दर्शनीय हैं -

आधी की रतिया तेलिनि धनियाँ लगावें
पछिलीकी रतिया को कोइलरि सबद सुनावैं।
कोइलरि के सबदिया सुनि सँवरिया उठि धावैं।
बढ़निया लइकै बहुअरि अँगना बहारैं।

6. भड़भुजा गीत : यह भी जातीय गीत है, इसे चनैनी कहते हैं। भड़भुजा लोग प्रायः इसे सूँप बजा-बजा कर गाते हैं। कतिपय पंक्तियाँ दर्शनीय हैं -

डिहवा लै गई उबरवा ना, डिहवा क मरी गै मसनवा ना।
गउना कै गई हम ठकुरवा ना, जेकरी सरन माँड़ारी डेरवा ना।
ठाकुर खेइ के लगावा बेड़ा परवा ना, सूरसती मोरी मतवा ना।

7. बेड़िया गीत : खानाबदोश या बेड़िया लोग किंगरी बजा-बजाकर गीत गाते हैं तथा भीख मांगते हैं। ये प्रायः भीख माँगने के समय गेरुआ वस्त्र पहन लेते हैं और एक गाँव से दूसरे गाँव जा-जाकर गीत गाते हुए भीख माँगते हैं। इनके गीतों के विषय पौराणिक तथा सामाजिक दोनों होते हैं। श्रवण-कुमार अथवा भक्त प्रहलाद का प्रसंग अधिकाँशतः ये गाते हुए दृष्टिगत होते हैं।

ई बालक अंधरी के आँहि, ई बालक सुरवा के आँहि।
लइलेव अँधरी अपने लाल लइलेव सुरवा अपने लाल।
दिन दिन अँधरी सेवन लागि, दिन-दिन सुरवा कै भैं उजियार।
सेई पालि के करै तयारि, बाभन पोथी लेउ विचारि।
कउनी धरी के सरवन पूत, कउनी धरी के कन्या रानि।

विविध गीत : विविध त्यौहारों, पर्व तथा स्नान आदि अवसरों पर मेला लगता है मेले में स्त्रियाँ झुण्ड बनाकर तरह तरह के गीत गाती चलती हैं, जिनमें भजन, झूमर, नकटा, बारहमासा, फाग, सावन आदि मौसम के अनुसार गीत गाती हैं। इनकी संख्या अनगिनत हैं।

अवध और अवधी

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

उत्तर भारत की धार्मिक स्थली अवध-क्षेत्र प्राचीन काल से ही जन और साहित्य में चर्चित रही है। गंगा, यमुना और सरयू की पवित्र धारा से अभिसिंचित यह भूमि अपने हृदय में युग-युग का इतिहास समेटे हुए है।

अवध के नामकरण के सम्बन्ध में विविध मत मिलते हैं। 'अवध गजेटियर्स' में वर्णन के अनुसार यह क्षेत्र 'कौशल' के नाम से जाना जाता था, जिसकी राजधानी 'अयोध्या' थी। 'अयोध्या' शब्द की रचना अ. युद्ध (अजेय नगरी) से हुई। लोक-प्रचलित शब्द अयोध्या को अज. युद्ध जैसे तत्सम शब्दों से सम्बद्ध कर उसे सृष्टिकर्ता 'ब्रह्मा की अपराजेय नगरी' भी कहा गया है। डॉ. विल्सन अयोध्या शब्द युध् धातु से सम्बद्ध होने के कारण युद्धवीर क्षत्रियों की नगरी का अर्थ व्यक्त करते हैं। इन व्युत्पत्तियों के अतिरिक्त 'अवध' की व्युत्पत्ति 'अवधि' रामचन्द्र के वनवास की अवधि से भी बताई जाती है।

'अवध' शब्द संभवतः 16वीं शताब्दी के पूर्व नहीं मिलता। इसको अयोध्या का लिपिभ्रष्ट रूप भी माना जा सकता है। फारसी लिपि में लिखे जाने पर 'अयोध्या' शब्द के वर्णों का विकास 'अवध' शब्द के आविर्भाव का कारण हो सकता है। अयोध्या के दूसरे और तीसरे अक्षरों में नुक्ते के लुप्त हो जाने पर उसकी परिणति अवध के रूप में सहज ही हो जाती है।

इस प्रकार 'अवध' का प्राचीन नाम 'अयोध्या' था, जिसकी स्थापना वाल्मीकि रामायण के अनुसार मनु के द्वारा की गयी और मनु-पुत्र इक्ष्वाकु ने उसे पूर्ण रूप से बसाया। तदनन्तर वही क्षेत्र 'कौशल' के नाम से अभिहित हुआ और मध्ययुग में लोक प्रचलन का सम्बल लेकर 'अवध' कहा जाने लगा।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने अपनी विश्वप्रसिद्ध रचना 'रामचरितमानस' में कई बार 'अवध' का वर्णन किया है—

अवधपुरी मम पुरी सुहावनि। उत्तर दिसि बह सरयू पावन।

x **x** **x**

बंदउँ अवधपुरी अति पावनि। (बालकांड)

वर्तमान समय में अवध शब्द लुप्तप्राय हो चुका है किन्तु इसकी अवधारणा उत्तर प्रदेश के फैजाबाद व उसके निकटवर्ती जनपदों से लिया जाता है और इस क्षेत्र में बोली जानेवाली भाषा 'अवधी' कहलाती है।

अवध का विस्तार

अवध के क्षेत्र-विस्तार की अवधारणा समय-समय पर परिवर्तित होती रही है। इसके क्षेत्र विस्तार का परिचय कौसल के नाम से अभिहित होने से मिलता है। डॉ. रायचौधरी ने पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एनसेंट इण्डिया, पृ.सं. 64 पर लिखा है - कोसल का साम्राज्य लगभग आधुनिक अवध के बराबर ही था। विदेह राज्य उसकी

पूर्वी सीमा पर था और सदारा नदी (आधुनिक गण्डक) दोनों राज्यों की मध्यरेखा थी। पश्चिमी सीमा पर पांचाल देश, दक्षिण में सर्पिका अथवा स्पंदिका (सई) नदी और उत्तर में नेपाल की गिरि श्रेणियाँ थीं।

ह्वेनसांग ने वेदधरातल में 'अवध' की सीमा इस प्रकार निर्धारित की है- 'अवध' की सीमा चारों ओर पहाड़ों, चट्टानों और जंगलों से घिरी हुई थी। और इसका क्षेत्रफल पांच हजार वर्ग मील था। कालान्तर में अवधराज्य मगध राज्य में विलीन हो गया और समय-समय पर उसकी सीमाएँ परिवर्तित होती रहीं। सम्राट अकबर के शासनकाल में (16वीं सदी) में 'अवध' एक प्रमुख सूबा बना। इस सूबे को अकबर ने 12 प्रान्तों में विभक्त किया था, जिसमें 'अवध प्रान्त' का प्रमुख स्थान है। तद्‌युगीन इसका क्षेत्र विस्तार उत्तर में हिमालय की पर्वत-श्रेणी, पूर्व में बिहार प्रान्त, दक्षिण में इलाहाबाद सूबे की मानिकपुर सरकार और पश्चिम में कन्नौज तक लगभग 125 कोस (260 मील) लम्बाई और उत्तरी पर्वत श्रेणी से लगाकर मानिकपुर सरकार की उत्तरी सीमा तक 114 कोस (228 मील) चौड़ाई थी। सम्पूर्ण सूबे में पाँच जिले थे, जिसका विस्तार बहुत कुछ विषम था। वे थे अवध, फैजाबाद, गोरखपुर, बहराइच, लखनऊ और खैराबाद। इन सब का क्षेत्रफल एक करोड़ एक लाख इकहत्तर हजार अस्सी बीघा था।

1857 ई. के समय के नार्थ वेस्टर्न, प्रॉविन्सेज ऑफ आगरा एण्ड अवध का नाम जो 1902 ई. में पुनः परिवर्तित होकर यूनाइटेड प्रॉविन्सेज ऑफ आगरा एण्ड अवध हो गया। 1937 ई. में संक्षिप्त होकर 'संयुक्त-प्रान्त' (यूनाइटेड प्रॉविन्सेज) हो गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लगभग ढाई वर्षों के पश्चात् यह अपने वर्तमान नाम 'उत्तर प्रदेश' से अभिहित हुआ।

ब्रिटिश शासनकाल में 'यूनाइटेड प्राविंसेज ऑफ आगरा एण्ड अवध' और स्वतंत्र भारत में 'संयुक्त-प्रान्त' के नवीन नाम 'उत्तर प्रदेश' के अंगरूप में अवध-क्षेत्र में बारह जिलों की गणना की जाती है- फैजाबाद, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, रायबरेली, लखनऊ, बाराबंकी, उन्नाव, खीरी, हरदोई, गोण्डा, बहराइच। वर्तमान सीमाओं के अनुसार अवध अक्षांश 25^0 $34''$ और 29^0 $6''$ उत्तर तथा देशांतर 79^0 $45''$ और 83^0 $11''$ पूर्व के बीचों-बीच स्थित है। जहां गंगा उसकी दक्षिणी पश्चिमी सीमा है, केवल वही पूरा भाग समीपस्थ सरकारों से प्राकृतिक सीमा द्वारा पृथक् है। पूर्व में 60 मील की सीमा के साथ हिमालय की सबसे निचली चोटियों के साथ जुड़ा हुआ और विन्ध्य से हिमांचलीय तराई में कुछ दूर तक निकला हुआ, नेपाल अवध के पूरे उत्तरी भाग से सटा हुआ है। पूर्व और पश्चिम में उत्तर-पश्चिम प्रदेशों के प्राचीनतर स्थित जिलों से अवध घिरा हुआ है। उसके एक ओर यदि जौनपुर, बस्ती और आजमगढ़ है, तो दूसरी ओर शाहजहाँपुर, फरुखाबाद और कानपुर। इसका कुल क्षेत्रफल 23,930 वर्गमील है।

इस प्रकार अवध-क्षेत्र पूर्व में बनारस से लेकर पश्चिम में बरेली तक तथा उत्तर में नेपाल की सीमा क्षेत्र से लेकर दक्षिण में इलाहाबाद तक विस्तृत है।

अवधी भाषा

अवधी शब्द अवध में 'इ' प्रत्यय लगाने से बना है। यह क्षेत्र का नाम है और 'ई' प्रत्यय सूचक है। अवधभूमि अपनी सांस्कृतिक पीठिका एवं ऐतिहासिक विवृत्ति की वृहत्तर भूमिका के साथ-साथ साहित्यिक उन्मेष की उद्‌भाविका रही है। अतः इस क्षेत्र की भाषा परम्परा का विकासात्मक अध्ययन अपनी सार्वजनिकता के कारण विशेष महत्वपूर्ण है। हिन्दी की प्रमुख उपभाषा होने के कारण अपनी भाषिक, साहित्यिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक निधि के रूप में अवधी का विशेष महत्त्व राष्ट्रभाषा के उत्कर्ष में सहायक सिद्ध होगा।

अवधी का अर्थ है - अवध का। किन्तु साहित्य के क्षेत्र या भाषा में जब अवधी शब्द का प्रयोग होता है तब इसका अर्थ होता है अवध के अन्तर्गत बोली जानेवाली बोली या विभाषा। अवधांचल में बोली

जानेवाली अवधी भाषा का पूर्वी हिन्दी की बोलियों (अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी) में सर्वोपरि स्थान है। अवधी शब्द से ऐसा बोध होता है कि यह अवध मात्र की बोली है, किन्तु यह बोली अवध-अंचल में ही सीमित नहीं है। अवधी जहाँ एक ओर अवध-अंचल के कुछ क्षेत्रों (जैसे हरदोई जिले में अथवा खीरी और फैजाबाद के कुछ अंशों में) नहीं बोली जाती है और वहीं दूसरी ओर अवध के बाहर कुछ जिलों में (जैसे फतेहपुर, इलाहाबाद, जौनपुर और मिर्जापुर) बोली जाती है। अवधांचल की बोली के रूप में विख्यात अवधी शब्द को विशेषतः अन्य दो नामों पूर्वी और कौसली से भी जाना जाता है। डॉ. हरदेव बाहरी ने कोसली नाम पर आपत्ति करते हुए लिखा है कि - पूर्वी अवधी हिन्दी की महत्त्वपूर्ण बोली है। अयोध्या से औध और अवध बना है। अयोध्या का प्रदेश 'कौशल' के अन्तर्गत था। वास्तव में कौशल बहुत बड़ा प्रदेश था जिसकी सीमाओं का ठीक-ठीक पता नहीं चल पाया। इतना निश्चित है कि कौशल के दो भाग थे - उत्तर की राजधानी 'श्रावस्ती' तथा दक्षिण की राजधानी 'अयोध्या'। इसलिए अवधी के लिए 'कोसली' नाम देना उपयुक्त नहीं है। डॉ. बाबूराम सक्सेना ने अपने ग्रन्थ 'अवधी का विकास' में कभी-कभी अवधी के लिए बैसवाड़ी शब्द का प्रयोग किया है। बैसवाड़ा के अन्तर्गत उन्नाव, लखनऊ, रायबरेली और फतेहपुर जिले आते हैं। बैसवाड़ी अवधी की अपेक्षा कर्णकटु बोली है जो उपयुक्त नहीं है। अतः अवधी नाम ही ठीक है।

हिन्दी की समस्त बोलियों की तुलना में अवधी बोली का क्षेत्र अधिक विस्तृत है। अवधी भाषा का प्रसार देश के कोने-कोने तक है। अवधी बोली को बोलनेवालों की संख्या लगभग ढाई करोड़ है और इसका क्षेत्रफल लगभग साढ़े पैंतीस वर्गमील है।

अवधी भाषा-भाषियों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक उल्लेखनीय है। बघेली, छत्तीसगढ़ी, कन्नौजी और भोजपुरी, की कुछ बोलियों को मिलाकर जो अवधी का रूप प्राप्त होता है वह लगभग 7 करोड़ व्यक्तियों के बीच आज प्रचलित है। भोजपुरी से मिल-जुलकर यह भाषा भारत मूल के प्रवासियों (विदेशियों) के बीच भी बोली जा रही है, विशेषतः मारीशस, फिजी, सूरीनाम, आदि देशों में। तात्पर्य यह है कि बहुभाषिकता अवधी का एक महत्वपूर्ण पक्ष है।

कोसल की राजधानी श्रावस्ती थी, जो राजा प्रसेनजित के शासनकाल में पर्याप्त सुरक्षित थी किन्तु कालान्तर में इसकी राजधानी 'साकेत' हो गयी फिर भी श्रावस्ती का महत्त्व बना रहा। प्राकृत और अपभ्रंश काल में इसका उच्चारण 'अउध' हो गया। तुर्क शासन में इसका नाम 'अउध' या अवध था। अतः अवध से ही अवधी भाषा का नामकरण हुआ और यहाँ पर बोली जानेवाली भाषा अवधी कहलायी।

अवधी की उत्पत्ति

अवधी की उत्पत्ति 10-11वीं शताब्दी के आसपास हुई। इसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं, जो कुछ उपलब्ध हैं, उन पर विद्वान एकमत नहीं हैं। डॉ. अम्बाप्रसाद सुमन ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी और उसकी उप-भाषाओं का स्वरूप' में विचार व्यक्त करते हुए कहा है - वास्तव में साहित्यिक भाषा का विकास मूलतः किसी जनबोली से ही हुआ करता है। यही बात अवधी के लिए भी लागू होती है। कोशल प्रदेश में मध्य-भारतीय आर्यभाषा काल में जो भाषा बोली जाती थी उसी से अवधी नामक उपभाषा विकसित हुई।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अवधी का उद्गम स्थल नागर अपभ्रंश भाषा से माना है। इनका कथन है - अप्रभ्रंश या प्राकृत काल की काव्य-भाषा के उदाहरणों में आजकल की भिन्न-भिन्न बोलियों के मुख्य-मुख्य रूपों के बीज या अंकुर दिखा दिये गये हैं। इनमें से ब्रज और अवधी के भेदों पर कुछ विचार करना आवश्यक है, क्योंकि हिन्दी काव्य में इन्हीं दोनों का व्यवहार हुआ है।

अवधी के पश्चिम में जो भाषाएँ एवं बोलियाँ (कन्नौजी ब्रज आदि) चलन में हैं, उनको शौरसैनी से उद्भूत माना गया है। इसी प्रकार पूर्व में भोजपुरी को मागधी से निष्पन्न माना गया है। इसी आधार पर भौगोलिक दृष्टि से प्रकाण्ड विद्वान जार्ज ग्रियर्सन ने अवधी या पूर्वी हिन्दी की उत्पत्ति अर्द्धमागधी से माना हैं लेकिन अवधी को अर्द्धमागधी की मुख्य विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है तो ज्ञात होता है कि कर्ता एकवचन का 'ए' व्यवहार केवल कुछ बोलियों में 'इ' में अन्त होनेवाले अपूर्ण कृदन्त में मिलता है। न तो संज्ञा और न ही अवधी की पूर्वी बोलियों में प्राप्त मूल सम्बन्ध वाचक एकवचन 'के' के अतिरिक्त किसी परसर्ग में 'ए' का चिन्ह मिलता है। इसके विपरीत अविकारी एकवचन का उकारान्त रूप शौरसेनी 'ओ' की ओर स्पष्टतया संकेत करता है। अपूर्ण और पूर्ण कृदन्त का क्रमशः 'के', 'इ' और 'ए' पश्चिमी हिन्दी की पड़ोसी बोलियों में भी मिलता है। पूर्वी हिन्दी का सम्बन्ध जैन अर्द्धमागधी की अपेक्षा पालि से अधिक है किन्तु जैन अर्द्धमागधी की अपेक्षा पालि प्राचीन रूप है। जैन अर्द्धमागधी का सम्पादन पाँचवीं शताब्दी में हुआ था। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्राचीन मागधी बाद की अर्द्धमागधी से भिन्न थी और इसी प्राचीन अर्द्धमागधी से अवधी निष्पन्न हुई है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने अवधी की उत्पत्ति 'कोसली' से माना हैं, ब्रज भाषा के प्रख्यात कवि श्री जगन्नाथ दास रत्नाकर के अनुसार - अवधी शौरसेनी से विकसित हुई है और अवध प्रदेश या कोशल प्रान्त शौरसेनी के ही अन्तर्गत सम्मिलित है। ब्रज अवधी और मैथिली के पुराने नमूनों में बोलियों की विशेषताएँ मिलती हैं। मैथिली अपभ्रंश (अवहट्ट) में स्वयं मैथिली की विशेषताएँ मिलती हैं। इस अवहट्ट के चिन्ह विद्यापति रचित 'कीर्तिलता' की भाषा में मिलते हैं। पूर्वी हिन्दी से सम्बद्ध कोई ग्रन्थ नहीं मिलते हैं।

डॉ. नामवर सिंह का मत इन सभी से भिन्न है- ब्रज भाषा का प्रारम्भिक इतिहास शौरसेनी अपभ्रंश से सम्बद्ध किया जा सकता है, परन्तु अवधी के किसी साहित्यिक अपभ्रंश का पता नहीं चलता। अवध प्रान्त सूरसेन और मगध के बीच में होने से दोनो क्षेत्रों की भाषा सम्बन्धी विशेषताओं से युक्त समझा जाता है। वर्तमान भाषाओं के पूर्व शूरसेन में शौरसेनी अपभ्रंश, मगध में मागधी अपभ्रंश और इन दोनों के मध्य भाग में अर्द्धमागधी अपभ्रंश का प्रचलन रहा होगा। इसी अनुमान पर अर्द्धमागधी अवधी के उद्गम का भी अनुमान किया जाता है। भाषाविदों के अनुसार अवधी का उद्भव और विकास मागधी और शौरसेनी के मध्य स्थित उस क्षेत्रीय अपभ्रंश से हुआ है, जिसकी मूलाधार मागधी थी, परन्तु शौरसेनी का उस पर व्यापक प्रभाव पड़ा था यही कारण है कि प्राकृत वैयाकरणों ने उसे अर्द्धमागधी की संज्ञा दी है।

विवेचना की दृष्टि से अम्बाप्रसाद सुमन जी का मत स्पष्ट नहीं है, क्योंकि 'मध्यकाल में जो भाषा प्रचलित रही हो' से उत्पन्न कहा है। इस प्रकार से उन्होंने नामित न करके भ्रम पैदा किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत भाषा और व्याकरण की दृष्टि से अत्यधिक प्रामाणिक है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से रत्नाकर जी का मत तो बिल्कुल निराधार साबित होता है क्योंकि शौरसेनी से तो ब्रजभाषा की उत्पत्ति मानी गयी है और ब्रज और अवधी दोनों के वाक्य-विन्यास एवं शब्द-रचना में बड़ा अन्तर है। ग्रियर्सन जी और बाबूराम सक्सेना जी एक दूसरे के समर्थक दिखते हैं। किन्तु अपभ्रंश की समग्र सामग्री सम्यक् रूप से उपलब्ध न होने के कारण वर्तमान साक्ष्यों के आधार पर अवधी का वास्तविक उद्भव अब भी विवादास्पद बना हुआ है।

अवधी का विकास

विकास की दृष्टि से अवधी को तीन चरणों में बाँटा जा सकता है :

1. प्रारम्भिक काल - 1400 तक, 2. मध्यकाल - 1400 से 1700 तक, 3. आधुनिक काल -

1700 से अब तक।

अवधी भाषा के प्राचीनतम चिन्ह तो हमें पहली शताब्दी से ही मिलने लगते हैं। कोई भी भाषा या बोली अचानक नहीं आ जाती है। पहले उसका प्रयोग समाज में होता है तब कहीं वर्षों बाद वह साहित्य के रूप में सामने आती है। प्राकृत पैंगलम्, राउलबेल तथा कीर्तिलता आदि में अवधी के शब्द रूप देखे जा सकते हैं।

इस प्रकार अवधी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये हैं। अवधी की उत्पत्ति किसी बोल-चाल की भाषा से ही हुई होगी। अनुमानतः अर्द्धमागधी से ही हुई होगी।

अवधी के विभिन्न रूप

हिन्दी भाषा की अवधी एक प्रमुख उपभाषा है किन्तु अवधी के कई रूप देखने को मिलते हैं - पूर्वी, कोशली, लखीमपुरी, बैसवाड़ी आदि।

1. पूर्वी

प्रसिद्ध भाषाविद् जार्ज ग्रियर्सन ने अपनी पुस्तक 'भारत का भाषा सर्वेक्षण' में अवधी को पूर्वी बोली कहा है।

डॉ. बाबूराम सक्सेना पूर्वी नाम पर आपत्ति करते हुए अपना मत प्रकट करते हैं - बिहार की बोलियों को भी पूर्वी(पुरबिया) कहा जाता है। अतः अवधी के लिए पूर्वी नाम अतिव्याप्ति दोष के कारण स्वीकार करना उचित नहीं है।

2. कोशली

कोशली को भी अवधी का ही रूप डॉ. बाबूराम सक्सेना मानते हैं - कोशली कोशल राज्य की भाषा का नाम हो सकता है।

कोशली के सम्बन्ध में हरदेव बाहरी अपना तर्क प्रस्तुत करते हैं - उत्तर में उत्तर कोशल (अयोध्या के आस-पास), दक्षिण में दक्षिण कोशल (अयोध्या के आस-पास) दो भाग थे। पूरे कोशल को 'महाकोशल' के नाम से जाना जाता था। इस प्रकार 'कोशल' राज्य में प्रायः अवधी और छत्तीसगढ़ी क्षेत्र आता था। इस तरह कोशली लगभग सम्पूर्ण हिन्दी की बोधक है न कि मात्र अवधी की। इसलिए केवल अवधी के लिए 'कोशली' नाम देना उपयुक्त नहीं है।

3. लखीमपुरी या गांजरी

सन् 1923 ई0 में डॉ. बाबूराम सक्सेना ने प्रो. टर्नर के निर्देशन में अवधी की उपबोली लखीमपुरी पर कार्य किया था। बोली-विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी में यह प्रथम कार्य था, जिसका सूत्रपात डॉ. सक्सेना ने किया था।

माननीय ब्लाख महोदय ने उक्त लेख 'लखीमपुरी' की समीक्षा पेरिस की भाषा-विज्ञान परिषद् की मुख पत्रिका में प्रकाशित करायी। भाषा-भूगोल के अनुसार उनके अध्ययन का निष्कर्ष यह था कि खीरी जिले की बोली हरदोई और फैजाबाद के हिस्से में भी बोली जाती है।

4. बैसवाड़ी

'बैसवाड़ी' शब्द-स्तर पर सर्वेक्षण करने का प्रथम श्रेय डॉ. देवीशंकर शुक्ल को जाता है। उन्नाव और रायबरेली के 14 परगनों को 'बैसवाड़ा' नाम से जाना जाता है, क्योंकि इस प्रदेश पर बैस ठाकुरों का

अधिकार रहा है जिनमें से कुछ राव राजा अपनी वीरता और देशभक्ति के लिए प्रसिद्ध हुए हैं। ....वस्तुतः बैसवाड़ी का प्रयोग हुआ है। प्रकारान्तर में यही बैसवाड़ा, वैसवारा कहलाता है और यहाँ की बोली बैसवाड़ी, बैसवारी कही जाती है।

इसके सामाजिक वर्गों के अनुसार शब्द सम्पत्ति की समीक्षा सामाजिक स्थिति, सामाजिक वर्गों, व्यवसायों तथा वय के अनुसार डॉ. देवीशंकर ने की है। इनके शब्दावली के विवेचन का आधार वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक तीनों प्रकार का रहा है। इन्होंने शब्दावली के क्षेत्रीय रूपों की ओर भी ध्यान दिया है, जैसे 'के हियाँ' तथा 'खियाँ' दोनों रूप मिलते हैं- 'राम के हियाँ जे रही/ राम खियाँ गे रही।'

साथ-साथ यह भी देखा गया है कि एक ही शब्द कई बोलियों में सामान्य रूप और अर्थ सहित प्रचलित मिलता है। एक ही शब्द अत्यन्त साधारण ध्वनियों सहित विभिन्न बोलियों में मिलता है तथा इसकी बोली का एक प्रसंग का शब्द दूसरी बोली के उसी प्रयोग में व्यवहृत होकर भी किसी अन्य सम्बन्धित वस्तु के लिए प्रचलित हो जाता है। एक ही शब्द के अनेक रूप मिलते हैं जैसे - 'आगे' 'आगा' 'आगू' अंगाड़ी' 'अगमन' 'अगाँरू' 'अगन्त' 'अगहा' 'अगमाला' 'अगुवा' 'अगरासनु' आदि।

डॉ. बाबूराम सक्सेना ने अपनी डी.लिट्. शोधोपाधि 'एवोल्यूशन ऑव अवधी' शीर्षक में पहली बार अवधी के रूप (उपबोलियों) का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण प्रस्तुत किया है।

1. पश्चिमी बोली - खीरी, सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव, फतेहपुर।
2. केन्द्रीय बोली - बहराइच, बाराबंकी, रायबरेली।
3. पूर्वी बोली - गोण्डा, फैजाबाद, सुलतानपुर, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, जौनपुर, मिर्जापुर।

वर्णित अवधी के रूपों में डा. बाबूराम सक्सेना का रूप निर्धारण अत्यधिक वैज्ञानिक एवं मान्य है।

अवधी की सामान्य विशेषताएँ

पूर्वी हिन्दी (अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी) में अवधी महत्वपूर्ण साहित्यिक भाषा है। अवधी के पुल्लिंग संज्ञा शब्दों में वा (धोखा) प्रत्यय लगता है। यह रूप विकारी भी नहीं होता, घोड़वा के (घोड़े को) पुल्लिंग शब्दों में अविकारी और विकारी दोनों में 'न' प्रत्यय लगता है जैसे घोड़वन (घोड़े तथा घोड़ों) ज्यादातर भविष्यत् रूप 'ह' से बनता है - करिहौं (करूँगा), भविष्य का एक रूप 'ब' से भी बनता है - करिबा (करेंगे)। अवधी की प्रमुख विशेषता यह है कि विशेषण या कृदन्त रूपों में लिंग की अन्विति नहीं होती। करत हौं (करती हूँ/ करती हूँ), चलेउँ (मैं चला/चली), तोर (तेरा), मोर (मेरा), दोसर (दूसरा) आदि। भूतकाल का रूप इस/इसि प्रत्यय लगने से बनता है - (कहिस/कहिसि) कहा। अवधी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें 'ने' प्रत्यय नहीं लगता। ऊ कहिस (उसने कहा)। ध्वनि की दृष्टि से अवधी में ऐ/ओ मूल स्वर नहीं हैं, संध्यक्षर स्वर हैं, जिनका उच्चारण क्रमशः 'अइ' और 'अउ' के समान होता है।

अवधी ध्वनियाँ

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ।

क ख ग घ ङ (कवर्ग)

च छ ज झ ञ (चवर्ग)

ट ठ ड ढ ण (टवर्ग)

त थ द ध न (तवर्ग)

प फ ब भ म (पवर्ग)

य र ल व स ह ड़ ढ़ न्ह म्ह ल्ह रह।

'ए' 'ओ' के ह्रस्व एवं दीर्घ दोनों ही रूप हैं। इ, उ, ए, के जयित रूप (गीलि साँपु, काहे से) भी मिलते हैं। सभी स्वरों के आनुनासिक रूप भी प्रयोग होते हैं।

(क) ध्वन्यात्मक विशेषताएँ

1. अवधी में अ ध्वनि निरक्षरित है। यह केवल आघातहीन अक्षर के बीच या अन्त में ही आती है - क महतारी।

2. इसमें ह्रस्व इ और उ के अघोष रूप मिलते हैं - कहति, जाति, घरु, सेरु, आदि।

3. अवधी में वैसे तो खड़ीबोली की सभी स्वर ध्वनियाँ विद्यमान हैं, किन्तु इसमें 'ए' और 'ओ' के स्वरों के उच्चारण की प्रवृत्ति बहुलता से पायी जाती है। यथा - एहिका, कहिका, ओहिका, बेखा, लोखा, जेंहि, तेंहि, आदि।

4. असमान स्वरों की समीपवर्ती स्थिति अवधी उच्चारण की एक प्रमुख विशेषता है। अर्थात् ह्रस्व 'इ' 'उ' के बाद दीर्घ 'आ' का उच्चारण होता है, जबकि खड़ीबोली में ऐसा नहीं है। यथा :

खड़ीबोली	**अवधी**
स्यार (सियार)	सिआर
ग्वाल	गुआल

5. हिन्दी के 'ऐ' 'औ' अवधी में क्रमशः 'अई' 'अउ' संध्यक्षर रूप में परिणत होते हैं। यथा :

हिन्दी	**अवधी**	**हिन्दी**	**अवधी**
पैसा	पइसा	ऐसा	अइसा
कौआ	कउआ	औरत	अउरत

6. हिन्दी के 'अकारान्त' शब्द अवधी में 'इकारान्त' हो जाते हैं। जाता-जाइत, खाता-खाइत, सोता-सोइत।
7. अवधी में निरक्षरित स्वरों को छोड़कर शेष सभी स्वरों के अनुनासिक रूप पाये जाते हैं। यथा- लंठ, साँप, हींग, ऊँच, घेंटुवा, सोंठि आदि।
8. इसमें भी अन्य बोलियों की तरह 'ण' के स्थान पर न का प्रयोग होता है। चरण-चरन, मणि-मनि, रावण-रावन, गुण-गुन, लक्ष्मण-लक्ष्मन, आदि।
9. खड़ी-बोली हिन्दी के श, ष, के स्थान पर अवधी में केवल स का ही प्रयोग मिलता है। श्वांस-सांस, शब्द-सबद, सुयश-सुजस, विश्वामित्र-विस्वामित्र, ऋषि-रिसि, भूषण-भूसन, षोडष-सोरह। कभी-कभी 'ष' का 'ख' भी हो जाता है। यथा, वेष-भेख, हर्ष-हरख।
10. अवधी में ड़ और 'ल' प्रायः र में परिवर्तित हो जाते हैं। यथा - साड़ी-सारी, पहाड़-पहार, थोड़ा-थ्वार, जुड़त-जुरत, जोड़-जोर, हल-हर, फल-फर, अंजलि-अंजुरी, मूली-मूरी, जोड़ी-जोरी।
11. अवधी में 'य' और 'व' श्रुतियों का प्रयोग भी पाया जाता है। यथा - एहि-यहि, ओहि-वहि, एक-याक, थोड़ा-थ्वार। कभी-कभी इनके स्थान पर 'अ' का उच्चारण भी मिलता है। छुअत, गनिय, गनिअ, आदि।
12. इसमें 'य' का 'ज' और 'व' का व्यंजन रूप में 'ब' तथा स्वर रूप में 'उ' या 'ओ' करके बोला जाता है- सुयश-सुजस, बादि, वाहन-बाहन, व्याकुल, वकील-उकील (ओकील), हरदेव-हरदेउ, आदि।
13. हिन्दी की अन्य बोलियों की भाँति अवधी में भी 'ह' के आगमन की प्रवृत्ति अधिक प्रचलित है। यथा - साईस-सहीस, इच्छा-हिच्छा, आदि।

(ख) व्याकरणिक विशेषताएँ

1. अवधी संज्ञाओं के ह्रस्व, दीर्घ और अतिदीर्घ रूप भी मिलते हैं। यथा - घोड़ा-घोड़वा-घोड़आ, लरिका-लरिकवा-लरिकउना, बेटा-बेटवा-बेटउना, लोटा-लोटवा-लोटउना, कुत्ता-कुतवा-कुतउना, नदी-नदिया-नदीवा।
2. संज्ञापद रचना में विकारी रूपों में केवल 'न' प्रत्यत प्रयुक्त होता है जिसके 'अ' 'इ' 'उन' रूप मिलते हैं। यथा -

मूल रूप	विकारी रूप	मूल रूप	विकारी रूप
मनई	मनइन	बात	बातन
लरिका	लरिकन	घोड़ा	घोड़न
गोहूँ	गोहुँन	जूता	जूतन

3. अवधी के कुछ क्षेत्रों में व्यंजनात संज्ञापदों के कर्ता कारक एकवचन रूपों में प्रायः 'उकार' का प्रयोग पाया जाता है। यथा-

खड़ी बोली	अवधी	खड़ी बोली	अवधी
घर	घरु	मन	मनु
वन	वनु	तन	तनु
साँस	साँसु	जन	जनु

4. अवधी में स्त्रीलिंग बनाने के लिए हिन्दी की अन्य बोलियों की तरह 'ई' 'इनि' 'इनी' 'आनी' 'नी' 'इया' प्रत्यय प्रचलित हैं। यथा -

पुल्लिंग प्रत्यय	स्त्रीलिंग प्रत्यय
वाछा-ई-	बाछी
बाघ-इन-	बाघिन
लरिका-इनी-	लरिकिनी/लइकिनी
मास्टर-नी-	मास्टरनी/महटरनी
गाय-इया-	गइया
बकरा-ई-	बकरी
लाला-इन-	ललाइन
पंडित-आनी-	पंडितानी
बाछा-इया-	बछिया आदि।

5. अवधी में निम्नलिखित परसर्ग रूप प्रचलित हैं। यथा- क, का, काँ, कहाँ, कहँ, के, की, से, ते, सन, करें, कर, कै, माँ, में, मइहाँ आदि।
6. अवधी के सर्वनाम रूप इस प्रकार हैं :

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	मैं, मह, मो, मोर	हम, हमार, हम सब
म0पुरुष	तू, तइ, तै, तो, तोर	तुम, तोहार, तुहार, तुम सब
अ0पुरुष	ई, एकर, एहकर, इन	इनकर, ओकर, ओहकर, उइ, ओन, ओनकर

7. अवधी के सर्वनाम और विशेषण रूपों की प्रवृत्ति ह्रस्वगत की ओर है। अर्थात् दीर्घ 'आ' ह्रस्व रूप हो जाता है। यथा -

खड़ी	अवधी	खड़ी	अवधी
मेरा	मोर (म्वार)	तेरा	तोर (त्वार)
छोटा	छोट (छ्वाट)	मोटा	मोट (म्वाट)
हमारा	हमार	तुम्हारा	तुम्हार (तुमार)

किन्तु कहीं-कहीं विशेषण 'क' निरर्थक प्रत्यय लगाकर अपने रूप को दीर्घ कर लेते हैं। यथा- बहुतक त्र बहुतक, थोरक त्र थोरक, कंछुक त्र कछुक।

8. अवधी में कतिपय विचित्र संख्यावाली विशेषणों का प्रयोग होता है। यथा - याक, दुइ, तीनि, छा, गेरा/एग्यारा, त्यारा, सोरा, ओनइस, ओन्तिस, ओन्चास, साठि, एखत्तरि, पहिल।
9. निम्नलिखित कृदन्ती रूप प्रचलित हैं। यथा - वर्तमान कालिक कृदन्त - चलति, चलत; भूतकालिक कृदन्त-चला, चले, चली; भविष्यकालिक कृदन्त-चलब, चलबु।
10. वर्तमान काल की सहायक क्रियाओं के लिए पूर्व हिन्दी अवधी में आ, बाटे, बाटेन, है तथा अहै आदिरूप प्रयुक्त होते हैं तथा पश्चिमी अवधी में हन् हन् है आदि।
11. सामान्य भूतकालिक क्रियाओं के लिए अवधी में 'एउ' 'एन' 'एउ' आदि प्रत्यय लगते हैं। यथा– चलेऊ, चलेन, चलेउ।
12. सामान्य भविष्यत् कालिक क्रियाओं के लिए अवधी में हो, बो, बा, हौ, इहै, ई आदि प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं। यथा - चलिहों, चलिहौ, चलिबो, चलबा, चलिहे, चली।
13. क्रियार्थक संज्ञाओं की रचना 'ब' प्रत्यय लगाकर होती है। यथा - देखना-देखब, हँसना-हँसब, चलना-चलब, घूमना-घूमब, खेलना-खेलब, लिखना-लिखब, चलना-चलब, रुकना-रुकब आदि।
14. अवधी में अव्यय रूपों का प्रयोग कुछ विचित्र ढंग से होता है। यथा-हियाँ (यहाँ), हुआँ (वहाँ), जहवाँ (जहाँ), तहवाँ (तहाँ), अइसी, वइसी, अबय (अबहीं), मुला, दूरि, नियर आदि।
15. अवधी में 'ने' का प्रयोग नहीं होता है। मैं की जगह हम चलता है।

अवधी के कारक चिन्ह

कर्ता	-	ने
कर्म	-	कहँ (आधुनिक 'क' से)
करण	-	सन से (पश्चिमी अवधी सौ)
सम्प्रदान	-	कहाँ (आधुनिक काँ) के
अपादान	-	से (पश्चिमी अवधी तइँ, ते)
सम्बन्ध	-	कर, कै।

अधिकरण - पुराना रूप 'मँह' आधुनिक 'माँ' अथवा 'मा' पर हिन्दी के सम्बन्ध कारक चिन्ह में लिंग भेद होता है। खड़ीबोली में पुल्लिंग सम्बन्ध कारक है 'का' और स्त्रीलिंग 'की'।

इस प्रकार से ठेठ अवधी का प्रयोग भाषायिक ऐतिहासिक दृष्टि से ध्यान देने योग्य है। पहले इसके कारकों की दशा अत्यधिक अव्यवस्थित थी। कुछ तो सम्बन्ध कारक का 'हि' विभक्ति से काम चलता रहा। पूर्वी अवधी में अब तक अपादान कारक के चिन्ह के रूप में 'कै' या 'कए' शब्द का प्रयोग होता है। जैसे- 'मीत कै' (मित्र से), तर कै (नीचे से), ऊपर कै (ऊपर से)। जायसी और तुलसी ने अपनी रचनाओं में ऐसा प्रयोग किया है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अवधी भाषा का इतिहास अत्यन्त गरिमामण्डित है। उसका व्याकरण वैविध्यपूर्ण है और शब्द सम्पदा वैशिष्ट्य संपन्न है। इसको सतर्कतापूर्वक ग्रहण करने की आवश्यकता है।

विदेशों में अवधी और अवध-संस्कृति

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

भाषाविदों का मत है कि आज से लगभग दस हजार वर्ष पूर्व पूरे विश्व की आवादी लगभग दो करोड़ के आस-पास थी और बोलियों थीं लगभग 12। कालान्तर में यूरोप और अरव के बड़े उपनिवेशवादियों ने इस भूमण्डल पर अपनी-अपनी भाषाएँ इस प्रकार लाद दीं कि पिछली शताब्दियों में क्षेत्रीय बोलियां हटकर लगभग 6800 रह गयीं। इनमें भी मुख्य भाषाएँ तीन सौ के आस-पास हैं। इन मुख्य भाषाओं में सम्प्रति अँग्रेजी, चीनी, हिन्दी, लेटिन, अरबी, फ्रेंच आदि की गणना की जाती है। इन्हें 'विश्व भाषा' भी कहा जाता है।

'विश्व भाषा' का तात्पर्य है—वह भाषा, जो विश्वस्तर पर लिखी-पढ़ी बोली एवं समझी जाती है, साथ ही जो वैश्विक चेतना से परिपूर्ण भी हो।

हिन्दी विश्व के लगभग दो दर्जन देशों की लोकप्रिय भाषा है। इनमें भारतवंशी बहुल राष्ट्र मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, ट्रिनिडाड टुबैगो, दक्षिण अफ्रीका और ब्रिटिश, गुयाना जैसे देश हैं। दूसरी ओर भारत के पड़ोसी देश नेपाल, पाकिस्तान, म्यांमार, सिंगापुर, थाईलैण्ड, मलेशिया, तिब्बत, भूटान, श्रीलंका आदि हैं।

इनके अतिरिक्त यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि महाद्वीपों के वे अनेक राष्ट्रद्वीप भी गणनीय हैं, जहाँ आप्रवासी भारतीय काफी बड़ी संख्या में बस गये हैं। ऐसे देशों में उल्लेखनीय हैं—ब्रिटेन, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, फ्रांस, इटली, जर्मनी, रूस, चीन, जापान, नार्वे, स्वीडन, स्वीटजरलैण्ड, पोलैण्ड, बेल्जियम, ऑस्टिया, हालैण्ड, सऊदी अरब, तुर्की आदि देश। इन सबकी सम्मिलित संख्या लगभग 140 कही जा रही है। देश-देशान्तर में हिन्दी का प्रयोग करनेवाले लोग इन दिनों एक अरब के ऊपर पहुँच गये हैं। विश्व हिन्दी सम्मेलनों के आँकड़ों से यह सिद्ध किया जा चुका है कि हिन्दी अब भाषा-भाषियों की दृष्टि से चीनी के बाद दूसरे स्तर पर है।

देश-विदेश में हिन्दी के कई-कई रूप विकसित हुए हैं और आज भी विद्यमान हैं, जैसे—(अ) भारत में विकसित रूप : यथा (1) अवहंस अथवा परवर्ती अपभ्रंश या "पुरानी हिन्दी"।

(2) पुरानी राजस्थानी अथवा 'डिंगल'।
(3) मैथिली—अवहट्ट, जो विद्यापति काव्यों में प्रयुक्त हुई है।
(4) भाषा (भाखा) अर्थात् 'ब्रजावधी' या पिंगला।
(5) 'ग्वालियरी', जिसमें 15वीं सदी में "छितायी चरित" की रचना की गयी।
(6) 'नागपुरी-यह छोटा नागपुर, राँची (झारखंड प्रदेशों) में बहुप्रचलित है।
(7) दक्खिनी हिन्दी/हिन्दवी—जो बहमनी राज्य, गोलकुण्डा, अहमदनगर आदि में 15वीं सदी से प्रचलित है।

(8) ब्रजबुली जो 15वीं सदी में बंगाल, उड़ीसा एवं असम की एक काव्यभाषा रही है।
(9) नेपाली/गोरखाली यह इन दिनों भारत की सांविधानिक मान्यता प्राप्त भाषा है।
(10) हिन्दुस्तानी—जिसे गांधी जी ने राष्ट्र भाषा रूप में प्रतिष्ठित करने का अभियान चलाया था। वर्धा लिपि इसलिए विशिष्ट लिपि है। इसके मुहावरों और शब्दों के कई पृथक कोश भी प्रकाश में आ चुके हैं।

विश्व स्तर पर हिन्दी के जिन प्रमुख रूपों को मान्यता दी गयी है, उनमें हैं—

(1) फिजियन हिन्दी जो फिजी में बोली जाती है।
(2) मॉरिशस की 'क्रियोल', डच, फ्रेंच, अंग्रेजी एवं हिन्दी से सम्बद्ध है।
(3) सरनामी हिन्दी, जो सूरीनाम में प्रचलित है।
(4) त्रिनी हिन्दी, जो ट्रिनिडाड-टुबैगो में प्रचलित है।
(5) उजबेकी हिन्दी जो उजबेकिस्तान में प्रचलित है। इनमें प्रथम तीन अवधी के रूपान्तर है। इसका संक्षिप्त विवरण अवलोकनीय है।

फिजियन हिन्दी—फीजी में भारतीय 'गिरमिटिया' मजदूरों का आगमन 9 मई 1879 में शुरू हुआ था। मात्र पैंतीस वर्षों में तिरसठ हजार भारतीय मजदूर वहाँ जाकर बस गये। उन्होंने अपने साथ तुलसीकृत रामायण, कबीर भजनावली आल्हा आदि ग्रंथों को लेकर दैनिक जीवन में स्थापित कर दिया। धीरे-धीरे पूरे देश में इनका प्रचलन हो गया। इस समय हिन्दी भारतवासियों की अस्मिता की प्रतीक है। भारतीय मूल के फिजियन नागरिक भारतीय संस्कृति एवं हिन्दी भाषा को बचाने एवं बढ़ाने के लिए हिन्दी भाषा के पठन-पाठन की व्यवस्था कर रहे हैं और दैनिक जीवन में हिन्दी का भरसक प्रयोग कर रहे हैं। उस देश का एक प्रसिद्ध नारा है ''उठो, उठो, ऐ फिजीवालो! अब अपनी आंखें खोलो। हिन्दी ही अपनी भाषा है? हिन्दी पढ़ो लिखों, बोले'' इस देश में हिन्दी के अनेक लेखक हुए हैं और आज भी सक्रिय हैं! जैसे—

1. कमलाप्रसाद मिश्र
2. विवेकानंद शर्मा
3. रहमान खाँ
4. अमरजीत कंवल
5. जोगिन्द्र सिंह।

इनके अतिरिक्त कंवल, बलराम, महेन्द्र विनीता आदि भी गण्यमान हैं। चूंकि फिजी लगभग एक सदी तक ब्रिटेन का उपनिवेश था, इसलिए वहाँ अंग्रेजी का भी काफी प्रचलन है। यह देश दक्षिण प्रशान्त महासागर में आस्ट्रेलिया के निकट है। इसके कई द्वीप तथा टापू हैं जिनमें वीतिलेख सूखा राजधानी एवं बनुआलेख लेव प्रमुख हैं। यहीं पुराने गिरिमिटियों ने अवधी भोजपुरी में लोकगीतों की रचना की है। जैसे कुलीलाइन कोरी का सुमिरन मजदूर द्वारा किया गया था। विवरण दुख है - सब दुखखान सी.एस.आर. की कोठरिया।

याही मं खाना, याही मं सोना, याही मं रहै मेहरिया।

इन मजदूरों को जो यातानाएँ आरम्भ में झेलनी पड़ीं, उनकी एक बानगी यह बिरहा द्वारक है, जो झिनकी नामक मजदूरिन से सम्बद्ध है—

''बिपति झिनकी की को सुनै दइया।
नन्दरैन जिला मं कावानांगा साउ सहेबा है बड़ा पिटैया।''

वहाँ अस्वस्थ हो जानेवाले मजदूर सिकन सिकमैन कहलाते थे। घंटी बजने पर वे बर्तन लेकर खाने के लिए घंटों पंक्तिबद्ध रहते थे। उनकी विपत्ति आल्हों की तर्ज पर इस पंक्ति में अंकित है-

''बजें नगाडा असपताल मं सब सिकमनियों होंय तैयार।''

होली, दीवाली ईद आदि पर्वो पर वहाँ आज भी हिन्दी लोकगीतों की गूँज सुनी जा सकती है। हिन्दी

की लोकप्रियता तथा उपयोगिता से प्रेरित होकर चीनी व्यापारी भी हिन्दी सीख रहे हैं। वस्तुतः हिन्दी वहाँ की जन भाषा है। श्रव्य-दृश्य माध्यमों में इस भाषा के कार्यक्रम निरन्तर प्रसारित होते रहते हैं। इनमें ऋतुगीत, संस्कारगीत, श्रमगीत, धार्मिक लीलाएँ, व्रत कथाएँ और निजंधरी लोककथाएँ अपेक्षाकृत अधिक हैं। इधर हिन्दी गीतों, सिनेगीतों और संवादों का प्रलचन कई गुना बढ़ गया है।

फिजियन हिन्दी का व्याकरणिक ढाँचा अवधी भोजपुरी एवं मानकीकृत खड़ीबोली से अभिन्न है। केवल कुछ शब्द एवं मुहावरे भिन्न हैं जैसे - तलनवा बातों बूला नमस्ते योदे बिदा बिनाका धन्यबाद आदि तदीना भाई चिनाना मां तुरांगा पति गरामा पत्नी तमाना बाबा आदि फीजी में 52 प्रतिशत भारतीय है। यहाँ की स्वतन्त्रता में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। गिरमिट-काल में इन्होंने अत्याचारों को झेलने के लिए कई भजन मण्डलियों तथा लीला मण्डलियों का गठन किया। जिससे रामायण गायन निरगुन, पद भजन, कीर्तन, रामलीला, कृष्ण रासलीला आदि सांस्कृतिक कार्यक्रम समूचे देश में छा गए। फिजीवासियों ने सनातन धर्म, 'आर्यसमाज' गुरुद्वारा कमेटी, 'आंध्रसंगम' आदि संस्थाओं के सहयोग से 1916 में भारतीय हिन्दी पाठशालाएँ स्थापित की कालक्रम में यहाँ शांतिदूत फीजी समाचार 'राजदूत' 'वृद्धि' 'जागृति जयफीजी' फीजी संदेश' जैसी श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिकाएं शुरू हो गयीं। इनसे स्वतंत्र लेखन को बढ़ावा मिला। नागारिकों की माँग पर फीजी रेडियो पर प्रति सप्ताह पछहत्तर घंटे हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित होने लगे हैं। विगत दशक में फीजी हिन्दी महापरिषद्, पत्रकार संघ 'रंगमच' आदि संस्थाओं के प्रयास से हिन्दी को अँग्रेजी के साथ राजभाषा की सांविधानिक मान्यता प्राप्त हो गयी है। भारतीय उच्चायोग ने भारतीय पत्राचार पाठ्यक्रम, छात्रवृत्ति आदि की जो सुविधा प्रदान की है, उससे हिन्दी को बहुत बढ़ावा मिला है।

यह ज्ञातव्य है कि फीजी में हिन्दुस्तानी का प्रचलन अपेक्षाकृत अधिक है। फीजीवासी उर्दू फारसी बहुल भाषा में पूर्वी अवधी एवं भोजपुरी के अधिकाधिक शब्दों का प्रयोग करते हैं। इसे भोजपुरी कहना तर्कसंगत नहीं है। फिजियन हिन्दी भाषा शिक्षण का मुख्य स्रोत है-हिन्दी फिल्मों तथा धारावाहिक। इस भाषा का मानकीकरण अपेक्षित है, ताकि वह परिनिष्ठि हिन्दी में पुनर्गठित हो जाए। सम्प्रति फीजी के अनेक निवासी आस्टेलिया में प्रवास कर रहे हैं। उनके लिए ब्रिसवेन क्वीन्सलैण्ड राज्य में ब्रिसवाणी के अन्तर्गत 'फिजियन हिन्दी के रेडियो कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। लेखन में फिजियन हिन्दी का व्याकरणिक ढाँचा हिन्दी से बहुत पृथक् नहीं है। केवल शब्दार्थ का अन्तर है, जो हिन्दी की बोलियों में भी सर्वत्र लक्षित होता है। अस्तु फिजियन हिन्दी का कोई स्वतंत्र अस्तित्व तो मान्य नहीं है। उसे भोजपुरी कहना तो नितांत निराधार होगा। संप्रति फिजियन हिन्दी का निजी अस्तित्व उसी रूप में ग्राह्य है, जैसे ब्रिटिश अँग्रेजी से भिन्न अमरीकी अँग्रेजी का।

मॉरीशस की हिन्दी

यहाँ भारतीयों का आगमन फ्रांसीसी शासनकाल में हुआ था। भारतीय सिपाहियों की मदद से ही यह देश ब्रिटिश उपनिवेश से जुड़ा था, इसलिए यहाँ 19वीं सदी के आरम्भ से ही हजारों भारतीय बस गये थे। मॉरीशस में 1830 से 'गिरमिटिया' मजदूरों और कारीगरों का आना शुरू हुआ। यह मुख्यतः उत्तर प्रदेश और बिहार के अर्थात् भोजपुरी-अवधीभाषी लोग थे। इन्होंने आर्य समाज, 'हिन्दी प्रचारिणी सभा,' 'सनातन धर्मसभा' आदि की सहायता से हिन्दी भाषा और भारतीय संस्कृति को व्यापकता दी। गांधी जी की भाषा और भारतीय संस्कृति को व्यापक प्रतिष्ठा दी। गांधी जी की प्रेरणा से 1907 में मणिलाल डॉक्टर ने वहाँ 'हिन्दुस्तानी' नामक पत्रिका प्रकाशित की। समय-समय पर मॉरीशस से 'आर्य लोक' 'मॉरीशस-पत्र' 'जागृति', 'समाजवाद', 'मजदूर', 'आर्योदय', 'कांग्रेस' 'नव जीवन', 'जमाना', 'जनता', 'बसन्त',

'रिमझिम', 'माभा', 'दर्पण' 'अनुराग', बाल सखा! मॉरीशस ने दो 'विश्व हिन्दी सम्मेलन' आयोजित करके और केन्द्रीय सचिवालय स्थापित करके हिन्दी के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। सम्प्रति वहाँ 52 प्रतिशत भारतीय हैं, जो डच-फ्रेंच, अंग्रेजी के साथ हिन्दी का प्रयोग करते हैं। दैनिक व्यवहार में वे जिस 'खिचड़ी भाषा' का प्रयोग करते हैं, उसे 'क्रियोल' कहा जाता है। इसका व्याकरणिक ढाँचा हिन्दी से अभिन्न है। बस, कुछ शब्द उच्चारण-भेद के कारण अलग हो गये हैं! जैसे-'रोची' रोटी-लादू लड्डू, फराका-पराठा, सारी का तोरा थाली कटोरा, मुताई मिठाई, ब्रियानी भात, दाई दही साकिनी खटाई समुसा समोसा गूस-घूस आदि।

इस देश के मुख्य हिन्दी लेखक हैं- वासुदेव भगत, मधुकर, मुनीश्वर लाल चिंतामणी अभिमन्यु वासुदेव विष्णुदयाल, अजामिल सोमदत्त बखोरी, प्रहलाद रामशरण, रसपुंज रामधनी आदि। इनका लेखन-प्रकाशन रेडियो, टी.वी. प्रसारण आदि उच्चस्तरीय है। मोका स्थित महात्मा गांधी हिन्दी संस्थान हिन्दी-उन्नयन की दिशा में 1934 से सक्रिय है।

मॉरीशस के हिन्दी रचनाकारों की भाषा खड़ीबोली-हिन्दुस्तानी है। जैसे इन कुछ कविताओं की भाषा द्रष्टव्य है—

1. आयी है उस पार से सपनों के संसार से हिमालय की गोद से। गंगा की जलधार से। वन्दीय माँ भारत की। कुछ खेती तकदीर थी। हाथों में कंगन नहीं, पैरों में जंजीर थी।'' मुझे कुछ कहना है—1957

2. हुआ कब प्रात, हुई कब शाम। कड़कती सर्दी हो या घाम।
(ब्रजेन्द्र कुमार भगत 'मधुकर' मॉरीशस की हिन्दी कविता पृ० 12)

3. 'तुमने आदमी को खाली पेट दिया
पर एक प्रश्न है प्रभु!
खाली पेटवाले को घुटने क्यों दिये?
फैलनेवाला हाथ क्यों दिया?
(अभिमन्यु अनत)

उपर्युक्त कविताओं की भाषा समकालीन हिन्दी से अभिन्न है। इसे न 'क्रियोल' कहा जा सकता है, न भोजपुरी। बोलचाल में अवश्य भोजपुरी-अवधी मिश्रित 'क्रियोल' के प्रयोग मिलते हैं।

मॉरीशस में 100 वर्ष पहले से 'बैठकों' में जो हिन्दी सिखायी जा रही है, उसका एक नमूना है—
''रामगति देहु सुमति सर-सर सर-सर संज्ञा काली सीने रूप गिरिवर धारी।
जो जाने गिरिवर के भेव नित उठ पूजे गनपति देव।।''

यहाँ 'हिन्दी प्रचारिणी सभा', 'आर्य समाज' आदि की देख-रेख में हिन्दी पाठशालाओं का जाल बिछा हुआ है।

विश्वविद्यालय-स्तर तक की जो हिन्दी यहाँ पढ़ाई जा रही है, वह भारतीय हिन्दी से नितांत पृथक् नहीं है। 'सरपुंज' जी मॉरीशस के प्रथम हिन्दी-कवि हैं। यों पूरे देश में उल्लेखनीय हिन्दी-कवियों लेखकों की संख्या 50 से अधिक है। यहाँ के कथाकारों में अभिमन्यु अनत, कृष्णदेव बिहारी, रामदेव धुरंधर आदि पर्याप्त लोकप्रिय हैं।

स्पष्ट है कि मॉरीशस हिन्दी देश है। वहाँ बोलचाल में भोजपुरी-अवधी का और लेखन में खड़ी बोली का जो प्रयोग दिखायी देता है, उसे 'हिन्दी कहना ही तर्क संगत होगा।

सूरीनाम की हिन्दी

इसे 'सरनामी' हिन्दी कहा जाता है। यहाँ भारत मूल के निवासी 50 प्रतिशत से अधिक हैं। सूरीनाम

की मूल भाषा डच है, किन्तु व्यवहार में हिन्दी, उर्दू-मिश्रित हिन्दुस्तानी का ज्यादा प्रचलन है। हिन्दी वहाँ की सम्पर्क भाषा है। 'भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध विस्तार परिषद्', 'आर्यसमाज', 'सनातन धर्म', 'राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, वर्धा', 'सूरीनाम प्रवासी संस्था' आदि के सहयोग से यहाँ लगभग 150 हिन्दी शिक्षण केन्द्र चलाये जा रहे हैं। सूरीनाम से प्रकाशित प्रमुख पत्र-पत्रिकाएँ हैं- 'भारत उदय, सनातन धर्म, प्रकाश विकास, जागृति प्रकाश, वैदिक सरस्वती संदेश, सूरीनाम दर्पण' आदि। यहां के प्रसिद्ध हिन्दी लेखक है-अमर सिंह, प्राणनाथ, उमादत्त शर्मा, कमला, जगमोहन सिंह, राम सिंह, बच्चू सिंह, प्रेमचन्द सूर्य प्रताप, हरिदेव, सहतू, हलधर, मथुरा प्रसाद शर्मा, तेज प्रसाद रवेन्द्र, रणजीत, महातमसिंह सुरेन्द्र पटलदीन, पुष्पिता आदि। सन् 2002 में पारामरिषों में आयोजित सातवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में जो साहित्य की जो भाषा पायी गयी, वह निःसंदेह पूर्वी अवधी है, जो लगभग पाँच लाख व्यक्तियों के बीच प्रचलित है। सूरीनाम में गायत्री मंदिर, माता गौरी सस्थान, राधिका रेडियो त्रिशूल टी.वी. सनातन धर्मसभा आदि हिन्दी के प्रमुख केन्द्र हैं। सरनामी के कुछ शब्द नितान्त अपने हैं, जैसे-खोई मेदा, गुड इवनिंग 'खोई मार्खो' गुडमार्निंग, दांक यू थैंक्यू। यहाँ के प्रसिद्ध लोकगीत हैं- ''हम भारत के गुन गायी। जहां से अइले बाप और भाई। एक अन्य लोकगीत है -

''मोरी धानी चुनरिया इतर गमकै''
सोने के थारी मा जिवना जिवाँयों, मोरी बारी उमरिया...।
परदेशी भँवरा हो घर के सुध बिसरी।
उमरिया धोखे में बीत गइले राम।
बहुत मोहिया लागे है भारत देसवा।
भयल जहजवा बैरी बहिनी, हरिलयिगा पियरवा हमार।
इगले सूरिनमवा लौट नहिं अइले कि फुटले करमवा हमार।
पेटवा के खातिर छोड़ि आये देसवा...।
खेतवा छोड़िनि, बगीचा छोड़िनि, छोड़िन खलिहनवा,
आपन गोरू बछेडू छोड़िनि आयो समुन्दर पार।
रोवत हुई है तिरिया हमारी, कलपत होई गदलेवा।
मछरी जइसी तलफत होइ हैं, जिहरे दीन जनमवा।।

इस प्रकार के लोकगीत फिल्मी गीतों के साथ निरन्तर प्रसारित होते रहते हैं। यहाँ रामलीला का भी काफी प्रचलन है। इनके अतिरिक्त 'रामचरित मानस', सत्यनारायण कथा, हनुमान चालीसा, रामायण, महाभारत, महाभागवत, दुर्गासप्तशती, प्रेमसागर, ब्रह्मानन्दी भजन, बिरहा, कजली, आल्हा आदि की गूँज सर्वत्र सुनायी देती है। सूरीनाम में लगभग डेढ़ दर्जन भाषाएँ प्रचालित हैं, जिनमें राष्ट्रभाषा तो डच है, नीग्रों लोगों की भाषा अँग्रेजी है और भारतवंशियों की भाषा अवधी, भोजपुरी मिश्रित सरनामी हिन्दुस्तानी है। बुश नीग्रो कुछ भिन्न तरह की अँग्रेजी बोलते हैं। वे वाटर को 'वाटरा', ब्लैक को 'ब्लैका' कहते हैं। सूरीनाम निवासियों का इधर भारी संख्या में परिव्रजन नीदरलैण्ड में हो गया है, अतः डच और अवधी सरनामी का सम्मिश्रित रूप निर्माणाधीन है।

इस प्रकार सिद्ध है कि मॉरीशस फिजी और सूरीनाम की हिन्दी मूलतः अवधी है। इन देशों को जानेवाले अधिकतर गिरमिटियाँ चूंकि रायबेरली, प्रतापगढ़, मउ, आजमगढ़, सुलतानपुर, गोण्डा, बस्ती आदि क्षेत्रों से गये थे, इसलिए इन देशों में प्रचलित हिन्दी, क्रियोल एवं सरनामी हिन्दी वस्तुतः अवधी ही है। इन तीनों देशों में लिखित भाषा के रूप में हिन्दुस्तानी का और बोलचाल की भाषा के रूप में

इन देशों में अवधी संस्कृति बहुव्याप्त है चाहे विवाह के फेरे हों या दाह-कर्म, श्राद्ध आदि। चाहे पहनावा हो, चाहे सांस्कृतिक कार्यक्रम जिनमें ढोलक, ढ़पली, नगाड़ा, मंजीरा आदि का प्रयोग आज भी होता है। चाहे पर्वोत्सव हो चाहे सरनामी रोटी भखा पूड़ी का खानपान हो, सर्वत्र अवध एवं अवधी स्र्वस्व है। सुदूर गाँवों में स्थापित आराध्य देवी, शिव, हनुमान, राम-जानकी के मन्दिरों, मस्जिदों से सूरीनाम धर्म निरपेक्षता के प्रमाण मिलते हैं। पाश्चात्यीकरण के बावजूद इनका भारतीयकरण सर्वथा अमिट है। आवश्यकता यह है कि वहाँ तक व्याप्त अवधी भाषा साहित्य और अवध की संस्कृति के संवर्द्धन और संरक्षण के लिए सुनियोजित प्रयास किये जायें।

अवधी की भाषिक प्रकृति और साहित्यिक संस्कृति

डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

अवधी भाषा ने आधुनिक हिन्दी साहित्य को कई तरह से प्रभावित किया है। इसे स्पष्ट करने के लिए सर्वप्रथम अवधी की भाषिक प्रकृति और भाषिक संस्कृति पर विचार करना होगा। इस भाषा की बनावट और बुनावट की कुछ अपनी विशेषताएँ हैं, जैसे -

1. कथात्मकता

अवधी की प्रकृति मूलतः प्रबन्धात्मक है। सूफी काव्यधारा से लेकर आधुनिक युग तक इसमें सैकड़ों कथा-काव्य रचे गये हैं। चूँकि जनजीवन किस्सागोई अर्थात् कथा-रस में विशेष रुचि रखता है, इसलिए अवधी में विगत लगभग एक हजार वर्षों में शताधिक प्रबन्ध काव्यों, महाकाव्यों की रचना हुई है। ब्रज भाषा मुख्यतः दरबारी संस्कृति के अनुरूप मुक्तकों की भाषा रही है, जबकि आख्यानक, इतिवृत्तात्मक तथा मसनवी शैली से प्रभावित अवधी मुख्यतः कथात्मक भाषा बनकर विकसित हुई है।

2. ग्रामीण बोध

जनजीवन से जुड़ी होने के कारण अवधी भाषा में ग्रामीण बोध प्रेरित लोकतत्त्व का बहुत प्रश्रय दिया गया है। अवधी कवि प्रायः शहरी सभ्यता का उपहास करते रहे हैं और ग्रामीण प्रकृति-परिवेश का सगर्व, सहर्ष चित्रण करते रहे हैं। 'पद्मावत' में नागमती का विरह-वर्णन करते हुए जायसी चित्तौड़ एवं सिंहलगढ़ को भुलाकर अपने अवध क्षेत्र की ग्राम्य-प्रकृति में इसीलिए केन्द्रित दिखाई देते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने भी दक्षिण भारत के भूगोल में अवध के परिदृश्य को ही ज्यादा मनोयोगपूर्वक उभारा है। आधुनिक अवधी कवियों में पढ़ीस, बंशीधर, रमई काका, मृगेश आदि ने ग्रामीण व्यवस्था को अत्यधिक महिमामण्डित किया है। गाँव का गौरव तथा गांव का रौरव, दोनों इनकी कविताओं में बड़े विस्तार तथा बारीकी के साथ चित्रित हुए हैं। यों लोकतत्त्व ब्रज, राजस्थानी, भोजपुरी, बुन्देली आदि में भी है, किन्तु आदिवासियों की लोकसंस्कृति एवं ग्राम्यत्व को सनातन भारतीय संस्कृति में रूपान्तरित कर देने का श्रेय अवधी को है।

3. कृषक संस्कृति

अवधी काव्य मूलतः किसान काव्य है। इसकी विभिन्न विधाएँ, जैसे-चैती, फाग, बिरहा, आल्हा आदि ऋतु मौसम और उससे प्रेरित खेती-किसानी के अनुसार गठित हुई हैं। उसी तरह जैसे ब्रज भाषा मूलतः गोचारण काव्य और भोजपुरी प्रवासी-विदेशिया काव्य है। अवधी में टोडरमल ने पन्द्रहवीं सदी में 'कृषि चर्चा' नामक काव्य लिखा था। जायसी ने 'पद्मावत' में जो बारहमासा रचा है, उसके पीछे अवध की इकोलॉजी एवं कृषि कर्म की प्रेरणा रही है। अवधवासियों के अधिकतर पर्व-त्योहार कृषि में केन्द्रित रहे

हैं। यथा - होली रबी का फसल-महोत्सव है और दीवाली खरीफ का। अवधी भाषा में कृषि कर्म से सम्बन्धित न जाने कितने पारिभाषिक शब्द और नीति-वाक्य छिपे हुए हैं। घाघ भड्डरी की खेती एवं मौसम सम्बन्धी कहावतें इस दृष्टि से अग्रगण्य हैं। आधुनिक अवधी कवियों ने, विशेषतः वंशीधर शुक्ल ने खेती सम्बन्धी विभिन्न फसलों प्रजातियों, कीड़े-मकोड़ों फसल के रोगों अर्थात् कृषि के रोगों अर्थात् कृषि विज्ञान के विभिन्न तथ्यों की व्यापक जानकारी दी है। इससे आधुनिक कवियों को बड़ी प्रेरणा मिली है। मैथिली शरण गुप्त जी की लोकप्रिय कविता - 'बरसा रहा है रवि अनल भूतल तवा सा जल रहा' की पृष्ठ-भूमि में रामनरेश त्रिपाठी के किसान सनेही के 'कृषक विलाप', वंशीधर की 'किसान की अर्जी, आदि हैं'। चतुर्भुज शर्मा, मृगेश, रमई काका, देहाती, पुरू किसान, अदम गोण्डवी आदि की कई कविताएं कृषक संस्कृति के चिन्तन क्रम में रखी जा सकती है। पंत की 'ग्राम्य' और निराला की परवर्ती रचनाएँ इसी ग्राम्य बोध से प्रेरित-प्रभावित हैं।

4. जनसंस्कृति

अवधी भाषा मूलतः जन भाषा है, न कि दरबार की भाषा। वह राज्याश्रय और मठाश्रय, दोनों से दूर रही है। उस पर गोस्वामी जी का गहरा प्रभाव रहा है। जन भाषा का चरित्र निर्धारित करते हुए गोस्वामी जी ने उसकी सात विशेषताएँ बताई थीं-

''सुगम-अगम मृदु मंजु कठोरे। अमित चरित अति आखर थोरे।।''

इस आदर्श को अपनाने के कारण अवधी ने सुगम (सहज) भाषा अपनाई, साथ ही गूढ़ार्थ (अगम) को भी महत्व दिया। उसमें मृदु मंजु (मार्दव) भी आया और कठोर महाप्राणत्वस भी। अवधी में जितना ओज गुण है, उतना ब्रज में नहीं। राजस्थानी में अवश्य वीर रस के उपयुक्त शब्दावली अधिक है, किन्तु वह अपेक्षाकृत कर्कश अधिक है। अवधी में ब्रज जैसी कोमलकान्त पदावली नहीं है, क्योंकि उसमें स्त्रैणता की जगह पौरुष अधिक है। इसके अतिरिक्त इस भाषा में चरित्र अर्थात् चरितात्मकता का गुण सर्वाधिक है। 'आखर थोरे' यानी संक्षिप्तता या न्यूनपदत्व अवधी का प्रमुख लक्षण है, इसलिए कि अवधी के अधिकतर शब्द एक ही धातु से विभिन्न व्याकरणिक कोटियों में विकसित हुए हैं।

यह उल्लेखनीय है कि अवधी साहित्य के सुदीर्घ इतिहास में एक भी कवि-लेखक ऐसा नहीं हुआ है, जिसने कभी कहीं राज्याश्रय स्वीकार किया हो। इन कवियों के आदर्श रहे हैं- तुलसीदास, जिन्होंने जहाँगीर की मनसबदारी ठुकराकर प्राकृत कवियों का गुणगान न करने का संकल्प घोषित किया था। अवधी काव्य मूलतः जन के लिए, जन के द्वारा, जन का काव्य रहा है। इसीलिए उसने दोहा, चौपाई, सोरठा, सोहर, बरवै जैसे लोक छंद अपनाए और कैथी (मुड़िया) लिपि का प्रयोग किया। बरवै छंद तो मात्र अवधी में प्राप्त होता है। यह उसकी जन संस्कारता का प्रमाण है।

5. साम्प्रदायिक सौहार्द

अवध क्षेत्र पंचदेव-उपासना का क्षेत्र है, इसलिए अवधी में शैव, वैष्णव, शाक्त-सभी काव्य-परम्पराएं विकसित हुई हैं। इसमें लोकदेवों की भी भरमार है। अवधी में रचित सूफी काव्य हिन्दू-मुस्लिम एकता का काव्य सिद्ध हुआ है। जायसी ने स्पष्ट कहा था- 'विधना के मारण हैं तेते। सरग, नखत, तन रोवाँ जेते।' जायसी ने भारत देश की कल्पना एक ऐसे महावृक्ष के रूप में की थी, जिसमें भांति-भांति के पंछी बसेरा ले रहे हैं और 'आपनि-आपनि भाखा लियै दयू का नाव।'' एक स्थल पर वे कहते हैं-

'मां का स्वेद पिता कर बिन्दू। परगट भए तुरक और हिन्दू।।'

यह जाति धर्म-निरपेक्षता युग-युग से अवधी कविता का मूल-मंत्र रही है। शायद इसीलिए 1938

में आर्य सलीन ने ईसा मसीह पर 'ईशायण' नाम का महाकाव्य अवधी में लिखा था। इसके बाद सियाराम शरण गुप्त का 'पृथ्वी पुत्र' काव्य रचा गया है।

6. भाषाई मेल

अवधी का जन्म अर्द्ध मागधी प्राकृत से हुआ था। उसने कालान्तर में अनेक विभाषाओं के साथ सम्बन्ध स्थापित किया। भोजपुरी से उसका अद्‌भुत साम्य है। बघेली, छत्तीसगढ़ी, बुन्देली और कन्नौजी से उसकी अति निकटता है। उसने ब्रज भाषा को अपनाकर 'ब्रजावधी' काव्य-भाषा विकसित की है और खड़ीबोली को भी काफी आत्मसात किया है। क्षेत्र-विस्तार के कारण अवधी में एक स्थानीयता को बढ़ावा नहीं मिल पाया है। इसके अपने ही कई रूप-रूपान्तर हैं; जैसे- पूर्वी अवधी, पश्चिमी अवधी, मध्य अवधी, बैसवारी अवधी, गांजरी, अवधी आदि। यह भाषा मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, उत्तर प्रदेश के लगभग बीस जिलों तक व्याप्त है। इसमें अनुमानतः पाँच लाख शब्द हैं और इसके छः करोड़ भाषा-भाषी हैं, इसीलिए यह भाषा उत्तर-भारत में इतनी लोकप्रिय सिद्ध हुई है। अपने व्याकरण-विधान के लिए अवधी बराबर सचेष्ट रही है। अवधी रचनाकारों ने 'वर्ण रत्नाकर', 'उक्ति व्यक्ति प्रकरण' जैसे ग्रन्थों द्वारा संस्कृत, प्राकृत भाषा को जन-जन में पहुँचाने का प्रयास किया था। वस्तुतः भाषाई मेल द्वारा मध्य युग में पूरे देश में एक मानक माध्यम भाषा निर्मित करने का पहला श्रेय अवधी रचनाकारों को दिया जा सकता है।

7. सुधार-अभियान

अवधी काव्य का मूलोद्‌देश्य रहा, है लोकमंगल अथवा 'सुरसरि सम सबकर हित।' इसमें रचा गया सन्त-साहित्य पूर्णतः सुधारवादी था। सन्त चरनदास, धरनी दास, दरिया साहब, सतनामी सम्प्रदाय के जगजीवन दास आदि समस्त कवि सात्विक जीवन, निर्गुण-सगुण-समन्वय, पाखण्ड-प्रतिषेध आदि का सन्देश देते रहे है। रामकाव्य परम्परा, नीतिकाव्य परम्परा और किसानकाव्य परम्परा प्रमुख रूप से मर्यादा बोध जाग्रत करने तथा छुआछूत, नशाखोरी, अशिक्षा, दहेज, पर्दाप्रथा आदि को हटाने का सन्देश देते रहे हैं। अवधी में कृष्ण काव्य अपेक्षाकृत कम रचा गया है। डा. द्वारका प्रसाद मिश्र और राम स्वरूप द्वारा रचित 'कृष्णायन' अवश्य श्रेष्ठ कृष्ण-काव्य हैं। यों इन कवियों ने मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के आदर्श को अधिक अपनाया है। इनके द्वारा रचित रामकथा में शास्त्रीयता के साथ-साथ लोकतत्त्व भी बहुत मुखर हुआ है। अवधी में ऐसे अनेक लोकगीत पाये जाते हैं, जिनमें उनके अधिदैवत रूप की जगह एक जुझारू व्यक्तित्व चित्रित हुआ है। राम के वनवासी जीवन का वर्णन करते हुए एक लोक गीत में कहा है- 'सावन बरसै भादौ गरजै पवन चलै हहराई। कउनेऊ बिरिछ तरे भीजत होइहैं राम लखन दूनों भाई।' इसी तरह पंडित रामनरेश त्रिपाठी द्वारा खोजे गये 'हरनी' गीत (छापक पेड़ छिउलिया) में माता कौशल्या का वह रूप चित्रित किया गया है, जिसमें राजन्य संस्कृति की जगह जन-संस्कृति विद्यमान है। ब्रज भाषा के प्रभाववश अयोध्या के अखाड़ों में मधुरोपासना से सम्बन्धित कुछ काव्य अवधी में अवश्य रचे गये हैं, लेकिन उनमें भी सुधार भावना का प्राबल्य है। सन्त बनादास का काव्य 'उभय प्रबोधक' इसका उदाहरण है।

8. व्यंग्यात्मकता

अवधी भाषा मूलतः व्यंगात्मक है। सामान्य वार्तालाप में भी यहाँ वक्रता पायी जाती है। डॉ. राम विलास शर्मा ने वैसवारे की 'वानक' का विवरण देते हुए-'निराला की साहित्य साधना भाग एक में इसके कई अच्छे उदाहरण दिये हैं। अवधी में जो व्यंग्य-काव्य रचे गये हैं, उनमें व्यंग्य विनोद की जगह विद्रोह और

विक्षोभ का स्वर अधिक है। यह प्रवृत्ति तुलसी, जायसी, सब में पायी जाती है। आधुनिक कवियों-पढ़ीस, वंशीधर, रमई काका आदि में व्यंग का अतिरेक है।

9. गीतात्मकता

अवधी में लोक धुनों पर आधारित गीत बहुत रचे गये हैं। कोकिल, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, पारस 'भ्रमर,' दिवाकर, शिव बहादुर सिंह भदौरिया, युक्तिभद्र आदि इस विधा के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। इन ग्राम गीतों का बड़ा गहरा प्रभाव केदारनाथ अग्रवाल, रामविलास शर्मा, केदारनाथ सिंह, शम्भूनाथ सिंह, ठाकुर प्रसाद, क्षेम आदि पर पड़ा है। हिन्दी नवगीत विधा पर इन गीतों का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।

10. खड़ी बोली और अवधी कविता की समतुल्य आधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ

आधुनिक अवधी काव्य का पुनर्जन्म भारतेन्दु, द्विवेदी युग के संधिकाल में हुआ था। यह भाषा रीति युग में निष्क्रिय हो गयी थी, शायद दरबारी काव्य प्रवृत्ति नायिका भेद, षटऋतु वर्णन, प्रशस्ति काव्य आदि से ताल में न बिठा पाने के कारण। यों रहीम ने अवधी में 'बरवै नायिका भेद' की रचना की थी। इसका एक रूप तुलसी ने 'रामलला नह-छू' में भी प्रस्तुत किया था। किन्तु रीति काव्य की प्रवृत्तियों ब्रज के मुकाबिले अवधी में लोकप्रिय नहीं हो पायी, इसलिए दरबारों से अवधी कविता बाहर हो गयी। नव जागरण काल में वह पुनः जन चेतना बनकर मुखरित हुई। प्रतापनारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण' में प्रकाशित अपीलों ('हर गंगा' धुनवाली कविताओं) में उसका पहली बार प्रयोग किया। उन्होंने अवधी में आल्हा की रचना की। अपने लेखों में उन्होंने अवधी-शब्दावली बेझिझक होकर अपनायी, जो आगे चलकर ललित निबन्धों के रूप में परिणत हो गयीं। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने भी 'कल्लू अल्हैत' के नाम से आल्हा की रचना की। इस बीच राष्ट्रीय भाव धारा से जुड़ी हुई अनेक रचनाएं अवधी में रची गयीं। छायावाद का भी अवधी कविता पर काफी प्रभाव पड़ा। 'चकल्लस' में संकलित 'पढ़ीस' जी की कई कविताएं, जैसे 'सुनहली श्यामा', 'प्रभात किरन,' 'पपीहा, बोल जारे' आदि छायावाद से प्रभावित हैं। छायावादी कवियों में निराला जी तो अवधी शब्दों का बेझिझक प्रयोग करते रहे हैं। एक सर्वेक्षण के द्वारा मैंने उनके साहित्य में बैसवारी अवधी के लगभग 250 शब्द खोजे हैं। पन्त की 'ग्राम्या' और 'युग वाणी' में भी अवधी शब्दों की भरमार हैं प्रगतिवादी विचारधारा भी अवधी कवियों द्वारा काफी अपनाई गयी है। 'पढ़ीस' की कविता 'राजा की कोठी' और वंशीधर की कविता 'किसान की अर्जी' इस कथन की प्रमाण हैं। यही स्वर आगे किसान आन्दोलन के रूप में मुखरित हुआ है। इसी से प्रेरित होकर 'अगिया बेताल' (डॉ. रामविलास शर्मा) की कविता 'हाथी घोड़ा पालकी' और भगवतीचरण वर्मा की प्रसिद्ध 'भैंसा गाड़ी' लिखी गयी है।

गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं में अन्यान्य जनपदीय भाषाओं की तरह अवधी का यथेष्ठ विकास नहीं हो पाया। यों अवधी में वार्ता साहित्य बहुत दिनों से लिखा जा रहा था। भाषा टीकाएँ भी बराबर रची जाती रही हैं। यह वार्ता साहित्य आकाशवाणी में तो बहुत लोकप्रिय रहा है। जैसे- लखनऊ केन्द्र से रमई काका, बताशा बुआ (सुमित्रा कुमारी सिन्हा) आदि की सैकड़ों वार्ताएँ प्रसारित हुईं हैं, किन्तु अप्रकाशित रह जाने के कारण उनका स्थायी महत्त्व सिद्ध नहीं हो पाया। भाषा-टीका क्षेत्र में बाबा बैजनाथ कुर्मी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है, किन्तु अब वे टीकाएँ कालातीत सी हो गयी हैं। अवधी नाटक का इतिहास तुलसी और मेघा भगत द्वारा प्रवर्तित रामलीला से जोड़ा जा सकता है। रेडियो नाटक के क्षेत्र में रमई काका, लक्ष्मणप्रसाद मिश्र आदि का बहुत योगदान रहा है। नुक्कड़ नाटक भी अवधी में बहुत हुए हैं, किन्तु खड़ीबोली के मुकाबले अवधी नाटक कहीं जम नहीं पाए। कहानी लेखन में 'पढ़ीस' जी के कुछ प्रयोग स्मरणीय हैं उनका संकलन 'ला मजहब' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उपन्यास विधा में

रमई काका का 'कलुवा वेल' और मधुकर उपाध्याय का सद्यःप्रकाशित उपन्यास 'किस्सा पांड़े सीताराम सूबेदार का' उल्लेखनीय है। निराला, तसलीम लखनवी (नागर), श्री लाल शुक्ल (राग दरबारी), मनोहर श्याम जोशी (नेता जी कहिनि) आदि में अवधी का पर्याप्त प्रयोग हुआ है किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि अब इन गद्य विधाओं की स्थिति खड़ीबोली गद्य के समक्ष नगण्य सी है। हाँ अवधी संस्कृति और शब्द सम्पदा अवश्य लोकप्रिय रहेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अवधी भाषा और साहित्य का व्यापक प्रभाव समकालीन हिन्दी लेखन पर पड़ा है जिससे उसकी भाषिक प्रकृति और साहित्यिक संस्कृति उजागर हुई है।

अवधी लोकगीतों में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम

डॉ. विद्याबिन्दु सिंह

इतने विशाल जन समुदाय वाले देश में 1857 के गदर को लोकमानस ने न केवल एक साक्षी के रूप में देखा बल्कि उसकी सहभागिता भी रही। देश की कायापलट करने में जन सामान्य मन-वचन-कर्म से अपने बलिदानियो के साथ रहा। कुछ स्वार्थी लोगों ने जब धोखा देकर देश और देशभक्तों के साथ गद्दारी की तो उनके प्रति घृणा का भाव भी इन गीतो में बराबर व्यक्त होता रहा।

1857 का विद्रोह एक ऐसी पृष्ठभूमि तैयार करता है जो इतिहास को एक मोड़ देता है। आजादी के लिए मन में एक ऐसी चिनगारी सुलगा देता है जो निरंतर सुलगते-सुलगते ज्वाला बनकर फूट पड़ी।

अमर शहीद रामप्रसाद 'विस्मिल' का एक गीत इस भाव की पुष्टि करता है।

भारत न रह सकेगा, हरगिज गुलाम खाना,
आजाद होगा, होगा आता है वह जमाना।
खूं खौलने लगा है हिंदोस्तानियों का,
कर देंगे जालिमों का हम बंद जुल्म ढाना।
कौमी तिरंगे झंडे पर जां निसार अपनी,
हिंदू मसीह मुस्लिम गाते हैं वह तराना।
अब भेड और बकरी बन कर न हम रहेंगे,
इस पस्त हिम्मती का होगा कहीं ठिकाना।
परवाह अब किसे है जेल ओ दमन की प्यारो,
इक खेल हो रहा है फांसी पे झूल जाना।
भारत वतन हमारा, भारत के हम हैं बच्चे,
भारत के वास्ते है, मंजूर सिर कटाना।

(भारत छोडो आन्दोलन-शंकर दयाल सिंह की पुस्तक से उद्धृत)

हमारा भारत किसी भी कीमत पर गुलाम नहीं रह सकता। वह आजाद होगा और वह दिन आ रहा है। हम हिन्दुस्तानियों का खून खौलने लगा है अब हम जालिमों के जुल्म नहीं सहेंगे। हिन्दू-मुस्लिम-सिख-इसाई सभी यही तराना गाते हैं कि हम अपनी जान तिरंगे झण्डे पर कुर्बान कर देंगे। हम अब भेड़-बकरी बनकर नहीं रहेंगे अब हमें जेल जाने और सताये जाने की परवाह नहीं है। फाँसी पर लटकना हमारे लिए एक खेल हो गया हैं। हम भारत के बच्चे हैं और हम अपने देश की खातिर अपना सर भी कटा सकते हैं।

इतिहास साक्षी है कि राजाओं, जमींदारों ने किस प्रकार अपने प्राण देकर फिरंगियों का सामना किया। एक गीत में फतेहपुर के जमींदार जस्सा सिंह की वीरता का उल्लेख मिलता है-

फत्तेपुर जिला बहुत सन्नामी
फत्तेपुर के जमींदार नामी गेरामी
जस्सा सिंह गोली फिरंगियन पै तानी
नाव म भागत रहैं फिरंगी
नाहीं छोड़िन वनकै नाव निसानी।

फतेहपुर जिला बहुत सुप्रसिद्ध है। वहाँ के जमींदार स्वनाम धन्य और गौरवाशाली हैं। वहाँ के जस्सा सिंह ने फिरंगियों पर गोली तान दी। अंग्रेज अपनी जान बचाने के लिए नाव में बैठकर भागे। जस्सा सिंह ने उनका नामो निशान नहीं छोड़ा।

अंग्रेजों के दमनकारी अत्याचारों से जनता त्राहि-त्राहि कर रही थी-

फूँकि दिहिस छनिया औ छप्पर
रछसवा फिरंगी आइकै।
फूँकि दिहिस महल अटरिया
रछसवा फिरंगी आइकै।
ना देखै बूढ़ा, ना देखै बच्चा
पाटि दिहिस फँसिया से पेड़वा
रछसवा फिरंगी आइकै।
एक ओर खाँई, एक ओर कुआँ
सिपाही चले सिर कफन बन्हाइ के
रछसवा फिरंगी आइकै।
सीना तानि चले राजपूतै,
बहू-बिटियन कै इज्जतिया बचाय के।
रछसवा फिरंगी आइकै।

राक्षस फिरंगियों ने फूस के छप्पर फूँक दिये, महल-अटारी फूँक दी। वे आततायी आतंक पैदा करने के लिए न बूढ़ा देखते थे, न बच्चा। वे सबको फाँसी लगाकर पेड़ पर टाँग देते थे। इस तरह से फाँसी के फन्दों पर लटकते लोगों से पेड़ पट गये थे। एक ओर खांई थी एक ओर कुँआ, वीर सिपाही सिर पर कफन बाँधकर चल पड़े। देश की बहन-बेटियों की प्रतिष्ठा बचाने के लिए राजपूत सीना तानकर चल पड़े।

इतिहास के पृष्ठों को सुधारने की इस राष्ट्रव्यापी क्रांति के लिए पूरे भारतीय लोक साहित्य का मनन-मंथन करना चाहिए था जो नहीं हो सका। अभी भी प्रयास किया जाय तो कुछ संतोष तो होगा ही। अंग्रेजों द्वारा लिखे गये इतिहास के प्रति क्षुब्ध होकर सुविख्यात इतिहासकार श्री श्रीनिवास बालाजी हर्डीकर लिखते हैं-

''इतिहास का मुख्य आधार है- अंग्रेजों द्वारा लिखे गये ग्रंथ अथवा अंग्रेजी सरकार के पुराने रिकार्ड। अंग्रेज तो इस क्रांति संघर्ष में एक पक्ष थे। अतएव उनके लेखों में निष्पक्षता, वास्तविकता और ऐतिहासिक सत्य की आशा करना व्यर्थ ही है। अधिकतर अंग्रेज लेखकों ने हिन्दुस्तानियों को शत्रु, बदमाश, हत्यारे, पांडे आदि नामों से पुकारा है। मंगल पांडे के बलिदान के बाद अनेक अंग्रेज पांडे शब्द का प्रयोग घृणापूर्वक ढंग से प्रत्येक हिन्दुस्तानी के लिये करते थे। अंग्रेज लेखक तो जान-बूझकर इस गौरवपूर्ण क्रांति को अपने वास्तविक रूप में संसार के सामने नहीं आने देना चाहते थे, या वे भारतीय भावनाओं, विचारों से इतने अनजान थे कि इस क्रांति के भारतीय पक्ष को समझने की क्षमता उनमें नहीं थी। अंग्रेज इस बात से

बड़े सचेत थे कि क्रांति का इतिहास अपने वास्तविक और सच्चे रूप में भारतीयों के समक्ष न आने पाये। अन्यथा बहुत संभव है कि इसकी स्मृति भारतीयों के लिए इस देश से अंग्रेजी सत्ता को मिटा देने के निश्चय का स्फूर्ति-क्रेन्द्र बन जाये। अतएव अंग्रेज लेखको ने अंग्रेज सेनानियों के कार्यों को बढ़ा-चढ़ाकर और उन पर वास्तविकता से अधिक महानता लादकर उन्हें गौरवशाली बनाने का सदा प्रयत्न किया। पर क्रांतिकारियों के महान उद्देश्यों और उनके नेताओं के उज्ज्वल चरित्रों को काले तथा घृणित रूप में चित्रित करनें में वे सदा प्रयत्नशील रहे।

इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि वे कागजात, जिनके द्वारा क्रांति की महानता पर प्रकाश पड़ता था, अंग्रेज अधिकारियों ने जान-बूझकर नष्ट कर दिये। सुप्रसिद्ध लेखक सर जेम्स हिल ने इस बात को इन शब्दों में स्वीकार किया है कि जिस बात को वे छिपाना चाहते थे, उसको छिपाने में बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स ने अपनी कुशलता का सर्वत्र परिचय दिया है" (श्रीनिवास बालाजी हर्डीकर- "तात्या टोपे" पृष्ठ- (अप)।)

किस प्रकार भारतीय पक्ष को प्रस्तुत करने वाली महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री नष्ट हो गयी, इसके सम्बन्ध वे फिर आगे लिखते हैं-

"क्रांति की असफलता के बाद इसके नेताओं ने अपने सभी पत्र व्यवहार तथा क्रांति सम्बन्धी सभी कागजात आत्मरक्षा के लिए नष्ट कर दिये। आज अगर हमें नाना साहब, लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, बहादुर शाह, कुँवर सिंह, मौलवी अहमदुल्ला शाह, हजरत महल बेग़म आदि के पत्र व्यवहार मिलते तो वास्तव में ये सब इस क्रांति के इतिहास के लिए बहुमूल्य सामग्री सिद्ध होते। साथ ही जो पत्र व्यवहार इनके सम्बन्धियों के यहाँ था वह भी इन्होंने नष्ट करने में ही अपनी भलाई समझी। अपने संशोधन कार्य के सिलसिले में लेखक को पता चला कि ब्रह्मावर्त के पंडों ने उन बहियों को नष्ट करने में ही अपना हित माना, जिन बहियों पर नाना साहब पेशवा, तात्या टोपे, झाँसी वाली रानी तथा उनके कुटुम्बियों की सनदें तथा हस्ताक्षर थे।" वही- पृष्ठ- ((अप.अपप))

उन्होंने आगे विचार व्यक्त किया है कि उर्दू के इतिहासकार भी अधिकतर अंग्रेजो के पक्षपाती थे। उनकी किताबों में अंग्रेजो के पक्ष में ही अधिक लिखा गया है। दक्षिण से आये हुए यात्री विष्णु भट्ट गोडसे ने सन् 1857 की क्रांति का आँखो देखा, कानों सुना हाल लिखा है। जो "माझा प्रवास" मराठी ग्रंथ में है। इसमें भारतीय पक्ष पर अच्छा प्रकाश है।

सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ डॉ सुरेन्द्र नाथ सेन ने 1857 का इतिहास लिखा। उनसे स्वंत्रत भारत में यह अपेक्षा थी कि वह भारतीय पक्ष पर होगा। पर वह भी अंग्रेज लेखकों से प्रभावित हैं। श्री श्रीनिवास बाला जी लिखते हैं- डॉ. सेन के अट्ठारह सौ सत्तावन को पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होने लगता हैं कि लेखक कहीं अंग्रेजी कैंप में बैठकर इतिहास लिख रहा है। भारतीय पक्ष का उससे कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता। दिल्ली के मोंचे पर हम लेखक को दिल्ली पुनर्विजय के लिए आगे बढ़ने वाली सेना के साथ ही पाते हैं।

बहादुरशाह की दिल्ली में जिसने 133 दिनों तक अंग्रजो के सुसज्जित और विशाल सेनाओं का सामना किंया उन्हें उनमें केवल आपसी फूट, लड़ाई-झगड़ा और असंतोष ही दिखाई देता है। कानपुर में लेखक घिरे हुए अंग्रेजो के साथ ही उपस्थित मालूम होते हैं। क्रांतिकारियों के एक-एक गोले का अंग्रेजों पर क्या प्रभाव पडता था ? कितने मरते थे, कितने घायल होते थे? आदि बातों का विस्तृत विवरण आपको इतिहास में मिलेगा। पर जहाँ से गोले दागे जाते थे, उस कैंप का कोई विशेष हाल आप को न मिलेगा। लखनऊ में भी हम लेखक को बेली गारद में घिरे हुए अंग्रेजों के बीच पाते हैं। रेजीडेंसी मे भोजन सामग्री की कमी, सिगरेट, शराब का वितरण आदि साधारण बातों पर प्रकाश डाला गया है। इतना ही नहीं बेली

गारद की दीवार पर संयोग वश बैठे हुए मोर पक्षी के सुन्दर पंखों का भी वर्णन पढ़ने को मिलेगा। पर बेली गारद के बाहर बेगम हजरत महल, मौलवी अहमदुल्ला शाह, राना बेनी माधव के नेतृत्व में क्रांतिकारी क्या योजनाएँ बना रहें हैं, क्या कर रहे हैं इस सम्बन्ध में हमें कोई जानकारी नही मिल सकती। विद्वतवर डॉ. सेन का इसमें कोई दोष नहीं। दोष है उस सामग्री का जिसके आधार पर उन्होंने इतिहास की रचना की।

डॉ. आर. सी. मजूमदार ने भी सिपाही विद्रोह और 1857 का विप्लव लिखा। डॉ सेन तथा डॉ मजूमदार दोनों ही ने इस क्रांति को केवल विद्रोह के ही रूप में देखा। वं इसे स्वातंत्र्य संग्राम नही मानते।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय महापुरुषों, वीरों के प्रति इतिहास लेखन नजरंदाज होता रहा। पर सन् 1857 के सिपाही विद्रोह में विद्रोही नेताओं को स्वातंत्र्य वीर के रूप में देखा गया और उनके बलिदान को स्वतंत्रता के वीजारोपण के रूप में देखा गया स्वतंत्र भारत में।

जिन राष्ट्रनायकों ने अपने प्राणों की आहुति देकर देश की संस्कृति, धर्म, साहित्य, कला और समस्त वैभव को नष्ट होने से बचाया है उनके प्रति कृतज्ञ राष्ट्र अपने श्रद्धा के दो शब्द अर्पित कर सके। यह हर भारतीय का कर्त्तव्य है। झाँसी की रानी, नाना साहब, तात्या टोपे, फीरोजशाह, कुँवर सिंह, अमर सिंह, मौलवी अबदुल्ला शाह, राना बेनी माधव, राजा देवीबख्श सिंह, मंगल पाण्डे आदि का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। इन सबका नाम उनकी वीरता साहस, त्याग, स्वाभिमान और बलिदान के लिए सदैव स्मरणीय रहेगा। उनका राष्ट्र स्वातंत्र्य प्रेम स्तुत्य है।

झाँसी की रानी का नाम भारतीयों के मन में उच्च स्थान पर है किन्तु अंग्रेजों ने इतिहास में मिथ्या भ्रम फैलाया कि रानी व्यक्तिगत कारणों से युद्ध में उतरी। उन्होंने परिवारिक हानियों के कारण ईसाइयों के प्रति घृणा के कारण, स्त्रियोचित कोमल भावुकता के कारण अपनी आयु को ध्यान में नहीं रखा। रानी दत्तक पुत्र लेने में नियमों का उल्लंघन कर रहीं थीं जिस पर अंग्रेजों ने आपत्ति की थी जिसके कारण वे क्षुब्ध थीं। रानी निर्दय, हत्याकारी थीं ऐसा भी भ्रामक प्रचार अंग्रेजों द्वारा किया गया था। पर ये सारे लांछन स्वार्थी अंग्रेजों द्वारा उनके प्रति जनमानस में सम्मान कम करने के लिए लगाये गये थे।

इसके सम्बन्ध में रानी का लिखा हुआ वाक्य सारे भ्रम काट देता है। रानी ने स्वयं लिखा...

"हिन्दू धर्म के अभिमान के कारण मै यह कर्म (अंग्रजो के विरूद्ध युद्ध) करने को तैयार हुई।" सतारा जिला में कृष्णा नदी के तट पर बसा बांई ग्राम महारानी लक्ष्मीबाई के ,पूर्वजों का मूल स्थान था। पिता का नाम मोरो पंत और माता का नाम भागीरथीबाई था। धर्मपरायण माँ ने अपने लाडली बेटी का नाम मणिकर्णिका रखा था जो वाराणसी का पवित्र स्थान माना जाता है। बचपन में उन्हें "मनु" नाम से लोग पुकारते थे माँ के मरने पर सँभालने वाला कोई नहीं था। पिता मोरोपंत बाजीराव पेशवा के बाड़े में मनु को ले जाते थे। बाजी राव पेशवा मनु को बहुत दुलार करते थे और उन्हें वहाँ सब छवीली कहते थे। बाजी राव के गोद लिए पुत्र नाना साहब, बाला साहब, राव साहब के साथ वे खेलती थीं। उन्हीं के साथ अक्षर ज्ञान और शस्त्र विद्या उन्होंने सीखी। 8 वर्ष की उम्र में ही विवाह हो गया। गंगाधर राव की प्रथम पत्नी रमाबाई की मृत्यु के बाद राजा गंगाधर राव की वह पत्नी बनी।

"सन् 1842 में गणेश मंदिर में उनका विवाह हुआ था। 21 नवम्बर 1853 वह विधवा हो गयीं। दुखी रानी ने अपना कर्त्तव्य समझकर राज्य सँभाला। उनकी पूजा-पाठ, दानशीलता, गरीब कन्याओं का विवाह आदि कार्यों की प्रशंसा लोकगीतों में भी मिलती है। वे विद्या, कला प्रेमी, आदर्श माता थीं। अपने अन्तिम समय में उहोंने पुत्र दामोदर की रक्षा का भार श्री रामराव देशमुख को सौंपा।

एक जनश्रुति है कि लक्ष्मीबाई जब युद्ध करते-करते किले से बाहर निकल आयी थीं और अंग्रेजों से बचती हुई जंगल में भूखी-प्यासी भटक रही थीं तो कुछ ब्राह्मणों ने उन्हें पहचान लिया और उन्हें अपना

परिचय देते हुए कहा कि हम जल भरकर लाते हैं आप जलपान करके विश्राम कर लें। तब रानी ने उनसे कहा कि मैं पानी स्वयं भर लूँगी क्योंकि ब्राह्मण से सेवा नहीं ले सकती आप पूज्य हैं। उन्होंने पानी स्वयं भरकर पिया और बोलीं कि मैं विधवा हूँ, केवल आधा सेर चावल चाहिए था पर हिन्दू धर्म के स्वाभिमान के कारण युद्ध कर रही हूँ।

उस समय दामोदर राव 8-9 वर्ष के थे। उन्होंने आत्मसमर्पण 1860 में कर दिया 150/- मासिक बेतन पर। महारानी के पौत्र लक्ष्मण दामोदर झाँसीवाला को 10 मई 1997 को सम्मान दिया गया। रानी की वीरता और जीवन के बारे में गीत मिलते है।

भागीरथी बाई की कोखि से जनमी
मोरोपतं तांबे कै धेरिया हो राम
आठ बरिस कै रही छबीली
होइ गयी झाँसी कै रानी हो राम
रानी कै आल्हर बारी उमिरिया
रानी कै कोखि हरियानी हो राम
पूत जनम भये राजा हुलसे,
झाँसी खुसी से बउरानी हो राम।
फूटा करम कुँवर जब मरिगै,
रानी कै दुनिया नसानी हो राम।
बज्जर परा राव गये सरगे,
होइ गयीं बेवा महरानी हो राम।
नास होय, कोढ़ियाँय फिरंगी,
रानी कै लूटी जिनगानी हो राम।
झाँसी न देबय प्रान दै देबय,
रानी परन इहय ठानी हो राम।
गोदी कै पूत काँ पिठिया बान्हीं,
देखा तरवारी कै पानी हो राम।
छक्का छूटि गै अंग्रेजन कै,
जुग-जुग अमर कहानी हो राम।

भागीरथी देवी की कोख से मोरोपंत तांबे की बेटी मनु का जन्म हुआ। आठ वर्ष की छबीली का विवाह हो गया। वह झाँसी की महारानी लक्ष्मी बाई बन गयी। अल्प वयस सुकुमारी रानी की कोख हरी हुई। पुत्र पाकर राजा उल्लास से भर उठे। पूरी झाँसी खुशी से पागल हो उठी। पर भाग्य फूट गया, राजकुँवर की मृत्यु हो गयी। रानी पर दूसरा घोर ब्रजपात हुआ। रानी विधवा हो गयीं। ऐसे फिरंगियों का नाश हो, उन्हें कुष्ठ रोग हो जाय जिन्होंने रानी का जीवन लूट लिया। गोद लिए हुए पुत्र को पीठ बाँधा और युद्ध में ललकार कर बोलीं-देखो मेरी तलवार का पानी देखो। रानी ने अंग्रेजो के छक्के छुड़ा दिये। उनकी वीरता की कहानी युग-युग तक अमर हो गयी।

एक अन्य गीत है-

झाँसी कय रानी जनाना, भेस मर्दाना रहा।
जब अंग्रेजवे छेड़यँ लरइया,
रानी दगावैं तोपखाना भेस मर्दाना रहा।

जब अंग्रेजवै बजावें हरमुनियाँ
रानी नगारा बजवाना भेस मर्दाना रहा।
रानी कै सब सखियाँ मर्दानी,
झाँसी कै रहा जमाना, भेस मर्दाना रहा।

महारानी लक्ष्मी बाई का वेश पुरुषों का था। जब अंग्रेजों से लड़ाई छिड़ी थी तो रानी लक्ष्मीबाई तोप चला रही थीं। जब अंग्रेज हामोनियम बजाते थे तो रानी लक्ष्मीबाई नगारा बजवाती थीं। रानी लक्ष्मीबाई का वेश मर्दाना था उनकी सभी सहेलियों का वेश मर्दाना था। तब झाँसी का जमाना था।

''गदर के फूल'' लिखते समय प्रातः स्मरणीय श्री अमृतलाल नागर जी ने लिखा था-

''सत्तावनी क्रांति सम्बधी उपने उपन्यास के लिए ऐतिहासिक सामग्री एकत्र करते हुए मुझे लगा कि अपने उपन्यास के क्षेत्र, अवध में घूम-घूमकर गदर- सम्बन्धी स्मृतियाँ और किंवदंतियाँ आदि एकत्र किये बिना मेरी गढ़ी हुई कहानी में झकोले रह जायेंगे। यों भी गदर की किंवदंतियों या बातों को सुनाने वाले व्यक्ति अब छीजते जा रहे हैं। सत्तावनी क्रांति के सम्बन्ध में भारतीय दृष्टिकोण से लिखे गए इतिहास के अभाव में जनश्रुतियों के सहारे ही इतिहास की गैल पहचानी जा सकती है।

हमारे देश में स्वजनों की चिता के फूल चुने जाते है। सौ वर्ष बाद ही सही मैं भी गदर के फूल चुनने की निष्ठा लेकर अवध की यात्रा का आयोजन करने लगा। ''गदर के फूल'' के दो शब्द से ''भारत में लोक साहित्य के अध्ययन, संकलन, सर्वेक्षण के पितामह माने जाने वाले स्वनामधन्य श्री राम नरेश त्रिपाठी ''कविता कौमुदी'' में लिखते है-

''गीतों में कभी-कभी इतिहास की बहुत-सी बारीक बातें मिल जाया करती है। महाराष्ट्र के पौवाड़े इतिहास की बहुत बड़ी सम्पति समझे जाते हैं। झाँसी के आस-पास महारानी लक्ष्मीबाई से सम्बन्ध रखनेवाले बहुत से गीत पाये जाते है । एक बार मैंने एक गीत सुना था, जिसमें औरगजेब की निन्दा थी, जो उसने अपने बड़े भाई ''दारा'' को मरवा डाला था। उस गीत का कुछ अंश मैने नोट किया था, पर वह कागज ही कहीं गुम हो गया।''

गीतों में बहुत-सी छोटी-छोटी कहनियाँ मिलती हैं, जो बड़ी-बडी घटनाओं से सम्बन्ध रखती है। एक गीत में बिहार के कुवँर सिंह का जिक्र आया है, जो 1857 के प्रसिद्ध व्यक्तियों में थे।

मेरें जन्म-ग्राम कोइरीपुर (जिला जौनपुर)के पास चाँदा नाम का एक गाँव है, जहाँ 1857 के बलबे में अंग्रेजों और कालाकाँकर(प्रतापगढ़) के बिसेन-वंशी राजा से धोर युद्ध हुआ था। अब भी उस गाँव के आसपास के गाँवों में इस युद्ध के गीत गाये जाते है। एक कड़ी मैने भी सुनी थी -

कालेकाँकर क बिसेनवा, चाँदे गाड़े बा निसनवाँ ।

इसी प्रकार झाँसी की रानी, कुँवरसिंह और जाटों के गीतों में बहुत-सी ऐतिहासिक घटनाएँ बीजरूप से सुरक्षित है।'' श्री रामनरेश त्रिपाठी ''कविता-कौमुदी भाग तीन-ग्राम गीत'' कविता कौमुदी में एक गीत संकलित है उसमें फिंरगियों के आने और दानापुर में ठ़हरनें की बात कही गयी है। -

पूरब पछिमवाँ से आइ रे फिँरगिया,
दानापुर में बारिक उठावइ रे की।
बारिक उठवलक खिरकी करवलक,
चारों ओर पलटन बसवलक रे की।।
उही कोरे मिरजा रे झिंझरी खोलत हैं,
जाही कोरे भगवति नहाइय रे की।।
पनिया भरति पनिभरनि बिटियवा,

केकर बहिनि करे असननिया हू रे जी।
गाँव केर गौंआ होरिलसिंघ रजवा,
उन्हकर बहिनि करे असननिया हू रे जी।
नजर परत मिरजा बोल थै सहेबवा से,
होरिल सिंह क पकरि मँगावहु रे की।।
होरिल सिंह मुसुक चढ़ावहु रे जी।।
जब रे होरिलसिंघ गइये मिरिजा पसवा
नइ-नइ करेहैं सलमिया हू रे जी
लेहु न होरिलसिंघ डाल भरि सोनवा,
भगवति बहिनिया मोहि बकसहु हू रे जी
आगि लगहु मिरिजा डाल-भर सोनवा
मोरा कुले भगवति ना जाये रे जी
घर में से निकसि अँगना ठाढ़ि कई,
अँगना ठाढ़िय भौजी रोवेथी रे जी।
आग लगहु भगवति तोहरि सुरतिया,
तोहरा कारन सामी बान्हा रे जी।
लेहु ना भौजी घर गिहिथनवा,
होरिल छोड़ावन हम जाइब रे जी।
जब भगवति गइ मिरिजा के पसवा
नइ-नइ करेलि सलमिया रे जी।
जौं तुहुँ मिरिजा हमरा सें लोभिया
होरिलसिंघ के मुसुक छोड़वहु रे जी।
जौं तुहुँ मिरिजा हमरा सें लोभिया
हमरा जोगे चुनरि रँगावहु रे जी।
जौं तुहुँ मिरिजा हमरा सें लोभिया।
हमरा जोगे गहना गढ़ावहु रे जी।
जौं तुहुँ मिरिजा हमरा सें लोभिया
हमरा जोगे डँड़िया फनावहु हु रे जी।
हँसि- हँसि मिरिजा चुनरि रँगौले,
रोइ-रोइ पेन्हे बेटी भगवति रे जी
हँसि- हँसि मिरिजा डँड़िया फनौले,
रोइ-रोइ पेन्हे बेटी भगवति रे जी।
एक कोस गईं, दुसर कोस गइली
लगिल मधुरि पियसिया रे जी।
गोड़ तोर लागीला अगिला कहरवा,
बून एक पनिया पियावहु रे जी।
मिरिजा गडुअवे पनिया पियावहु रे जी।
तोरा गड़ ए मिरिजा उठि पिअबों,

बाबा के सगरवा दुर्लभ भइहै रे जी।
एक चिरुआ पियलि, दूसर चिरुआ पियलि,
तिसरे गइल तरबोरवा रे जी।
रोवेहै मिरिजा मुड़वा ठठावाला,
मोरि बुधि छरे छोड़ी भगवति रे जी।
रोइ-रोइ मिरिजा रे जलिया लगवले,
बझि गइल घोंघवा सेवरवा रे जी।
हँसि-हँसि होरिलसिंघ जलिया लगवले,
बझि गइले भगवति बहिनिया रे जी।
हँसेला होरिलसिंघ मुँहे खाइ पनवा,
तीन कुल राखे बहिनिया भगवति रे जी।

''पूरब पश्चिम से फिरंगी आये। दानापुर में बैरक बनायी। बैरक उठाकर उसमें खिड़की बनवाई। चारों ओर पल्टन बसा दी। उसी ओर मिरजा झरोखा खोलता है, जिस ओर भगवती नहा रही है। मिरजा पनिहारिन की बेटी से पूछता है- किसकी बहन स्नान कर रही है। गाँवों में एक गाँव है जिसके राजा होरिल सिंह हैं उनकी बहन स्नान कर रही है। उस सुन्दरी बाला पर दृष्टि पड़ते ही मिरजा साहब से (अंग्रेज) से बोला-हे साहब ! होरिल सिंह को पकड़वाकर बुला लीजिए। होरिल सिंह की मुश्के बँधवा दीजिए। जब होरिल सिंह मिरजा के पास पहुँचे तो झुक-झुक कर सलाम किया। मिरजा ने प्रस्ताव रखा- होरिल सिंह ! डाल भर सोना ले लो, अपनी बहन भगवती को मुझे दे दो। होरिल सिंह ने उत्तर दिया- मिरजा ! मेरे कुल में भगवती ने जन्म नहीं लिया। घर में से निकलकर आँगन में खड़ी होकर भगवती की भाभी रोने लगी-भगवती ! तुम्हारी सुन्दरता को आग लगे, तुम्हारे कारण मेरा पति बाँध दिया गया है। भगवती ने कहा- भाभी ! अपनी घर-गृहस्थी सम्भालिये। मैं होरिल भाई को छुड़ाने जा रही हूँ। जब भगवती मिरजा के पास पहुँची, झुक-झुक कर सलाम किया। मिरजा ! यदि तुम मुझ पर मोहित हुए हो तो होरिल सिंह की मुश्कें खोल दो। मेरे लिये चूनर रंगाओ, गहना गढ़ाओ और मेरे योग्य पालकी सजवाओ। हँस-हँस कर मिरजा ने गहना गढ़ाया, चुनरी रंगवाया। रो-रोकर बेटी भगवती ने पहना। हँस-हँस कर मिरजा ने पालकी सजवायी। रो-रोकर भगवती बेटी बैठी। एक कोस गयी, दूसरे कोस गयी मीठी प्यास लग गयी। हे पालकी के आगे के कँहार भाई ! एक बूँद पानी पिलवा दो। मिरजा बोला-मेरे गेंडुवे का पानी पी लो। भगवती ने कहा कि तुम्हारे गडुवे का तो अब नित उठकर पीऊँगी, पर बाबा का सागर आज से दुर्लभ हो जायेगा। भगवती ने एक चुल्लू भर पानी पिया, दो चुल्लू भर पानी पिया। तीसरी में नीचे डूब गयी। मिरजा रो-रोकर अपना सिर पीटने लगा। भगवती ने तो मेरी बुद्धि खुली छोड़ दी अर्थात् मेरी बुद्धि घास चरने चली गयी थी जो मैंने उसकी बात मान ली। रो-रोकर मिरजा जाल डलवाने लगा, पर उसमें घोघे-शैवाल फँसकर आते। हँस-हँस कर भाई होरिल सिंह ने जाल डाला उसमें फँसकर बहन भगवती का शरीर बाहर आ गया। होरिल सिंह मुँह में पान खाता हुआ हँस पड़ा- मेरी बहन भगवती ने तीन कुलों की लाज रख ली।

'श्री रामनरेश त्रिपाठी ने कविता कौमुदी में लिखा है- यह गीत अंग्रेजों को इतना पसंद आया कि लाइट आफ एशिया के रचयिता अंग्रेजों के प्रसिद्ध कवि सर एडविन आर्नाल्ड ने इसका अंग्रेजी पद्य में अनुवाद कर डाला। जिसे नवम्बर 1718 में, हिन्दी-भाषा के परम् प्रेमी सर जार्ज ए0 ग्रियर्सन ने इंग्लैंड के स्कूल आफ ओरियन्टल स्टडीज में एक व्याख्यान में सुनाया था।''

कविता कौमुदी में इस प्रकार कुछ और गीत दिये गये है जिसमें अंग्रेजो और मुगलो से डर कर

अपने पति और अपने भाई से अनुरोध करती है कि सिर पर पाग बाँध लो और हाथ में ढाल तलवार ले लो। अंग्रेजो से और मुगलो से डर कर हम जंगल-जंगल छिपती फिर रही है-

घोड़ चढु दुलहा तुँ घोड़े चढु यहि रह बन में
दुल्हा बाँधि लेहू ढाल तरुवारि त यहि रन बन में ।
पहिरौ न पियरी पितंबर यहि रन बन में ।
दुलहा बाँधि लेहु लटपट पाग त यहि रन बन में।
कैसे के बाँधी पाग त यहि रन बन में ।
दुलहिन मरम न जान्यों तोहार त यहि रन बन में।
जतिया तो हमरी पंडित कै यहि रन बन में।
दुलहा मुगल के डरिया लुकानि त यहि रन बन में।
यतनी बचनिया क सुनतइ यहि रन बन में।
दुलहा घोड़े पीठि लिहेनि बैठाय त यहि रन बन में।
यक बन गैले दूसर बन यहि रन बन में।
दुलहा तिसरे में लागी पियास त यहि रन बन में।
अरे अरे जनम संघाती त यहि रन बन में।
दुलहा बूँद यक पनिया पियाउ त यहि रन बन में।
ताल औ कुइँआ सुखानी त यहि रन बन में।
पनिया रकत के भाव बिकाय त यहि रन बन में।
उँचवै चढ़ि के निहारेन त यहि रन बन में।
दुलहिनि झरना बहै जुड़ पानि त यहि रन बन में।
दुलहिनि ठाढ़े मुगुल पचास त यहि रन बन में।
अरे अरे जनम सँघाती त यहि रन बन में।
दुलहा बून एक पनिया पियाउ त यहि रन बन में।
दुलहा मोरी तोरी छूटै सनेहिया त यहि रन बन में।
यतना बचन सुनि पायेन त यहि रन बन में।
दुलहा खींचि लीहिनि तलवारि त यहि रन बन में।
ठाढ़े एक ओर मुगुल पचास त यहि रन बन में।
दुलहा एक ओर ठाढ़े अकेल त यहि रन बन में।
रामा जूझे हैं मुगुल पचास त यहि रन बन में।
राजा जीति के ठाढ़ अकेल त यहि रन बन में।
पतवा के दोनवा लगायनि त यहि रन बन में।
दुलहिनि पनिया पियहु डभकोरि त यहि रन बन में।
दुलहा धरम लिहेउ मोर राखि त यहि रन बन में।
दुलहा हम तोहरे हाथ बिकानि त यहि रन बन में।
यतनी बचनिया के साथ त यहि रन बन में।
दुलहिन मलवा दिहिन गरे डारि त यहि रन बन में।

हे दुलहा ! घोड़े पर चढ़ लो, निर्जन और भयानक वन में ढाल-तलवार बाँध लो। पीताम्बर पहन लो, पगडी बाँध लो। दुलहन! पगडी कैसे बाँधू? मैं तुम्हें जानता नहीं। दुलहा! मैं ब्राह्मण कन्या हूँ। मुगलों

के डर से जंगल में छिपी हूँ। मुगलो ने मेरे भाई और पिता को मार डाला है। इतना सुनते ही उसने उसे घोड़े पर बैठा लिया। एक वन, दूसरा वन पार किया, तीसरे में प्यास लगी। हे जीवन संगी! एक घूँट पानी पिलाओ। इस वन के सभी ताल और कुँए सूख गये है। पानी तो रक्त के भाव हो गया है। उँचे चढ़कर देखा, पानी का झरना तो है पर वहाँ पचास मुगल खड़े हैं। हे दुलहे! पानी पिलाओ, नहीं तो अब प्रीति छूट रही है। एक ओर पचास मुगल एक ओर अकेला दुलहा। युद्ध जीत कर दुलहन को पानी पिला दिया, दुपटटे के छोर से हवा की। दुलहन बोली तुमने मेरा धर्म बचा लिया, कहकर उसके गले में वरमाला डाल दिया।

एक दूसरा गीत है जिसमें युद्ध के लिए तैयार भाई को बहन प्रेरणा देती है।

बिरना झीनी झीनी पतिया अमिलि कइ,
बिरना डोभइ हाली हाली बरियवा क पूत।
बलैया लेउँ बीरन।
बिरना हाली-हाली डोभउ बरिया पूत,
मोरा बिरना जेवनवाँ क ठाढ़।
बिरना हाली-हाली जेंवउ बिरन मोरा,
बिरना मुगल लड़इया क ठाढ़।
बिरना मुगल की ओरियाँ सौ साठि जने,
मोरा भइया अकेलवइ ठाढ़।
बिरना मुगल जुझैं सौ साठि जने,
मोरा भइया समर जीति ठाढ़।
बिरना कोखिया बखानउँ मयरिया कै,
जेकर पुतवा समर जीति ठाढ़।
बिरना भगिया बखानउँ मैं बहिनियाँ कै,
जेकर भइया समर जीति ठाढ़।
बिरना मंगिया बखानउँ मैं भौजी कै,
जेकर समिया समर जीति ठाढ़।

इमली की नन्हीं-नन्ही पत्तियों को कील कर बरई का पुत्र पत्तल बना रहा है। जल्दी करो पत्तल बनाओ। भाई ! जल्दी भोजन करो। तुर्क युद्ध के लिए खड़ा है। उसकी ओर सौ साठ सिपाही है मेरा भाई अकेला खड़ा है उसके सभी आदमी मारे गये मेरा भाई युद्ध जीत कर खड़ा है। ऐसी माँ की कोख को सराहती हूँ जिसका पुत्र जीत कर खड़ा है। ऐसी बहन के भाग्य को सराहती हूँ जिसका भाई जीत कर खड़ा है। ऐसी भाभी की माँग को सराहती हूँ जिसका स्वामी युद्ध जीत कर खड़ा है।

इस गीत का पाठ भेद भी मिलता है। उसमें मुगल या तुर्क के स्थान पर फिरंगी, गोरे या अंग्रेज कह कर गाया जाता है। ये गीत उस स्थिति को रेखाकिंत करते है जहाँ शत्रु के रूप में अंग्रेज हों या मुगल हों, उनके अत्याचारों और भारतीय वीरों के शौर्य की गाथा है।

एक गीत में इन क्रांतिवीरों की यशःगाथा कहते हुए लोक कवि धन्य-धन्य कर उठता है।

अच्छी रैनि जीति आया सँवरिया।
धन्नि उहै मइया, धन्नि रे बहिनियाँ,
धन्नि उहै कोखि जहाँ जन्में सँवरियाँ।

धन्नि उहै सेजिया, धन्नि रे सुपेतिया,
धन्नि उहै नारि जहाँ सोया सँवरिया.।
धन्नि उहै भुइँ, जहाँ जन्में बेनीमाधव,
धन्नि उहै देस जहाँ जन्में सिपहिया।
धन्नि उहै कोखि जहाँ जन्में सँवरियाँ,
धन्नि उहै भुइँ जहाँ जन्में बाँकुरे।
फिरंगियन कै छक्का छोराये सिपहिया,
धन्नि उहै कोखि जहाँ जन्में सँवरियाँ..।

गीत का भाव है- हे मेरे सावँरिया ! हे मेरे प्रिय ! हे मेरे वीर सिपाही ! तुम अच्छी तरह से रण में विजय प्राप्त करके आये हो। तुम्हारी माँ धन्य हैं, तुम्हारी बहन धन्य है, माँ की वह कोख धन्य है जहाँ तुमने जन्म लिया। वह सेज धन्य है, वह शय्या धन्य है, वह नारी धन्य है जहाँ तुमने शयन किया। वह भूमि धन्य है, वह देश धन्य है वह कोख धन्य है जहाँ राना बेनी माधव जैसे वीरों ने जन्म लिया। वह भूमि धन्य है जहाँ ऐसे वीर बाँकुरें सिपाहियों ने जन्म लिया जिन्होंने फिरंगियों के छक्के छुड़ा दिये। रानी ने अंग्रेजो के छक्के छुड़ा दिये। उनकी वीरता की कहानी युग-युग तक अमर हो गयी।

अजीमुल्ला

1857 के गदर में अजीमुल्ला का विशेष योगदान है। उन्होंने विद्रोह की योजना बनाने में विदेशों में जाकर वहुत कार्य किया है। उन्होंने अंग्रेजों की चाकरी करते हुये फ्रेंच, अंग्रेजी, उर्दू और हिन्दी भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। सके बाद अपना स्कूल चलाते हुए अध्यापन कार्य करने लगे। फिर सरकारी स्कूल में अध्यापक हुए। नाना साहब को उनकी विद्वत्ता की सूचना मिली तो उन्हें आदर सहित अपने दरबार में बुला लिया। उनकी चतुराई भरे परामर्श से सभी बहुत प्रभावित हुए और नाना साहब उनकी सलाह से ही अपना सारा कार्य करने लगे।

नाना साहब के प्रकरण में उनके मुख्य प्रतिनिधि के रूप में अजीमुल्ला खाँ को ब्रिटेन भेजा गया। उनकी दलीलों से अंग्रेज भी प्रभावित थे। किसी अंग्रेज लेखक ने उनके बारे में टिप्पणी की है- "उनका मुख भद्र, उनकी वाणी मीठी और रससिक्त थी।"

ईस्ट इंडिया कम्पनी से नाना साहब के पक्ष में निर्णय कराने के लिए उन्होंने ऐसे तर्क दिये थे कि अंग्रेज भी चकरा गये थे। उनसे लंदन में सतारा के रंघो बापू जो सतारा के छत्रपति प्रतिनिधि थे मिलने आते थे। उनकी योजना के अनुसार यदि सैनिक विद्रोह हुआ होता तो असफलता न मिलती ऐसा लोग कहते हैं। उनके सम्बन्ध में एक लोकगीत की कुछ पंक्तियाँ मिली हैं-

जब अंगरेज हुकूमत से
नाना साहब कै ठनी रही।
तब खान अजीमुल्ला कै
नाना साहब से बनी रही।
देसभगत अजीमुल्ला पै
गोरवन कै भकुटी तनी रही।

जब अंग्रेजी हुकूमत और नाना साहब से लड़ाई हो रही थी तो अजीमुल्ला और नाना साहब में मित्रता थी। देशभक्त अजीमुल्ला पर अंग्रेजी हुकूमत अपनी भृकुटी चढ़ाये हुए थी।

अजीजन बाई

देश के प्रति अपनी आहुति देने वालों में एक नाम अजीजन बाई का भी सदैव आदर के साथ लिया जायेगा। अजीजन एक नृत्यांगना थी और देशभक्ति के जुनून में आकर वह आजादी के लिए तैयार फ़ौज़ के सेनापति तात्या टोपे से मिलने गयी और अनुरोध किया कि देश के लिए मर मिटने को मैं भी तैयार हूँ। तात्या टोपे के आदेश पर वह गोरों को प्रसन्न करके उनके कैम्प से गुप्त सूचनाएँ एकत्र करके विद्रोहियों को बताती थी। लेकिन दुर्भाग्य से अंग्रेजों को यह पता चल गया। उन्हें संगीनों से छेदकर उन पर तरह-तरह के जुल्म करते हुए उसके प्राण लिये गये।

अजीजन के सम्बन्ध में एक गीत मिलता है-

फौजी टोपी(तात्या टोपे) से मिली अजीजन
हमहूँ चलब मैदान मा।
बहू बेटिन कै इज्जत लूटैं,
काटि फेंकब मैदान मा।
ऐसन राछस बसैं न पावैं,
मारि देब घमसान मा।
भेद बताइब अंगरेजन कै
जेतना अपनी जान मा।
भेद खुला तौ कटी अजीजन
गै धरती से असमान मा।।

अजीजनबाई आजादी के लिए तैयार फौज के सेनापति तात्या टोपे से जाकर मिली और उनसे कहा कि मैं भी देश के लिए मर मिटने को तैयार हूँ। बहू-बेटियों की इज्जत लूटने वालों को मैं काटकर युद्ध के मैदान में फेंक दूँगी। ऐसे राक्षस देश में नहीं बसने पायें उन्हें मैं युद्ध में मार डालूँगी। मैं आपसे अंग्रेजों का भेद जितना जान सकूँगी सब बताऊँगी। किन्तु अजीजन का भेद खुल गया और उसे मृत्यु दण्ड दे दिया गया और वह अमर होकर स्वर्गलोक को चली गयी।

बलभद्र सिंह

गदर के फूल में श्री नागर जी एक कवित्त का उल्लेख जो किसी अध्यापक महोदय ने उन्हें सुनाया था-

चहलारी कौ नरेस निजदल मह सलाह कीन,
तोप को पसारा जो समीपै दागि दीना है।
तेगन से मारि मारि तोपन को छीन लेत,
गोरन को काटि काटि गीधन को दीना है।
लंदन अंग्रेज तहाँ कंपनी की फौज बीच,
मारे तरवारिन के कीच करि दीना है।
बेटा श्रीपाल को अलेंदा बलभद्र सिंह,
साका रैकवारी बीच बांका बांधि दीना है।

नागर जी ने चहलारी के ठाकुर को अभिनव अभिमन्यु श्री बलभद्र सिंह कहकर सत्तावनी क्रांति के 18 वर्षीय इस तरुण सेनानी को अपना ग्रंथ अर्पित किया है। उनके बारे में एक लोकगीत की कुछ पंक्तियाँ प्राप्त हुई हैं-

झपटि खदेरय चहलारी के राजा,
हाथी चढा जब आवे फिरंगी।
बलभद्दर उठावे जब आपनि गुप्ती(कटार),
भाग जायँ तब गोरवै फिरंगी।
जब भाय हरिदत्त लड़ाई ठाने,
नदिया तीरे लुकाय फिरंगी।
चहलारी के राजा बलभद्दर सिंह
निकरि परैं तो भागैं फिरंगी।

चहलारी के राजा झपटकर हाथी पर चढ़े आते हुए अंग्रेजों को दौड़ा लेते थे। जब राजा बलभद्र अपनी कटार निकालते थे तब गोरे मैदान छोड़कर भाग जाते थे। जब भाई हरिदत्त ने लड़ाई ठानी तब नदी के किनारे फिरंगी छिप गये। चहलारी के राजा को निकलते देखते ही गोरे भाग खड़े होते थे।

एक अन्य गीत की पंक्तियाँ हैं-

अपने देशवा कय राखे पति पानी,
चहलारी के राजा क कीरति बखानी।

चहलारी के राजा ने अपने देश की लज्जा रख ली और देश का पानी बचा लिया। उनकी कीर्ति का गुणगान जितना भी किया जाय कह है।

मंगल पांडे

अमर शहीद मंगल पांडे का नाम एक ऐसे शूरवीर का है जिसने 1857 के गदर में अपने प्राणों की आहुति दे दी पर तमाम यातनाएँ झेलने के बावजूद भी अन्य क्रांतिवीरों का नाम नहीं बताया। स्वदेश और स्वधर्म का अपमान न सह पाने के कारण इस युवक को मृत्यु दण्ड मिला। श्री विनायक दामोदर सावरकर ने इस वीर के बारे में लिखा है-

इस तरह सन् 1857 के क्रांतियुद्ध की पहली भिड़ंत हुई और इस रीति से उस क्रांतियुद्ध का पहला शहीद स्वर्गवासी हो गया।जिसके रक्त से सन् 1857 की शहादत की नदी का उद्गम हुआ उस देशवीर, धर्मवीर मंगल पांडे का नाम हर एक के कंठ एवं हृदय में अक्षय बना रहना चाहिए। सन् 1857 में हिन्दुस्थान के स्वतंत्रता बीज में अंकुर फोड़ने के लिए मंगल पांडे ने अपना उष्ण रक्त सबसे पहले अर्पित किया। उस स्वतंत्रता की फसल आगे-पीछे कभी लहलहा उठी तो उसके पहले नैवेद्य का अधिकारी मंगल पांडे है।

मंगल पांडे नहीं हैं, पर उसका चैतन्य सारे हिंदुस्थान में फैला हुआ है और जिस सिद्धांत के लिए मंगल पांडे मरा वह सिद्धांत चिरंजीवी हो गया है। मंगल पांडे ने सन् 1857 के क्रांतियुद्ध को अपना रक्त दिया, इतना ही नहीं अपितु उस क्रांति मे जो-जो स्वदेश के और स्वधर्म के लिए लड़े उन सबको "पांडे" उपाधि लगाने का प्रयत्न शुरू हो गया(यह नाम भारत भर में सभी विद्रोही सिपाहियों के लिए उपनाम के रूप में ख्याति प्राप्त कर गया)। और इसीलिए यह नाम हर माता अपनी संतान का साभिमान बताने लगी।

वीर सावरकर 1857 का स्वातंत्र्य समर पृष्ठ सं- 99

मंगल पांडे के बारे में प्राप्त गीत की पंक्तियाँ हैं -

मंगल पांडे अमर सपूत कै,
आज अमर दस्तां सुना।

बैरकपुर माँ रहिन सिपाही,
बहुत रहिन बलवान सुना।
एक दिन बोलिन मंगल पाण्डे,
न छोडब आपन घरम सुना।
एक हाथ बन्दूख लिहिन,
एक लिहिन तलवार सुना।
बोलिन सबै सिपाहिन से,
अब आवा हमरे साथ सुना।
धर्म की रक्षा खातिर हम तौ,
आज किहेन पहथान सुना।
हसन जनडेल (जनरल ह्यूसन) पकरै आवा,
तान लिहिन बदूंख सुना
गोली खातय हस्सन मरिगा।
दौरत फौजी आय सुना।
छिड़ी लराई मंगल पांडे,
हाथ ना आवे हालि सुना।
एक ओरि सब जुटे फिरंगी,
पाँड़े अकेली जान सुना।
फिर तानिन जब अंग्रेजन पै,
बीचे सेख(पलटू शेख) बैइमान सुना।
पकरि लिहिस जब ऊ पाँड़े काँ,
पाँड़े भइन हैरान सुना।
अपनी छाती गोली मारिन,
निकसि ना पाइस जान सुना।
दौरे आय के धरे फिरंगी,
जेहल काँ किहिन पयान सुना।
बीर बाँकुरा देस के खातिर,
फाँसी गै लटकान सुना।

अमर सपूत मंगल पाण्डे की अमर दास्तान सुनो। वह बैरकपुर में बहुत ही बलवान सिपाही थे। एक दिन मंगल पाण्डे ने कहा हम अंग्रेजों के डर से अपना धर्म नहीं छोड़ेगें। एक हाथ में बन्दूक, दूसरे में तलवार लेकर सब सिपाहियों से बोले हमारे साथ चलो। हमने धर्म की रक्षा की खातिर आज प्रस्थान किया है। जब जनरल ह्यूसन उनको पकड़ने आया तो उस पर बंदूक तान दिया। गोली लगते ही ह्यूसन मर गया। सभी फिरंगी दौड़ते हुए आये और मंगल पाण्डे से लड़ाई होने लगी। एक तरफ सारे अंग्रेज दूसरी ओर अकेले मंगल पाण्डे थे फिर भी अंग्रेजों के हाथ नहीं लग रहे थे। फिर से जब अंग्रेजों पर मंगल पाण्डे ने बंदूक तान ली तो बेइमान पलटू शेख ने बंदूक पकड़ लिया। मंगल पाण्डे हैरान रह गये। उन्होंने(मंगल पाण्डे) अपनी छाती में अपने आप गोली मार ली, लेकिन प्राण नहीं निकले। अंग्रेजों ने उन्हें पकड़कर जेल में डाल दिया। देश के लिए बीर बाँकुरे को फाँसी पर लटका दिया गया।

''नाना साहब पेशवा''

नाना साहब पेशवा श्री बाजीराव पेशवा के दत्तक पुत्र थे। उनकी बहादुरी के कारनामें अंग्रेजों को चमत्कृत कर देते थे। जनमानस में इनके प्रति अगाध श्रद्धा का भाव है। नाना साहब का पूरा जीवन संघर्षों में बीता, उन्हें उनके अपनों ने ही छला। यह दर्द लोकगीतों ने कहा है-

मोरे नाना की अजब जवानी,
फिरंगी भरैं पानी।
जुलुम करै अपनै परानी,
नाना कै बहिन मरदानी।
झाँसी कै महारानी,
जुलुम करै अपनै परानी।
नाना कै अजब कहानी,
बीती लरत जिन्दगानी ।
बैरी भये अपनै परानी,
जुलुम करै अपनै परानी।

हमारे नाना साहब की वीरता के आगे गोरे पानी भरते थे। अपने ही लोग नाना साहब पर जुल्म ढाते थे। नाना साहब की मरदानी बहन रानी लक्ष्मीबाई झांसी की रानी थी। नाना साहब का जीवन लड़ाई करते हुए बीत गया। उनके अपने सगे ही बैरी हो गये।

''राजा राम बख्स सिंह''

राजा राम बख्श सिंह की चतुराई और वीरता के बारे में तमाम तरह की जनश्रुतियाँ मिलती हैं। उनके भय से अंग्रेज सामने नहीं आते थे, छिप जाते थे। एक लोकगीत में इस घटना का मर्मस्पर्शी चित्र है-

जौने सेवाला मा टमसा(मौब्रे टामसन)
जाइ कै लुकान रहा
वही सिवाला कै पिंडी
बहिरे भुइयाँ फेंकान रहा
आगि लागि गै सब के मनवाँ
रजपूती खून खौलान रहा।
सिव जी के कोप से मंदिर बरि गै
ढेलाफोर (डेलाफोज) बौखलान रहा
जान बचाइ के निसरि कै भागा
तब गोला दन्नान रहा।
राम बखस सिंह कइ यक चाकर,
चनियाँ (चंदी) बहुत बेइमान रहा।
घर कै यहि भेदी के कारन,
राजा कै गवा परान रहा।

इस गीत में टमसा और ढेलाफोर तथा चनियाँ शब्दो के अर्थ समझने में कठिनाई थी। मैने जब श्री नागर जी की पुस्तक ''गदर के फूल'' पढ़ा तो इन तीनो नामों का खुलासा हुआ। इस गीत का भाव है

जिस शिवालय में मौब्रे टामसन जाकर छिपा था। उस मंदिर के बाहर शिव के पिंड धरती पर फिके हुए देख कर सब के मन में आग लग गयी। राजपूती खून खौल उठा। शिव जी के कोप से मंदिर में आग लग गयी तब डेलाफोज बौखलाकर जान बचाकर भागा। तब राम बख्स सिंह का गोला दन्नाता हुआ दगा था। किन्तु अपने ही नौकर चंदी के द्वारा छिपी हुई जगह का भेद अंग्रेजों को बता देने के कारण राजा रामा बख्श सिंह को गिरपतार कर लिया गया और उन्हें अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा।

स्वाधीनता के लिए त्याग और बलिदान की इस प्रकार की भावनाएँ स्थल-स्थल पर मिलती है। पुत्र-जन्म के सोहर-गीत में नारी की पुत्र-प्राप्ति की ललक, उसके लिए देवी-देवता मनाना आदि भाव वर्णित है। उसी के साथ उसकी यह कल्पना भी कि यदि मुझे पुत्र होगा तो उसे देश की सेवा में अर्पित कर दूँगी।

इसी प्रकार माथे पर तिलक लगाकर हँसते हुए अपने पति, पुत्र, भाई और पिता को देश की स्वाधीनता के लिए बलिदान हो जाने की कामना करते हुए रणभूमि में भेजने वाली वीरांगनाओं की शौर्य गाथा से हमारा लोकसाहित्य भरा पड़ा है। भारत गुलामी की बेड़ियों में इसलिए जकड़ा कि बादशाह, नबाब, वजीर तथा रियासतों के राजा आपस में छोटी-छोटी बातों के लिए लड़ने लगे थे। मुगल राजाओं की विलासिता चरम सीमा पर पहुँच गयी थी। भारतीय ललनाओं को अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए प्राणों की आहुति देनी पड़ रही थी। इसी आशय के तमाम गीत मिलते हैं। अवध क्षेत्र में कुसुमा नामक एक स्वाभिमानी बाला की करुण गाथा का एक लोकगीत उदाहरण के लिए देना पर्याप्त होगा-

बाबा के सगरवाँ चलीं करैं असननवा,
हाथ लिए सोने कै घइलवा हो राम।
घइलवा भरि कुसुमा घरी है कगरवाँ,
चीरि छोरी बइठीं सगरवाँ हो राम ।
हथिया चढ़ल आवै मिर्जा मोगलवा,
कुसुमा काँ हथिया चढ़ावै हो राम।
छोड़-छोड़ मिरजा रे मोरी कलइया,
बाबा, बिरना छेड़िहैं लरइया हो राम।
तोहरे बाबा भइया काँ डारेन जेहलखनवाँ,
तू चला हमरे गोहनवाँ हो राम।
तुहरे संग हम चलबै हे मिर्जा,
बाबा बिरना बंदी छोड़ावा हो राम।
एक बन गई, दुसर बन गई
तीसरे में बाबा कै सगरवा हो राम।
तनी एक डँड़िया छिपावा भइया कहँरा
बाबा के सगरवाँ पनियाँ पीयब हो राम।
यहि रे सगरवा कै ढाबर पनिया,
हमरे सगरवाँ सुन्नरि पीयउ हो राम।
तुहरे सगरवाँ मिरजा नित उठि पियबै
बाबा क सगरवा दूलम होइहैं हो राम।
एक घूँट पीयैं, दूसर घूँट पीयैं,
तिसरे म गई तरबोरवाँ हो राम।

रोइ-रोइ मिरजा हो जलवा बहावैं,
बाझि आवैं घोंघवा सेंवरवा हो राम।
हँसि-हँसि बीरन भइया जलवा बहावैं,
बाझि आवैं नाके कै नथुनियाँ हो राम।

इस गीत में 'कुसुम नामक राजपूत बाला को जब कामासक्त मुगल अपहृत करके ले जाने लगता है, साथ ही उसके पिता और भाई को बन्दी बना लेता है तब वह वीरांगना अत्यंत चतुराई से अपने पिता और भाई को स्वाधीन कराकर स्वयं भी सदा-सदा के लिए मुक्त हो जाती है। वह पालकी ढोने वाले कहारों से कहती है कि भाई। अन्तिम बार बाबा के सागर से पानी पी लेने दो। मिर्जा कहता है- इस पोखर का जल गंदा है, मेरे सागर का जल पीना। कुसुमा कहती है कि मिर्जा ! तुम्हारे सागर का जल तो अब नित्य पीना हैं, मेरे बाबा की पोखर का जल अब दुर्लभ हो जायेगा। वहाँ सागर पर पहुँचते ही वह जल-समाधि ले लेती है। मुगल जब जाल डलवाता हे तो घोंघे सेंवार फँस आते हैं। पर उसका भाई जब जाल डालता है तो नाक की नथ फँस आती है। नाक की नथ प्रतिष्ठा की प्रतीक है। मुगल रोता है और उसका भाई हँसता है कि बहन ने उसकी पगड़ी की लाज रख ली।

लोकगीतों में परार्थ जीवन के प्रति निरंतर चेतना जगायी जाती रही है, इसीलिए लोकहित के कार्य बाग लगाना, कुँआ खुदवाना, धर्मशाला और विद्यालय बनवाना धर्म का कार्य माना जाता रहा। जो सबकी चिंता करता है, वही देश या राष्ट्र की चिंता कर सकता है। इसीलिए ऐसे पुत्र की कामना की जाती है, जो देश का सेवक हो, सबके काम आ सके। इसलिए भारतीय संस्कृति में स्त्री का जन्म तभी सफल माना जाता रहा है जो ऐसी संतान को जन्म दे जो दुनिया को आंनद दे।

तिरिया के जन्मे कौन फल हे मोरे साहब
दुनिया अनन्द जब होइहैं तबै फल होइहैं।
पुतवा के जन्मे कौन फल हे मोरे साहब
दुनिया अनन्द जब होइहैं तबै फल होइहैं।
पूत आवे देशवा के काम तबै फल होइहै,

हे साहब पुत्री के जन्म लेने से कौन सा फल मिलता है। जब दुनिया खुशी होगी तभी फल मिलेगा। हे साहब पुत्र के जन्म लेने से कौन सा फल मिलता है। जब पुत्र देश के काम आये जाये तभी फल मिलता है।

यह भारत की संस्कृति है जिसमे पूरे विश्व के हित की चिंता है। इसलिए यहाँ की लोकसंस्कृति में रचे-बसे लोकगीतो में स्वाभिमान, शौर्य और बलिदान की दिव्य सुंगध है, उत्साह है और मर मिटने की उमंग है। इसलिए सभी जनपदीय अंचलों के गीतो में अठारह सौ सत्तावन की क्रांति का स्वर मुखरित हुआ है। क्रांतिवीरों के आह्वान पर मुर्दे भी उठकर दौड़ पड़ते थे ऐसे भाव मिलते हैं-

मुर्दा उठि-उठि दौरै लागैं
जब रजपूती ललकार सुनैं
बरीस अठारह छत्री जीयैं
आगे जीयब धिक्कार सुनैं।
जौनी ओरियाँ चलैं बहादुर ,
खन-खन-खन तरवारि सुनैं।
माई के कनियाँ मा खेलत लरिका
तेगा औ तरवारि सुनैं।

जब राजपूतों की ललकार सुनें तो मुर्दे भी लड़ाई करने के लिए दौड़ पड़ते थे। अगर क्षत्रिय अठारह वर्ष से ज्यादा जीवित रहें तो उनके जीवन को धिक्कार है। जिस तरफ भारत के वीर सिपाही चल पड़ें उधर सिर्फ तलवारों की खन-खन ही सुनाई पड़े। भारत के बच्चे माँ की गोद में तेगा और तलवार से खेलते हैं।

इसके अतिरिक्त कोई भी जनपदीय अंचल ऐसा नही होगा जिसमें गांधी जी के आन्दोलन के पूर्व 1857 की क्रान्ति की गाथाएँ न गायी जाती रही हों। जिसमें झाँसी की रानी, बाबू कुँवर सिंह जैसे विप्लवी वीरों की गाथा लोगों को रोमान्वित न करती रही हो। बल्कि कहना तो यह चाहिए कि सबसे अधिक दमन और आत्याचार के विरूद्ध तीव्र आन्दोलन जनपदीय साहित्य में मुखरित हुआ है। क्योंकि वह साहित्य छापाखाने के संसार से बराबर ऊपर रहा और वह प्रत्येक निरंकुश शासन के लिए सबसे बड़ा शक्तिशाली उत्तर रहा। अंग्रेजो के खिलाफ, अंग्रेजी शासन के खिलाफ आवाज उठाने में अभी क्षेत्र भोजपुरी और अवधी का है। यह अकारण नहीं है कि इस क्षेत्र में सबसे अधिक तीव्रता से जन-आन्दोलन हुआ और इसी क्षेत्र के चम्पारन जिले को गांधी जी ने किसान सत्याग्रह के लिए चुना। कहीं भीतर से असन्तोष था और वह असन्तोष भाषा भी पा चुका है। गांधी जी ने सबसे पहले इस भाषा को परखा और इसीलिए उन्होंने स्वदेशी आन्दोलन के साथ पूरे देश के लिए एक ऐसी भाषा का महत्त्व की आवश्यकता अनुभव की जिसमें धरती के प्राण बसते हों। भारतेन्दु के जमाने से ही ऐसी कजली, लावनी, होली मिलने लगती है जिसमें स्वदेश की गहरी चिन्ता हैं। विदेशियों द्वारा स्वदेश की सम्पति हार जाने पर असंतोष व्यक्त हुआ है।

"अइसन रछसवा दुअरिया पर ठाढ़ बाटै
तुरतै होइ जा तइयार रे किसनवाँ
अइसन बेला जो आपन सरकार होति,
परित न विपतियाँ के मारे रे किसनवाँ

ऐसा राक्षस द्वार पर खडा है, हे किसान तुम तुरन्त तैयार हो जाओ। ऐसे अवसर पर अपनी सरकार होती तो विपति की ऐस मार न पड़ती।

देश की समृद्धि को हरण करने वाले विदेशी के प्रति जन-मानस तीव्र आक्रोश व्यक्त करता है।

"होई गइली कंगाल हो विदेशी तोरे रजवाँ।
सोने की थरी म जेंवत रहलीं
कठवा के डोकिया मैं मोहाल विदेशी तोरे रजवाँ।
देसवा के लोग आज दाना बिनु तरसैं,
कपड़ा तन पै फटे हाल विदशी तोरे रजवाँ।

विदेशी ! तेरे राज्य में हम कंगाल हो गये। जहाँ सोने के थाली भोजन करते थे वही अब काठ की कटोरी भी दुर्लभ हो गयी। देश के लोग दाने-दाने को तरस रहे हैं, तन पर वस्त्र फटेहाल हैं।

जेहलखाना म बन्दी रहैं वीर जवान
जौन अंगरेजवन कै कूकर न खांय
ऐसेन दाना पावौं जेहल म जवान

जेल में वीर जवान बन्दी रहैं जो खाना अंग्रेजों के कुत्तें भी न खायें वही दाना भारतवीरों को जेल में मिल रहा था।

बलभद्र सिंह

स्वतन्त्रता संग्राम में प्राणों की आहुति देने वाले वीरों की गाथाएँ गीत बनकर जन-जन के कण्ठ मे बस गयीं।

चहलारी राजा वीर बलभद्दर सिंह
वनकै गाथा कही न जाय।
उनकै बड़ाई करैं दुश्मनों
डर के मारे जायँ थर्राय
अंगरेजन से छिरी लड़ाई
तेगा छपक-छपक चल जाय।
वीर बघउवा बलभद्दर सिंह
गदर म जूझि खेत होय जायं।

चहलारी के राजा वीर बलभद्दर सिंह की शौर्यगाथा कही न जा सकती। उनकी बड़ाई दुश्मन भी करते थे। वे उनके डर से काँप जाते थे। जब अंग्रेजों से लड़ाई छिड़ गयी बलभद्दर सिंह अपने तेगा से छपक-छपक करके अंग्रेजों को मार रह थे। बलवान शेर बलभद्दर सिंह गदर में शहीद हो गये। ऐसे ही आजादी के दीवाने वीर बाबू कुवँर सिंह के और उनके बन्धु के सम्बध में एक गीत देखिए-

"बाबू कुवँर सिंह तोहरे राज बिनु
अब न रँगबो केसरिया।
यहर से अइले ठेलि फिरंगी,
वहर कुँवर दोउ भइया
गोला बारूद के चले पिचकारी,
बिचवा मा होत लड़इया।
अमर सिंह के कम्मर टूटल,
सीधा सिंह क बाहीं
पूछि आवा फिरंगिन क
अब लड़िहै की नाहीं।"

बाबू कुवँर सिंह ! तुम्हारे राज्य के बिना अब केसरिया रँगाने को जी नहीं चाहता। क्या ओज और दर्प था तुम्हारा) उधर से फिरंगियों की सेना का रेला आ रहा था और इधर से केवल कुँवर सिंह और सीधा सिंह दोनो भाई। गोला-बारूद की पिचकारियाँ चलने लगीं थीं दोनों ओर से भीषण युद्ध हो रहा था। अमर सिंह कर कमर टूट गयी, पर सीधा सिंह की अभी नहीं। फिरंगियों से पूछ आओ क्या अभी और लड़ने का हौसला बाकी है ?

क्षत्रिय का धर्म तो युद्ध करना है, पराधीन होकर आदेश पालन करना नहीं। इसलिए अमर सिंह को जगाते हुए कुँवर सिंह पत्र लिखते हैं कि क्षत्रिय का नष्ट न होने दें।

"लिखि लिखि पतिया भेजले कुवँर सिंह,
सुनि ल्या अमर सिंह भाई हो रामा
चमवा के टोंटवा दाँत से चलावेला,
छत्री के धरम नसावै हो रामा।"

कुँवर सिंह अपने भाई अमर सिंह को पत्र लिख-लिखकर भेजते हैं कि चमड़े को दाँत से खींचने

पर हमारा धर्म नष्ट हो रहा है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि कारतूस में लगे हुए चमड़े को दाँत से खींचने की बात को लेकर विद्रोह हुआ था।

कुँवर सिंह और उनके भाई तथा सिपाहियाँ की विजय-गाथा लोकगीतों में मुखरित हो उठी, जिसे देखकर अंग्रेज 'लाट' घबड़ा उठा-

"पहली लड़इया कुँवर सिंह जितले,
दूसरी अमरसिंह भाई हो रामा।
तिसरी लड़इया सिपाही जब जितलें
लाट उठे घबराई हो रामा।"

पहली लड़ाई कुँवर सिंह जीते, दूसरी लड़ाई अमर सिंह ने जीत ली और जब तीसरी लड़ाई सिपाहियों ने जीत ली तो लार्ड (अंग्रेज) घबरा गया।

एक गीत में बक्सर के युद्ध का उल्लेख मिलता है-

छिड़ गय बक्सर कै लड़इया
करम फूटे भारत क भइया
हार गये मुगल लड़इया
अंगरेजवन कै राज भये भइया
करम फूटे भारत क भइया

जब बक्सर का युद्ध शुरू हुआ तो भारते के करम फूट गये। मुगल शासक लड़ाई हार गये तब अंग्रेजों का राज हो गया।

1764 में बक्सर के युद्ध में मीर कासिम की हार से ब्रिटिश उपनिवेश की स्थापना हुई। इस दर्द को लोकगीतों ने उकेरा है।

अपनी मातृभूमि के प्रति लगाव किसे नहीं होता ? भारत के नागरिकों ने धरती की माता के रूप में जो परिकल्पना की है वह सदा उसके प्रति दायित्व-बोध जगाती रहती है। "माँ" जो हमारे लिये निरन्तर सहती है- शीत, धूप, बयार फिर भी अपनी छाती पर हल चलवा कर हमारे लिए अन्न, फल-फूल, सब्जियाँ और वस्त्र देती है, हमें अपनी गोद में जीवित रहने पर ही नहीं, मरने पर भी शरण देती है उसके प्रति हमारा भी कुछ कर्त्तव्य है। हम उसका अपमान नहीं होने देंगे। वह हमें प्राणों से भी प्यारी है। यह भावना एक ब्रज लोकगीत की पंक्तियों में देखिए -

"जे अबला तेरी भुम्मि बहुत मोई लगति पियारी।
मोरी जगतारन मोरी माई, भुम्मि लगै पियारी।"

हे अबला तेरी भूमि हमको बहुत प्यारी लगती है। मेरी जागतारण माँ हमें भूमि बहुत प्यारी लगती है। और इसी प्यारी माँ को पराधीनता का दुःख झेलना पडे तो भला संतान कैसे सहे ?

अन्त में एक बात उल्लेखनीय है कि जो थोड़े से उदाहरण मैंने दिये हैं वे परिनिष्ठित साहित्य से प्रेरक हैं, उससे प्रेरित नहीं। जैसे कुँवर सिंह की यशःगाथा साहित्य में बहुत बाद में लिखी गयी पर जातकगाथा वह पहले बन गयी। वन्देमातरम् गीत बाद में लिखा गया, उसके पहले ही सन्यासी आन्दोलन बाउल गानों का सहारा ले चुका था। गांधी पर परिनिष्ठित कविताएँ भी तुरन्त नहीं लिखी गयीं पर उनसे सम्बन्धित लोकगीत कविताएँ भी अनुष्ठानों के अंश बन गये। चाहे वह अनुष्ठान पुत्र-जन्म से सम्बंधित हो या विवाह से हो या किसी पर्व या ऋतु के मंगल से हों यहाँ तक कि विवाह में जो कन्या पक्ष की ओर से व पक्ष के लोगों का गाली गायी जाती हैं उसकी लय में भी जो लोक गीत रचे गये, वे अधिकतर स्वदेशी और स्वराज की भावना से प्ररित थे-

"हम भारतवासी, हम भारतवासी लेवै सुराज सही रे सही।
छोड़ो कपड़ा विदेशी, छोडो कपड़ा विदेशी खद्दर लेब गही रे गही।
सुन्दरि चलावहु, चलावहु, सुन्दरि चलावहु, घर बार बनी रे बनी।
प्यारे हिन्दू मुसलमाँ, प्यारे हिन्दू मुसलमाँ आपस मा मेल चही रे चही।।

हम सब भारतवासी हैं और हम स्वराज लेगें यह सही है। विदेशी कपड़े को छोड़कर स्वदेशी खद्दर को पहनो। अपना घर बनाओ। प्यारे हिन्दुओं और मुस्लिम भाइयों आपस में मेल से रहो।

उपर्युक्त उदाहरण स्पष्ट रूप से प्रमाणित करते हैं गाँव का उन्मुक्त आकाश सबसे पहले स्वाधीनता के स्वर गूँजता रहा है। स्वाधीनता की कोयल पहले गाँव की अमराई में ही बसन्त के आने का संकेत देती है। उसका एक कारण है कि गाँव चाहे उल्लास हो या दुःख-दर्द, कुछ भी अपने तक ही नहीं रख पाता, वह दूर-दूर तक बगराता (फैलाता) है। कोयल सबसे पहले वहीं खिंचकर आती है। क्योकि बसन्त तो घेरे में आता नहीं हैं। वह आता है खुलेपन में, जोखिम उठाने के साहस में और सबसे अधिक सहजता में।

गाँव में स्वाधीनता के गीत गये जाते थे तो कहीं यह भाव नही रहता था कि हम गीत गाकर बड़ी सेवा कर रहे हैं। पर देश-सेवा के ज्वार में गीत गाये बिना रहा नहीं जाता था, इसीलिए गाये जाते थे। आज भी सहजता का यह स्पृहणीय गुण लोक साहित्य में है और बिना सहज हुए कोई स्वाधीन नहीं हो सकता। स्वाधीनता की चेतना
स्वाधीनता को सहज रूप में लाने से आती है, ओढ़े हुए रूप में नहीं। आज के दिन जो स्वाधीनता एक ऐतिहासिक वस्तु लगने लगी है, लोग बात करने लगते हैं स्वातंत्र्योत्तर युग तो लगता है कि स्वतन्त्रता कोई बीती घटना है और अब कोई और युग आ गया है।

यह अपने आप न हो यदि स्वाधीनता को अपने सहज श्वास-प्रश्वास में अनुभव किया जाये, स्वाधीनता को नये सिरे से सही पहचान के लिए यह आवश्यक है कि जो इससे सम्बद्ध लोकगायकों को विपुल साहित्य यहाँ-वहाँ बिखरा पड़ा है, लोगों के कण्ठ में आधा-तीहा बचा पड़ा हो, उसका न केवल संकलन हो वरन् उसका उचित पुनर्मूल्यांकन हो, जिससे स्वाधीनता संघर्ष की एक सही तस्वीर उभरकर आये। यही नहीं, अभी तक सामाजिक-आर्थिक स्वाधीनता की सही तस्वीर उभारनी है। गाँव की अमराई, खेतों और खलिहानों में, आँगन की नीम पर, पिछवाड़े के पीपल और दरवाजे के बरगद पर आज भी कोयल घूम-घूमकर नारी-कण्ठों के साथ सम्पूर्ण मानवीय स्वाधीनता का स्वर अलाप रही है। पराधीनता चाहे मन की हो या शरीर की अथवा इच्छाओं की, उसका दर्द सदा गहरा होता है। आज भी वह दर्द कोयल की कूक बनकर सबको सन्देश देता है, कि तुम स्वाधीन हो, अपनी इस स्वाधीनता की रक्षा करो।

राजा हड़हा राम सिंह से
छिड़िगै लड़ाई घमासान
दरियाबादी बघवा गरजा
तब थर्राय गवा असमान
छप-छप काटिस अंग्रेजवन काँ
फिर जंगल मा जाय लुकान
लूटि खजाना वहि गोरवन कै
माँझा लौटि गवा बलवान

दरियाबाद के राजा हड़हा राम से अंग्रेजों से घमासान लड़ाई होने लगी। जब राजा दरियाबादी बाघ(राजा हड़हा राम) गरजने लगा तो आसमान भी काँपने लगा। उसने अंग्रेजों को काट-काटकर मार

डाला और फिर जंगल में जाकर छिप गया। बाद में अंग्रेजों का खजाना लूटकर वह बलवान माझा लौट गया।

महाराज देवीबख्श सिंह

महाराज देवीबख्स सिंह गोण्डा नरेश थे। अवध में उनकी बहादुरी और चतुराई का सभी लोहा मानते थे। तलवारबाजी और घुड़सवारी में उनका कोई सानी नहीं था। अंग्रेज उनसे दोस्ती करना चाहते थे। उनको संदेश भी भेजा, उन्हें कई लाभ देने की शर्त भी रखी, पर राणा देवीबख्स सिंह एक स्वाभिमानी क्षत्रिय थे। वे देश के स्वाभिमान के साथ कोई समझौता करने को राजी न थे। उन्हें जाल में फँसाने के लिए बहराइच के कमिश्नर ने तलवारबाजी का कौशल अंग्रेजो के साथ दिखाने के लिए आमंत्रण भेजा। यह भी शर्त रखी कि यदि एक घन्टें तक उसके सामने टिक गये तो आप को माफी मिल जायेगी तथा किला और इलाका उपहार में मिल जायेगा। राजा ने शर्त मान ली यद्यपि वे अंग्रेजो की चाल समझ गये थे उन्होंने भी अपनी ओर से कहा कि यदि मुझे कोई अंग्रेज तलवारबाजी में हरा देगा तो अपने देशवासियों को मैं अपना हारा हुआ मुँह नही दिखाऊँगा। राजा ने तमाम अंग्रेजों को अपनी तलवार से काट दिया। राजा के साथ उनके थोड़े से साथी थे और अंग्रेजों की भारी भरकम फौज थी। कहतें है कि राजा अपने सबजा नामक घोड़े पर सवार होकर वहाँ से बच निकले थे। उनके सम्बन्ध में गीत की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

राना देवीबखस मरदाना,
गोण्डा अवध कै राजा ना।
वनके तरवारी कै पानी,
केहू न राखै सानी ना।
काटि दिहिन सैकड़न फिरंगी ,
मन म ई हठ ठानी ना।
हारि जाब जौ अंग्रेजवा से ,
लौटि न पीयब पानी ना।
चारों ओर से घिरि गै राना,
सबजा पै जीन कसानी ना।
अबकी सबुजा ! जान बचावा ,
राखि लेहु पत पानी ना।
हारि कै आपन मुँह ना देखाउब,
देस काँ करब सलामी ना।

राणा देवीबख्श सिंह मरदाना अवध में गोण्डा के राजा थे। उनकी तलवार के आगे कोई टिक नहीं पाता था। उन्होंने सैकड़ों गोरों को काट दिया। मन यह संकल्प लिया कि अगर मैं अंग्रेजों से हार जाऊँगा तो लौटकर वापस अपने राज्य का पानी नहीं पीऊँगा। जब वह चारों ओर से अंग्रेजों से घिर गये तो अपने घोड़े से बोले हे सबुजा ! इस बार मेरी जान बचाकर मेरी इज्जत रख लो मैं हार कर अपना मुँह नहीं दिखाऊँगा और न ही देश को सलाम करूँगा।

गदर के फूल में नागर जी ने एक लोकगीत दिया है-

राजा देवी बकस लोह वंका, जिनका रत्ती भर न संका-
वहि बजवाय दीन है लंका।
राजा एक सर बंधाय दीन लाय,

जब राजा कै राज रहा, तब सुखी सबै संसार रहा।
धान जुंधरया, सांवा, कोदो, सस्ता भाव बिकाय रहा।
घर कोरी से जोड़ा बिनावैं, मरदौं का पहिचाव रहा।
सिकिया पट्टा अउर बाफता औरत का पहिनाव रहा।
थोरे दाम मा बनै मिरजई, ओही मां मरजाद रहा।
राजा देबीबकस अस सुन्दर,
उनके हाथ सोने का मुन्दर।
उनकें आगे सब लगैं छछुन्दर
उनके चौरासी कोस माँ रहै राज।
जब दागै तोप दैवु घर गरजै फाट दरारा नइया।
हजारों गोरा डूब मरे वहि कहते बप्पा दैया।
भागो मेम चलौ बिल्लाइत हियाँ है बड़े घरइया।
राजा एक सौ बंधाय दिया लाय।

मुझे राजा देबीबख्स सिंह के बारे में एक और गीत की कुछ पंक्तियाँ मिली हैं-

एक सन्नामी रहे, राजा देबीबकस सिंह
एक रहै बाबू कुँवर सिंह
दूनौं चलैं जब यारन के साथे,
गोरवन कय रूह जाय थर्राय।
अवध म राणा रहा मरदाना
दुनिया रही है कीरति गाय।

राजा देवीबख्स सिंह और बाबू कुँअर सिंह दोनों का नाम बहुत ही प्रसिद्ध है। जब ये दोनों अपने मित्रें के साथ-साथ चलते थे तो अंग्रेजों की रूह काँप जाती थी। अवध के राणा मरदाना की कीर्ति संसार गा रहा है।

बेग़म हजरत महल

बेगम हजरत महल के बारे में तमाम तरह की बातें होती हैं। लेकिन उन्होंने बहुत चतुराई और बहादुरी से अंग्रेजों से लोहा लिया। अन्त में वह नेपाल अपने पुत्र को लेकर चली गयीं। ऐसा इतिहास में वर्णन है। उनकी लोकप्रियता के बारे में यह लोकगीत एक प्रमाण रखता है। जिसमें बेगम के चले जाने से हुये सूनेपन का भाव व्यक्त हुआ है-

सूनी होइ गय नगरिया बेग़म बिना।
जब हवलकवा(हैवलाक)आवै लाग नगरिया,
बेगम रानी दिहीं भितिया चिना।
जब बेगम गयीं हार लड़इया,
जानि गयीं आइगै बिगरे दिना।
छोड़ि के चली लखनऊ नगरिया,
जैसे चाँदनी रहै चार दिना।
सूनी होइगै नगरिया बेगम बिना।

बेगम हजरत महल के बिना यह लखनऊ नगरी सूनी हो गयी। स्वतंत्रता संग्राम में जब हैवलाक

लखनऊ आने लगा तो बेगम हजरत महल ने लखनऊ के चारों-ओर दीवार खड़ी करवाने की आज्ञा दी। बेगम हजरत महल जब लड़ाई में पराजित हो गयी और यह जान गयीं कि उनके बुरे दिन आ गये तो वह नगर को अलविदा करके ऐसे जैसे चली गयीं जैसे चार दिनों की चाँदनी चली जाती है।

बाबू कुँवर सिंह

बाबू कुँवर सिंह के पराक्रम की कहानियाँ आज भी उत्साह का संचार करती है उन्हें अवध का बाघ कहा जाता रहा है, उनके सम्बन्ध में जो लोकगीत प्राप्त हुआ है वह इस प्रकार है-

अवध कय बाघा बाबू कुँवर सिंह,
पहुँचा जाय अतरौलिया ना।
छापामार लरइया लरैं,
आजमगढ ले, मिल्लन (मिलसन) काँ पदियावा ना।
और कुमुक जब भेजे फिरंगी,
डेम्सा(र्कनल डेम्स) काँ लतियावा ना।
कुँवर सिंह कै तीनौ लहुरै,
होई गय दाहिन बहियाँ ना।
तीनौ कम्मर कसि कै आइन,
अम्मर, निहार, जुवान सिंह भयवा ना।
(अमर सिंह, निस्सार सिंह, जवान सिंह)

अवध के शेर बाबू कुँवर सिंह अतरौलिया पहुँचकर वहाँ छापामार युद्ध करने लगे। आजमगढ़ के मिलसन को मार दिया जब कुमुक ने कर्नल डेम्स को लड़ाई के लिए भेजा तो बाबू कुँवर सिंह ने उसे भी मार दिया। कुँवर सिंह के तीनों छोटे भाई(अमर सिंह, निस्सार सिहं और जवान सिंह) उसके तीनों दाहिने-बाँये कमर कसकर खड़े हो गये।

हमरे देवतन कै मूरति अब,
तोरि ना पावैं फिरंगी ना।
हमरी पावन भुइं ना रौंदैं,
भागयैं यह सैं फिरंगी ना।
लाट मारका(लार्ड मार्ककेर) धोखा दइके,
पाछे से मारि दिहीस गोली।
एक हाथ कटि गिरि गै भुइयाँ,
दूसर लगा चलावै गोली।

हमारे देवताओं की मूर्ति अब अंग्रेज तोड़ न पायें। हमारी पावन भारतवर्ष की भूमि को अब न रौंदे। लार्ड मार्ककेर ने धोखे से पीछे से गोली चला दी। एक हाथ कटकर गिर गया फिर भी दूसरे हाथ से गोली चला रहे थे।

वीर सावरकर

श्री विनायक दामोदर सावरकर ने इस स्वातंत्र्य समर में अपने कामों और अपनी लेखनी द्वारा जो कार्य किया वह युग-युग तक भारतीयों द्वारा ही नहीं पूरे विश्व द्वारा स्मरणीय रहेगा। लंदन में 10 मई 1908 को 1857 की क्रांति की वर्षगाँठ के आयोजन में "ऐ शहीदों" नाम से वीर सावरकर ने चार पृष्ठ का एक

वाली चेतना बन जाती है जो मनुष्य को झकझोरती है और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती रहती है आगे बढ़ना सम्भव ही नहीं है जब तक कि हम स्वाधीनता का व्यापक अर्थ न समझें। किसी के वश में व्यक्ति स्वेच्छा से हो तो अलग बात है पर यदि अनिच्छा से किसी के बस में हो तो वह छोटा हो जाता है। स्वाधीनता का व्यापक अर्थ है किसी से छोटेपन का अभिशाप किसी को न मिले। सबको अपने विकास का अवसर हो। कोई किसी से बँधकर न रहे। स्वाधीनता का अर्थ मनमानीपन नहीं क्योंकि इसमें 'स्व' के अधीन तो रहना ही पड़ता है। 'स्व' के अर्थ का जितना ही अधिक व्यक्ति विस्तार करता है, उतना ही अधिक वह बड़ा होता जाता है और जो व्यक्ति स्वाधीनता की जितनी अधिक साधना करता है वह दूसरों को बेचैनी अपने ऊपर स्वतः ही ले लेता है। असली स्वाधीनता तो स्वेच्छा से दूसरो का बन्धन स्वीकार करना है। एक भी आदमी दुःख में पीड़ित हो तब तक व्यक्ति के रूप में किसी व्यक्ति का कोई महत्त्व नही। भारत का लोक-मानस स्वाधीनता के इसी व्यापक अर्थ का साधक रहा है, इसीलिए उसकी सांस्कृति अस्मिता, राजनीतिक पराधीनता के होते हुए भी खोई नहीं। तुलसी की एक चौपाई----

"पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं"

स्वाधीनता की ललक लोक-मानस में तीन रूपों में देखी जा सकती है। एक तो पराधीनता के दर्द की अभिव्यक्ति के रूप में, दूसरे स्वाधीनता के लिए प्रिय वस्तु के बलिदान में उल्लास से क्योंकि स्वाधीनता से प्रियतर कुछ है ही नहीं और तीसरे इस रूप में कि स्वाधीनता का अर्थ केवल अपने तिए नहीं वह सबके लिए है। इसीलिए वह निरन्तर साध्य है। स्वाधीनता साधन नहीं है उसे बराबर प्राप्त करने की कोशिश करनी पड़ती है, जब तक कि संसार में किसी न किसी रूप में लाचारी है, विवशता है, यहाँ तक कि अपने मन की अधीनता की भी। स्वाधीनता आत्मा की अधीनता है। लोक-मानस में इस प्रकार के तीनों रूप मिलते हैं।

गदर से जुड़े ये गीत भले ही यर्थाथ से कुछ हटकर हों, अनगढ़ हों पर इनमें हमारी संवेदनाओं का अक्षय स्रोत है। अपने बलिदानी वीरों, वीरांगनाओं के प्रति श्रद्धा के अक्षत-पुष्प लिये ये युग-युग से पीढ़ी दर पीढ़ी यात्रा करते हुए हमें हमारी अक्षय संस्कृति का बोध कराते रहते हैं।

अवधी-गीतों की लोक-यात्रा

डॉ. जगदीश पीयूष

लोक नृत्य और लोककलाएँ लोकमानस की व्यापक अनुभूतियों के समर्थ प्रचार माध्यम रहे हैं। लोकजीवन का समस्त निर्माण लोक-कला के अन्तर्गत आ जाता है। जहाँ उत्सवों या शादी-ब्याह की अल्पना, स्त्रियों के हाथ पर गुदे हुए गोदने इत्यादि लोक-मानस की अभिव्यक्तियों के उपादान हैं, वहीं लोक-मानस की सर्वाधिक कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए लोक-साहित्य को लोक-कला के प्राण के रूप में स्वीकृत किया जा सकता है।

फॉकलोर शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 1846 ई0 में डब्ल्यू. जे. थाम्सन ने प्रारम्भ किया था। अपने यहाँ इसकों कई संज्ञाएँ दी गई हैं, जिनमें लोकसाहित्य, लोकवार्ता, लोकगीत, ग्रामगीत इत्यादि प्रमुख हैं। फॉकलोर के क्षेत्र विस्तार को देखते हुए इसे लोकसाहित्य कहना ही उपयुक्त होगा।

शालट सोफिया बर्न के अनुसार इसके अन्तर्गत परम्परागत विश्वास रीति-रिवाज, कथाएँ, गीत और असभ्य लोगों के या उन अर्धविकसित वर्ग की कहावतें जो किसी विकसित समाज के पीछे रह गए हैं, आ जाती हैं। इसमें आदि युग के जंगली विश्वास भी आ जाते हैं, जो या सांसारिक आदमी के स्वभाव या उनके द्वारा बनायी गई चीजों के प्रति हों। आत्मा की दुनियाँ और आदमी का उससे सम्बन्ध, भूत-प्रेतों की कथाएँ, भाग्य, रोग और मौत इत्यादि का भी चित्रण इनमें मिलता है। इनमें विवाह आदि प्रथाओं, त्योहारों, लड़ाइयों, शिकार, चरवाहों तथा मछुआरों की भी चर्चा रहती है। मुख्य रूप से इसमें जादू सम्बन्धी चमत्कारिक प्रवृत्तियों से युक्त कथाएँ, गाथाएँ, गीत, मुहावरे और नन्हें बच्चों के गीत होते हैं, लेकिन यहाँ हम अवधी लोकगीतों के विषय में ही चर्चा करेंगे।

समस्त लोक-साहित्य की भावाभिव्यक्ति दो प्रकार की होती हैं। एक को उत्सव प्रभूत और दूसरी को जाति प्रभूत कहा जा सकता है। इस उत्सव प्रभूत साहित्य में जनजीवन का सामायिक उत्साह भरा हुआ है। ऐसा नहीं है कि इसमें जनता का संघर्ष चित्रित न हो, पर उनमें कही भी निराशा और अवसाद के चिन्ह नहीं मिलते हैं। जाति प्रभूत साहित्य में पेशे की बातों और कठिनाइयों का चित्रण मिलता है।

लोक-साहित्य में ही लोककला का समस्त सार उपस्थित कर इसी के माध्यम से लोक जीवन की समस्त क्रियाओं का लेखा-जोखा उपस्थित किया जा सकता है, क्योंकिं कला के अन्य पक्ष बदली हुई परिस्थितियों में या तो लुप्त हो गए या उनके आधार पर बने भी तो बहुत कम, क्योंकि आम जनता के मनोभावों के आधार पर इस काल में कला का वह व्यापारिक स्वरूप शुरू हो गया, जिसे थका-हारा मेहनतकश वर्ग गाढ़ी कमाई के पैसों से खरीदने लगा और इस तरह आर्थिक घुटन में पिसकर उसकी कलात्मक भावना सोती गयी। इसलिए लोक-साहित्य को लोक-कला के भी प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार करना चाहिए, क्योंकि लोक-साहित्य में लोक कला तथा लोक-जीवन की मुख्य भावाभिव्यक्तियां सर्वाधिक और सर्वश्रेष्ठ मात्रा में चित्रित मिलती हैं।

लोकगीत लोकमन की अभिव्यक्ति है इनके मूल में संगीत और नृत्य के तत्व निहित हैं। लोकगीत मौखिक परम्परा के रूप में जीवित है। लोकगीत किसने रचा? कब रचा? कुछ पता नही लोकगीत मानव जीवन में पूरी तरह रच बस गये हैं। जीवन के षोड्श संस्कार लोकगीतों के बिना अधूरे हैं। लोकगीत लोक-जीवन की मस्ती के परिचायक, जीवन की रसात्मकता, रागात्मकता के उद्‌गार एवं उमंग का चटक रंग हैं। लोकगीतों में भाव प्रधानता है। लोकगीतों में सोने की थाली में भोजन, लौंग-इलायची का पान, चाँदी के गेडुए में गंगा जल पानी और बैठने के लिए चंदन का पीढ़ा का प्रयोग लोगों की आर्थिक समृद्धि का परिचायक भले न हो, किन्तु लोगों की मानसिक समृद्धि का परिचायक अवश्य है। लोकगीत विरासत में मिली थाती है, कानोकान सुनकर सँजोयी हुई श्रुतियाँ हैं, जो लोकमंगल के पावन अनुष्ठान में मुखरित होती रहती हैं। समूची दुनियाँ की भाषा, काल लोक जनजीवन के अनुसार पहचानी जा सकती है। भारत के प्रत्येक अचल में अपने-अपने लोकगीत हैं, लोकगीतों में अपना रस है।

अवधी प्राचीन कौशल और महाकौशल तक बोली जानेवाली जन भाषा है। जो अवध के 12 जिलों के अतिरिक्त छत्तीसगढ़ तक के इलाके में विभिन्न रूपों में विद्यमान है। अवधी लोकगीतों के नायक प्रमुख रूप से अवध नरेश भगवान 'राम' और माता 'सीता' हैं, राधा-कृष्ण के प्रसंगों को भी इन लोकगीतों में मधुरता से स्थान दिया जाता है। समय का इतिहास, विदेशी हमले और श्रम से सम्बन्धित लोकगीतों का अपना महत्त्व है। अवधी लोकगीतों का भी वही स्वभाव है जो लोकगीतों की परिभाषा में है।

अवधी लोकगीतों की एक विशेषता यह भी है कि इसका दृष्टिकोण व्यापक और सर्वजनहिताय है। इसीलिए रामचरितमानस और पद्‌मावत जैसे महान ग्रंथ देनेवाली अवधी भाषा की तरह अवधी गीतों में वही दृष्टि और सोच है। एक ओर तो वे गीत हैं जिनकी रचना, रचनाकार व रचनाकाल का कुछ भी पता नहीं है, परन्तु 20वीं सदी के उन जन कवियों की राष्ट्रीयता से ओतप्रोत जीवन्ता लोकगीतों ने स्वतंत्रता आन्दोलन में आगे हिस्सा लिया। महात्मा गांधी के कार्यों, विचारों को लोक मानस तक गहराई से पहुँचाया था। आजादी के बाद भी अवधी लोकगीतों की यात्रा जारी है जहां लोकमानव पढ़ी-लिखी लड़कियों-महिलाओं, द्वारा पुराने गीतों में कुछ नया जोड़कर सिनेमा की तर्ज पर आधारित गीत सुन रहा है, वहीं लोकगीतों की तर्ज पर सिनेमा के गीत बहुएँ गा रही हैं। अवधी कवियों ने आजादी की सफलता, विफलता, विकास और भ्रष्टाचार पर भी कलम चलायी है। यहाँ हम अवधी के कुछ परम्परागत लोकगीतों को प्रस्तुत कर रहे हैं और अवधी के कुछ राष्ट्रीय लोकगीतों का परिचय देते हुए अवधी लोकगीतों की शाश्वत यात्रा से आपका परिचय कराना चाहते हैं।

लोकगीत-1 (एक)

छापक पेड़ छिउलिया, त पतवन गहवर,
अरे रामा, तेहि तर ठाढ़ि हरिनिया त मन अति अनमनि।
चरते चरत हरिना बाँत हरिनी से पूछई।
हरनी की तोर चरहा झुरान कि पानी बिनु मुरझिंउ ?
नाही मोर चरहा झुरान, न पानी बिन मुरझेउँ
हरिना, आज राजा जी के छट्‌ठी तुमहि मारि डरिहैं।
मचिये बैठी कौशल्या रानी, हरिनी अरज करय
रानी मँसवा त सिझिहिं रसोंइया, खलरिया हमें देतेऊ।
पेड़वा से टंगतिऊ खलरिया, त हेरि फेरि देखतिऊं
रानी देखि-देखि मन समझुउतिउँ, जनुक हिरन जियतई।

जाव हरिनी घर आपन
खलरिया नाही देबय
खलरी कै खँजड़ी मढ़उबै
हमार राम खेलि हैं
जब-जब बाजै खझड़िया, सबद सुनि अनकड़,
हरिनी ठाढ़ि ढकुलिया के तीर हिरन के विसूरइ।

टिप्पणी–उत्सव प्रेमी राजा महाराजा खुशी के मौके पर निर्दोष पशुओं को हत्या कर देते थे, घायल पशुओं को तड़पता देखने में उन्हें आनन्द का अनुभव होता था। रामचन्द्र जी की छठीं का अवसर है, छूल (छियूल) के पेड़ की छाया में हिरनी अनमनी-सी खड़ी है। अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए हिरन हिरनी से उदासी का कारण पूछता है। वह कहता है कि हिरनी "क्या तेरा चारागाह सूख गया है ?" या तुझे पानी नहीं मिला ? हिरनी ने अपनी आशंका व्यक्त करते हुए कहा–"आज रामचन्द्र जी की छठीं है तुम्हें राजा अवश्य मार डालेंगे। उसकी आशंका सत्य सिद्ध हुई। हिरन मार डाला गया। हिरन (पति) के प्रति प्रेम के कारण हिरनी माता कौशल्या के पास जाकर कहती है।" रानी मेरे पति का मांस तो रसोई में पक रहा है। आप मेरे पति (हिरन) की खाल मुझे दे दें। जिसको मैं पेड़ पर टांगकर उसे बार-बार देखा करूँगी और यह समझती रहूँगी कि हिरन अभी जिन्दा है। इस तरह से मुझे संतोष मिलेगा। रानी कौशल्या हिरनी से कहती है मैं तेरे पति (हिरन) के खाल से अपने पुत्र राम के लिए खँझडी बनाऊँगी, जिसे राम बजाएगें और खेलेंगे। हिरनी खाली हाथ वापस आ गई। खँझडी बनी और महलों में बजने भी लगी। हिरनी खंझडी की आवाज सुनकर उदास हो जाती है और पेड़ की छाया में खड़ी-खड़ी हिरन को याद कर रही है।

इस लोकगीत का रचनाकार कितना संवेदनशील और व्यापक दृष्टिवाला रहा होगा? जिसकी भावाभिव्यंजना मानव मात्र के कष्ट, संत्रास एवं पीड़ा के बजाय पशुओं तक से सम्बद्ध थी, हिरनी में आदर्श नारी की भाँति पातिव्रत है। हिरनी द्वारा अपने मन को समझाने की जो युक्ति निकाली गई है वह पूर्णतः युक्तियुक्त है। लोकगीत का पूर्ण सफल रहा है। एक बार जब लोक-साहित्य के उद्धारक पं. रामनरेश त्रिपाठी ने यह गीत महात्मा गांधी को सुनाया तो वे रो पड़े थे।

लोकगीतकारों ने अपनी सरल भाषा में जो कुछ लिखा वह केवल मनोरंजन प्रधान हो ऐसा नहीं है। उनके रूपक, उपमाएँ, अनूठी हैं। साथ ही लाक्षणिक अभिव्यक्ति लोकगीतों में चमत्कर भर देती हैं। उनमें जो कुछ भी कहा गया है उसका निहितार्थ गम्भीर है।

लोकगीत-2 (दो)

बाबा निमिया के पेड़ जिनि काटेउ
निबिया चिरैया बसेर, बलैया लेउ बीरन।
बाबा बिटियउ जिनि कोउ दुख देय
बिटिया चिरैया की नाई, बलैया लेउ बीरन।
सबेरे चिरैया उड़ि जइहै,
रहि जइहै निबिया अकेलि, बलैया लेउ बीरन।
सबेरे बिटियाँ जइहैं ससुरारि,
रहि जइहैं माई अकेलि, बलैया लेउ बीरन।

टिप्पणी–इस लोकगीत में नीम के पेड़ से लड़की की माँ में साम्य स्थापित किया गया है। लड़की

अपने पिता से कहती है, "पिताजी नीम के पेड़ को मत काटना, क्योंकि नीम के पेड़ पर चिड़िया बसेरा करती है। पिता जी किसी की बेटी को दुख नहीं देना चाहिए, क्योंकि बेटियाँ भी चिड़िया की तरह होती हैं। जिस प्रकार से चिड़ियों के प्रातः उड़ जाने से नीम का पेड़ अकेला रह जाता है उसी प्रकार जब लड़कियां ससुराल चली जाती हैं तो माँ भी अकेली रह जाती है।

यह लोकगीत समाज के स्त्रियों के प्रति नजरिये को भी व्यक्त करता है। दुर्भाग्यवश हमारे समाज में स्त्रियों को दोयम दर्जे का स्थान मिला है और पुत्री का जन्म ही दुख का कारण माना जाता है।

लोकगीत-3 (तीन)

पुरुब से आई रेलिया पछिउँ से आई जहजिया
पिया के लादि ले गइ हो।
रेलिया होइ गय मोर सबतिया,
पिया के लादि लै गई हो।
रेलिया न बैरी जहजिया न बैरी उहै पइसवे बैरी हो।
देसवा देसवा भरमावे, उहै पइसवे बैरी हो,
भुखिया न लागे, पियसवा न लागै,
हमके मोहिया लागै हो, तोहरी देखि के सुरतिया
हमके मोहिया लागै हो।
सेर भर गेहुँआ वरिस दिन खइवै,
पिया के जाय न देवै हो। रखबै अँखियाँ के हुजुरवा,
पिया के जाय न देवै हो।

टिप्पणी–आज के आर्थिक युग में अर्थ ही प्रधान है। पुरुष अपनी आजीविका की खोज में परदेश जाता है। नवविवाहिता को रेलगाड़ी और हवाई जहाज से सौतिया डाह है। वह अपने पिया को परदेश ले जाने का कारण रेलगाड़ी और जहाज को मानती है। फिर जल्दी ही भूल सुधार करते हुए कहती है कि पिया को परदेश जाने को मजबूर करने वाला यह पैसा ही है। वह कहती है कि भूख और प्यास तुम्हारी सूरत देखने से दूर हो जाती है। क्योंकि मुझे तुमसे प्रेम है। मैं एक सेर गेहूँ में पूरा सालभर खा लूँगी। अर्थात् कम से कम में गुजर-बसर कर लूँगी। लेकिन अपने पति को परदेश नहीं जाने दूँगी। हमारे यहाँ संतोष के समझ समस्त धन को गौड़ माना गया है। किन्तु प्रेयसी अपने प्रेम के लिए भूख और प्यास का त्याग करने के लिए भी तैयार है।

लोकगीत-4 (चार)

सुखिया दुखिया दोनों बहिनिया, दोनों बधावा ले आई-हरे राजा बीरन।
सुखिया ले आई गुजहरा जोड़हरा, दुखिया दूब के पेड़ हरे राजा बीरन।
सुखिया जे पूछे अपने बीरन से, बिदा करौ घर जाईं-हरे राजा बीरन।
लेहू न बहिनी कोछ भरि मोतियाँ, सैंया चढ़न को घोड़ा-हरे राजा बीरन।
दुखिया जे पूछे अपने बीरन से, बिदा करौ घर जाई-हरे राजा बीरन।
लेहू न बहिनी कोछ भर कोदौ, वहैं दूब का बीडा हरे मोरी बहिनी।
गउँवा गोइड़वा नघही न पाई दुब्बन झरै लाग मोती हरे राजा बीरन।

सम्बन्धों की मधुरता धन से किस हद तक प्रभावित होती है, इस लोकगीत में सुखिया और दुखिया

दोनों बहनों के माध्यम से बताने का प्रयास हुआ है। परिवार (भाई के घर में) कोई आयोजन है। दोनों बहनें अपनी सामर्थ्य के अनुसार बधावा के साथ उपहार लायी हैं। सुखिया (संपन्न) के उपहार मूल्यवान है, किन्तु दुखिया का उपहार निराला है। वह एक हरी दूब लेकर आती है। जब विदा का समय आया तो उसके भाई ने बड़ी बहन (सुखिया) को मोती तथा उसके पति के लिए घोड़ा दिया और दुखिया को कोदो (एक प्रकार का चावल) तथा दूब (घास) का बीड़ा। इस लोकगीत में चमत्कार तब उत्पन्न होता है जब दूब से मोती झरने लगते हैं। समय बदलते ही उसकी भौजी अपने पति को बुलाकर कहती है कि जाओ और रूठी हुई (दुखिया) को मना लाओ। आर्थिक आधार रिश्तों में जो विभेद उत्पन्न होता है इस पर यह सशक्त टिप्पणी है।

लोकगीत-5 (पांच)

पनवा की नइयाँ राम पातर सुपरिया अस हुरहुर,
फुलवा बरन हलुकइया केसर अस महकै।
समझौ मोरे राम उहै दिन जेहि दिन जनम भए।
बिन रे सुपेन बिन आखत भुइयाँ पर लेटिव।
समझौ मोरे राम उहै दिन जेहि दिन तिलक चढ़ी।
सोने के खरौआ मोरे बाबा मोतिन केरे अक्षत।
समझौ मोरे राम उहै दिन जेहि दिन विआह भए,
निहुरी निहुरी भरेव अँगुठवा सेंदुर पहिरायो।
समझौ मोरे राम उहै दिन जेहि दिन गौन लायउ,
खोली खोल बिरवा कुचाएव मुसुकियन बिहसेव।
समझौ मोरे राम उहै दिन जेहि दिन नहि गयेउ,
बिन रे लोटा बिन डोरी पिअसवन भरि गयेउ।

टिप्पणी—सौंदर्य की अभिव्यक्ति में जिन उपमाओं, रूपकों का प्रयोग किया गया है वे नितान्त मौलिक एवं अनूठे है—भगवान राम पान की तरह पतले, सुपारी की तरह उनका बदन छरहरा है, फूल की तरह हल्के और केसर की तरह सुगन्ध उनके शरीर से आ रही है। इस गीत में यह भी बताने का प्रयास किया गया है कि राम का जीवन हर्ष उल्लास सुख एवं वैभव से परिपूर्ण रहा, फिर भी उन्होंने अपने जीवन में कई कष्ट उठाये, उन्हें जमीन पर लेटना पड़ा, प्यास और भूख सहन करनी पड़ी, फिर भी राम सदैव अविचल रहे। अर्थात् कष्टों का भी उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

लोकगीत-6 (छः)

नीले-नीले घोड़वा छयल असवरवा कुरू खेते हनइ निसान।
खिरकी उघारि के मइया जो देखे, धिया दस आजरि होई।
होइगा विवाह परा सिर सेन्दुर, नौ लख दाइज घोर।
भितरा कई भांड बाहर दइ मारी सतुरू के धिया जनि होई।

टिप्पणी—दहेज प्रथा पर अच्छा लक्ष्य इस लोकगीत में है। एक पूर्ण सुसज्जित वीर नीले घोड़े पर सवार होकर जा रहा है उसे देखकर बेटी की माँ कामना करती है कि मेरी बेटी की शादी यदि इस युवक के साथ हो जाए तो क्या ही अच्छा हो। संयोग से विवाह हो जाता है दहेज में नौ लाख रुपये लगे तथा घर की आर्थिक हालत खराब हो गइ। आर्थिक विपन्नता से माँ कहती है कि हे ईश्वर किसी शत्रु को

भी कन्या न देना। वास्तव में दुखद दहेज है, कन्या नहीं।

लोकगीत-7 (सात)

पतले सिकिया कए ले बढ़निया, प झुकवन बहारे रे आँगनवा।
अँगना बहारत छिटकी गरमिया, मथवन चूवे रे पसिनवा।
द्वारे से आये पिया पतरेंगवा, प पौछै लागे अपनी रुमलिया।
भीतर से है सासु बढतिन, प भयों पूत मेहरी के गुलमवाँ।
हमरा तो भैले सासु ओही रे दिनवा, प घूमेन सात रे भँवरिया।
हमरा त ले सासु ओही रे दिनवा, प मँगियन पड़ा रे सेंदुरवा।

टिप्पणी—इस लोकगीत में सास के ताने का बहू किस तरह से उत्तर देती है। देखने लायक—पतली सीकों के झाड़ से बहू आँगन बहार रही है। बहारते-बहारते गर्मी हो जाती है और बहू के माथे से पसीना चूने लगता है। इसी बीच बहू का पति आ जाता है और रुमाल निकालकर उसका पसीना पोंछने लगता है उसकी सास उसे पसीना पोंछते हुए देख लेती है और कहती है कि बेटा तू तो औरत का गुलाम हो गया है। इसका प्रत्युत्तर बहू यह कहकर देती है कि ये तो हमारे उसी दिन हो गए थे जिस दिन में इनके साथ सात फेरे घूमी तथा इन्होंने मेरी माँग में सिंदूर भरा। इस लोकगीत में सास की दखल एवं सख्त प्रशासन दिखाई देता है जो दो प्रेमी हृदयों के परस्पर मिलन को भी बर्दाश्त नहीं कर पाता।

लोकगीत-8 (गीत)

सौना भदौना की रतिया रे बाबा भइँसि छन्दानेन छूटान।
सोवत स्वामी मैं कैसे जगावऊँ नींदि अकारथ जाई।
कहत मैं हारेउँ रे राजा बात न मोरि जानउ।
भइँसि बेंचि स्वामी गहना गढ़उतेऊँ सोतेउ गोड़ पसारि।
एक बचन तोसे कहा मोरि धनिया जो रे सुनो मन बाय।
तुमऊँ बेचि के भइंसी बेसह तेउँ पसरा चर उतेऊ आधी राति।

टिप्पणी—सावन-भादो की रात है, भैंस छूट गई है पति सो रहा है। स्नेहवश पत्नी उसे जगाना नहीं चाहती। वह समय मिलते ही कहती है, हे स्वामी ! एक निवेदन है कि इस भैंस को बेचकर गहना खरीद लाओ और आराम से सोया करो। पति कहता है कि मेरा वश चले तो मैं तुमको बेचकर एक और भैंस लाऊँ और उसे आधी रात तक चराया करूँ।

इस गीत में ग्रामीण नायक-नायिका के कोमल मनोभाव को समझ पाने में असमर्थ है, वह भैस को नायिका से ज्यादा महत्व देता है, जबकि नायिका ने भैंस बेचने का सुझाव इसलिए दिया था कि उसका नायक बिना किसी खलल के सोता रहे।

लोकगीत-9 (नौ)

कुअवाँ खोदाये कवन फल दे मोरे साहब।
झोंकवन भरे पनिहारि तबै फल होइहै।
बगिया लगाये कवन फल दे मोरे साहब।
राहे बाट अमवा जे खइ हैं तबै फल होइहै।

पोखरा खोदाये कवन फल है मोरे साहब।
गौआ पियै जूड़ पानि तबै फल होइहै।
तिरिया के जनमें कवन फल है मोरे साहब।
पुतवा जनम जब लैहें तब फल होइहैं।
पुतवा के जनमें कवन फल है मोरे साहब।
दुनिया अनन्द जब होई तबै फल होइहै।

टिप्पणी–इस गीत में विभिन्न सन्दर्भों के आधार पर प्रश्नोत्तर शैली के माध्यम से लोकोपयोग ज्ञान दिया गया है। प्रश्न है–कुआँ खुदवाने से कौन-सा फल मिलता है, उत्तर है–कुआँ खुदवाने से तभी फल मिलता है जब पनिहारिन हिलकोर-हिलकोर कर पानी भरती है। बाग लगाने से तब फल मिलता है जब राही फल खाये। तालाब खुदाने से तब फल मिलता है, जब गायें उसमें पानी पियें। स्त्री के जन्म का फल पुत्र उत्पन्न होने पर तथा पुत्र उत्पन्न होने का फल तब मिलता है जब उसके सुकृत्यों से जनता को आनन्द मिले।

इस प्रकार इस लोकगीत में प्रेरक भाव भरकर आम आदमी को सद्कार्य में रत हो जाने के लिए प्रेरित किया गया है।

लोकगीत-10 (दस)

दिन तौ सून सुरुज बिना रात्रि चंदा बिनु रे।
बहिनी सून अपनी भैया बिनु ससुरे पुरुष बिनु रे।
गठरिया केन बाँधि है मैया विनु रे।
एहो लाकि खबरिया केन लेइहै भैया बिनु रे।

टिप्पणी–इस गीत में यह बताया गया है कि कौन किसके बिना सूना है–दिन सूरज के बिना, रात चन्द्रमा के बिना तथा बहन-भाई के बिना सूनी है। यदि पीहर में पति न हो तो पीहर सूना है। मायके में यदि माँ न हो तो मायका सूना है, क्योंकि बिटिया के लिए बड़ी गठरी कौन देगा? तथा बिना भाई के बहन की खबर कौन लाएगा?

लोकगीत-11 (ग्यारह-अद्भुद गीत)

सासु मोरी कहेलि बंझिनियाँ ननद ब्रजवासिनी हो।
रामा जिनकी मैं बारी रे बियाही उइ घर से निकारेनि हो।।
घर से निकरि बँझिनियाँ जंगल बिच ठाढ़ी हो।
रामा बन से निकरी बघिनियाँ तो दुख सुख पूँछई हो।।
तिरिया ! कौनो विपति की मारी जंगल बिच ठाढी हो।
सासु मोरी कहेली बंझिनियां ननद ब्रजवासिनी हो।।
बाघिन ! जिनकी मैं बारी बियाही उइ घर से निकारेनि हो।
बाघिन ! हमका जो तुम खाई लेतिऊ विपतिया से छूटित हो।।
जहबाँ से तुम आइउ लउटि उहाँ जाओ तुमहिं नाही खइबइ हो।
बाझिनी ! तुमका जो हम खाई लेबई हमहूँ बाँझन हो बइ हो।।
उहाँ से चलेलि बँझिनियाँ विवउरी पास ठाढी हो।
रामा बिंबअर से निकेलि नगिनियाँ तो दुख सुख पूँछइ हो।।

तिरियां ! कौन विपति की भारी बिबउरि पासे ठाढ़ी हो।
सासु मोरी कहेली बँझिनिया ननद ब्रजवासिनी हो।।
नागिन ! जिनकी मैं बारी रे बियाही उइ घर से निकारेनि हो।
नागिन ! हमका जो तुम डसि लेतिउ विपतिया से छूटित हो।
जहँवा से तुम आइउ लउटि वहाँ जाओ तुमहि नाही डसिबइ हो।
बाँझिनी ! तुमका जो हम डसि लेबई हमहूँ बाझिनी हो बई हो।।
उहवाँ से चलला बझिनियाँ मइया द्वारे ठाढी हो।
भितरा से निकरी मयरिया तो दुखु सुखु पूँछई हो।।
बिटिया कउनि विपत्ति तुमरे ऊपर उहां से चली आइउ हो।
सासु मोरि कहेलि बझिनिया ननद ब्रजवासिनी हो।।
भइया ! जिनकी मैं बारि बियाही उई घर से निकारेनि हो।
भइया ! हमका जो तुम राखि लेतिउ विपतिया छूटित हो।
जहँवा से तुम आइउ लउटि उहाँ जाओ तुमहिं नहीं राखिबइ हो।
बिटिया तुमका जो हम राखि लेबई बहू बाँझिनी होइ हँई हो।।
उहँवा से चलेली बझिनिया जंगल बिच आई हो।
धरती ! तुम ही सरन अब देहु बंझिनि नाम छूटई हो।।
जहवाँ से तुम आइउ लवटि उहाँ जाओं तुमहि हम न राखब हो।
बांझिनी ! तोहँका जो हम राखि लेई हमहूँ होब उसर हो।।

टिप्पणी—इस गीत में एक निःसंतान स्त्री की व्यथा-कथा है। निःसंतान स्त्री केवल समाज की दृष्टि में ही नहीं, अपितु सबके द्वारा तिरस्कृत हो रही है। वह इतना असहाय है कि जीवन समाप्त करने के लिए भी जहां जाती है वे भी उस पर कटाक्ष करते हैं। सास, ननद एवं पति ने निःसंतान स्त्री जो उनकी बहू, भाभी एवं पत्नी है निकाल दिया। वह जंगल में जाकर बाधिन से कहती है कि बाधिन तुम मुझे खा लो। बाधिन कहती है यदि मैं तुमको खा लूंगी तो मैं भी बाझिन हो जाऊंगी। वहां से वह बिमौर के पास जाकर नागिन से कहती है कि तुम्हीं मुझे खा लो नागिन भी बाझिन हो जाने के भय से उसे नहीं काटती। निःसंतान स्त्री के कष्ट की चरम परिणति तब हो जाती है जब उसकी मां स्वयं उसे यह कहकर वापस चले जाने को कहती है कि यदि मैं तुम्हें यहां रखूंगी तो मेरी बहू निःसंतान हो जाएगी। धरती मां जो सबकी अंतिम शरणस्थली है वह भी बाझिन को सिर इसलिए नहीं देती है कि कहीं वह उसर न हो जाए।

इस प्रकार एक स्त्री के लिए संतानोंत्पादन प्रमुख एवं अनिवार्य कार्य है। स्त्री को बच्चा पैदा करने वाली मशीन से ज्यादा कुछ नहीं समझा जाता। यह भारतीय स्त्रियों की सामाजिक दशा का अनुभूत यथार्थ है।

लोकगीत-12 (वारह)

कौन गरहनवा बाबा सांझै जे लागे कौन गरहन भिनुसार
कौन गरहनवा बाबा औघर लागे कब घौ उरगह होय,
चन्द्र गरहनवा बेटी सांझै जे लागै सूरज गरहनवा भिनुसार।
घेरिया गरहनवा बेटी ओघट लागे कब घो उरगय होय।।
कांपय हाथी रे कांपय घोड़ा नगरा के लोग।

हाथ में कुश लिये कांपई बाबा कब घो उर गय होय।
रहंसय हाथी रे रहंसय घोडा रहसई सकल बरात।।
मडये मुदित मन समधी रे विहंसय भले घर भयेउ विआह।
गंगा पैठि बाबा सूरज मनावई मोरे बूते घेरिया न होय।।
घेरिया जनम तब दीहा विधाता जब घर सम्पत्ति होय।

टिप्पणी–प्रस्तुत गीत में यह बताया गया है कि चन्द्रग्रहण रात को सूर्यग्रहण दिन में लगता है। जबकि बेटी के कारण परिवार में न जाने कब कलंक लग जाए, जब तक लड़की का बाप सकुशल अपनी कन्या को विदा नहीं कर देता जब तक उसके मन में अनेक आशंकाएँ उठती रहती हैं। गंगा जी से बेटी का पिता प्रार्थना करता है कि मेरी इतनी सामर्थ्य नहीं है कि मैं बेटी का बोझ उठा सकूँ। किसी भी व्यक्ति को बेटी तभी दिया करें जब उसके पिता के पास पर्याप्त सम्पत्ति हो।

लोकगीत-13 (तेरह)

सावन सगुन में गुर घिउ पालेउ चैत चना के दाल
अब सुगना तू भयउ सजुगवा बेटी क बर हेरय जाव।
उड़त उड़त तुम जायों रे सुगना बैठेउ डरिया दोनाय।
डरिया दोनाय बैठ पाय फलायव चितया नजरिया घुमाय
जै बर सुगना तू देखेउ सुन्दर जेकरि चाल गम्भीर
जेहि घर सुगना संपत्ति देखेउ वहि घर रचेउ विवाह।
हरेउ बर में सुलच्छन महर महर मुँह जोति।
साठि बरद मैं चन्नि में देखेउ बोहि घर रचेउ विआह।

टिप्पणी–बेटी के लिए सुयोग्य वर ढूँढ़ पाना बड़ा कठिन काम है। इसमें पक्षियों की मदद लिए जाने का भी प्रमाण इस लोकगीत में मिलता है। पालतू सुग्गे से घर की मालकिन कहती है मैंने तुम्हें गुड़, घी और चने की दाल खिलाकर पाला है, अब तुम सयाने हो गए हैं जाओ मेरी बेटी के लिए सुयोग्य वर ढूँढ़ लाओ। सुग्गा उड़ता है और लौटकर अपनी मालकिन से बताता है कि मालकिन मैंने बिटिया के लिए एक अच्छे वर की तलाश कर ली है। वह वर अत्यंत सुलक्षण है। उसका मुख ज्योतित है। उसके घर में साठ बैल हैं जो इस बात का परिचायक हैं कि वर-पक्ष समृद्ध है। पुराने जमाने में वर देखने में जिन पक्षों पर ध्यान दिया जाता था इस लोकगीत में उन्हीं को दिखाया गया है।

अब आप देखें कि आधुनिक हिन्दी कविता के विकास में इन अवधी गीतों का कितना महत्त्व है। हिन्दी के प्रमुख कवि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अवधी में देशद्रोहियों पर व्यंग्य किया है।

लोकगीत-14 (चौदह)

काहे तू चौका लगाये जयचंदवा
अपने हाथ से अपने कुल के काहे ते जड़वा कटाये जयचंदवा।
फूट कै फल सब भारत बाये, बैरी के राह बुलाये जयचंदवा।।
औरो नासितें आगे बिलाने निज मुँह कजरी पोताये जयचंदवा।।
भीतर स्वाहा बाहर सादे, राज करहि अमले अरू प्यादे।
अंधाधुंध मच्यौ तब देखा मानूजू राजा रहत विदेशवा।।

पुनश्च–पंडित वंशीधर शुक्ल अवधी लोकगीतों के सर्वाधिक तेजस्वी कवि रहे हैं। रमई काका, पढ़ीस जी, गुरुभक्त सिंह मृगेश आदि कवियों की रचनाएँ स्वतंत्रता संग्राम में जनता का हथियार बनीं। पारस भ्रमर, आद्याप्रसाद उन्मत्त, जुमई खाँ आजाद, अनजान जी, विकल जी, विद्याबिन्दु सिंह, पंवार जी, सरल जी, ओंकारनाथ उपाध्याय आदि जनकवियों की रचनाएँ परम्परा का निर्वाह करती जगदीश पीयूष, सुशील सिद्धार्थ और रामबहादुर मिश्र तक पहुँच गई हैं।

भारत के निर्माण में अवध एवं अवधी

डॉ. राजनारायण तिवारी

संसार की प्राचीनतम सभ्यताओं में से भारतीय सभ्यता भी प्राचीन मानी जाती है। मिस्र, चीन, भारत प्राचीन सभ्यता के केन्द्र थे। उत्खनन द्वारा प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर यह प्रमाणित है कि भारत में बहुत पहले सभ्यता का विकास हो चुका था। सरलता से प्राप्त वन, जहाँ फल-फूल तथा आखेट हेतु वनचारी जीव भी उपलब्ध थे, वहीं मनुष्य के जीविकोपार्जन के लिये उपयोगी थे। सिन्ध तथा उसकी सहायक नदियाँ- सतलज, रावी, व्यास, चिनाव, झेलम से लेकर उत्तर भारत के मैदान में बहनेवाली तमाम नदियाँ- गंगा, यमुना, गोमती, घाघरा, राप्ती, गण्डक आदि नदियाँ प्रचुर मात्रा में जल प्रदायिनी थीं। सिन्ध से लेकर उत्तर भारत का मैदान अत्यन्त उपजाऊ था, जिससे आकर्षित होकर उत्तर-पश्चिम अथवा मध्य एशिया से अनेक कबीले एवं जातियाँ भारत की ओर बढ़ती रहीं। सम्पूर्ण पृथ्वी पर मानव जीवन अत्यन्त जटिल था। प्रकृति एवं मानव जीवन के बीच बहुत बड़ा संघर्ष था। भारत-भूमि पर अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा जटिलतायें कम थीं, अतएव बाहरी लोगों का आकर्षित होना स्वाभाविक था। भूगर्भ शास्त्रियों के अनुसार, भारत के दक्षिणी पठार जिन्हें गोण्डवाना लैंड के नाम से जानते हैं, जो प्राचीनतम चट्टानों में से एक है। स्थलीय भागों का जन्म जहां पहले हुआ होगा, वहीं पर मानव-जीवन का प्रारम्भिक विकास भी सम्भावित है। स्पष्ट है कि भारतीय चट्टानें अति प्राचीन हैं, अतः मानव का जन्म भी यहाँ सर्वप्रथम हुआ होगा। मानव-विकास के अनुकूल परिस्थितियां जिन क्षेत्रों में थीं, निश्चय ही मनुष्य का उद्भव भी वहीं से हुआ होगा।

ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर यह माना जाता है कि भारत में निवास करनेवाली जातियाँ कोल नाम से जानी जाती थीं, जिनकी जीवन-शैली अति प्राचीन थी। उत्तर-पश्चिम से आनेवाले द्रविड़ कबीलों ने इन्हें दक्षिण-पूर्व की ओर ढकेल दिया। बहुत दिनों तक उत्तरी भारत में द्रविड़ संस्कृति विकसित होती रही। इसके पश्चात् आर्यों का आगमन माना जाता है। आर्य काफी सभ्य एवं सुसंस्कृत थे, उन्होंने अपने प्रभुत्व को भारत में दूर-दूर तक फैलाया। इनके आगमन से द्रविड़ जातियाँ भी दक्षिण-पूरब को खिसक गयीं। आर्य पशुपालक तथा वनों को साफ करके कृषि कर्म भी करने लगे थे। प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग, गाँव तथा नगर का विकास भी आर्यों ने प्रारंभ किया। पूर्व विवेचना के अनुसार, जीविकोपार्जन के साधनों की सुलभता के कारण बार-बार वाह्य लोगों का आगमन प्रारम्भ रहा, जिससे यहाँ की संस्कृति एवं सभ्यता अत्यधिक गौरवमयी होती गयी। भारत के नामकरण का जहाँ तक प्रश्न है, वह प्रचलित मान्यताओं के अनुसार, शकुन्तला के पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा, जिसकी सभ्यता संसार में प्राचीनतम मानी जाती है। सम्पूर्ण भारतीय समाज किसी धार्मिक संकीर्णता में आबद्ध नहीं था। विश्व वाङ्मय में अति प्राचीन महत्त्व रखनेवाले वेद सर्वथा संकीर्णता से परे हैं। भारत यूरोपीय कुल की मातृभाषा संस्कृत संभवतः इसी क्षेत्र में विकसित हुई। संस्कृत के महान ग्रन्थों के पठन-पाठन

हेतु लोग काशी जाते थे। वेदों में सार्वभौमिकता की कल्पना अत्यन्त सम्माननीय तथा आदरणीय है। सम्पूर्ण ब्रह्मांड के सुख-शान्ति की कल्पना करनेवाला वेद इन समस्त वस्तुओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता है, जो उसके जीवन को सुचारु बनाने के लिये सहायक हैं। जीवनप्रदायिनी नदियाँ, धेनु, प्रकृति, सूर्य एवं पशु-पक्षी, वनस्पति आदि का वह सम्मान करता है। वेद का अनुयायी एक ऐसी जीवनशैली का समर्थन करता है, जो विश्व कल्याण में सहायक है। जीवन मूल्यों के प्राप्ति की लालसा, जीवन की रक्षा, सुरक्षा, जीवन को स्वस्थ रखने के लिये औषधि का आविष्कार आवश्यक है। आर्य संस्कारों से ओतप्रोत जनमानस उन्मुक्त जीवन जीने का अभ्यस्त था, उसके पीछे अनेक कारण थे, प्रकृति की प्रचुर सम्पदा जहाँ उपलब्ध थी, पूरे संसार में जनसंख्या का पलायन उसी ओर हुआ तथा जहाँ जीवन सरल था।

जीवनयापन के प्रचुर साधन उपलब्ध होने के कारण निरन्तर बाहरी लोगों का आकर्षण बना रहा। बाहर से आनेवाले समुदाय कुछ अपना लेकर आते और कुछ यहाँ का लेकर उसी में समाहित हो जाते। यह सिलसिला निरन्तर जारी रहा, जो आया सो यहीं का होकर रह गया। भारत में पूर्व से रहनेवाले लोगों की परम्पराएँ रीति-रिवाज तथा निरन्तर बाहर से आनेवाले लोगों की परम्पराएँ एवं जीवनशैली इस प्रकार आपस में मिल गयीं कि यह पहचान करना सरल नहीं रह गया, क्या बाहर का है और कितना यहाँ का। सूक्ष्म विश्लेषण से प्राप्त होता है कि आज तक हमारे गाँवों में उसके साक्ष्य प्राप्त हैं। प्रत्येक गाँव का आज भी एक ग्राम देवता है, जो इस बात का द्योतक है कि यह गाँव का वह प्राचीनतम व्यक्ति है जिसके प्रभुत्व को आनेवाले लोगों ने स्वीकार किया। इन ग्राम देवताओं के नामों की खोज करके उस इतिहास को निकाला जा सकता है। आधुनिकता की चकाचौंध ने ग्राम देवताओं के स्वरूप को विनष्ट कर दिया है। जनसंख्या दबाव ने इन क्षेत्रों को नष्ट करके कृषि-योग्य भूमि में परिवर्तित कर दिया।

तात्पर्य यह है कि आर्य, द्रविड़ एवं कोल संस्कृतियाँ कालान्तर में आपस में इस प्रकार मिल गयीं कि इनमें भेद करना सम्भव नहीं रहा। भारतीय इतिहास का विकासक्रम वैदिक काल से प्रारम्भ होकर बौद्ध एवं जैन काल से होता हुआ आगे बढ़ा तथा इसके पूर्ववर्ती रामायण एवं महाभारत काल का महत्त्व भी कम नहीं है। बौद्ध संस्कृति ने पृथ्वी पर बहुत बड़े भू-भाग को प्रभावित किया। अशोक सम्राट के समय में एक विशाल भारत दिखाई पड़ता है। मौर्य वंश ने इसको व्यवस्थित रखा। इसके पश्चात् भारत में क्षेत्रीय छत्रप का प्रभाव बढ़ने लगा। भारत की ख्याति सोने की चिड़िया के रूप में दूर-दूर तक फैल चुकी थी। उस सोने की चिड़िया को प्राप्त करने के लिए विदेशी आक्रान्ता लालायित रहते थे। इसी क्रम में अरबों एवं तुर्कों के युद्ध भी प्रारम्भ हो गये। बारहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में मुहम्मद गौरी के रूप में इस्लामिक संस्कृति दस्तक दे रही थी और इस शताब्दी के पश्चात् सत्रहवीं शताब्दी के अन्त तक इसका वर्चस्व बना रहा। भारत की प्रचुर धन सम्पदा को देखकर बाहर से आनेवाले आक्रमणकारी यहीं के होकर रह गये। बाहर से आनेवाले अरबों एवं तुर्कों तथा भारत के पूर्व निवासियों के बीच किसी प्रकार का सामाजिक गतिरोध दिखायी नहीं पड़ता है। ऐसा प्रतीत होता है कि राज्यलिप्सा के कारण यह आक्रमण होते थे। राजा चाहे जिस धर्म का माननेवाला हो, वह अपने ही धर्मावलम्बियों के विरुद्ध राज्य प्राप्ति के लिये आक्रमण करता था। प्रजा अथवा आम आदमी से इस लड़ाई का सरोकार नहीं होता था। कभी-कभी ऐसे शासकों का आक्रमण होता था, जो लुटेरों के रूप में आते थे और जन-धन को लूटकर अपने साथ वापस ले जाते थे। इससे वहाँ के निवासियों को भारी हानि उठानी पड़ती थी। बारहवीं शताब्दी में भारतीय राज्य अनेक खण्डों में विभाजित थे, जिसका लाभ उठाकर विदेशी आक्रमणकारी बहुत सफल हुए। किसी एक राजा की पराजय के लिये ईर्ष्यावश दूसरा राजा विदेशी आक्रमणकारी राजा की सहायता करता था, जिससे भारतीय राजा को पराजय का मुँह देखना पड़ता था। इस लम्बी अवधि में केवल सम्राट अकबर के राज्य में विस्तृत एवं संगठित भारत को एक सूत्र में बँधा हुआ पाते हैं। जो शाहजहाँ के

राज्यकाल तक व्यवस्थित रहा और औरंगजेब के आते-आते पुनः छिन्न-भिन्न एवं कमजोर होने लगा। सोलहवीं शताब्दी के अंतिम दशक तक भारत में यूरोपीय व्यापारियों का आगमन प्रारम्भ हो गया, जिसमें डच, फ्रांसीसी एवं ब्रितानी थे। इनमें ब्रिटिश व्यापारी अत्यधिक चालाक थे, जिन्होंने अन्यों को पराजित करके धीरे-धीरे भारत में अपना उपनिवेश स्थापित कर लिया। इसके प्रस्तावना में जाने की आवश्यकता इसलिए प्रतीत होती है कि इसकी जानकारी के बिना विषयवस्तु को खंगालना समीचीन नहीं होगा।

उपर्युक्त तारतम्य में सम्पूर्ण इतिहास का अवलोकन करने से प्रतीत होता है कि दसवीं शताब्दी में भारत में ऐसा कोई केन्द्रीय शासन नहीं था जो भारत की एकता अथवा संस्कृति को जोड़ने में सामर्थ्यवान होता। पूरे भारत के इतिहास के विवेचन पर हम न जाते हुए अवध के इतिहास पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं। भारतीय इतिहास का अवलोकन करने पर अवध की भूमि का प्राचीन काल से महत्व दिखायी पड़ता है। अवध की संस्कृति भारत सहित अन्य देशों में भी अपना परचम लहरा रही है। सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बांधने का कार्य अवध की संस्कृति को ही जाता है। राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक रूप से समृद्ध अवध की धरती निश्चय ही महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अवध क्षेत्र में बोली जानेवाली भाषा अवधी एक ऐसा आन्दोलन है जो अन्य किसी भाषा में दिखायी नहीं पड़ता। अब हम आते हैं, अवध के सांस्कृतिक एवं राजनीतिक इतिहास पर।

राम के नाम से विख्यात अवध के प्रतापी राजा रामचन्द्र ने पूरे भारत को एक ऐसे संस्कारों से बाँधा, जो अद्यतन विद्यमान है। यदि भारत के इतिहास से राम के इतिहास को निकाल दिया जाये तो अवशेष कुछ बचेगा ही नहीं। धार्मिक भावना से जन-जन में समाहित राम भारतीय जनमानस के वह प्राणतत्व हैं जो जीवन को ऊर्जा प्रदान करता है। राम का इतिहास उत्तर भारत से दक्षिण-भारत तथा बंगाल से लेकर पंजाब तक समस्त जनों को मूल्य आधारित जीवनचर्या का प्रेरणास्रोत है। अवध का महत्व प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक विद्यमान है, राज्य परम्परा में रघु से प्रारम्भ होकर राम तथा उनके वंशजों में होता हुआ दीर्घकाल तक इस क्षेत्र में अपना वर्चस्व बनाये रहा। परन्तु राजाओं तथा राज्यों के छिन्न-भिन्न होते स्वरूप में इस क्षेत्र को भी प्रभावित किया। सोने की चिड़िया कहा जानेवाला देश किस प्रकार से दारिद्र्य, निर्धनता एवं जातीय द्वेष में डूब गया, एक विचारणीय प्रश्न है। वैदिककालीन सभ्यता में जहाँ उन्मुक्त जीवनशैली की प्रधानता है, वहीं पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी तक संकीर्णता का आधिपत्य। किन कारणों ने हमारे समाज को विभाजित कर दिया, इस पर विचार करना समीचीन होगा। मुख्यतः राम के आधिपत्य क्षेत्र को अवध नाम से जाना जाता है, जिसका अर्थ होता है वधरहित क्षेत्र। वर्तमान समय में अवध गजेटियर के अनुसार, अवध का क्षेत्रफल 23.930 वर्गमील है तथा इसका विस्तार 25^{0} 34ष से 29^{0}6ष उत्तरी अंश अक्षाँश है तथा 79^{0} 45ष से 83^{0} 11ष पूर्वी देशान्तर है। इसकी उत्तरी सीमा नेपाल को स्पर्श करती है, दक्षिणी सीमा गंगा निर्धारित करती है, पश्चिम में फर्रुखाबाद, शाहजहाँपुर एवं कानपुर एवं पूरब में जौनपुर, बस्ती एवं आजमगढ़ सीमारेखा निर्धारित करते हैं। प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित के लेख 'अवधी की प्रकृति और संस्कृति' के अनुसार, अवधी का विस्तार क्षेत्र मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, विहार, उत्तर प्रदेश के लगभग बीस जिलों तक व्याप्त है। इस विस्तृत भू-भाग को हम अवध के नाम से जानते हैं तथा इस क्षेत्र विशेष में बोली जाने वाली भाषा को 'अवधी भाषा' कहते हैं। अवध एवं अवधी दोनों का बहुत महत्व है, अवध एवं कोशल क्षेत्र भारत की सांस्कृतिक धरोहर है। अवध के राजा रामचन्द्र जो रामनाम से विख्यात हैं, सम्पूर्ण भारत के प्राण हैं। अवध क्षेत्र का नाम श्रद्धापूर्वक सम्मान के साथ लिया जाता है, क्योंकि यहाँ पर उनके आराध्य की जन्मस्थली है। भारत के निर्माण में अवध क्षेत्र का विशेष महत्व है।

किसी राष्ट्र के निर्माण में राजनीतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक दृष्टिकोण से उसका

मूल्यांकन किया जाता है। राजनीतिक दृष्टिकोण से अवध का प्रभावशाली राज्य सम्पूर्ण भारत को प्राचीनकाल से प्रभावित करता रहा है। यहाँ पर कई चक्रवर्ती सम्राट हुये, जो रघु से लेकर राम के वंशजों तक सुविख्यात हैं। अतएव यह तथ्य सर्वमान्य है कि अवध का राजनीतिक प्रभाव वृहत्तर भारत पर रहा है, जो वर्तमान अफगानिस्तान से लेकर बंगाल के पूर्वी छोर तक फैला है, उत्तर में हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक व्याप्त है। दीर्घकाल में इस क्षेत्र को अवध के नाम से जाना गया, जो सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नवाबों के सत्ताप्रारम्भ से लेकर बहुत विख्यात रहा।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण से काशी एवं कोशल तथा प्रयाग प्रमुख शिक्षा केन्द्र थे। सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बाँधने में ये तीनों ही स्थल महत्वपूर्ण हैं। काशी संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिये प्राचीन नगरी मानी जाती है। कालान्तर में इसी क्षेत्र में अवधी भाषा का विकास हुआ, अवधी भाषा ने अपने विकास काल से लेकर आज तक भारत में ही नहीं, उसके बाहर भी उसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ता है। ब्रिटिश उपनिवेशों में जहाँ-जहाँ भारतवंशी गये, वे अपने साथ अवधी भाषा भी ले गये। चौदहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी तक अवधी भाषा का उत्कर्षकाल है। अवधी की कई विशेषताएँ हैं, प्रथमतया यह दरबारी भाषा के रूप में नहीं विकसित हुई, यह स्वतंत्र रूप से फली-फूली और आगे बढ़ी। अवधी के दो प्रबन्ध रामचरितमानस एवं पद्मावत ऐसे महाकाव्य हैं जो विश्व वाङ्मय में किसी भी चुनौती को स्वीकार करते हैं। इन प्रबन्धों की अपनी मौलिक विशेषता है। इनके पूर्व का साहित्य राज्याश्रय में पलकर अपने पालक का यशोगान करता है अथवा उनके विनोद के लिये काव्यरचना करता है। परन्तु अवधी के दोनों महाकाव्य उस जन के निकट हैं जो शोषित एवं पीड़ित हैं। भाषा भी जनभाषा है जो आम आदमियों में बोली जाती है। संस्कृत का विद्वत् समाज तुलसी तथा उनके काव्य को मान्यता देने के लिये तैयार नहीं था, वो इसे गँवारू भाषा समझते थे परन्तु इस जनभाषा में लिखे गये प्रबन्ध को जन ने इस प्रकार स्वीकार किया कि वह पथ-प्रदर्शक के रूप में उसके जीवन में सम्मिलित हो गया। तुलसी किसी विनोद के लिये अथवा उत्सवधर्मिता के लिये काव्यरचना नहीं करते हैं, उनका मूल उद्देश्य समाज की विकृतियों को दूर करके स्वस्थ समाज को स्थापित करना है। उनके काव्य में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है कि उनका विश्वास किसी निरंकुश राज्यतंत्र में नहीं था। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि 'तुलसी लोकतंत्र के प्रथम उन्नायक के रूप में हमारे समक्ष आते हैं।' गांधी से पूर्व रामराज्य की कल्पना करने वाले तुलसी घोषणा करते हैं-

रामराज्य बैठे त्रैलोका। हर्षित भये गये सब सोका।।

ऐसे रामराज्य की उद्घोषणा करनेवाला, ऐसे राज्य की कल्पना करता है-

दैहिक दैविक भौतिक तापा। रामराज्य नहिं काहुहिं व्यापा।।

तुलसी उस राज्य-व्यवस्था को भी धिक्कारते हैं, जिसके शासनकाल में प्रजा पीड़ित हो। उनका स्पष्ट मत है-

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरक अधिकारी।।

इससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि तत्कालिक राज्य-व्यवस्था से उनका घोर विरोध था। शोषण एवं उत्पीड़न राज्य-व्यवस्था के वे प्रबल विरोधी थे। तुलसी का महाकाव्य उन्नत समाज की कल्पना करता है, जिसमें दरिद्र दुखी एवं पीड़ित जनों का निवास न हो। जनता प्रबुद्ध हो, नागरिक स्वस्थ एवं दीर्घजीवी, धरा धनधान्य से परिपूर्ण हो, क्योंकि उनके अवध के राजा और उनकी प्रजा ऐसे रामराज्य के निवासी हैं जो शोषण एवं उत्पीड़न से मुक्त है। जायसी भी उस जन के निकट हैं जिसकी जीवनशैली आमजन की है, उनके प्रतीक एवं उपमान लोक से लिये जाते हैं। सम्पूर्ण अवधी काव्य लोक-पीड़ा की अनुभूति है। तुलसी के राम ईश्वर का अवतार होते हुए भी लोक-भावनाओं से ओतप्रोत हैं। लोक के अनुरूप आदर्श

जीवनशैली अपनाकर वे ऐसे पथ का निरूपण करते हैं जिस पर लोक-जीवन सफलता को प्राप्त करे। इस स्थल पर हम उन तथ्यों का उल्लेख करना प्रासंगिक समझते हैं, जो आज अनेक विसंगतियों के कारण हैं। ग्यारहवीं शताब्दी से पूर्व तमाम साक्ष्यों एवं प्रमाणों के आधार पर हम देख सकते हैं कि वर्तमान कानपुर से लेकर बनारस तक इस क्षेत्र में छोटे-छोटे राज्य एवं रजवाड़े थे, जिनमें राजा भर, पासी एवं डोम जाति के थे। यह छोटे राज्य किसी के अधीन नहीं थे। लोक-कथाओं के आधार पर एवं स्थानीय साक्ष्यों के आधार पर इसके स्पष्ट प्रमाण मौजूद हैं। गाँव में एक विशेष जाति के लोग जो अपने को रजपसिया कहते हैं, जिनके राजा माहे थे जो सारंगी बजाकर भिक्षा माँग कर जीवनयापन करते हैं। जो अपने को माहे का वंशज बताते हैं। वे चारपाई पर लेटते-बैठते नहीं हैं। उनका कहना है कि हमारे पूर्वजों ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक हम अपना राज्य वापस नहीं ले लेंगे, तब तक हम चारपाई पर न सोयेंगे, न बैठेंगे। इस जाति के कुछ लोग आज भी जनपद बाराबंकी, गोण्डा, फैजाबाद एवं रायबरेली में पाये जाते हैं। कई स्थलों का स्थलीय निरीक्षण करके मैंने स्वयं देखा है कि आज भी भर राज्यों के अवशेष विद्यमान हैं। विशेष रूप से रुदौली के राजा रुद्रभर, अलियाबाद के राजा जयपाल, बहराइच के राजा सुहेलदेव, फैजाबाद जनपद के खण्डासा के खाण्डे बरवा के ओरी भकौली के भीक्खू भर राजाओं के नाम उल्लेखनीय हैं। जनश्रुतियों के द्वारा इनकी चर्चा हम आज भी सुन सकते हैं। बाराबंकी जनपद के बहुत से भर राजा मुहम्मद मसूद अथवा सैय्यद सालार मसूद गाजी के द्वारा अपदस्थ किये गये। सन् 1030 के आसपास मुहम्मद मसूद अपने कुनबे के साथ राज्यलिप्सा में पूरब की तरफ बढ़ा जो जायस और कसमंडी (वर्तमान मलिहाबाद), लखनपुरी (जहां लक्ष्मन पासी का राज्य था), बाराबंकी, सतरिख, मवई, रुदौली, कस्बा इचौली, किन्तूर, आदि छोटे-छोटे भर राजाओं को ध्वस्त करता हुआ अपना राज्य स्थापित करता है। अपने कुनबे के लोगों को जीते हुये स्थानों का कार्यभार सौंप कर वह आगे बढ़ता है और भर राजा सुहेलदेव द्वारा उसकी हत्या की जाती है।

स्पष्ट है कि उस काल तक यह राजा के रूप में जाने जाते थे, परन्तु ग्यारहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में इनका वैभव समाप्त होने लगता है। गोण्डा के डुमरियाडीह में डोम जाति के राजा थे। राजा कभी अछूत नहीं होता। इनकी जाति के लोग भी अछूत नहीं थे। इन राजाओं की पराजय का कारण असंगठित होना है। इनका कोई केन्द्रीय गठबंधन नहीं था, जो सामूहिक रूप से अपने शत्रुओं का मुकाबला करता। दूसरा कारण था, राजाओं के दुर्गुण, इनके अन्दर भी व्याप्त थे। समाज एवं स्त्रियों पर अत्याचार के कारण जनता इनके विरुद्ध थी। अवसर आने पर स्थानीय जनता विरोधी खेमे में मिल गई जिससे आक्रमणकारी को बहुत बल मिला। नतीजतन् भरों, पासियों एवं डोमों के राज्य समाप्त हो गये। मुस्लिम आक्रमणकारियों के साथ पश्चिम से क्षत्रियों का भी प्रवेश हुआ जिनमें कलहंस, बिसेन, वैश्य, चौहान आदि राजपूतों के आक्रमण भी हुये और क्षेत्रीय राजाओं को परास्त करके अपनी सत्ता स्थापित की। इस सम्पूर्ण अवध का क्षेत्र इन्हीं जातियों के आधीन था जिन्हें आज हम दलित कहते हैं। यद्यपि इनका प्रभुत्व पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हुआ था, ये पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी तक प्रभावशाली बने रहे। बारहवीं शताब्दी के पश्चात् मुस्लिम शासन जैसे-जैसे दिल्ली से पूर्व की ओर अग्रसर हुआ, वैसे-वैसे वो संगठित एवं नियोजित होता गया। मुस्लिम शासकों में राज्य विस्तार एवं संगठन की क्षमता थी। मुगलकाल तक आते-आते यह शासन व्यवस्था काफी सुदृढ़ हो गयी। 16वीं शताब्दी में मुगलों का शासन विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा। मुगलों द्वारा बंगाल एवं अवध में नियुक्त सूबेदार यहाँ की व्यवस्था देखते थे। 15वीं से लेकर 18वीं शताब्दी तक अवधी खूब परवान चढ़ती है, इसी अवधि में सन्त आन्दोलन भी प्रारम्भ होता है।

प्रश्न उठता है कि इसी काल में सन्त आन्दोलन का उद्भव क्यों होता है? धार्मिक एवं जातीय विद्वेष इस तरह बढ़ते हैं कि उनके शमन की आवश्यकता प्रतीत होती है। अवध एवं अवधी किस प्रकार

अपना कर्तव्य पूर्ण करते हैं, एक विचारणीय बिन्दु है। जो यहाँ के राजा थे उन्हें योजनाबद्ध तरीके से दलित अछूत एवं निर्बल बना दिया गया। अकबर के शासन से पूर्व हम सिंह उपाधिधारी क्षत्रिय नहीं देखते हैं। तमाम जातियों का वर्गीकरण एवं उपाधियाँ इसी काल से प्रारम्भ होती हैं। ब्राह्मणों की कुलीनता का मापदंड 'बिस्वा' में किया जाता है, जो इसी काल की देन है। जातियाँ, उपजातियां तथा भेद-उपभेद इसी काल में निर्धारित किये जाते हैं। 17वीं शताब्दी में अँग्रेजों के आगमन से 'सोने में सुहागा' मिल जाता है, उन्होंने 'फूट डालो और राज करो' योजना के अन्तर्गत पूरे समाज को आपस में खूब लड़ाया और इसका लाभ भी उठाया। मुट्ठी भर अँग्रेज देखते-देखते पूरे भारत में छा गय। उन्होंने योजनाबद्ध तरीके से पासी जाति को चोर घोषित कर दिया। इस योजना में यहाँ के छत्रप भी सम्मिलित थे, क्योंकि वे बलवान थे तथा प्रतिरोध भी उत्पन्न करते थे। अतः उन्हें धीरे-धीरे मुख्य धारा से मुक्त कर दिया गया। सत्ताधारियों का मुस्लिम एवं क्षत्रिय वर्ग तैयार हुआ जो नवाबों तथा बाद में अंग्रेजों के आधीन जनता पर शासन करता था। अँग्रेज शासक उपाधियाँ वितरित करके इन्हें राजा, तालुकेदार, जमींदार आदि-आदि पदनाम से विभूषित करते थे। यह जमींदार अपनी ही जनता पर रौब गालिब करते थे। अवध क्षेत्र में नवाबों का राज्य समाप्त करके अँग्रेजों ने बड़ी सफलता प्राप्त की। सन् 1856 में अवध के अन्तिम नवाब को बनाकर मटियाबुर्ज कलकत्ता भेज दिया गया, जो ब्रिटिश राज्य सन् 1947 में 15 अगस्त तक चलता रहा।

अवध क्षेत्र की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विसंगतियों का सन्त साहित्य बारीकी से अध्ययन कर रहा था। आपसी द्वेष एवं भेदभाव के कारण लोकमानस किस प्रकार पीड़ित था, इसका सहज अनुमान अवधी सन्त साहित्य में देखा जा सकता है। धार्मिक एवं जातीय वैमनस्य का कुप्रभाव लोकजीवन में स्पष्ट परिलक्षित है। आपसी द्वन्द्व के कारण भारतीय समाज गुलामी की जंजीर में जकड़ा रहा। वैदिककालीन भारत जो जातीय संकीर्णताओं से सर्वथा परे था, वह इस प्रकार से प्रभावित हो गया कि आज तक उससे छुटकारा नहीं मिल सका। वैदिक काल में वर्ण विभाजन कार्य के आधार पर किया गया था, जो कालान्तर में जन्मतः रूढ़िगत हो गया। साहित्यकार स्वानुभव के आधार पर सामाजिक गतिविधियों को अपने साहित्य में अंकित करता है। भारत के निर्माण में अवध क्षेत्र, अवधी भाषा तथा यहाँ की संस्कृति का विशेष महत्व है। समाज सुधारक सन्त कवि सामाजिक उत्थान के लिये निरन्तर प्रयासरत रहे। 16वीं से 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यह आन्दोलन देखा जा सकता है। सामाजिक विद्वेष, जातीय संकीर्णता, छूआछूत की भावना आदि कुरीतियों का इतना बोलबाला हो गया कि सन्त कवि बहुत उद्वेलित हो उठा। ईश्वर तथा धर्म को लेकर आपस में इतना मतभेद और द्वन्द्व हो गया कि बात-बात में रक्तपात होने लगा। आराध्य देवों के आराधना स्थल 11वीं शताब्दी से निरन्तर खंडित किये जा रहे थे। इन हठधर्मियों का लाभ उठाकर अँग्रेजों ने 17वीं शताब्दी से हिन्दु और मुस्लिम धर्मावलम्बियों को लड़ाना शुरू कर दिया। जातीय विद्वेष उत्पन्न करके ईसाई धर्म में दीक्षित करने के लिए उन्हें अच्छा अवसर मिल गया। प्राचीन ग्रंथों से उन्होंने छेड़छाड़ भी प्रारम्भ कर दी। साहित्यिक एवं धार्मिक ग्रंथों में अपने हितों के अनुसार उन्होंने काफी कुछ मिलावट की। इसका मूल्यांकन हम इस प्रकार कर सकते हैं कि जहाँ-जहाँ उनका प्रभुत्व जितना पहले स्थापित हुआ, वहाँ जातीय विद्वेष भी प्रबल रूप से सामने आया। दक्षिण भारत और बंगाल में इन संकीर्ण विचारों का अभ्युदय सबसे पहले हुआ, जिसके पीछे अँग्रेजों का स्पष्ट हाथ था। सबसे अन्त में अवध एवं पंजाब में इनका आधिपत्य हुआ, अतः वैमनस्य देर से आये। पूरे समाज का वातावरण विषाक्त हो गया और इस विषाक्त वातावरण को सही करने के लिए संत कवियों जैसे- कबीर, रामानुज, जगजीवन साहब, पलटू साहब, मोहनसाईं, गुलाल साहब, गोविन्द साहब, भीखा साहब आदि कवियों ने समाज सुधार का बीड़ा उठा लिया। रामानुज ने लिखा -

जाति-पाति पूछे नहिं कोई। हरि का भजै सो हरि का होई।।

कबीरदास ने हिन्दु मुस्लिम सम्प्रदाय में व्याप्त अंधविश्वास, पाखण्ड एवं कुरीतियों पर गहरी चोट की। जातियों की गैर-बराबरी उन्हें स्वीकार नहीं थी, उनका स्पष्ट मत था कि ईश्वर अल्लाह एवं खुदा एक है, फिर द्वन्द्व किस बात। जब सारे प्राणी एक खुदा के उपजाये हैं, तो समाज में भेद कैसा। उन्होंने बहुत निर्भीकता के साथ सबको फटकारा और सही मार्ग दिखाया। इसी प्रकार अन्य संत कवियों ने भी समाज सुधार की बातें कीं तथा सामाजिक समरसता का संदेश दिया। जाति-पाँति, ऊँच-नीच, उच्च-निम्न आदि वर्गों में विभाजित समाज को सत्यपथ पर लाने की चेष्टा की, इसीलिए अवधी का महत्व बहुत बढ़ जाता है, क्योंकि सन्त कवि सामाजिक भेदभाव को दूर करके उसमें सामाजिक एकता लाने की चेष्टा कर रहे थे। अवध क्षेत्र में जन्मी अवधी भाषा वास्तव में उस आंदोलन का नाम है जो समाज के बहुमुखी विकास के लिए प्रयासरत रही। तमाम रूढ़ियों को खंडित करती हुई अवधी एक नवीन दिशा प्रदान करती है। विद्वानों की भाषा संस्कृत के सापेक्ष अवधी में काव्य रचना करके सन्त एवं भक्त कवियों ने लोकमानस का आदर प्राप्त किया। इसका कारण उनका लोक से सीधा संवाद था। अवधी भाषा लोकभाषा एवं जनभाषा है, जिसका सरोकार लोक की पीड़ाओं से है। अवधी काव्य एवं साहित्य की जितनी प्रशंसा की जाय, वह कम है।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद स्थापित होने के पश्चात् उसका विरोध भी मुखरतम् होता गया, विशेषकर अवधीभाषी अवध क्षेत्र में। वैसे तो ब्रिटिश साम्राज्यवाद अवध क्षेत्र को सन् 1757 में लड़े बक्सर तथा प्लासी के युद्ध के पश्चात् प्रभावित करने लगा था, परन्तु उसका पूर्ण आधिपत्य सन् 1856 में हो सका और आधिपत्य स्थापित होने के साथ-साथ आजादी की प्रथम लड़ाई सन् 1857 में प्रारम्भ हो गई जिसको हम सत्तावनी क्रांति के नाम से जानते हैं, यद्यपि कोई केन्द्रीय सत्ता न होने के कारण यह क्रांति बहुत संगठित एवं नियोजित नहीं रही। पं. जवाहर लाल नेहरू ने अपनी पुस्तक 'हिन्दुस्तान की कहानी' में इसे सामन्तों का असंगठित द्वन्द्व बताया है। परन्तु ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध इस अवध क्षेत्र में प्रथम स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी गई, जो वह मील का पत्थर है जिसके ऊपर आगे चलकर स्वतंत्रता आंदोलन प्रारंभ ही नहीं, बल्कि सफल हुआ। पूरा अवध क्षेत्र आन्दोलित था, झाँसी, कानपुर, लखनऊ, बाराबंकी, रायबरेली, बहराइच, गोण्डा, फैजाबाद, सुलतानपुर, जौनपुर एवं वाराणसी तक सन् 57 का आन्दोलन फैल गया। कोई केन्द्रीय संचालक एवं संगठन न होने के कारण यह आन्दोलन एकजुट नहीं हो पाया, यद्यपि इसका प्रभाव बहुत दूर तक रहा। बहुत धूर्तता एवं चालाकी के साथ अवध की सत्ता अँग्रेजों ने हथिया ली। इस क्षेत्र के सामन्त एवं रजवाड़े अपनी-अपनी ताक एवं दांव में थे। कई मौकापरस्त सामन्त पक्ष बदलकर अंग्रेजों के साथ मिल गये, जिससे सत्तावनी क्रांति को काफी नुकसान उठाना पड़ा। बेगम हजरत महल के आवाहन पर अवध के तमाम रजवाड़े, सामन्त तथा तालुकेदार ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ युद्ध के लिये तत्पर तो हुये, परन्तु संगठन के अभाव के कारण जल्दी बिखर भी गये। यह सामन्त एक दूसरे से चिढ़ते थे, और अपनी शान-शौकत के सामने दूसरे की बात मानने को तैयार नहीं थे, अतः उनकी स्वेच्छाचारिता भी पराजय का कारण बनी। अंग्रेज इसे सिपाही विद्रोह मानते थे तथा गदर की संज्ञा देते थे। अंग्रेजों के पास नियोजित सेना थी, जो प्रशिक्षित तथा युद्धकला में दक्ष थी। अवध के सामन्तों के पास छोटी-छोटी सैनिक टुकड़ियाँ होती थीं, जिनके पास अच्छे हथियार भी नहीं होते थे। छोटे सामन्तों के पास अधीनस्थ जमींदार एवं उनकी रियाया होती थी, जो गुहार के रूप में इनके साथ युद्ध करती थी। युद्ध का इनका निजी कौशल होता था। ये प्रशिक्षित सैनिक नहीं होते थे, कुछ बड़े सामन्तों के पास तोपखाना भी था, परन्तु उनमें भरा जाने वाला गोला-बारूद सीमित मात्रा में था। इतना सब होने के बावजूद भी यह युद्ध सन् 57 से 1859 तक लड़ा गया। वैसे तो 1857 का विद्रोह मंगल पाण्डे के नेतृत्व में मेरठ से प्रारंभ हुआ और अन्ततोगत्वा अवध के पूर्वी छोर तक पहुँच गया। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डा. रमेशचन्द्र

मजुमदार के मतानुसार सन् 1857 की क्रांति असंगठित और अनियोजित थी, इसके विपरीत अमृतलाल नागर ने 'गदर के फूल' में स्पष्ट रूप से लिखा है कि कम से कम तीन व्यक्तियों पर कोई दोष नहीं लगाया जा सकता है क्योंकि इन लोगों ने खुले तौर पर क्रान्तिकारियों का साथ दिया। इनमें से यह तीनों नाम शंकरपुर जिला रायबरेली के राणा वेणीमाधव बख्श, गोण्डा के राजा देवीबख्श सिंह और चहलारी के ठाकुर बलभद्र सिंह का नाम बड़े आदर से लिया जाता है तथा लोकगीतों में इनके युद्ध कौशल की भूरि-भूरि प्रशंसा की जाती है। सन् 1857 का यह युद्ध गाँवों तक फैल चुका था। बाराबंकी, फैजाबाद, गोण्डा, बहराइच, रायबरेली आदि जिलों के गाँव में भी यह युद्ध लड़ा गया, इसलिये यह कहा जा सकता है कि इसका क्षेत्र विस्तृत एवं व्यापक था। इस क्रांतिकारी विद्रोह की एक बहुत बड़ी विशेषता हमें दिखायी पड़ती है जिसमें हिन्दु मुसलमान आपसी वैमनस्य को त्यागकर एकजुटता का परिचय देते हैं और इस एकजुटता को देखकर ब्रिटिश शासक घबरा गये। अगर यह एकजुटता कायम हो जाती तो भारत में ब्रिटिश उपनिवेश कायम नहीं रह सकता था। सामंतों के आपसी मतभेद क्रांति की सफलता में बाधा बना हुआ था, क्रांति की असफलता एवं कारण यह भी था कि आम आदमी एवं सामंतों के बीच कोई सीधा सम्बन्ध नहीं था। सामंत अपनी सुख सुविधा के लिए जमीन का लगान वसूल करते थे, जनता के सुख-दुख से उनका कोई लेना-देना नहीं था। जनवाद का मायने मतलब राजा अथवा सामन्त के लिये कुछ भी नहीं था। वह अपने लिये ऐशगाह तथा मकबरे बना रहा था। जनता की सुख-सुविधा से उसे कोई लेना-देना नहीं था। ऐसी दशा में आम आदमी का सरोकार भी सामन्त से क्या हो सकता था। फिर भी हम 1857 की क्रांति को नकार नहीं सकते हैं, यह विद्रोह असफल भले हुआ, लेकिन अपने पीछे एक बड़ा सरोकार भी छोड़ गया। संपूर्ण भारतीय समाज को एकजुटता में बन्धने का पाठ तो मिला ही, साथ ही नये ज्ञान-विज्ञान को ग्रहण करने का मार्ग भी प्रशस्त हुआ। फैजाबाद जो नवाबों का प्रथम केन्द्र था, यहाँ भी सत्तावनी क्रांति का बिगुल बजा। मौलवी अहमदउल्ला शाह के नेतृत्व में अँग्रेजों के खिलाफ लोगों ने काफी एकजुटता दिखायी और फैजाबाद से अँग्रेजों को खदेड़ दिया गया, परन्तु बाद में अँग्रेजों के सफल होने पर फैजाबाद के बाबा रामचरण दास और अमीर अली को अयोध्या स्थित कुबेर टीले के एक इमली के पेड़ पर फाँसी पर लटका दिया गया तथा शम्भु प्रसाद शुक्ल और अच्छन खाँ से भेद उगलवाने के लिये उनके सर को रेती से रेत-रेत कर उन्हें मार डाला गया, परन्तु उन्होंने भेद नहीं खोला। स्वतंत्रता की इस प्रथम लड़ाई में बलिदान देने वालों की एक लम्बी सूची है, जिनका उल्लेख कर पाना यहाँ सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त तमाम अज्ञात योद्धा भी हैं, जिनका नाम आज तक हम जान नहीं पाये। ब्रिटिश सत्ता से मुक्ति पाने के लिए हजारों हजार लोग अपने प्राण से हाथ धो बैठे और इसी समय कुछ ऐसे स्वार्थी लोग भी थे जो सत्ता प्राप्ति के लिए भीतर से अंग्रेजों से मिले हुए थे या बाद में मिल गये। एक लोकगीत के माध्यम से इन नामों का उल्लेख अक्सर आता है-

नकी मिले मानसिंह मिलगे, मिले सुदर्शन काना।

जहां तक अवध एवं अवधी का प्रश्न है, भारत के निर्माण में सदियों से इसका अहम् रोल रहा है। वैदिक काल से लेकर बौद्ध तथा जैन काल में यह क्षेत्र अत्यन्त चर्चित रहा है। रामराज्य तो एक ऐसा तंत्र है जिसकी मिसाल बेजोड़ है। अवध क्षेत्र का महत्व उत्तर मध्यकाल से लेकर अँग्रेजों के शासनकाल में भी महत्वपूर्ण रहा। स्वतंत्रता आन्दोलन का संघर्ष प्रभावी रूप से इस क्षेत्र में लड़ा गया, जहां कई मनीषियों, विद्वानों और नेताओं ने जन्म लिया। इस अवध क्षेत्र में 11वीं शताब्दी से पूर्व के राज्य व्यवस्था पर शोध करना अति आवश्यक है। जातीय आविर्भाव का उत्कर्षकाल खोजना भी आवश्यक है, यदि इसका मूल प्राप्त हो जाये तो इस मनोमालिन्य को दूर करना सरल हो जाय। जहां तक अवधी भाषा का प्रश्न है, यह भारतीय समाज के उत्थान में निरन्तर सक्रिय रही है। इसका साहित्य प्रगतिशील एवं

जनवादी है, जो मानव स्वातंत्र्य तथा सामाजिक समरसता की उद्घोषणा करता है। भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई हो अथवा 1857 की प्रथम क्रांति हो, इस सबमें अवध एवं अवधी का महत्व नकारा नहीं जा सकता। अवध के नवाब तो सामाजिक समरसता के प्रति इतने संवेदनशील हैं कि कहते हैं-

इश्क के बन्दे हैं मज़हब से नहीं वाकिफ,
काबा हुआ तो क्या, बुतखाना हुआ तो क्या?।।

अन्ततः पुराने घावों को भूलकर आज आवश्यकता है, सामाजिक समरसता की, सामाजिक सौहार्द की तथा मानवीय एकता की। इसी के द्वारा हम विश्व में अपना परचम लहरा सकते हैं, तभी अवधी एवं अवध की चिरमान्यता सार्थक होगी। शोधार्थियों को नवीन दृष्टि अपनाकर विषय की गहराई में जाकर मूल्यांकन करना होगा तथा उन नवीन आदर्शों की स्थापना करनी होगी जिसके ऊपर प्रगतिशील एवं उन्नत समाज का भविष्य निर्भर है। ऐसे पौराणिक कथानकों के पुनर्मूल्याँकन की आवश्यकता है जो समाज को तोड़ने में सहायक हैं, हमें ऐसे साहित्य एवं समाज की आवश्यकता है, जो सम्पूर्ण समाज को एकता के सूत्र में पिराये। मेरा यह सुदृढ़ मत है कि यदि हम प्राचीन भारत की स्वस्थ परंपराओं से तादात्म्य स्थापित करें तो निश्चय ही समाज के लिये कल्याणकारी होगा। अवध एवं अवधी के आलोक में जो प्रकाश दिखाई पड़ता है, वह हमें प्रगति के पथ पर बढ़ने की प्रेरणा देता है। क्यों न नये चिन्तन और विचारों के अनुरूप वैश्विक चुनौतियों को स्वीकारते हुए समग्र के कल्याण के लिये मानवीय मूल्यों को स्थापित करें।

अवधी लोक-साहित्य का स्वरूप

डॉ. ज्ञानवती दीक्षित

लोक-साहित्य लोकमानस की सहज, सरल अभिव्यक्ति है, चाहे वह लोकगीतों, कहावतों और मुहावरों के रूप में। लोक-साहित्य में लोकगीतों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है, जिनमें लोक-जीवन प्रतिबिम्बित होता है। अतः इनमें जीवन के बहुआयामी क्रियाकलाप समाहित होते हैं। अवधी लोक-संस्कृति एक जीवन्त संस्कृति है, जिसमें विविध प्रकार की प्रतिभाओं तथा जीवन के विविध रंगों का इन्द्रधनुषी रूप देखने को मिलता है। इसमें परम्परा और विश्वास की जड़ें बहुत गहरी हैं।

अवधी लोकगीत

लोक-साहित्य में लोकगीतों की महत्ता स्वयंसिद्ध है। लोकजीवन की रसवर्षा करनेवाले लोकगीतों में जन-मन की आकांक्षाएँ और सुख-दुःख अभिव्यक्त होते हैं। अवधी लोकगीतों को मुख्यतः निम्नलिखित वर्गों में विभक्त किया जा सकता है :-

1. संस्कार सम्बन्धी लोकगीत,
2. ऋतुओं पर आधारित लोकगीत
3. श्रम से जुड़े लोकगीत,
4. जातियों के लोकगीत
5. विविधतापूर्ण लोकगीत

इनका सम्यक विवेचन करने पर ही इनकी व्यापकता पर चिन्तन किया जा सकता है।

1. संस्कार सन्बम्धी लोकगीत

इन लोकगीतों में जीवन की रसमयता होती है। भावों के सागर से छलकते-किलकते, महकते इन लोकगीतों में जीवन के विविध संस्कारों तथा लोकाचारों में जीवन के विविध संस्कारों तथा लोकाचारों का वैविध्यपूर्ण वर्णन मिलता है। इन लोकगीतों को जन्म से सम्बन्धित सोहर आदि गीतों में मुंडन, कनछेदन, यज्ञोपवीत तथा विवाह आदि सम्बन्धी लोकगीतों में स्थान दिया जाता है। विस्तृत विवेचन इस प्रकार हैः-

(क) जन्म-विषयक लोकगीत

सोहर : सोहर अवध का अपना गीत है और प्रायः प्रत्येक अवसर पर गाया जाता है। लोकगीतों के नायक प्रायः राम और कृष्ण ही होते हैं। सोहर जन्म का गीत है। कृष्ण के जन्म के समय तो सोहर गाने का अवसर ही नहीं था, पर रामजन्म के समय अवध में बहुप्रचलित संस्कार गीत होने से इसकी एक विशिष्ट धुन तो है ही, ढालेक की ताल भी अलग है। सोहर साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। लोकगीत होते हुए भी वह विशिष्ट साहित्य से प्रतिस्पर्द्धा करता है। एक उदाहरण देखिए-

छापक पेड़ छिउलिया त पतवन गहबर हो, रामा
तेहि तरे ठाढ़ी हरिनिया, त मन अति अनमन हो।
चरतइ चरत हरिनवाँ त हरिनी ते पूछइ हो-
की तोर चरहा झुरान, कि पानी बिन मुरझिउँ हो।
ना मोर चरहा झुरान, न पानी बिन मुरझिउँ हो।
काल्हि है राजा जी के छठिया, तुमहिं मारि डरिहैं हो।
मचियइ बइठी कौसिल्या रानी, हरिनी अरज करै हो।
मंसवा ते सिझिहै रसोइयाँ, खलरिया हमैं देतिउ हो।
खलरी का टंगतिउँ बिरिछवा, तौ मन समुझउतिउँ हो।
जनुक हरिना जीवइ हो।
जाउ हरिनि घर अपने, खलरिया नाहीं देबै हो।
खलरी से खँझरी मढ़उबै, तौ राम मोरे खेलिहैं हो।
जब-जब बाजै खँझरिया, सबद सुनि अनकइ हो।
ठाढ़ि छिउलि तर हरिनी, हरिन का बिसूरै हो।।

प्रस्तुत सोहर जहाँ सामन्ती कठोरता, दमन और क्रूरता का प्रतीक है, वहीं करुण रस का जो परिपाक इसमें संगत हुआ, वह विशिष्ट साहित्य में भी दुर्लभ है। सोहर की मार्मिकता पर तो किसी को भी संदेह नहीं हो सकता। सोहर की प्रतीकात्मकता, उपमान-विधान और शिल्प तो उत्कृष्ट है ही, उसमें लोक संस्कृति का रूप भी सहेजा गया है।

अवध की लोक संस्कृति धारा की तरह प्राचीन है। आदिकवि बाल्मीकि ने अयोध्या की धन-वैभव से ही नहीं, कला-सम्पन्नता की दृष्टि से भी ऐश्वर्यशालिनी कहा है। महाकवि कालिदास ने भी ऐसे ही विचार व्यक्त किए हैं। अवधी के सोहर का लालित्य देखना हो तो देखें- लोककवि की सीता एक बार फिर छली जा रही हैं। आँगन में वैदेही बैठी हैं। वे बहुत मना करती हैं, परन्तु कुटिला ननद शान्ता के अति आग्रह पर विश्वास करके रावण का चित्र धरती पर खींचने लगती हैं। फिर वही कुटिला ननद राम को आमंत्रित करती है कि वे आकर स्वयं देखें कि सीता क्या कर रही है। और फिर यही प्रसंग वैदेही का दुखद प्रारब्ध बन जाता है। इसे अवधी सोहर में देखें-

आँगन ननद भौजइया, चौपर मिलि खेलहिं हो।
भौजी जौने रवन तोहे हरिले, उरेहि देखावहु हो।
जौं मैं रवना उरेहउँ, उरेहि देखावहु हो।
सुनि पइहैं बीरन तोहार, तौ घर से निकारहिं हो।
देउँ दुहइया राजा दसरथ, बिरन राम जी की हो।
भौजी लाख दुहइया भइया लछिमन कि नाहीं बतइहौं हो।
पीसउ पुरब के चाउर कि सरजू के पानी हो।
ननदी अँगना गोबर से लिपावहु, मैं रवना उरेहउँ हो।
अँगुरी चलावैं रानी सीता, सो रचि-रचि खींचइँ हो।
रामा सिरजइं हाथ औ पांव सो रवन बनावइं हो।

x x x

लछिमन रथ मचिआवो, सीता का बैठाओ, बन छोड़ि आवहु हो।

इस तरह प्राचीन ग्रंथों में सीता निर्वासन का जो भी कारण रहा हो, अवधी लोकगीतों में उसका

कारण स्पष्ट रूप से ननद भाभी का परंपरागत बैर बताया गया है।

जन्म-सम्बन्धी लोकगीतों में सोहर का प्राधान्य रहता है। गर्भाधान से पूर्व बन्ध्यादुख, गर्भवती होने पर विविध वस्तुओं की इच्छा, सन्तान होने पर रोचना, चेरुआ, षष्ठी स्थापना, निष्क्रमण या बरहा, बधवा, पसनी (अन्नप्राशन) आदि से सम्बन्धित अधिकाँश लोकगीत सोहर छन्द में गाये जाते हैं। किसी न किसी मंगल से सम्बन्धित होने के कारण इन्हें मंगलगीत भी कहा जाता है। प्रस्तुत सोहर में वन्ध्यादुख का कितना सुन्दर एवं मार्मिक चित्रण है:-

रोवत निसरी बहुअवा, बिन्दावन ठाढ़ि भई।
बन सेनी निसरी बघिनिया, तौ दुखसुख पूछइ हो।
सासु मोरी कहइँ बँझिनिया, ननद बिरजाबासिनि हो।
बहिनी, जेहिका मैं बारी-बियाही, उइ घर ते निकासिनि हो।
जहवाँ ते रानी आइउ, तहवैं चली जाइउ
रानी तोहिका जौ भच्छि लेबै, हमहूँ बाँझिनि होबइ हो।
हुआँ ते बहू चलि कइ नदी तीर ठाढ़ि भई।
बेबजरि ते निसरी नगिनिया, तौ दुख सुख पूँछइ हो।
जहवाँ ते रानी आइउ, तहवै चली जाइउ
रानी तोहिका जौ डसि लेबै हमहूँ बाँझिनि होबइ।।
हुआँ ते बहू चलिके बाबा दुआरे ठाढ़ि भई।
घर सेनी निकसी महतरिया, तौ दुख सुख पूँछइ हो।
सासु मोरी कहइं बंझिनिया, ननद बिरजाबासिनि हो।
माई, जेहिका मैं बारी-बियाही, उइ घर ते निकासिनि हो।
जहवाँ ते बेटी आइउ, तहवै चली जाइउ।
बेटी तोहिका जौ राखि लेबै तो पतोह बांझिन होई।
हुआँ ते बेटी चलि कइ बट तर ठाढ़ि भई।
बट तरे बइठे नरायन तौ दुख सुख पूँछइ हो।
सासु मोरी कहइँ बँझिनिया, ननद बिरजाबासिनि हो।
बाबा, जेहिका मैं बारी-बियाही, उइ घर ते निकासिनि हो।
जहवाँ ते बेटी आइउ, तहँवे चली जाइउ
बेटी आज के नवएँ महिनवा होरिल तोरे होइहैं।
आठ मास नौ बीतत होरिलवा जलम लीन
बाजै लाग आनँद बधइया, उठै लागे सोहर हो।
सासु मोरी कहिइँ बहुरानी, ननद भौजइया।
बहिनी जेहिका मैं बारी बियाही ते रानी कहैं लागे हो।

पुत्र ज़न्म होने पर सर्वप्रथम सरिया गाई जाती है, चेरुवा, पीपर, छठी, वंशीवादन, सोहर, पालना, घुनघुना, बधाई आदि संस्कारों के गीत हैं। अवध की माटी के ये विविध रंग हैं, जिनमें डूब कर घर, आँगन, दुआर सब सोंधी गन्ध में डूब जाते हैं।

सरिया : सरिया छन्द के दो भेद हैं - बड़ी सरिया और छोटी सरिया। बड़ी सरिया में गर्भिणी की पीड़ा, डोमिन के आने तथा पुत्र के जन्म होने का विशद चित्रण मनोविनोद के ढंग से किया जाता है। छोटी सरिया में पुत्रजन्म का संक्षिप्त परिचय दिया जाता है। एक उदाहरण देखें-

गंगा पार हर जोतेउँ, चीकनि माटी हो।
सोहइया लाल, जाइ जगाउ, पुरिखवन जिन घर नाती भे हैं।
केहि केरे पुतवा के पूत भे हैं, केहि केरे नाती भे हैं।
सोहइया लाल, केहि केरी धेरिया जुड़ानी तौ पितरा आनन्द भे हैं।
दसरथ पुतवा के पुत्र भे हैं, कउसिल्या देइ के नाती भे हैं।
सोहइया लाल, जनक जी की धेरिया जुड़ानी तौ देउता अनन्द भे हैं।
धरती सुखित भे हैं रे।।

चेरुवा, पीपरि, छट्ठी, वंशीवादन : पुत्र जन्म होने पर सरिया, सोहर, मंगल के उपरान्त चेरुवा, पीपरि, छट्ठी तथा वंशीवादन से सम्बन्धित लोकगीत गये जाते हैं। उदाहरण द्रष्टव्य है:-

आजु ललन कै बात बलम, संदुकिया खोलउ रे।
सासु जो अइहैं चेरुवा चढ़इहैं, उनहूँ कै भारी नेग, बलम संदुकिया खोलउ रे।
जिठनी जो अइहैं पिपरी पिसइहैं, उनहूँ कै भारी नेग, बलम संदुकिया खोलउ रे।
ननदी जो अइहैं छठिया धरइहैं, उनहूँ कै भारी नेग, बलम संदुकिया खोलउ रे।
देवरा जो अइहैं बंसी बजइहैं, उनहूँ कै भारी नेग, बलम संदुकिया खोलउ रे।

पालना-घुनघुना : जन्म के उपरान्त शिशु के लेटने-झूलने के लिए पालना और बजाने के लिए घुनघुना लाए जाते हैं एवं महिलाएँ उनसे सम्बन्धित गीत गाती हैं। इनकी तर्ज ख्याल की हुआ करती है। एक उदाहरण देखें -

सखी, पालने में झूलै मोरा लालना।
सखी, फूलन में फूले गोपाल लालना।
उनके बाबा लै आये सोने कै पालना।
उनकै आजी झुलावै, झूलौ लालना।

तथा

सिरी किरसन के हाथे जड़ा घुनघुना।
उनके बाबा लै आये जड़ा घुनघुना।
उनकी आजी खेलावैं, खेलौ लालना।

बधाव, बधावा या बधाई : भाई के यहाँ पुत्रजन्म की सूचना पाकर बहिनें सज-धज कर गाजे-बाजे के साथ बधाई लेकर आती हैं। देखें-

बहिनी बधाव लइ आई हो, अमरइया के लाल।
सुखिया दुखिया दुइ रे बहिनियाँ
दूनौ बधाव लइ आई हों, अमरइया के लाल।
सुखिया लइ आई सोने के गोड़हरा,
दुखिया दूब कै घर हो, अमरइया के लाल।
सुखिया जे बइठी लाली पलँगिया,
दुखिया बरौनी तरे ठाढ़ी हो, अमरइया के लाल।
सुखिया जे पाइन सूप भरि मोती,
दुखिया सवइया भरि कोदौ हो, अमरइया के लाल।
सुखिया जे चली हैं गावत-बजावत,
दुखिया चली जियरा मार हो, अमरइया के लाल।

एक बन गई हैं, दुसर बन गई हैं,
मोती पाथर होइ जाय हो, अमरइया के लाल।
एक बन गई हैं, दुसर बन गई हैं,
कोदौं से मोती बनि जाँय हो, अमरइया के लाल।

अन्नप्राशन या पसनी के लोकगीत : अन्नप्राशन के समय विविध सोहर गाये जाते हैं और पसनी गीत भी। पसनी गीत का छन्दविधान अन्य गीतों से अलग होता है। यथा-

को मोरे चउरा बेसाहै औ गउवै दुहावै
को मोरे खिरिया बनावै, ललन कै पसनिया।
बाबा मोरे चउरा बेसाहैं, औ गउवै दुहावैं,
आजी रानी खिरिया बनावैं तौ जहाँ बइठावैं
अपने नाती क खिरिया चिखावैं, ललन कै पसनिया।

(ख) मुण्डन विषयक लोकगीत

चूड़ाकर्म संस्कार को अवध क्षेत्र में मुंडन की संज्ञा दी जाती है। इस अवसर पर मूड़न के लोकगीत गाये जाते हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं- मूड़न, झालर तथा लफरी। मूड़न में मुण्डन की तैयारी के गीत होते हैं -

जौ पूता रहेउ बार गभुवार, सोने कै छूरा गढ़ावै बाबा तोहार।
जौ पूता रहेउ बार गभुवार, सोने कै टकवा भँजावै आजी तोहार।।

झालर में लँबे केशों की चर्चा की जाती है-

माघ मास नाती जाड़ा परइ, फगुनी बयार चलइ,
लागइ दियउ मास बइसाख, मुंड़उबइ नाती झालरि।

लफरी में लापड़ी या लाफरी का उल्लेख रहता है। जैसे-

हरिअर आम अमिलिया, हरिअर जवइ केर खेत।
सोभवै बइठे झडुलवा, मुड़ावौ बाबा लापड़ी।।

(ग) छेदन सम्बन्धी लोकगीत

स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से कर्णवेध संस्कार का बड़ा महत्त्व है। इसे चूड़ाकर्म संस्कार के उपरान्त प्रायः तीसरे या पाँचवे वर्ष कराया जाता है। अवधी में इसे कनछेदन कहा जाता है। एक छेदन-गीत देखिए-

को मोरे जाँघा बैठारइ, तउ छेदन करावइ,
को मोरे खरचइ दाम, लालन कर छेदन।
बाबा उनके जाँघा बैठारइँ, तउ छेदन करावइँ।
आजी रानी खरचइँ दाम, तउ छेदन करावइँ।।

(घ) यज्ञोपवीत संस्कार सम्बन्धी अवधी लोकगीत

उपनयन संस्कार के अवसर पर जनेऊ सम्बन्धी अवधी लोकगीत भिन्न भिन्न स्वर लय में गाये जाते हैं। कुछ उदाहरण देखें :

बरुवा गीत : बरुवा स्नान के समय स्त्रियाँ गाती हैं-

के तौ सगरा खनावा औ घाट बँधावा, केकर भरइँ कहार, बरुवा नहुवावइँ?
राजा दसरथ सगरा खनावा औ घाट बँधावा, केकही के भरइँ कहार, बरुवा नहुवावइँ।।

भीखी गीत : ब्रह्मचारी के भिक्षा माँगने के समय स्त्रियाँ गाती हैं :-

मँड़ए म ठाढ़ि राम जी, हिरि फिरि चितवइँ।
कहाँ गई मइया हमारि, भीखी लै डारइँ।
छिन यक बेलभँउ रे बरुआ तौ पलक नेवारउ
कइ लियउँ सोरहौं श्रृंगार, भीखी लै डारउँ।।

काशी गमन : ब्रह्मचारी के अध्ययन के लिए जाते समय स्त्रियाँ गाती हैं :

देउ न मइया मोरी भिखिया अउर असिसिया
कासी बनारस जाब, हुआँ बेद पढ़बइ।
काहे क जइहौ पूता कासी अउ बनारस
अजवा तोहार बेदवार, घरहिं बेद पढ़िहौ।।

(ङ) विवाह सम्बन्धी लोकगीत

अवधी में विवाह सम्बन्धी लोकगीतों की भरमार है। प्रायः हर अवसर पर गाये जाने वाले गीत स्त्रियों की सुरीली आवाज से सज कर हर विवाह समारोह की शोभा बढ़ाते हैं। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं-

1. *सोने के खरउवाँ कवने रामा, आजी के महल गये।*
   आजी, मुख भरि देतू असीस, चउक चढ़ि बइठौं।
2. *तू तौ चलेउ पूता गौरी बियाहन, मोरे दुधवा कै दाम दिहे जाव।*
   गइया दूध मोल, भैंसिया दूध मोल, माई तोहरा दूध अनमोल रे।
3. *वहि रे देस की भुइयाँ भवानी, नाउँ न जानउँ तोहार।*
   अपन दुलरुवा मैं बेहन पठयों, बार न बाँका जाय।।
4. *आजु बने का ब्याहु रचा, मोती झालर लागी।*
5. *हाथे गेडुवा कसै केरी डाभ,*
   मंड़ए म कापैं कवने रामा, कन्यादान कइसे देउँ।
6. *कलसा लै बहुअरि, कलसा ले, छलसा सगुन सुभ होइ।*

2. ऋतुओं पर आधारित अवधी लोकगीत

लोकभाषा की मिठास और उजास अवधी के ऋतुपरक लोकगीतों में सर्वत्र बिखरी पड़ी है। इन ऋतुगीतों की ऋजुता, प्रभविष्णुता और सौन्दर्य अनुपमेय है। इनकी भाव भरी शैली निराली है। सावन, कजली, होली, बारहमासा - किसको किसको गिना जाय। हर एक अपने आप में भावोन्मेष उत्पन्न कर देने वाला है। सावन और कजली दोनों एक ही महीने के गीत हैं, परन्तु सावन में श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों ही पक्ष होते हैं। जबकि कजली में सिर्फ संयोग। ऋतुपरक गीतों के कुछ सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

1. *बइठा मोरे राम, झुलनियाँ की छहियाँ।*
   सोने की थरिया माँ जेवना परोस्यों
   जेवइं मोरे राम, डोलाऊँ रस बेनिया।
2. *अरे रामा चन्दा उअइ चटकील,*
   जनक जी के द्वारे रे हारी।
3. *दुख दइके बलमवा बिदेस गये।*

चार महिना के बरखा होवत है
अरे छावा बँगलवा उजारि गये।
चारि महिनवा के जाड़ा होवत है
अरे लाली रजइया उठाय गये।

4. *हरी हरी आवै सावन मास, सजन घर नाहीं रे हारी।*
5. *मोरी कउन हरइ तन पीरा, बिना हो रघुबीरा।*
6. *ई रेलिया बइरिनि बलम का लिहे जाय रे।*
7. *हरे रामा परी भँवर बिच नइया, केहू ना खेवइया रे हारी।*
8. *भारत के दुख दूर करइया, आजा कृस्न कन्धइया रामा।*
   अरे तुम बिन रोवति गइया, बिरिज के बसवइया रे हारी।

निद्रा न आने से विरहिणी को कौन-कौन सी पीड़ाएं घेर लेती हैं। देखिएः-

हरि हरि आये सावन मास, सजन घर नाहीं रे हारी।
हमसे करि करार गये साजन, बेगि धना घर अउबइ रे हारी।
हरि हरि ना घर आये स्याम, लिखे नाहीं पाती रे हारी।
असाढ़ मास निहारत बिति गए, सावन लगे सुहावन रे हारी।।

इस तरह अवधी लोकगीतों में ऋतु गीतों की जो सुन्दरता, भाव और शिल्प दोनों ही रूपों में सम्यक रूपेण प्रस्फुटित दिखाई देती है, वह हिन्दी साहित्य में बेजोड़ है। प्रेम और सौन्दर्य के निरूपण में वह अद्वितीय है।

फाग सम्बन्धित लोकगीत फाल्गुन मास में बहुलता से गाये जाने के कारण इसे फाग या फगुआ कहा जाता है। इस मास में बासन्ती पवन की चंचल अठखेलियाँ जनजीवन को चंचल बना देती हैं। चौपालों में ढोलक मंजीरे के साथ गायक इकट्ठा होते हैं और रात-रात भर गाते-झूमते रहते हैं। कहीं-कहीं गायकों की टोलियाँ निकलती हैं जो मस्ती से गाजे-बाजे के साथ गाती हुई चलती हैं। एक धमार की मस्ती देखें-

सिया डारैं राम गले जैमाला, सिया डारैं राम गले जैमाला
दूलह तौ श्रीराम बने हैं, लछिमन देवर सहबाला।
समधिन तौ बनी मातु कौसला, दसरथ समधी महिपाला।
जिनके सम्भु बराती आये, ओढ़े दिगम्बर मृगछाला।

प्रस्तुत गीत की लयबद्धता देखते ही बनती है। होली के अवसर पर जनजीवन इन लोकगीतों में रंग-रंग जाता है।

अवधी लोकसाहित्य में इसके फाग-साहित्य का बड़ा महत्त्व है। यह पर्याप्त समृद्ध है। अधिकांश गीत मौखिक रूप में ही मिलते हैं। अवधी फाग-साहित्य हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि हैं। फागुन आने के साथ ही प्रकृति में एक रौनक आ जाती है। होली का पर्व विद्रोह और उल्लास का पर्व है। रूढ़ियों और परम्पराओं से मुक्ति पाकर जनमानस फाग गाकर अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। डॉ. राम बहादुर मिश्र ने फाग साहित्य पर बहुत कार्य किया है। अवधी फाग-साहित्य की परंपरा कब प्रारंभ हुई, यह तो पता नहीं परन्तु कुछ प्रकाशक, संग्रहकर्ता एवं लेखकों ने इसे जीवित रखा, जिनमें डॉ. राम बहादुर मिश्र, शिव नारायण त्रिपाठी, रमेसर सिंह, जगन्नाथ सिंह, द्विज छोटकुन आदि अग्रगण्य हैं। कुछ उदाहरण देखें-

फाग	*अवध मां होरी खेलैं रघुबीरा अवध माँ*
	केहि के हाथ कनक पिचकारी, केहि के हाथ मंजीरा। अवध माँ
चौताल	*गोरी सोवै ओसरवा अकेली*
डेढ़ताल	*गोरी सोरहौ सिंगार सँवारै, मति घूमहु हाट बजारे।*
ढाईताल	*यह नर तन पायौ, वृथा ही गँवायौ*
	सफल न बनायौ, नित पेटहि जियायौ।
	प्रभुहिं नहिं ध्यायौ।
धमार	*अवध माँ राना भयौ मरदाना। अवध माँ*
	पहिल लड़ाई भयी बक्सर माँ, सेमरी के मैदाना।
	पहिले मिले तिलोई के राजा, दूजे सुदरसन काना।
	तीजे भेंट भयी छत्रिन सों, नाना जी घबराना होरी
	गड़िगे बसन्त के ढाह बिना होली तापे न जाबै।
	पहिली अनउनी ससुर मोरा आये, ससुर लौटि घर जाव।
	बिना होली तापे न जाबै।

हास्य और उल्लास की मस्ती से भरपूर फाग-साहित्य अवधी भाषा की महान उपलब्धि है। फाग के उल्लेखनीय रचनाकारों में ठाकुर शिवप्रसाद सिंह, द्विज छोटकुन, रामलोचन विश्वकर्मा, माता भीख, डॉ. रमेसर सिंह, जगन्नाथ सिंह आदि तथा संग्रहकर्ताओं में ठा. जगन्नाथ सिंह, डॉ. रामबहादुर मिश्र ने किया है, जो बहुचर्चित और बहुप्रशंसित हुआ है।

इस तरह अवधी लोकगीतों में ऋतुगीतों की सादगी, ऋजुता और सौन्दर्य अनुपमेय है। इनकी प्रशंसा युगों-युगों तक साहित्य-मर्मज्ञ करते रहेंगे।

3. श्रम से जुड़े लोकगीत

श्रम से सम्बन्धित लोकगीत किसी कार्य के करते समय श्रम की थकान को दूर करने के लिए गाए जाते हैं। इससे काम भी सरल हो जाता है और थकान भी नहीं होती। इन गीतों में जीवन के धूप छांही रूप दिखाई पड़ते हैं। कुछ उदाहरण देखें :

"धरि गये चनन चरखवा, सिरिजि गज ओबरि हो राम
दिन भर कतबै चरखवा, ओहरिया ओढ़ाय देबै हो राम।"
"जात तौ देखा देवरा दुइ अर जनवा रे ना।
देवरा कहां छांड़ि आया मोर सइयां रे ना।"
"नौ मन कूटौं मइया ना मन पीसौं, नौ मन सिझयौं रसोइया रे ना।
पछिली टिकरिया मइया हमरा भोजनवा, वहू महैं कुकुरा बिलरिया रे ना।।"

4. जातियों के लोकगीत

गीत और नृत्य से मनोरंजन करने की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। ये प्राचीन कलाएं अवधी लोकगीतों के माध्यम से आज भी जीवित हैं। तबला, मृदंग, ढोलक, मंजीरा, घड़ा, सूप, सिटके, घूघूर, खंझड़ी, नगाड़ा, कुड़कुड़िया, ढोल आदि इनको अद्भुत ध्वनियां प्रदान करते हैं। अवध क्षेत्र में अहीर-नृत्य फरवाही कहलाता है। इनके गीत को बिरहा कहा जाता है। देखें-

कवन चिरयिया पोथी बांचइ, कवन खेत दरबार।
कवन चिरयिया कइ लम्मी लम्मी टंगिया, कवन कइ चावर बार।।

धोबी गीत : यह भी अवधी लोक साहित्य की महान धरोहर हैं। देखें-

1. *थोर-थोर कपड़ा दिहा गहांकिया, धोबिया के नरम है करेज।*
तोहरा धोबियवा कइव रंग धोवै,
खलवा से धोय-धोय ऊंचवा बिछावै।
लाल-लाल आगरे मूंगा तिरबेनी कैं छींट।।

2. *धोबिया तू मरि जइहौ चादर लिहेव धोय।*
चादर लिहेव धोय मइलिया बहुतु समानी।।

3. *अच्छा सामी जब निक लागै,*
धोबिया का खूब देय, किहां मालिक खूब देय।।

5. विविध लोकगीत

संस्कारों, ऋतुओं, क्रियाओं और विभिन्न जातियों के लोकगीतों के अतिरिक्त अवधीभाषी जनमानस कुछ अन्य विविध प्रकार के लोकगीतों से अपने सुख-दुख, हर्ष-विषाद की अभिव्यक्ति करता है। इनमें से कतिपय द्रष्टव्य हैं:-

1. पुरबी : उत्तर प्रदेश के पूर्वी जनपदों, बिहार के छपरा आदि जनपदों में पुरबी लोकगीत गाये जाते हैं। अवध क्षेत्र के अनेक जनपदों में ये बहुत लोकप्रिय हैं। एक पुरबी देखें:

कांधा लइगे मोरि मथनिया, दहिया कइसे मथबै ना।
आवन डोलै पावन डोलै, डोलै सारी दुनिया।
सेसनाग कै मस्तक डोलै, राधा केरि झुलनिया, दहिया कइसे मथबै ना।
ढोलक बाजै, मंजीरा बाजै, औ बाजै हरमुनिया।
कांधा केरी बंसी बाजै, राधा की पैंजनिया, दहिया कइसे मथबै ना।

2. बालकों के खेलगीत : अवधी में बालक-बालिकाओं के तमाम खेलगीत हैं। एक कबड्डी गीत-

हुर कबड्डी आल-ताल।
मरिगे मदारी लाल।
जिनके मोंछा लाल-लाल।।

बिरहा गीतों में जीवन के विविध रूपरंग दृष्टिगोचर होते हैं। प्रस्तुत लोकगीत में सन् 1965 ई. की उस दुर्घटना का वर्णन है, जिसमें अयोध्या में सरयू नदी पर बना पीपे का पुल टूट गया था-

सन् पैंसठ मां सुखी किसनवै, मेलहा चलै तमाम जी।
केउ बांधे है चाउर-भूजा, केउ सेतुवा पिसान जी।।
नौ बजे नउमी के दिन मां, पुलवा टूटा तमाम जी।
खर खर खर खर जनता गिरिगै, दया करैं भगवान जी।।
केतनिउ गठरी बही जाति हैं, केतनिउं हैं उतरान जी।
लै लै नाव केवट सब धाये, अजोधिया के दरम्यान जी।।
लूटि लाटि के गठरी अपने, लेइके धरे नाव जी।
नदी किनारे तिरिया रोवै, बालक छुटे हमार जी।।
बइठा साहब सोचि रहे हैं, नया बनावैं ग्यान जी।

अबकी पुल पक्का बनवउबै, लागै केत्तौ दाम जी।।

बिरहा के अवतरण हेतु कहा गया है-

ना बिरहा कै खेती-पाती, ना बिरहा फरै डारि।
बिरहा बसै हिरदव मा भाई, जब उमंगै तब गाव।।

यहां खेती-पाती, डार आदि शब्द आधार सूचक हैं, जबकि बिरहा की यह रसवत्ता लोगों की जीवंतता का प्रतीक है। विवाह के बाद बेटी विदा करते समय परिवार जनों की पीड़ा बिरहिया के शब्दों में-

बप्पा के रोये घाघरा बढ़ि गइ, मइया के रोये अन्धेर।
भइया के रोये धोती भीजि गइ, भौजी किहिन सबेर।।

इस तरह बिरहा लोकगीत अवध की बहुमूल्य सम्पत्ति हैं।

3. कहरवा : कहारों के प्रचलित लोकगीत को कहरवा या कहरा कहा जाता है। इसमें शिव, राम, कृष्ण की कथाओं के अतिरिक्त सामान्य जीवन की घटनाओं का भी वर्णन रहता है। एक उदाहरण देखें-

तनिका बोलौ रघुराई, हम दवाई लाई राम।। टेक।।
कहौ तौ लीलि जाउं रबिमंडल, भोर होइ ना पाई।
कहौ तौ आपन प्रान त्यागि कै लखन प्रान होइ जाई।
उठि कै बइठैं रघुराई, हम.......

4. सत्यनारायण कथा गीत : यह लोकगीत सत्यनारायण व्रत कथा के उपरांत महिलाएं गाती हैं-

चन्दन कै लकड़ी, कपूर रंग बेदी।
लाल रंग पोथिया पुरान, तौ बांचि कै सुनावौ।

5. कुआं खुदते के समय का गीत : जब कुआं खुदना प्रारम्भ होता है, उस समय स्त्रियां लोकगीत गाकर वातावरण को सरस और पावन बनाती हैं। उदाहरण देखिए-

कवन सिंह इंटिया पथावयँ, पजउआ लगावयँ।
कवन सिंह सगरा खोदावयँ, जगतिया बँधावयँ।
राजा दसरथ इंटिया पथावयँ, पजउआ लगावयँ।
अरे होत्थै अजोधिया माँ सोर, तौ जग्गि रचावइँ।।

6. राष्ट्रीय स्वतंत्रता गीत या गदर के गीत : विदेशी आक्रान्ताओं से पीड़ित भारत माँ की वेदना, यहाँ के निवासियों की मनोभावनाएँ, क्रान्ति की धारा आदि का सुन्दर चित्रण अवधी लोकगीतों में मिलता है। गोंडा के राजा देवीबख्श सिंह की अँग्रेजों से टक्कर का दृश्य देखें-

राजा बखानौं मैं गोंडा के, देवीबकस महराज रहे।
असी चार चौरासी कोस माँ, जेहि को डंका बाजि रहे।।
अंगरेज कै मेम बोली, धनि धनि राजा भैया।
हज्जारन गोरा बहि गये, चिल्लाने बप्पा दैय्या।।
भागि चलौ बिल्लाइति साहब, हिंया पार ना पैया।
भैया परमेसुर के लम्बे हाथ।।

लोकगीत लोकमानस का सहज उन्मेष है। इसमें सरलता, स्वाभाविकता और स्वच्छंदता प्राप्त होती है। कवि की भावनाएँ देखें-

भारत की महिमा सबका सुनाय देई।
हे रामा, जियरा खुसी ह्वै जाय।

इस तरह अवधी के लोकमानस में राष्ट्रीयता और देशप्रेम का भाव भरा हुआ है।

अवधी लोक-गाथा

लोकगाथाओं में भाव के स्थान पर कथानक की प्रधानता रहती है। लोकगाथाओं में आल्हा, ढोला मारू, लोरिक आदि आते हैं। इस तरह लोकगीत गीतिकाव्य के अन्तर्गत तथा लोकगाथाओं को प्रबन्ध- काव्य के अन्तर्गत रखा जा सकता है। पं. रामनरेश त्रिपाठी ने 484 लोकगीतों का संग्रह 'कविता-कौमुदी' में प्रस्तुत किया है। आल्हा का एक उदाहरण देखें-

सुमिरन करिकै अजैपाल को, लैकै रामचंद्र को नाम।
खींचि सिरोही लाखनि राना, समुहे गोल गये समुहाय।।
जैसे भेड़हा भेड़न पैठे, जैसे सिंह बिडारै गाय।
तैसे लाखन दल माँ पैठे, रन माँ कठिन करै तरवारि।।

अवधी लोककथा

लोककथाएँ वे कहानिया हैं जो स्त्रियाँ किसी तीज-त्यौहार के अवसर पर उपस्थित स्त्री समुदाय को सुनाती हैं, जैसे भ्रातृ द्वितीया, करवा चौथ, सकट, हरछठ, ललही छठ आदि के अवसरों पर। धार्मिक अनुष्ठान से सम्बन्धित होने के कारण इन्हें कथा कहा जाता है। इसके अतिरिक्त बच्चों को स्थानीय बोली की लोककथाएँ सुनाई जाती हैं, जो भूतप्रेत, ठगी, धोखे, राजा रानी, सामाजिक, डायन आदि से सम्बन्धित होती हैं।

अवधी लोकनाट्य

लोकनाट्यों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इनके द्वारा जनसाधारण का मनोरंजन होता है। अवधी के प्रसिद्ध लोकनाट्यों में रामलीला, नौटंकी, स्वांग, कठपुतली, कत्थक नृत्य आदि प्राचीन काल से लोकप्रिय हैं। इसमें रामलीला का प्रसार तो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर है।

अवधी पहेलियाँ, कहावतें तथा मुहावरे

अवध निवासी अपने भावों तथा विचारों को पहेलियों, कहावतों तथा मुहावरों द्वारा प्रकट करते हैं। इनसे लोगों का मनोरंजन भी होता है। पहेली को अवधी में बुझौवल कहा जाता है। अवधी के प्रमुख पहेलीकारों में खगिनिया, सबल सिंह, भाव सिंह, घासीराम आदि हैं। एक उदाहरण देखें-

लम्बी चौड़ी आँगुरि चारि, दुहूँ ओर ते डारी धारि।
जीव न होय जीव का गहै, बासू केरि खगिनिया कहै।। (कंघी)

कहावतों को ठेठ अवधी में कहावति कहा जाता है। कभी गद्य, कभी पद्य में ये प्राप्त होती हैं। एक उदाहरण देखें-

जैसे मिले उमादत्त पांड़े, तैसी मिलीं रसूला।
ना उइ जानैं पोथी पत्रा, ना उइ बारैं चूल्हा।।

मुहावरे भी अवधी में प्रचुरता से मिलते हैं। जैसे - भेड़िया धसान, पीसै क मकरा गावै का सीताहरन, बीरबल कै खिचरी, ठसक बड़ी घर कोलिया माँ, आदि।

इस तरह हम देखते हैं कि अवधी का लोकसाहित्य विश्व में अपना सानी नहीं रखता। लोकजीवन के सुख-दुःख, उल्लास-हर्ष, विषाद और संघर्ष को अभिव्यक्त करते हुए लोकगीत, लोकगाथाएँ, लोकनाट्य, कहावतें आदि कोटि-कोटि हृदयों को अभिव्यक्त करते हैं। पनिहारिनों, बोझा ढोती हुई स्त्रियों के साथ घरेलू काम-काज करती नारियों के सुरीले कंठों में रचे-बसे ये अवधी के गौरवगीत जनजीवन में इतने गहन

रूप से समाहित हैं कि ये अवध क्षेत्र का अविच्छिन्न अंग बन गये हैं। समाज का दर्पण हैं ये। हमारे पूर्वजों की धरोहर हैं, जिन पर हम अवधी भाषियों को गर्व है। ये मानव के संस्कारों की व्यंजना हैं और उसका लालित्य भी। अवधी संस्कृति का यह रूप अत्यन्त समृद्ध है। सांस्कृतिक सम्पन्नता की दृष्टि से यह किसी भी भाषा और संस्कृति से टक्कर ले सकते हैं। ये हिन्दी साहित्य की वह धरोहर हैं, जो विपरीत हवाओं से टकराते हुए अपने अस्तित्व की ज्योति जलाये हुए अपना शाश्वत सौन्दर्य और लालित्य लेकर हमारे सामने हैं। इसमें निश्छल और पावन हृदय का प्रतिबिम्ब है। जनमानस द्वारा आविष्कृत हुआ, लोक कवियों द्वारा पोषित यह साहित्य अपना कोई विशिष्ट स्कूल नहीं रखता, और न इसके जानने वाले से विद्या बुद्धि की प्रवीणता को कोई अपेक्षा। यह तो लोकमानस में बसा अवध की माटी की सोंधी गन्ध है। तुलसी बाबा कहते हैं- ''लोक वेद मंजुल दुइ कूला।'' यह वह पावन स्कूल है जिसका परस पाकर हमारी आत्मा, हमारी मान्यताएँ, हमारी आस्था, हमारा विश्वास लहलहा उठता है।

अवधी लोकसाहित्य में जादू, टोना-टोटका एवं लोकविश्वास

आद्याप्रसाद सिंह 'प्रदीप'

साधनात्मक ज्ञान द्वारा मनुष्य प्रकृति और जीवन के उन रूपों तथा अभिव्यक्तियों को जानने की चेष्टा करता है जो सामान्य जन-मन से सुदूर और गोपनीय है। जो तथ्य सामान्यतः बोधगम्य नहीं होते, उसे साधनात्मक ज्ञान से विधिवत जाना जाता है। जादू, टोना-टोटका भी इसी साधनात्मक ज्ञान के अन्तर्गत आते हैं। साधना के द्वारा अनेक प्रकार की शक्तियों का अर्जन किया जाता रहा है। साधना के द्वारा ऋषि मुनि तथा सन्त महात्माओं ने अनेक दुर्लभ वस्तुओं को हस्तगत किया था। आज भी तप और साधना के द्वारा लोक कहाँ से कहाँ पहुँच रहे हैं। मंत्रों को भी जप तप कर सिद्ध किया जाता है। रही बात उस मंत्र पर विश्वास करने की, जो विश्वास कर लेता है उसे सकारात्मक फल की प्राप्ति होती है।

टोना के शब्द शक्ति सम्पन्न होते हैं। इसलिए टोना करनेवाला यह विश्वास करता है कि यदि टोना के शब्दों को आवश्यक कर्मकाण्ड के साथ ठीक ठीक यथावत उच्चारण किया जाय तो वांछित फल की प्राप्ति अवश्य होती है। टोना के शब्दों और स्वराघात आदि में कोई फेरबदल नहीं होता। फेरबदल के आ जाने पर परिणाम भी नकारात्मक हो जाता है। टोना मंत्र भी है, साथ-साथ कर्मकाण्ड भी है। आज का प्रबुद्ध जनमानस टोना से विश्वास हटाता जा रहा है। लोगों में उसके प्रति आस्था शिथिल पड़ती जा रही है। टोना के साथ कुछ अनिवार्य शर्त निश्चित रहती है, जैसे- बिना रुके, बिना खण्डित हुए पूरा मंत्र एक श्वाँस में पूर्ण होना चाहिए। इस प्रक्रिया में खण्डन-मण्डन से अभीष्ट सम्प्राप्ति दुर्लभ हो जाती है। अभ्यस्त व्यक्ति पूर्णतया भिज्ञ होता है कि मंत्रजप ठीक है या नहीं। सम्मोहन टोना में सम्मोहित किये जानेवाले व्यक्ति को कुछ खिलाना-पिलाना आवश्यक होता है। उनका प्रयोग तो खाली पेट, साफ फर्श या लिपी-पुती जमीन, देहली पर, चौरास्तों पर, चन्द्रमा की ओर मुँह करके, पूर्व की ओर मुख करके, सवेरे या शाम को धुँधले प्रकाश में होना आवश्यक है। भूत-प्रेत का निसारा या पैठारा के लिए भी यही शर्तें या प्रक्रिया प्रयुज्य होती है। आये दिन तत्सम्बन्धी साधनात्मक ज्ञान रखने वाले पण्डित-ओझा गाँव की पगडण्डियों के चौराहों पर उतार-वतार सम्बन्धी प्रभूत सामग्रियों के साथ प्रक्रिया देखी जाती है। इसके कर्मकाण्ड परम गोपनीय होते हैं।

टोना-टोटका और जादू के कई वर्ग हैं। किसी के स्वास्थ्य पर प्रहार करना, आर्थिक समृद्धि पर प्रहार करना, औद्योगिक प्रगति, पशुधन, बाग-बगीचा पर प्रहार करना तथा अनेक प्रकार के विरोधी आक्षेपों से संत्रस्त करने में इनका प्रयोग होता है। इन जंत्र-मंत्र और टोने-टोटकों के द्वारा जन कल्याण का भी कार्य किया जाता है। यथा किसी की पीड़ा झाड़-फूँक के द्वारा ठीक करना। दान्त-दर्द, सिर-दर्द, शरीर की जकड़न, खून को रोकना, बीछी मारने पर झाड़-फूँक, साँप काटने पर झाड़-फूंक के अलग-अलग मंत्र हैं। बाल रोगों के लिए बहुत से तंत्र-मंत्र हैं, जो अलग अलग हैं यथा, पूतना झाड़ना, सूखा रोग झाड़ना, उल्टी-दस्त ठीक करना, नजर लग जाना, रोउनी पड़ जाना, सब के अलग अलग मंत्र और टोटके होते

हैं। आगे हम कुछ टोटकों के सम्बन्ध में बात करेंगे।

दाँत झाड़ना : किसी के दाँत में दर्द हो तो झाड़ने वाले जहाँ मंत्र द्वारा झाड़ते हैं, वहीं कुछ टोटकों द्वारा भी ठीक कर देते हैं। इसमें झाड़नेवाला श्रेष्ठ माना जाता है। किसी झाड़नेवाले के पास प्रातः बिस्तर पर रहते जाया जाता है। पीड़ित को चिल्ला कर झाड़ने वाले का नाम लेकर बुलाना पड़ता है, वह भी टुकार कर। झाड़नेवाला आंचलिक भाषा में पूछता है, कौन है रे? वह उत्तर देता है, दँतरवा। झाड़नेवाला डाँट कर भगा देता है। इसी इतनी बात से अनेक लोगों को स्वस्थ होते देखा जाता है। उदाहरण से और स्पष्ट हो जाता है। जैसे, दाँतझाड़ने वाला शिवनाथ, दाँत दर्दवाला राममूरत।

राममूरत : (प्रातः अंधेरे में) सिउनथवा हये रे....।

शिवनाथ : कौन हये रे......?

राममूरत : हम तौ दँतरवा हई रे।

शिवनाथ : जे भागि जे ठीक होइ जावे।

(किसी को गाली देकर, किसी को तमाचा मारकर भी भगाया जाता है।)

सिर दर्द (अधकपारी) : कोई चिचिड़ा की लकड़ी, कोई महुआ, कोई मनवाँ की लकड़ी लेकर सिर पर बार-बार फेरता है। मंत्र पढ़ता है, 'ओम हुम् हाम् हुम्। लाग होइ, छाँड़ होइ दोहाई संकर भगवान की, दोहाई हनुमान जी की।' इसके दुहराने और लकड़ी से सिर को सहलाने से दर्द दूर हो जाता है। कुछ लोग इसी मंत्र से माथे में पुराने प्राख की मिट्टी रगड़ लगाकर झाड़ते देखे जाते हैं। कुछ लोगों के अन्य मंत्र और ढंग भी हो सकते हैं। कुछ लोग देशी ईख के रस को नाक से खींचने को बताते हैं।

बच्चों का झाड़-फूँक करना : बच्चों की अनेक बीमारियाँ गाँवों में झाड़-फूँक से ठीक होती देखी जाती हैं। बड़की सर्दी - बच्चा जोर जोर से खींचकर साँस लेता है। इसको दाहिने हाथ की अँगुली तर्जनी और कनिष्ठिका बीच की दो अँगुलियों के पीछे से छू जाती हों तो उसी से गोंठते हैं। पेट के ऊपर दोनों अँगुली से ग्यारह इक्कीस और इक्यावन बार गोंठते हैं और फूँक लगाते रहते हैं। साथ-साथ देवी देवता मनाते रहते हैं। नजर झाड़ने के लिए दोहाई हनुमान जी की, दोहाई शंकर भगवान की, दोहाई लोना चमाइन की कहते रहते हैं। चौदत्ता निकलने की स्थिति में उस स्थान को अँगूठे से दबाकर ठीक कर लिया जाता है।

बीछी के डंक मारने पर : बिच्छू के डंक मारने की पीड़ा भुक्तभोगी ही समझता है। गाँवों में बिच्छू मारने पर झाड़नेवाले के पास लोग दौड़ पड़ते हैं। लोगों की प्रक्रिया अलग-अलग होती है। कुछ सेवाभावी लोग हाथों से डंकस्थल को सहलाते हुए मंत्र पढ़ते हैं। कुछ लोग लकड़ी से सहलाने का काम करते हैं। एक मंत्र का उदाहरण देखें :

"ओम क परवर सुधई कारी गाय।
कारी तोरे गोबरे बीछी बियायि।
बीछी तै कै जाति?
गोबरन अठारह जाति।
छ कारी, छ पियारी, छ हई धुवाँ धारी।
तैं कस मारे नीलकण्ठ?
दोहाई लोना चमइनी की, दोहाई गौरा पार्वती की।"

इस तरह के भिन्न-भिन्न स्थान पर बीछी झारने के मंत्र भिन्न-भिन्न भी हो सकते हैं।

जादू-टोना झाड़ने के मंत्र : जादू-टोना आदि प्राणघातक मंत्र प्रहार हैं। इनसे संत्रस्त लोगों को प्राण से हाथ धोते भी देखा गया है। इसे प्रताड़ित लोगों को मंत्रों से झाड़-फूँककर ठीक किया जाता है।

आवश्यक होने पर पूजा-पाठ हवन आदि के साथ-साथ उतारा-पतारा भी किया जाता है।

मंत्र : "दोहाई हनुमान जी की जादू-टोना, भूत-पिशाच, नजर-गुजर झरिजा। भटकैय्या क बिया आँखी मा घोरिद्या। दोहाई लोना चमइनी की। दोहाई गौरा पार्वती की।" इस मंत्र को पीड़ित की व्यथा के अनुसार 11 बार, 21 बार या आवश्यकता के अनुसार झाड़कर फूँक मारा जाता है।

कुत्ता काटने का मंत्र : सामान्यतः कुत्ते में जहर होता ही है। उसके दाँत के लग जाने पर उसे प्राचीनकाल में कुछ मंत्रों से झरा लेने व कुछ टोटका या कुछ प्रक्रियाओं के बाद लोग स्वयं को भयमुक्त मान लेते हैं। कुत्ते के काटने पर सेवाभाव को लेकर कुछ लोग झारने का काम करते हैं।

झारने का मंत्र : "ओभवा पोती, ओसरवा आगि लागि,
यहि तीनिउँ गावाँ कुकुर काटै झारिद्या,
दोहाई लोना चमइनी की,
दोहाई गौरा पार्वती की।"

कुत्ता काटने पर हर क्षेत्र विशेष में कुछ टोटके भी कराये जाते हैं यथा -

1. 32 कुआँ झाँकने से भी कुत्ते का जहर शान्त हो जाता है।

2. किसी व्यक्ति (साधनात्मक ज्ञानवाले) का चौखट डाँकने और उसके दरवाजे की मिट्टी का प्रसाद लेने से कुत्ता ठीक हो जाता है।

3. जिसका कुत्ता हो, उसी के घर से कडुवा तेल और मिर्च लेकर तेल काटनेवाले स्थान पर लगाने और मिर्च को चबाने और पीसकर रखने से ठीक हो जाता है।

साँप काटने का मंत्र : साँप काटने के मंत्र गाँवों में अभी भी प्रचलित हैं। पुराने समय में तो शत-प्रतिशत लोग इसी झाड़-फूँक पर निर्भर थे। इसी से लोगों को कल्याण हो जाया करता था। इन मंत्रों के साधनात्मक ज्ञान रखनेवाले लोगों का यह नियम होता था कि यदि उनको सुनने को मिल गया कि अमुक गाँव में अमुक व्यक्ति को साँप ने काट लिया है तो वे चाहे जिस स्थिति में हों, तुरन्त वहाँ पहुँचते थे। झाड़-फूँक करना वे अपना दायित्व समझते थे। मंत्र : "दोहाई आस्तीकन बाबा की, जय जन्मेजय महराज की। कीरा बोलाइ के विष का उतारि दे। दोहाई हनुमान जी की।" पीपल के डण्ठल सहित पत्ते को कान में डण्ठल डालने से विष कम होता है। पताल आँवला की पिसे लुब्दी की गोली नाक पर रखने से जहर कम होता है।

भूत-प्रेत को झारने का मंत्र : कभी-कभी दवा करने पर जब लोगों को लाभ नहीं होता तो लोग यह कहने लगते हैं कि अरे भाई कुछ झाड़-फूँकौ तो करा लेना चाहिए। वास्तव में कभी-कभी झाड़-फूँक बहुत काम कर जाता है। साधन न रहने पर झाड़-फूँक का महत्त्व अधिक होता है।

मंत्र : "भूत होइ, प्रेत होइ, लाग होइ, छाँड़ होइ, बूड़ा होइ, जरा होइ। जारि दे, बारि दे, बारि के बुताइ दे। दोहाई हनुमान जी की, दोहाई गौरा पार्वती की।"

प्रसाद के रूप में फूँक मारी राख मुँह में, पेट में लगायी जाती है। कभी कभी सरसों नमक हल्दी उतारकर आग में डाल देने और उसके धूम के सेंकाई करने से भूत-प्रेत भाग जाते हैं।

आग बाँधने का मंत्र : कभी-कभी जब आग लग जाती है, तो गाँव के गाँव साफ हो जाते हैं। हमारे यहाँ ऐसे मंत्र भी प्रचलित हैं जिसको पढ़कर चारों ओर घूम दिया जाय तो आग उसके आगे नहीं वढ़ती। मंत्र : "ओम् नमो आदेश गुरु कै, जिला बान्हू, सहर बान्हू, अग्नि बान्हू, बार बन बान्हू, शिव पुत्र प्रचण्ड बान्हूँ, राजा का इंकरसा, आसन छोड़ मुझे।" इस मंत्र को राजा या उच्चाधिकारी को अपनी ओर पक्षपूर्ण आकर्षण के लिए भी प्रयोग किया जाता है। मुकदमे में विजय के लिए भी लोग इसका प्रयोग करते हैं।

लड़ाई में तलवार की धार बाँधना : लड़ाई झगड़ा में लाठी चलने पर झगड़ा होने पर हथियार को निष्क्रिय करने के लिए भी मंत्र का प्रयोग किया जाता है। मंत्र : "ओम् नमो, धार अधर कधर बाँधो, सार बार बाँधो, तीन कटे बार न भागै, चोर खाँड़ा की धार में ले गया हनुमत वीर।"

बिलनी झाड़ने का मंत्र : बिलनी, आँख की पलक में फुंसी को कहते हैं। वैज्ञानिक तथ्य बताते हैं कि गले में किसी स्थान पर कफ या चिकनाहट यदि कहीं रुक गई तो आँख की पलक में फोड़े निकल आते हैं। ऐसे फोड़े नमक-पानी गर्म गरारे से ठीक हो जाते हैं। कुछ लोग एक मंत्र से झाड़ते हैं। "कोठवा कोठाइ जे। बिलनी बिलाइ जे" इस मंत्र को 11 बार पढ़ा जाय और आम अथवा बेर की पत्ती के टूटे भाग से छुवाया जाय। इस प्रकार पाँच या ग्यारह पत्ती से झाड़ने पर बिलनी ठीक हो जाती है। कहते हैं, पत्ती के सूखने के साथ साथ बिलनी भी सूख जाती है।

भूतप्रेतनाशक यंत्र जो तावीज में पहनी जाती है।

85	56	1	12
6	60	62	13
46	4	18	91
46	69	28	58

उपरिलिखित यंत्रों मंत्रों के अतिरिक्त अवध-क्षेत्र में अनेक और मंत्र हैं। जनकल्याणार्थ तथा अन्य कार्यों की पूर्ति के उपयोग में लाये जाते हैं।

फोड़ा झाड़ने का मंत्र : अज्ञात

अघेड़ी झाड़ने का मंत्र : अज्ञात

सहुँआ (फुफकार) झाड़ने का मंत्र : अज्ञात

नजर झाड़ने का मंत्र : "काल बान्हैं कालिनी, बाल बान्हैं बालिनी,
अन्त में भूत बैताल बान्हैं कमरू देश,
कमेक्षा देवी जहाँ बसैं इस्माइल जोगी,
इस्माइल जोगी मागैं हवन, दोहाई लोना चमइनी की।"

कुछ संकीर्ण चिन्तक लोग गाँवों में भूत-प्रेत को ओझा एवं शोखा के द्वारा अपने ऊपर से दूसरे के ऊपर स्थापित कर देते हैं। नवरात्रि के बीच नौ दिन तक स्थानान्तरण का कार्य अधिक चलता है। बताते हैं, कि झाड़-फूँककर भूत-प्रेत किसी फल, मिठाई अथवा अन्य किसी खाद्य वस्तुओं के साथ दूसरों को दे दिया जाता है। पीड़ित ठीक हो जाता है और खानेवाला परेशान हो जाता है। कभी-कभी पीठ पर थापा मारकर भी दे दिया जाता है। कभी कभी लौंग में भी भूत-प्रेत दिये जाते हैं। या तो लौंग खाने को दी जाय या उसके ही घर के पास जाकर लौंग गिरा दिया जाय तो भी प्रेत स्थानान्तरित हो जाया करते हैं।

कभी-कभी सामाजिक व्यवस्था के कारण भी लोगों को भूत-प्रेत करना होता है। जैसे किसी ब्याही लड़की के अपने परिवार में न पटने से दूसरे से सम्पर्क हो जाता है और वह पहले स्थान से दूसरे के परिवार में चली जाती है। साथ में सोने-चाँदी के मूल्यवान गहने भी लेती जाती है। तो भुक्तभोगी प्रथम परिवार उन गहनों पर भूत-प्रेत कर देता है। परेशान होने पर गहनों को वापस करना पड़ता है।

यह भूत-प्रेत कभी-कभी मीठे जहर की तरह काम करते हैं। जैसे, किसी छोटी बच्ची को लोग दे देते हैं। लड्डू-मिठाई-पान आदि के द्वारा ससम्मान खिलाने पर भी उसी में दे दिया जाता है। प्रौढ़ावस्था

के आने पर वह उजागर होता है। अच्छे साधनात्मक ज्ञान रखनेवालों के द्वारा कभी कभी विचित्र कार्य करते देखा जाता है। इसे एक उदाहरण के द्वारा हम बताएँगे। एक आदमी पेट दर्द से हैरान रहता था। खून की टट्टी करता था। वह पण्डित जी के पास आया। पण्डित जी ने अध्ययन किया और बताया कि महाराष्ट्र में जहाँ यह काम करता है, रेलवे लाइन के उस पार एक ब्रह्म का स्थान है, वहाँ यह दीर्घ शंका कर दिया था, उसी का यह परिणाम है। अन्त में वहाँ के हेड ब्रह्म के पास अपने सिद्ध देवता को भेज कर बुलाया और लगे ब्रह्म की शिकायत किया। अन्त में प्रधान ब्रह्म के द्वारा डांट फटकार कर छोटे ब्रह्म को बैठाया गया और पीड़ित व्यक्ति ठीक हुआ।

इस प्रकार हमारे समाज में जंत्र-मंत्र-टोने और टोटकों का संसार बड़ा विचित्र है। आज लोग इस पर विश्वास नहीं कर रहे हैं, परन्तु जब तक ऊँट पहाड़ के पास नहीं जाता, अपने को ही ऊँचा समझता है। जब कोई परेशान हो जाता है, तब अन्त में मानता है। आज लोग इस प्राचीन घृणित व्यवस्था से ऊबन महसूस कर रहे हैं। ऐसा क्यों न हो, भूत-प्रेत को तुष्ट करने के लिए पशु-बलि, बाल-बलि सरीखे दुष्कृत्य जो करने पड़ जाया करते हैं। अभी पिछड़ी जातियों, जनजातियों में यह प्रचलन में प्रगाढ़ रूप में देखने को मिलता है।

अवधी ग्रामदेवताओं की सूची एवं उनका वर्गीकरण

डॉ. शिवप्रसाद मिश्र

(क) अवधी लोकसाहित्य में उपलब्ध ग्रामदेवताओं की सूची

अवधी लोकमानस देवी-देवताओं की परिकल्पना में पूर्ण स्वतंत्र है। उसे प्रकृति की प्रत्येक वस्तु में देवत्व की झाँकी दृष्टिगोचर होती है। अतएव ग्रामदेवताओं की इतनी भीड़ हो गई है कि उनकी संख्या निर्धारित करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। यहाँ तक कि अवध के प्रत्येक जनपद के ग्रामदेवताओं को लेकर एक-एक शोध-प्रबन्ध लिखा जा सकता है। यहाँ पर प्रत्येक पल्लि, प्रत्येक गांव, प्रत्येक जाति, प्रत्येक परिवार अथवा कुल तथा प्रत्येक घर के अलग-अलग देवी-देवता तो हैं ही, प्रत्येक व्यक्ति के भी पृथक देवता देखे जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी लोग हैं जो दो-दो अथवा तीन-तीन, चार-चार देवताओं को पूजते हैं। इनमें से कुछ देवताओं की पूजा सामूहिक रूप से सम्पूर्ण ग्रामीण-जन मिलकर किसी निश्चित दिन व तिथि को करते हैं। कुछ पूजा सम्पूर्ण कुल-परिवार अथवा जाति के लोग मिलकर करते हैं तथा कुछ की पूजा व्यक्तिगत रूप से नित्यप्रति अथवा निश्चित तिथि पर सम्पन्न की जाती है।

सम्पूर्ण अवधी जनजीवन में कहीं किसी ऊँचे टीले को देवता रूप में पूजा जाता है, कहीं किसी समाधि को कुलदेवता माना गया है, कहीं किसी वृक्ष को देव अथवा देवी की परिकल्पना से अभिमण्डित माना जाता है, कहीं किसी साधु-महात्मा के निवास-स्थल को देव संज्ञा से अभिहित किया जाता है तो कहीं किसी नदी, सरोवर, नाले किंवा बावली व बगीचे में देव अथवा देवी का निवास मान लिया गया है। परन्तु ऐसा नहीं है कि यों ही किसी स्थान पर देव परिकल्पना कर ली गई है, बल्कि उसमें अवश्य ही कुछ छोटे-मोटे कारण, किंवदन्तियाँ अथवा सामाजिक मान्यताओं की जड़ें लोकमानस को जकड़े हुए हैं।

अवधी जनमानस में देव-परिकल्पना की इस विविधता को देखते हुए निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि इस विविधता में एकता के लक्षण अवश्य ही परिलक्षित होते हैं जो हमारी संस्कृति की प्रमुख विशेषता है। यहाँ पर कुछ देवी-देवताओं को छोड़कर शेष ऐसे देवी-देवता हैं जिनकी परिकल्पना सम्पूर्ण अवधी जनमानस में लगभग समान स्वरूप में और समान आधार पर हुई है। उदाहरण के लिए पीपल अथवा बरगद के वृक्ष पर लगभग सम्पूर्ण अवधी क्षेत्र में 'पहलवान', 'शैतान', 'जिन्न', 'जिन्नाद' अथवा किसी मृतात्मा कोटि के देवता की स्थापना मानी जाती है। इसी प्रकार किसी नीम-वृक्ष पर शीतला, काली, भगवती अथवा मरी माता की ही स्थापना सर्वत्र मानी जाती है। दीपक में सर्वत्र लक्ष्मी का ही आवास माना जाता है। नाग, हस्ती अथवा गाय सर्वत्र पूजनीय माने गये हैं। मात्र इतना अवश्य है कि ग्राम अथवा कुल के देवता पृथक-पृथक माने गये हैं, परन्तु उनमें भी एकरूपता लक्षित होती है। प्रत्येक गाँव का देवता कोई मुखिया, योद्धा, वीर-पुरुष, वैभव-सम्पन्न व विशिष्ट व्यक्ति ही माना जाता है। इसी प्रकार 'कुल-देवता' भी घर व परिवार का कोई पूर्वज मृत-पुरुष होता है।

अतएव उपर्युक्त विविधता एवं एकरूपता को ध्यान में रखते हुए अधिकांशतः उन्हीं देवी-देवताओं के विषय में अध्ययन प्रस्तुत किया गया है जो सार्वभौमिक हैं, जिनकी पूजा अधिकाधिक क्षेत्रों में प्रचलित है तथा जो अवधी लोकसाहित्य में बहुचर्चित हैं और जिनका रूप अवधी लोकसाहित्य में गीतों, मंत्रों, कथाओं, गाथाओं, पहेलियों, कहावतों एवं कहानियों के माध्यम से चित्रित है।

(ख) ग्राम-देवताओं का वर्गीकरण

अवधी ग्राम-देवताओं का सम्यक् अध्ययन किसी एक शीर्षक, एक अध्याय अथवा एक दृष्टि से नहीं किया जा सकता। ग्राम-देवताओं का उद्‌भव भी विविध रूपों अथवा विविध अभिप्रायों से हुआ है। अध्ययन की सुविधा व स्पष्टता को ध्यान में रखते हुए उनका अध्ययन कई दृष्टियों से होना अपेक्षित है। अवधी ग्राम-देवताओं का सम्यक् अध्ययन प्रस्तुत करने के लिए उनके वर्गीकरण इस प्रकार किये जा सकते हैं।

क्षेत्रा की दृष्टि से ग्राम-देवताओं का वर्गीकरण

क्षेत्र की दृष्टि से ग्रामदेवताओं को वर्गीकृत किया जा सकता है। अतः अवधी क्षेत्र को छोटे-छोटे भागों में विभक्त करके सरलता से अध्ययन किया जा सकता है। इस विभाजन की दो दृष्टियाँ हो सकती हैं :-

(1) **जनपद विभाजन की दृष्टि से :** अवधी क्षेत्र में जितने जिले हैं, लगभग उतने विभाग करके उनका अध्ययन किया जा सकता है, जैसे- अवधी लोकसाहित्य में रायबरेली के ग्रामदेवता अथवा प्रतापगढ़ या लखनऊ में उपलब्ध ग्रामदेवता आदि।

(2) **भाषा के विभाजन की दृष्टि से :** अवधी भाषा को तीन भागों में विभाजित किया जाता है- पूर्वी, अवधी, पश्चिमी अवधी तथा केन्द्रीय अवधी। इसी आधार पर ग्रामदेवताओं को भी वर्गीकृत कर अध्ययन किया जा सकता है, यथा- पूर्वी अवधी लोकसाहित्य में उपलब्ध ग्रामदेवता, पश्चिमी अवधी लोकसाहित्य में उपलब्ध ग्रामदेवता तथा केन्द्रीय अवधी के ग्रामदेवता।

परन्तु क्षेत्रपरक अध्ययन अत्यन्त दुरूह तथा विस्तृत हो जायगा, क्योंकि ग्रामदेवताओं की संख्या बहुत अधिक है। यहाँ तक कि अवध के प्रत्येक क्षेत्र अथवा जनपद के ग्रामदेवताओं पर पृथक-पृथक स्वतंत्र रूप से शोध प्रबन्ध लिखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त कौन सा देवता किस क्षेत्र का है और किस क्षेत्र का नहीं, यह निर्धारित करना अत्यन्त कठिन है।

जातीय दृष्टि से ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण

जातीय दृष्टि से भी ग्रामदेवताओं का अध्ययन किया जाता है। अवधी लोकसाहित्य में उपलब्ध ग्रामदेवताओं में से कतिपय देवता ऐसे हैं जो मुसलमानों द्वारा पूजे जाते हैं। कतिपय ऐसे हैं जो क्षत्रियों व ब्राह्मणों द्वारा पूजे जाते हैं तथा कतिपय ऐसे हैं जो धोबियों, कहारों, तेलियों अथवा अन्य जातियों द्वारा ही पूजे जाते हैं। अतः इस दृष्टि से भी अध्ययन सम्भव है। परन्तु इस दृष्टि से अध्ययन एकांगी, दुरूह तथा अवैज्ञानिक हो जाता है।

योनि-भेद की दृष्टि से ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण

योनि-भेद की दृष्टि से भी ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण सम्भव है। अवधी लोकसाहित्य में उपलब्ध ग्रामदेवताओं में से बहुत से ऐसे देवता हैं जो मात्र स्त्रियों द्वारा पूजे जाते हैं और कतिपय ऐसे हैं जो पुरुषों द्वारा पूजे जाते हैं। अतः 'स्त्रियों द्वारा पूजित ग्रामदेवता' और 'पुरुषों द्वारा पूजित ग्रामदेवता' - इन

दो वर्गों में अध्ययन किया जा सकता है। परन्तु वर्गीकरण में यह कठिनाई है कि बहुत से ऐसे देवता हैं जो स्त्री और पुरुष दोनों के द्वारा अथवा दोनों के सहयोग से पूजे जाते हैं। अतएव यह वर्गीकरण उचित नहीं है।

उपयोगिता की दृष्टि से ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण

उपयोगिता की दृष्टि से भी ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण किया जा सकता है। अवधी लोकसाहित्य में उपलब्ध देवताओं में से कतिपय देवता सदात्मा अथवा उपकारी कोटि के हैं तथा कतिपय ऐसे हैं जो दुरात्मा अथवा अउपकारी कोटि के हैं। अतएव सदात्मा कोटि के ग्रामदेवता और दुरात्मा कोटि के ग्रामदेवता इन दो रूपों में विभक्त कर अध्ययन किया जा सकता है, परन्तु अवधी लोकसाहित्य में कुछ ऐसे भी देवता उपलब्ध हैं जो न दुरात्मा हैं और न सदात्मा ही, अर्थात् समत्व दृष्टि के हैं। अतः उनका अध्ययन इस वर्गीकरण के परे हैं, अतएव यह वर्गीकरण भी उचित नहीं।

डा. सत्या गुप्ता ने देवताओं को वर्गीकृत करने के लिए निम्नलिखित प्रणाली अपनाई है।

पूजा-उपासना

देवी		देवता		वनस्पति	पंचतत्व	पशु	मिश्रित
शाश्वत	ग्राम	शाश्वत	ग्राम	पेड़-पौधे	जल-देवता	गाय	
दुर्गा	चंडीदेवी	शिव	हनुमान	पीपल	नदी-पूजा	गाय	चाम
सरस्वती	मनसादेवी	गणेश	भूमिया	नीम	गंगा	चामड़	कुँआ
पार्वती	बैमाता	राम	भैरो	आँवला	सूर्य-चंद्र	नीलकंठ	कलश
लक्ष्मी	शीतला	कृष्ण	चामुंडा	बेल	धरती	काला-	पुस्तक
आदि	सत्ती		जाहर	केला	अग्नि	कौआ	स्वस्तिनी
	सीकरी		बूढ़ेबाबा	तुलसी	तारागण	गरुड़	चिह्न
	चामुण्डा		आदि	बरगद	पर्वतपूजा	कछुआ	चक्रपूजा
	मसानी			आक	गोवर्धन	मोर	आदि
	वासन्ती				शालिग्राम		
	आदि						

परन्तु डॉ. सत्या गुप्ता के इस वर्गीकरण में कोई निश्चित आधार नहीं दृष्टिगत होता है। 'सूर्य-चन्द्र' इत्यादि देवता जो कि शाश्वत हैं, उन्हें 'पंचतत्व' में रखा गया है और फिर पंचतत्व में तो लगभग अधिकांश देवी-देवताओं की गणना की जा सकती है। अतः प्रस्तुत वर्गीकरण समीचीन नहीं प्रतीत होता है।

उपर्युक्त सभी वर्गीकरण पूर्णतः असमीचीन तो नहीं है, परन्तु इतना अवश्य है कि उनमें अवधी ग्रामदेवताओं की संगति यथा-स्थान नहीं बैठ पाती है और न ही इन वर्गीकरणों में वैज्ञानिकता ही आ पाती है। साथ ही अध्ययन भी दुरूह हो जाता है। अतएव उपर्युक्त वर्गीकरणों को भी ध्यान में रखते हुए एक अन्य मिला-जुला वर्गीकरण स्वरूप भेद की दृष्टि से प्रस्तुत है जिसमें ग्रामदेवताओं की संगति तो बैठ ही जाती है, साथ ही अध्ययन में सुविधा भी हो जाती है।

स्वरूप-भेद की दृष्टि से अवधी ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण

स्वरूप-भेद की दृष्टि से अवधी ग्रामदेवताओं का वर्गीकरण निम्नवत किया जा सकता है-

(1) **वैदिक देवता :** इस कोटि में उन देवताओं का उल्लेख होता है जिनकी पूजा वैदिक-काल से चली आ रही है। ये देवता काल क्रमानुसार परम्परित रूप से आज भी उसी रूप में या उससे कुछ हटकर या नया बाना पहनकर जनजीवन के मध्य पूजा-अर्चा के केन्द्र बने हुए हैं। इनमें सूर्य देवता, इन्द्र देवता, विष्णु देवता, रुद्र देवता, अग्नि देवता और चन्द्र देवता आदि हैं। इसके अतिरिक्त लक्ष्मी, पृथ्वी और नदी देव भी हैं। सूर्य, चन्द्र, इन्द्र या अग्निदेवता तो अपने वैदिक स्वरूप अथवा ताने-बाने में ही पूजित हैं, परन्तु विष्णु, रुद्र के स्वरूप में अन्तर आ गया है। अब रुद्र देवता 'शिव' रूप में तथा विष्णु की पूजा राम और कृष्ण के रूप में प्राप्त है। देवियों में लक्ष्मी विष्णु-प्रिया के रूप में पूजी जाती हैं। नदी की पूजा विभिन्न नदियों- गंगा, यमुना, सरस्वती आदि के नाम पर होने लगी और तथा पृथ्वी की पूजा अवधी लोकसमाज में 'भूमिया' या 'भुँइया रानी' के रूप में होने लगी है।

(2) **पौराणिक देवता :** इस कोटि में वे देवी-देवता रखे जा सकते हैं जो पुराण प्रसिद्ध हैं या पुराणों में चर्चित हैं। इस कोटि में अनेक देवी-देवता नवीन आ गये हैं और कतिपय वैदिक देवता नवीन बाना पहनकर आये हैं। इनमें गणेश, शिव, हनुमान, राम, कृष्ण तथा दुर्गा देवी, कालिका देवी, सन्तोषी देवी, गंगा-माता एवं गौरी अथवा पार्वती देवी आदि हैं। इनके अतिरिक्त सती देवी (अनुसूया देवी) और शीतला देवी को भी इसी कोटि में रखा जा सकता है।

(3) **ग्रामदेवता अथवा लोकदेवता :** इस कोटि में वे देवी-देवता आते हैं जिनकी पूजा सम्पूर्ण ग्राम, पल्लि या परगने में सम्पन्न होती है। ये वे देवता हैं जिनका उल्लेख वेदों अथवा पुराणों में नहीं है अथवा यह कहा जा सकता है कि जो लोक-कल्पना प्रसूत हैं और जो चिरकाल से पीढ़ी-दर-पीढ़ी परम्परा रूप में पूजा-ग्रहण करते चले आ रहे हैं। अवधी लोकसाहित्य में ऐसे ग्रामदेवताओं की कमी नहीं। ये सदात्मा और दुरात्मा अथवा उपकारी और अपकारी दोनों रूपों में हमारे सम्मुख समुपलब्ध होते हैं। इनमें डिवहार अथवा डीह का देवता, जाख-जाखिन (यक्ष-पूजा), पीर-फकीर अथवा गाजी मियाँ, काल भैरव, ब्रह्मदेव, राजाबलि तथा शीतला देवी, मरी माता, संकटादेवी, विन्ध्याचल देवी, भुँइयारानी, सती देवी तथा बाला देवी आदि हैं।

(4) **स्थानीय देवता :** इस कोटि में उन देवी-देवताओं को रखा जाता है जो स्थान-स्थान पर ग्रामीणों द्वारा कल्पित कर लिए गये हैं और जिनकी पूजा अधिक विस्तृत क्षेत्र तक प्रचलित नहीं है। यहाँ तक कि कुछ देवता ऐसे होते हैं कि जिनकी पूजा एक गाँव में तो होती है, परन्तु पड़ोस के ही गाँव में नहीं होती है। अवध में ये सहस्रों की संख्या में मिलते हैं। ये किसी वृक्ष पर, किसी चबूतरे पर, किसी टीले पर, सड़क पर या चौराहे पर, बगीचे में, घर अथवा गाँव के पीछे अथवा आगे कल्पित कर लिए जाते हैं। सम्पूर्ण अवध के 'स्थानीय देवताओं' का मात्र नाम अंकित किए जाने पर भी सैकड़ों पृष्ठ काले किये जा सकते हैं। इस लेख में विस्तार भय से कतिपय मुख्य-मुख्य देवी-देवताओं के विषय में ही अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। ये दुरात्मा अथवा सदात्मा दोनों कोटियों के हैं। इनमें योगीवीर, ननकूदास, पहलवान बीर, निमिहावीर, ढेलहा बाबा, चौकिया वीर, पिपरहा वीर तथा अवसान देवी, आसारानी, दशारानी, गरजबीबी आदि प्रमुख हैं।

(5) **वनस्पति देवता :** अवधी लोकमानस में पेड़-पौधे अथवा वनस्पतियों को भी देव-कल्पना से वंचित नहीं रखा गया है। अवधी जनता पेड़-पौधों अथवा वनस्पतियों में देवात्मा का निवास माना है, अतएव इन पेड़-पौधों की पूजा देव रूप में की जाती है। उनको कष्ट पहुँचाना, उनकी शाखाओं अथवा

पत्तियों को तोड़ना निषेध माना जाता है। इनमें पीपल का वृक्ष, बरगद का वृक्ष, आँवले का वृक्ष, कदली, बिल्व वृक्ष, आम्र वृक्ष, निम्ब वृक्ष, अशोक तथा तुलसी के बिरवे को देव-संज्ञा से अभिहित किया जाता है तथा उनकी देववत् ही पूजा, अर्चा की जाती है।

(6) **पशु-पक्षी एवं सरीसृप देवता :** अवधी जनमानस में पशु-पक्षियों के प्रति भी पूज्य-भावना दृष्टिगत होती है। अतएव इस कोटि में उन देवताओं को रखा जा सकता है जो अवधी लोकसाहित्य में पशु-पक्षी एवं सरीसृप रूप में पूजित तथा प्रतिष्ठित हैं। इनमें गौ, अश्व, हस्ती, वृषभ, मयूर, हंस और नागदेवता आदि प्रमुख हैं। ये भी उपकारी तथा अपकारी दोनों कोटियों के हैं।

(7) **प्रेत एवं पितर कोटीय देवता :** इस कोटि में वे देवता आते हैं जो प्रेत एवं पितर रूप में अवधी लोकसाहित्य में प्रतिष्ठित हैं। दूसरे शब्दों में इन्हें 'मृतात्माएँ' भी कहा जाता है। वे भी संख्यातीत हैं। उनमें प्रमुख ये हैं - भूत-प्रेत, चुड़ैल, शैतान, डायन, जिन्न, जिन्नाद, भैरों (बटुक भैरों, कालभैरों) तथा पूर्वज आदि। ये प्रेत-कोटियाँ देवता तो नहीं हैं, परन्तु अवधी जन भयाकुल होकर इन्हें देवता रूप में ही पूजता है। इन्हें अर्ध-देवता कहना अधिक उपयुक्त है।

(8) **अन्य देवता :** उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य देवता भी हैं। इनमें कुँआ, दीपक, ढोलक, सरोवर, देहली, चाक, पाहन, पर्वत, समाधि तथा शालिग्राम आदि हैं। उपर्युक्त सभी को देवी-देवता तो नहीं कहा जा सकता, परन्तु अवधी जनजीवन में इनके प्रति आस्था भाव दृष्टिगत होता है और समय-समय पर अवसरानुकूल इनकी पूजा की जाती है।

रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
इन्दिरा गांधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
गौरीगंज, सुलतानपुर (उ.प्र.)

अवधी कजरी गीतों का लालित्य

डॉ. सियाराम 'सिन्धु'

सृष्टि के आरम्भ से ही मानव प्रकृति की सुकुमारता और लावण्य पर मुग्ध हो तदनुरूप भावाभिव्यक्ति करता आ रहा है। लोकजीवन और प्रकृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रकृति के उन्मुक्त आँगन में लोक का स्वच्छन्द विचरण होता है और प्रत्येक ऋतु में वह स्वानुभूति को विभिन्न रूपों में प्रकट करता रहा है। ग्रीष्म ऋतु में सूर्य का प्रचण्ड आतप जहाँ सबको आकुल कर देता है, वहीं शिशिर की शीतल मन्द बयार सम्पूर्ण वातावरण में जड़ता तथा वसन्त ऋतु का सुधामयी चन्दा मानव की कल्पनाओं में माधुर्य बिखेर देता है। प्रकृति के इन्हीं मदमाते रूपों को देख कर स्त्री-पुरुषों के सुमन झूम उठते हैं और उनकी अभिव्यक्ति ऋतुगीतों के रूप में साकार हो उठती है। प्रकृति का कण-कण सहृदय कवि के प्राणों को रसप्लावित कर नये-नये गीतों का सृजन करवा लेता है। इन्हीं को ऋतुगीत तथा एतद् वर्णन को ऋतु-वर्णन कहा गया है।

ऋतु वर्णन की लिखित परम्परा वैदिक साहित्य में ऋतुओं और उसके महीनों की गणना तथा ऋतु विशेष के स्वामी के वर्णन से प्रारम्भ होती है। यह परम्परा लौकिक संस्कृत के आदिकवि वाल्मीकि, महाकवि कालिदास, माघ, भवभूति, भट्टि, शूद्रक आदि के साहित्य से गुजरती हुई प्राकृत, पालि एवं अपभ्रंश में सतत् गतिमान रही है। प्राकृत साहित्य (पालि, प्राकृत, अपभ्रंश) में जीवन के मनोरम और सुखद रूपों के प्रति विशेष आसक्ति, उन्मुक्त जीवन के घात-प्रतिघातों एवं अकुण्ठित यौन सम्बन्धों का चित्रण पारिवारिक पृष्ठभूमि में हुआ है।

हिन्दी-साहित्य के आदिकालीन ग्रंथों में भी ऋतु वर्णन की यह परम्परा दृष्टिगत होती है। यहाँ ऋतुओं का उद्दीपन विभाव में वर्णन हुआ है। भक्तिकालीन साहित्य की दोनों धाराओं (निर्गुण-सगुण) में भी ऋतु-वर्णन की यह परम्परा विद्यमान है। जायसी प्रभृति महाकवियों ने तो ऋतु-वर्णन की सफलता हेतु बारहमासा एवं छःमासा पद्धतियों का भी आश्रय लिया है। गोस्वामी तुलसीदास ने प्रकृति का चित्रण उद्दीपन विभाव में न करके उपदेशात्मकता को महत्त्व दिया है। रीतिकालीन साहित्य में शृंगार रस के उद्दीपन हेतु ऋतु-वर्णन किया गया है। ऐसे वर्णनों में विप्रलम्भ शृंगार पर विपरीत प्रभाव वर्णन, आलम्बनात्मकता, अलंकरण की प्रवृत्ति तथा हेलाभास के रूप में ऊहात्मक बाहुल्य चित्रण की प्रधानता है।

ऋतुगीतों की यह परम्परा लोकभाषाओं में अधिक मुखर हुई है। अवधी, ब्रज एवं भोजपुरी भाषी क्षेत्रों में ऋतुओं की मनोहारी सुषमा तथा मानव मन पर पड़नेवाले विविध प्रभावों का चित्रण ऋतुगीतों में प्राप्त है। उपलब्ध ऋतुगीतों को दो भागों-- वर्षा ऋतु के गीत तथा वसन्त ऋतु के गीत में वर्गीकृत किया जा सकता है। प्रथम प्रकार के गीतों में वर्षा ऋतु के विभिन्न उपादानों--बादलों का उमड़ना, गर्जना, विद्युत की चमक, वर्षा की झड़ी, झंझावातों का चलना, दादुर, मोर, पपीहा आदि की उल्लासमय ध्वनियों का बहुविध वर्णन किया गया है। इस ऋतु में गाये जानेवाले गीतों में कजरी, बारहमासा, छःमासा, चौमासा,

मल्हार, झूला, हिण्डोला, सावन, चौहट, आल्हा, चाँचर और रोपाई गीतों की गणना की जाती है। दूसरे प्रकार के गीत वसन्त ऋतु में गाये जाते हैं, जिनमें कोयल की कूक, वृक्षों में पुष्पागम, होली का उल्लास, कामाधिक्य आदि का विस्तृत वर्णन रहता है। होली, धमार, कबीर, जोगिया, फाग, चैता या चैती आदि वसन्तकालीन ऋतुगीत हैं।

ऋतुगीतों ही नहीं, वरन् समस्त लोकगीतों में 'कजरी' गीतों का विशेष स्थान है। लोकप्रियता एवं चारुता के आधार पर 'कजरी' गीतों को वर्षाकालीन गीतों की 'रानी' कहा जा सकता है। वर्षाऋतु प्रेमी युगल की काम भावनाओं को उद्दीप्त करती है। बादलों का गर्जन, बिजली की चमक, नाना प्रकार के कीट-पतंगों का बढ़ना, नदी-नालों-तालाबों का वर्षा जल से उमड़ना, दादुर-मोर-पपीहा की टेर जहाँ संयोगी जनों को मिलन हेतु उत्प्रेरित करते हैं, वहीं ये प्रोषितपतिका की विरह वेदना को सहस्रगुणा बढ़ा देते हैं। ऐसे ही मनोरम वातावरण में 'कजरी' गीतों का गायन किया जाता है। ये गीत कनउजी, बुन्देली, बघेली, अवधी और भोजपुरी भाषी विस्तृत भू-भाग में गाये जाते हैं।

सावन का मनभावन उत्तम महीना हो, बादलों की कजरारी घटाएँ उमड़-घुमड़ रही हों, वायु की हल्की झकोरों के साथ वर्षा की फुहारें पड़ रही हों और अवध प्रान्त का कोई गाँव हो, वहाँ माटी की सोंधी महक के साथ कजरी गीतों के बोल सुनायी पड़ ही जाते हैं। झूले पर पेंग मारती हुई रमणियाँ जब समवेत स्वर में लयबद्ध ढंग से कजरी गायन करती हैं, तो उस सुमधुर ध्वनि के श्रवण मात्र से ही आबाल-वृद्ध रसमग्न हो जाते हैं। मन मतवाला हो जाता है, होंठ स्वयमेव थिरक उठते हैं और "झुलवा परे कदम की डारी झूलैं क्रिस्न मुरारी ना" के बोल फूट पड़ते हैं। जिस प्रकार फागों का गायन फाल्गुन मास पर्यन्त किया जाता है, उसी प्रकार कजरी गीतों का गायन नागपंचमी से लेकर हरितालिका तीज तक किया जाता है। ये गीत मूलतः स्त्रियों द्वारा गाये जाते हैं किन्तु कुछेक स्थानों पर पुरुषों द्वारा भी इनका गायन किया जाता है।

कजरी गीतों के उद्भव एवं इनके नामकरण को लेकर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। तत्सम्बन्धी विभिन्न मत-मतान्तरों के बीच कजरी गीतों ने निरन्तर विकास किया है। यहाँ कजरी गीतों से सम्बन्धित कुछ विचार प्रस्तुत करना समीचीन होगा-

1. काले-काले भूधराकार मेघों से आच्छादित ऋतु में गाये जाने के कारण इन्हें 'कजरी' कहा गया है। इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार हुई- "कुधातु-कुत्सित जलं, यस्मात् शुभ्रमपि जल संयोगात् स्वर्णत्वं नयतीति 'कज्जलं', 'काजल' इति। कज्जली त्र कु. जल. क्विव्. अच्. ङीष्।"
2. वर्षा ऋतु में सर्वत्र पृथ्वी की हरीतिमा श्यामवर्णीय होकर आँखों के लिए एक नयनाभिराम दृश्य उपस्थित करती है। अतः ऐसे समय गाये जाने के कारण ये गीत 'कजरी' कहलाये।
3. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'कजरी' गायन परम्परा को मध्यभारत के किसी धर्म परायण एवं प्रजावत्सल राजा दादूँराय से जोड़ते हैं। उनके अनुसार, राजा दादूँराय की मृत्यु पर वहाँ की स्त्रियों ने अपने दुःख को प्रकट करने के लिए एक नये तर्ज के गीतों का आविष्कार किया जो 'कजरी' कहलाये। यहाँ यह ध्यातव्य है कि कजरी गीतों का वर्ण्य विषय मृत्यु-सम्बन्धी दुःख नहीं अपितु श्रृंगार है। इससे भारतेन्दु जी की दादूँराय सम्बन्धी कहानी की सत्यता संदिग्ध प्रतीत होती है।
4. कजरी गीतों के सम्बन्ध में भारतेन्दु जी ने एक अन्य मत भी प्रस्तुत किया है, जिसका समर्थन अब्राहम गियर्सन ने भी किया है। जिसके अनुसार सावन महीने की शुक्ल पक्ष तृतीया से भादौं की शुक्ल पक्षीय तृतीय अर्थात् हरियाली तीज से लेकर हरितालिका तीज तक इनका गायन किया जाता है। इसीलिए इन्हें 'कजरी' कहा गया।

   'कजरी' गीतों के नामकरण सम्बन्धी उक्त विचार के सत्य होने की सम्भावना अधिक है क्योंकि इन्हीं तिथियों के मध्य 'कजरी तीज' (भाद्रपद कृष्ण तीज) का पर्व भी आता है। इस पर्व पर कजरी

गीतों का गायन अपेक्षाकृत अधिक होता है। अतः इसी पर्व विशेष के आधार पर इन्हें 'कजरी' या 'कजली' कहा गया होगा, यथा— होली या फाग के अवसर पर 'फाग' या 'होली' गीत गाये जाते हैं।

5. मिर्जापुर और उसके आस-पास के क्षेत्रों में प्रचलित एक जनश्रुति के अनुसार, 'कजरी' गीतों के गायन का आरम्भ मिर्जापुर से हुआ क्योंकि विन्ध्याचल स्थित विन्ध्यवासिनी का एक नाम कज्जला देवी है। इस क्षेत्र में आज भी यह परम्परा विद्यमान है कि जब भी कोई कजरी लेखक 'कजरी' गीतों का सृजन करता है तो वह अपनी प्रथम कजरी माँ कज्जला देवी अर्थात् विन्ध्यवासिनी को समर्पित करता है। इस क्षेत्र के हिन्दू-मुसलमान कजरी लेखक इस परम्परा का सम्यक् निर्वाह करते हैं।
6. भविष्य-पुराण के उत्तर पर्व के बीसवें अध्याय में कजरी पर्व और हरिकाली व्रत के सम्बन्ध में एक दृष्टान्त दिया गया है, जो इस प्रकार है— "एक बार युधिष्ठिर के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने कहा कि एक बार भगवान शिव ने विष्णु आदि देवताओं की उपस्थिति में नील-कमल सी कान्तिवाली अपनी पत्नी हरिकाली को परिहास में काजल सी काली कह दिया। इस परिहास को हरिकाली ने अपना अपमान समझकर क्षुभित हो अपने शरीर को भस्म कर दिया और हिमाचल के घर में पुनर्जन्म धारण किया।" इस कथा से प्रभावित हो कजरी पर्व और कुछ गीतों में स्वर परिवर्तन करके 'कजरी' के रूप में नये गीतों को जन्म दिया।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 'कजरी' या 'कजली' संस्कृत के 'कज्जल' शब्द से निष्पन्न है। सम्बन्ध भेद से 'कज्जल' का अर्थ विन्ध्याचल स्थित विन्ध्यवासिनी या कज्जला देवी, हरिकाली देवी, कजरी पर्व-उत्सव या त्योहार, कजरी रागिनी-लय या धुन तथा वर्षाकालीन उमड़ती-घुमड़ती काली-काली घटाएँ हैं, किन्तु विषयवस्तु की दृष्टि से 'कजरी' वर्षाऋतु में गाया जानेवाला एक लोकगीत है। इसमें शृंगार वर्णन का आधिक्य रहता है। पारिवारिक पृष्ठभूमि में सृजित इन गीतों में युगल दम्पति अथवा युगल प्रेमियों के पारस्परिक आचरण एवं उनके अवस्थाजन्य भावों की अनुपम छटा प्राप्त होती है, जो सामान्यतः लोकगीतों के रूप में आरम्भ हुए और अभी तक उसी पुरातन रूप में विद्यमान है। ये गीत नागपंचमी से लेकर हरितालिका तीज तक गाये जाते हैं।

'कजरी' गीतों का आरम्भ कब से हुआ? यह कहना अत्यन्त दुष्कर है। श्रुति परम्परा और भविष्य पुराण को प्रमाण रूप में स्वीकार करने से इनके गायन की परम्परा भगवती पार्वती से सम्बद्ध हो अलौकिकता के साथ अगम्य हो जाती है। उपलब्ध लिखित परम्परा के रूप में इनका गायन बारहवीं सदी के पूर्व से माना जा सकता है क्योंकि परमाल रासो (आल्हखण्ड) में कजरी पर्व, खेल एवं गीत आदि का वर्णन है किन्तु परमाल रासो के विवरण से तात्कालिक कजरी के रूप एवं शिल्प का ज्ञान नहीं होता है। आज से लगभग 200 वर्ष पूर्व भोजपुरी की सन्त कवयित्री लक्ष्मी सखी की बानियों में कजरी गीत भी उपलब्ध हैं। भारतेन्दु युग में पं. बालकृष्ण भट्ट, पं. मदनमोहन मालवीय, श्री अम्बिका दत्त व्यास आदि ने 'कजरी' की धुन में गीत एवं कविताएँ लिखीं। सत्य और तथ्य जो भी हो, आज कजरी गीतों को वर्षाकालीन ऋतुगीतों में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। हिन्दी प्रान्त में इनकी प्रसिद्धि एवं लोकप्रियता सर्वत्र व्याप्त है।

वस्तु-शिल्पगत वैविध्य के आधार पर कजरी गीतों को साहित्यिक कोटि में रखा जा सकता है। गायन के वातावरण के आधार पर इनकी दो श्रेणियाँ बनायी जा सकती हैं। पहली श्रेणी ऐसे गीतों की है, जो लोकरंजन या लोकआनन्द के लिए गाये जाते हैं तथा दूसरी श्रेणी के गीत कजरी प्रतियोगिताओं के निमित्त रचे गये हैं। यदि गायक वर्ग को केन्द्र में रखकर इनका विभाजन किया जाय तो भी इनके

दो वर्ग बनाये जा सकते हैं-- एक, ऐसे गीत जो स्त्रियों द्वारा समवेत स्वर में गाये जाते हैं, दो, ऐसे गीत जिनका गायन पुरुषों द्वारा एकल या सामूहिक रूप में किया जाता है। चूंकि 'लय' लोकगीतों की आत्मा है। इसलिए 'लय' के आधार पर इन्हें चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। 'ठहकी लय' मन्द स्वर और द्रुत लय में आरम्भ हो अन्त में तीव्र स्वर और विलम्बित लय तक पहुँच जाती है, चरण अपेक्षाकृत लम्बे होते हैं। 'ठुनठुनियाँ लय' के गीत तुक की अनिवार्यता से दूर, आकर्षक आरोह-अवरोह वाले स्वरों में कमर तक झुककर गोलाकार चक्कर लगाते हुए चुटकी बजाकर गाये जाते हैं। 'चलती लय' के गीत लघु आकारीय चरणों में आबद्ध होते हैं। 'रामाहरि लय' के गीत अधिकांशतः शृंगारिक होते हैं। इनके प्रत्येक चरण के आरम्भ में 'रामा' या 'हो रामा' तथा अन्त में 'ए हरी' या 'ए हारी' लगाया जाता है। अवधी के पारम्परिक कजरी गीत इसी लय में प्राप्त होते हैं।

विभिन्न संगीत घरानों और बिरहा गीतों के अखाड़ों के समान कजरी गायकों के बड़े-बड़े संगठित दल हैं। इन्हें 'आखड़े' कहा जाता है। मिर्जापुर जनपद में कजरी की कई 'आखड़े' सक्रिय हैं। कजरी प्रतियोगिताओं को 'दंगल' कहा जाता है। बिरहा गीतों की भाँति इन दंगलों में विशाल जन-समुदाय के समक्ष प्रश्नोत्तर रूप में या क्रमशः, सम्पूर्ण रात्रि कजरी गीतों का गायन किया जाता है। मिर्जापुर जनपद की प्रसिद्ध आखड़ों में शिवदास, जहाँगीर, वफ्फत और मंगर आदि का प्रसिद्ध स्थान है। मिर्जापुरी कजरी की लोकप्रियता एवं प्रसिद्धि के कारण ही कहा जाता है कि -

लीला राम नगर की न्यारी। कजरी मिर्जापुर सरनाम।।

अर्थात् जिस प्रकार बनारस स्थित रामनगर की रामलीला प्रसिद्ध है, उसी तरह मिर्जापुर की कजरी।

कजरी गीत विषय वैविध्य से परिपूर्ण हैं। इनमें शृंगार और मांसल प्रेम का विशद् चित्रण है। शृंगार के उभय पक्ष का भावात्मक वर्णन एवं उसके भाव, विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों की उपलब्धता कजरी गीतों को विशिष्ट बना देते हैं। एक कजरी गीत में नायक द्वारा नायिका के साजो-शृंगार की प्रशंसा करते हुए समागम हेतु उससे स्वयं आकर मिलने की प्रार्थना की गयी है -

अरे रामा बरसत रिमझिम पनिया चली तो आवो जनिया ए हारी।।
तुम्हरे सिर के बार हैं कारे बिच मोतियन माँग सँवारे हो रामा।
अरे रामा चोटी मँ लागि झुनझुनिया चली तो आवो जनिया ए हारी।।
कड़ा-छड़ा पाजेब बिराजै बिछुवन कै झनकारी हो रामा।
अरे रामा कमर परी करधनिया चली तो आवो जनिया ए हारी।।
गोरी पहिरे बनारस कै सारी जिहि मा लाल किनारी हो रामा।
अरे रामा चोलिया कसे मुलतानी चली तो आवो जनिया ए हारी।।
मानउ मानउ हमरी बानी राम सबद बड़े सैलानी हो रामा।
अरे रामा सासू कै बनि पटरनिया चली तो आवो जनिया ए हारी।।

कुछ गीतों में नायिका द्वारा मेंहदी लाने के लिए नायक से आग्रह करना तथा ननद से उसे पिसवा कर प्रियतम से ही लगा देने का अनुरोध किया गया है-

पिया मेंहदी मँगाय दे मोतीझील ते, जाइके सायकील ते ना।।
पिया मेंहदी लइ आऊ, छोटकी ननदी ते पिसाऊ।
हमरे हथवा मा लगाऊ काँटा कील ते, जाइके सायकील ते ना।।
ई हवै सावनी बहार, मानौ बतिया हमार।
कउनउ फायदा ना निकरी दलील ते, जाइके सायकील ते ना।।

पकरि लियै बागवान, चाहै हुइ जावइ चालान।
तोहिका लड़िके छोंड़ाय लेब अपील ते, जाइके सायकिल ते ना।।
मन मा लागत बाटे साध, पूरी करि दे पिया आज।
जोहपा सब कुछ निछावर कइली दील ते, जाइके सायकील ते ना।।

भारतीय परम्परानुसार पत्नी अपने पति को भोजन कराने के पश्चात् ही भोजन करती है। वह पति की रुचि के अनुसार नाना प्रकार के व्यंजनों को तैयार करती है। एक कजरी गीत में पत्नी द्वारा खाना परोसकर पति से भोजन करने, तत्पश्चात् पान का बीड़ा खाने एवं शय्या पर सोने का निवेदन किया गया है-

अरे रामा हीरा जड़ी सन्दूक मोतियन कइ माला ए हारी।
कि अरे रामा सोने के थारी म जेवना परोसेउँ हो रामा।
अरे रामा जेंवौ ननदी जी के भइया परूँ तुम्हरे पइयाँ ए हारी।।
कि अरे रामा सोने के गेंडुवा गंगाजल पानी हो रामा।
अरे रामा घूँटौ ननदी जी के भइया परूँ तुम्हरे पइयाँ ए हारी।।
कि अरे रामा पान पचीसी कि बिरिया लगायेउँ हो रामा।
अरे रामा चाबउ ननदी जी के भइया परूँ तुम्हरे पइयाँ ए हारी।।
कि अरे रामा फूलनेवारी कि सेजिया लगायेउँ हो रामा।
अरे रामा सोऊ ननदी जी के भइया परूँ तुम्हरे पइयाँ ए हारी।।

दाम्पत्य जीवन की धुरी है - परस्पर अगाध विश्वास, एक-दूसरे के प्रति चारित्रिक ईमानदारी, किन्तु यदि पति में इनका अभाव हो तो पत्नी को अकल्पनीय दुःख होना स्वाभाविक है। कोई पत्नी घर के दरवाजे खोलकर पति को खिलाने के लिए भोजन परोसकर उसकी प्रतीक्षा कर रही है, सम्पूर्ण रात्रि ऐसे ही बीत गई, परस्त्रीगामी पति के प्रातःकाल वापस आने पर उपालम्भ स्वाभाविक ही है-

खिरकी खुली रही सारी रतिया, रतिया कहाँ बितायउ ना।।
सोने के थारी मा ज्योंना परोसेउँ, जेंवना परा रहा सारी रतिया। रतिया कहाँ...
झाँझरे गेंडुवा गंगाजल पानी, पानी धरा रहा सारी रतिया। रतिया कहाँ...
फूलन ते चुनि-चुनि सेजिया लगायेउँ, सेजिया सूनी रही सारी रतिया। रतिया...

गृहस्थी की गाड़ी केवल प्रेम एवं शृंगार से ही नहीं चलती। इसे चलाने के लिए धनार्जन अति आवश्यक है। इसीलिए किसान नायक कृषि-कार्य समाप्त हो जाने पर पत्नी से विदेश जाने का निवेदन करता है किन्तु पत्नी हठात् मना कर देती है। नायक के बारम्बार आग्रह करने पर वह उससे अपने भाई को बुलवाने और स्वयं मायके जाने की धमकी देती है। बेचारा नायक उसे आभूषण बनवाने का प्रलोभन देता है किन्तु पत्नी द्वारा विदेश से सौतन लाने की आशंका प्रकट करने से स्त्रियों की मध्यकालीन दुर्दशा एवं तद्‌युगीन समाज में बहुपत्नी प्रथा के प्रचलन का ज्ञान होता है। सम्बन्धित गीत इस प्रकार है-

धनि हो खोला ना केंवरिया हम बीदेसवा जइबै ना।
जउ मोरे सइयाँ तुम जइहौ बीदेसवा तनी तू अतना कर देउ ना।
कि हमरे भइया का बुलवाय देउ हम नइहरवा रहबै ना।।
गये बिनु बिदेसवा ए धनिया, कइसे होई गुजारा ए रानी।
रुपिया कमाके अउबै तोहका झुलनी नीकि गढ़उबै, हम बीदेसवा....

जइहौ तू बिदेसवा कउनिउ सवतिनिया लइ अइहौ ए सइयाँ।
अब हम कुछ ना सुनबै बतिया हमरा भइया का बुलवाय देउ, हम नइहरवा.....
हम तउ तोहरे खातिर जनिया, जाइ बिदेसवा ओ धनिया।
अब हम घरहीं रहबै ना, ना तू जइहौ नइहरवा ना हम बिदेसवा जइबै ना।।

सम्प्रति सभ्य कहलाने एवं 'एडवांस' दिखने की ललक अधिकांश युवाओं में दिखलाई पड़ती है। नगरों में पाश्चात्य जीवनशैली का अन्धानुकरण, दूरदर्शन एवं फिल्मों का दुष्प्रभाव, भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति उपेक्षा भाव के कारण हमारा सांस्कृतिक क्षरण होता जा रहा है। अर्द्धनग्नता के कारण छेड़छाड़ एवं सामूहिक बलात्कार की बर्बर घटनाओं में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। ऐसे अराजक माहौल में समाज का यह प्रथम कर्तव्य है कि वह वर्तमान की समीक्षा कर आवश्यक बुराइयों के निवारण एवं श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों की ओर उन्मुख होने का प्रयत्न करे। एक कजरी गीत में प्रेमिका के रूप एवं शृंगार को देखकर प्रेमी द्वारा उसे बाजार आदि जाने का वर्णन किया गया है-

जान मोरे तोहरे गाल कइ गोदनवा ना.....2।।
निकरैं देखि-देखि छैलन के परनवा ना।।
यक तउ गोदना जान मारइ, दूजे कइले तू सिंगार।
ओहपे झोरत बाटे सावनी पवनवा ना।। जाने मारे..... ।।
गोदना जिया ललचावै, रूप हलचल मचावै।
पागल कइले बाटे उमड़ल जोबनवा ना।। जान मारे...... ।।
गोदना गाल प बा करिया, लागी तोहरे ना नजरिया।
खिलल रही तोहरे रूप कइ सुमनवा ना।। जान मारे.... ।।
घूमै जइहा मत बजार, दीहैं लोगवा निहार।
लूटि लइहैं तोहरे रूप कइ खजनवा ना।। जान मारे..... ।।

लोक में अपत्यता को मृत्यु से भी अधिक वेदनापूर्ण माना गया है क्योंकि मातृत्व ही नारी-जीवन की पूर्णता है। नौ महीने तक गर्भधारण करने के उपरान्त जब माँ पुत्र को जन्म देती है तो उसका आनन्द सातवें आसमान पर हेता है। अब वह सासु, ननद एवं पति की अत्यन्त दुलारी हो जाती है। सन्तति की कल्याण-भावना से परिपूरित उसकी सम्पूर्ण दिनचर्या पुत्र के आस-पास घूमने लगती है। सन्तान के पालन एवं गृहस्थी के गुरुतर भार को जब वह एकला वहन करने में स्वयं को असमर्थ पाती है तो पति से सहयोग करने की अपेक्षा स्वाभाविक है। ऐसी भावनाओं एवं आकांक्षाओं को भी कजरी गीतों में स्थान मिला है-

पिया घूमि घूमि लरिका खेलावन करिहा, घुनघुना बजावल करिहा ना।।
लरिका गोद लइ खेलइहा, जनि तनिको अकुतइहा,
रोवै लागै त हमका बुलावल करिहा।। घुनघुना..... ।।
प्रेम पलना कइ डोरी, पकरि गइहा तू लोरी,
खुदै रसे-रसे बेनिया डोलावल करिहा। घुनघुना...... ।।
सुख सरिता के तीरे, प्रीति करिहा घनेरे,
नेह नयनवा के चादर बिछावल करिहा। घुनघुना..... ।।
दइकै दिल का दीदार, तनी करिहा सहार,
मन मन्दिर मा लाल रिझावल करिहा।। घुनघुना..... ।।

संयोग शृंगार की भाँति विप्रलम्भ अर्थात् वियोग शृंगार का बहुविध वर्णन कजरी गीतों में उपलब्ध है। इनमें प्रोषितपतिका नायिका की विरह विदग्ध दुर्दशा का अत्यन्त विदारक वर्णन है। प्रियतम के प्रवास के कारण जवानी का जोर मारना, मिलन सम्भव न होने के कारण विरहाग्नि का बढ़ना, विरहाग्नि बुझाने में मेघ की बूँदों की असफलता आदि का चित्रण इन गीतों का वैविध्य है--

अरे रामा मारै लहरिया जवानी दरद के जानी ए हारी।
लागी बिरहिन के बिरह अगिनिया, ना बुझाय पाई सावन के पनिया हो रामा।
अरे रामा माटी भइल जिनगानी, दरद के जानी ए हारी।।
पिया जायके परदेसवा मा छाये, लाय गौनु हमै बिरही बनाये हो रामा।
अरे रामा तरसै चुनरिया धानी, दरद के जानी ए हारी।।
गाँव की गोरिया झूलै झुलनवा, मारें पेंगिया सबके सजनवा हो रामा।
अरे रामा कइसे क जियरा मानी, दरद के जानी ए हारी।।
पिया के जोहत पियरि भई देहिया, जानइ निरमोही ना सनेहिया हो रामा।
अरे रामा माँगइ मरुथल पानी, दरद के जानी ए हारी।।

प्रिय-मिलन का अनुपम माह सावन आ गया, रिमझिम-रिमझिम मेघ बरसने लगा किन्तु अभी तक न प्रियतम आये और न उनका कोई सन्देश। ऐसे में विरहाकुल प्रियतमा विभिन्न आशंकाओं से ग्रस्त हो जाती है-

रिमझिम बरसेला सावनवा कहँवा गइले सजनवा ना।।
पिया चलि गइले परदेसवा, कतहूँ भेज ना सन्देसवा।
निसिदिन बरसेला सावनवा।। कहँवा....।
देखि के सीना ऊपर चोली, लोगवा बोलै हमको बोली।
रतिया देखी तोहरो सपनवा।। कहँवा.....।
फुलवा बगिया बीच फुलाइल, कहँवा भँवरा गइल पराइल।
बैरी बाउर बनल मगनवा।। कहँवा....।
बरसै सावन अजब फुहार, घरवा अब मन करै न यार।
लोगवा मारैं अब हो बेहनवा।। कहँवा.....।
कइसे छतिया मोरि जुड़ाई, लेता सेज पा बैठाई।
सइयाँ पूजत हमरिउ अरमनवा।। कहँवा.....।

बारहमासा पद्धति द्वारा वियोग वर्णन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। बारहमासा का अभिप्राय है- बारह महीने। इनमें प्रत्येक महीने का नाम लेकर तद्तद् महीनों में होनेवाले प्राकृतिक परिवर्तन तथा मानव मन पर पड़नेवाले प्रभावों का वर्णन रहता है। ऐसे गीतों में बुद्धि तत्त्व की अपेक्षा रागात्मिका वृत्ति अधिक प्रस्फुटित हुई है। कजरी गीतों में भी बारहमासा पद्धति प्रयोग की गयी है। ऐसे गीतों का आरम्भ आषाढ़ तथा समापन ज्येष्ठ मास से हुआ है। एक गीत अवलोकनार्थ प्रस्तुत है-

छतवा तनि दे बलम परदेसिया, छायी आवै कारी बदरिया ना।।
असाढ़ मास दइवा घन गरजै, रिमझिम बरसै सवनवा ना।।
भादवँ मास बिजुरिया चमकै, हरि कै देखेउँ सपनवा ना।
क्वार मास मोहे गरम सतावै, कातिक जाब भवनवा ना।।

अगहन मास पिया घर नाहीं, सब सखि चलीं गवनवा ना।
पूस मास जाड़ा जोर सतावै, माघ म काँपै करेजवा ना।।
फागुन मास पिया नहिं आये, केहि संघे खेलूँ फगुनवा ना।
चइत मास बन टेसू फुलाने, बइसखवा मा लिखें अवनवा ना।।
जेठ मास बहै धुंधकारी, सिर ते चुवइ पसिनवा ना।।

शृंगार वर्णन के साथ-साथ पारिवारिक जीवन के अनूठे चित्र भी कजरी गीतों में विद्यमान हैं। लोकगीत ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण लोकसाहित्य में ननद-भौजाई के मध्य सामरस्यपूर्ण सम्बन्ध न होने का ही वर्णन उपलब्ध होता है। कारण कि भाई-बहन एक ही माता-पिता की सन्तानें हैं, भाभी के आने पर भाई के प्रेम पर उसका एकाधिकार समाप्त हो जाता है, अतः उनमें असूयाभाव भर जाता है। इसका लोकगीतों में व्यापक वर्णन है, किन्तु कजरी गीतों में इस वैमनस्य का अभाव है। पर्व एवं त्योहारोंवाले महीने सावन में ननद-भौजाई साथ-साथ झूला झूलते हुए कजरी गायन करती हैं, इसलिए ये गीत ननद-भाभी के सौहार्द से भरपूर हैं। सावन की काली-काली घटाओं के उमड़ आने और मनचले युवकों द्वारा ननद को अकेला देख छेड़खानी करने की आशंकाग्रस्त भौजाई का अपनी ननद को 'कजरिया' खेलने जाने से मना करना एवं ननद का निडरतापूर्वक सामना करने का वर्णन प्रस्तुत गीत में द्रष्टव्य है-

कइसे खेलै जइबू सावन मा कजरिया, बदरिया घिरि आई ननदी।
तू तउ जात हौ अकेली, कोऊ संग ना सहेली।
छइला रोंकि लेहैं तोहरी डगरिया।। बदरिया....... ।
अतना करतू गुमान, होइकै चलतू उतान।
तोहरे नैना बाटे जुलुमी कटरिया।। बदरिया..... ।
भउजी बोलतू काहे बोली, जियरा लागत जइसे गोली।
कइसे रोंकि लेहैं हमरी डगरिया, बदरिया का बिगारी भउजी।
छइला डामल फाँसी चढ़िहैं, गुंडा गोली खायके मरिहैं।
कतनेउ जायके पिसिहैं जेहल चकरिया, बदरिया का बिगारी भउजी।।

भारतवर्ष में धर्म किसी न किसी रूप में प्रत्येक काल में वर्णन का विषय बनता रहा है। हर समय साहित्य एवं लोक-साहित्य के रूप में विभिन्न धार्मिक क्रियाकलापों एवं महत्वपूर्ण चरित्रों का गायन होता रहा है। शिव, कृष्ण एवं राम ऐसे ही धार्मिक चरित्र हैं, जो भारतीय मनीषा एवं लोक प्रवृत्ति का मार्गदर्शन करते रहे हैं। राम की चरित्रगत उदारता के वशीभूत हो प्रचुर मात्रा में लोकगीतों की सर्जना हुई है। जहां एक ओर सम्पूर्ण रामकथा का एक ही लोकगीत में वर्णन हुआ है, वहीं दूसरी ओर सम्पूर्ण रामकथा पर अनगिनत लोकगीत भी लिखे गये हैं। प्रायः समस्त प्रकार के लोकगीतों में रामकथा उपलब्ध है। कजरी गीतों में राम की विभिन्न लीलाओं में रामजन्म, बालवर्णन, सीता-स्वयंवर, राम-वनगमन, लक्ष्मण द्वारा कुटी निर्माण, पंचवटी वास, राम-लक्ष्मण सूर्पणखा संवाद, सीता-हरण तथा युद्ध-सम्बन्धी प्रमुख आख्यानों को प्रमुखता दी गयी है।

राम-जन्म एवं बाललीला सम्बन्धी गीतों में राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न की विभिन्न चेष्टाओं, उनका ठुमुक-ठुमुक कर चलना, कमर की करधनी, पाँव की पैंजनी, गले के हार आदि की रुनझुन ध्वनि जिन्हें सुनकर एवं देखकर राजा दशरथ एवं कौशल्यादि माताओं के हर्षित होने का बहुविध वर्णन प्राप्त होता है। यहाँ अवलोकनार्थ एक गीत प्रस्तुत है-

हिलि-मिलि खेलत रहल भवनवा नृप के चारि ललनवा ना।।

ठुमुकि चलत कबहूँ, कबहूँ रुकि जावत करत करमवा ना।
पउवाँ धरत गिरत अँगनवा नृप के चारि ललनवा ना।।
कमर करधनी कान मा कुंडल पाँव पैंजनिया ना।
सोभे हार गले समनव चमकैं जड़े रतनवा ना।।
मिसिरी माखन पयपान करावैं सुलावैं झुलनवा ना।
गावैं मंगल गीत सवनवा तीनिउ रानी भवनवा ना।।
लखि रानी राजा मन भावैं बिहँसे मनवा ना।
भरिके गोदी मा ललनवा, चूमत साँझ बिहनवा ना।।

सीता-स्वयंवर से सम्बन्धित गीतों में सीता के शृंगार, स्वयंवर-रचना, दूर देश के राजाओं और विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण का जनकपुर पहुँचना, किसी भी राजा द्वारा प्रतिज्ञा पूर्ण न कर पाना, राम द्वारा धनुष-भंग, राजा जनक आदि की प्रसन्नता, दूल्हा राम एवं दुलहिन सीता के अनुपम सौन्दर्य का वर्णन है -

सिया बनिकै दुलहिन सखी साथ चली सभा बीच आजु चली ना।।
राजा जनक सुयंबर रचाये, दूरि-दूरि ते भूपति आये।
दोउ बालक मुनी के साथ चले सभा बीच आजु चली ना।।
बीर बली बहुबिधि अजमाये, हिलत डुलत नहीं बहुत हिलाये।
हरि टूरि धनुहा उठाय चले, सभा बीच आजु चली ना।।
राजा दसरथ सुनि हरसाये, सजि धजि कइ पुरबासी आये।
दूनउ भइयन क लइकै बरात चली, सभा बीच आजु चली ना।।
रामचन्द्र जी दुलहा बने हैं अनुज लखन भी साथ चले हैं।
लइकै सुन्नरि सिया जैमाल चलीं, सभी बीच आजु चली ना।।

राम-जन्म, सीता-स्वयंवर के समान ही रामवनवास और सीताहरण लीलाओं को लोक में अधिक प्रसिद्धि मिली है। उत्तर भारत में इन चारों लीलाओं का मन्थन बहुतायत से होता है। राम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ पूर्ण होने के पश्चात् उनके वनगमन की द्रावक सूचना, माँ-पिता-परिजनों एवं अवधवासियों का शोकाकुल होना, दशरथ का परलोक गमन जैसी घटनाओं का वर्णन रामवनगमन सम्बन्धी कजरी गीतों में प्राप्त होता है। वनवासी राम द्वारा विभिन्न राक्षसों का संहार, सूर्पणखा प्रसंग, सीताहरण आदि लीलाओं का गायन सीताहरण सम्बन्धी गीतों में हुआ है। रावण द्वारा सीताहरण करने पर जटायु का रावण से युद्ध एवं घाऽल होना, राम से सीताहरण की सूचना देकर प्राण त्यागने आदि से सम्बन्धित एक गीत अवलोकनार्थ प्रस्तुत है-

सीता हरे निसाचर जाई घेरि लीन्ह जटाई ना।।
किनकी बेटी किनकी तुम्ह नारी कउन हरे लिहे जाई ना।
जनक की बेटी रामजी की नारी रावन हरे लिहे जाई ना।।
चोंचन मारि महाजुद्दिध कीन्हा रथ ते लीन्ह छोंड़ाई ना।
अगिनि बान जउ छाँड़िसि निसाचर पंख जरि जुरि जाई ना।।
अंख पंख तउ जरि जुरि जाई गिरा धरनि मुरझाई ना।
तलफै जस जलु हीन मछरिया राम-राम गोहराई ना।।

राम के अतिरिक्त लोक-साहित्य में कृष्णपरक आख्यानों का विशद् चित्रण हुआ है। संस्कृत में

जिस माधुर्यमयी रागात्मक कृष्णभक्ति काव्यधारा को जयदेव ने आरंभ किया, वह कालान्तर में मैथिलि कोकिल विद्यापति और हिन्दी के लोक-साहित्य में विस्तार से दिखलाई पड़ती है। सूरदास ने भक्ति-भावना से संयुक्त कृष्णभक्ति का गायन किया, वह निस्सन्देह तद्युगीन लोकगीतों से अनुप्रेरित है। लोकगीतें की श्रुत परम्परा के कारण उसमें प्रत्यक्ष कोई सूत्र भले ही उपलब्ध न हो, किन्तु सूर के पूर्व भी कृष्ण भक्ति के गीत ब्रज प्रान्त में घर-घर प्रचलित थे। इसीलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी-साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ में लिखा है कि "सूरसागर किसी चली आती हुई गीति-काव्यपरम्परा का-- चाहे वह मौखिक ही रही हो--पूर्ण विकास प्रतीत होता है।" स्पष्ट है कि लोकगीतों में कृष्ण चरित्रगायन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। कजरी गीतों में भी कृष्णचरित्र विषयक अनेक आख्यानों का वर्णन हुआ है। ऐसे गीतों में कृष्ण की बाललीलाओं का वर्णन विशेष महत्त्व का है। इनमें कृष्ण की बाल छवि के रम्य बिम्बों के अतिरिक्त उनकी बाल सुलभ चेष्टाओं एवं बहु भावभंगिमायुक्त क्रीड़ाओं का स्वाभाविक वर्णन किया गया है। कृष्ण का आजानुपाणि चलना, कभी-कभी खड़े होकर लड़खड़ाते हुए चलने का प्रयास करना, कभी रोना, कभी माटी खाना, कभी हँसना, कभी माँ से रूठना, नन्द बाबा एवं माँ यशोदा का प्रसन्न होना आदि ऐसे चित्र हैं जो कजरी गीतों की धरोहर है--

स्याम बचपन मा बनिकै बकइयाँ चलैं, कबहूँ-कबहूँ पइयाँ चलैं ना।।
कबहूँ रोवैं बिलखाय, कबहूँ माटी लइ कइ खाँय।
कबहूँ पेट के बल पेटुकइयाँ चलैं, कबहूँ-कबहूँ पइयाँ चलैं ना।।
कबहूँ हँसैं मुसकाय, कबहूँ माता ते कोहायँ।
कबहूँ बाप के कान्धे कन्धइया चलैं, कबहूँ-कबहूँ पइयाँ चलैं ना।।
खुसी जसुदा मनावैं, गोद स्याम का उठावैं।
स्याम गोद ते उतरि भुइयाँ-भुइयाँ चलैं, कबहूँ-कबहूँ पइयाँ चलैं ना।।
उई जसुदा के प्यारे, नन्द बाबा के दुलारे।
यही धरनी पा पैदर गोंसइयाँ चलैं, कबहूँ-कबहूँ पइयाँ चलैं ना।।

कृष्ण की बाललीलाओं के अतिरिक्त कजरी गीतों में कृष्ण सम्बन्धी अन्य विभिन्न भावोर्मियाँ भी तरंगायित हैं। इनमें कहीं प्रेम, कहीं असूया, कहीं ईर्ष्या, कहीं क्षोभ है तो कहीं उत्साह, रति, हास, शोक, विस्मय, जुगुप्सा एवं भय के भाव विद्यमान हैं। प्रेमासक्त गोपियों को बीच मार्ग में रोककर दही की मटकियाँ छीनकर ग्वाल-बालों को दही खिलाना, मटकी फोड़ना, गोपियों का माँ यशोदा से उलाहना देने जाने आदि के जीवन्त चित्र इन गीतों में प्राप्त हैं-

बिन्द्राबन ते निकसी ग्वालिनि सिर पर धरे मटुकिया हो रामा।
अरे रामा क्रिस्न करैं बरजोरी मटुकिया मोरी फोरैं ए हारी।।
लइ ओरहनवा ग्वालिनि पहुँची जसुदा बीच भवनवा हो रामा।
अरे रामा मइया तोरो ललन बरजोरी मटुकिया मोरी फोरैं ए हारी।।
बिन्द्राबन मा रास रचावैं गागरि मोरी फोरैं रामा।
अरे रामा ग्वालन का बहकाँय दही मोसों छीनैं ए हारी।।
काहे का कुछु कहबू ग्वालिनि मोरे ललनवा रामा।
अरे रामा मोरो ललन बरजोरी मटुक नहीं फोरैं ए हारी।।

कृष्ण एवं राधा संसार में प्रेम का आदर्श हैं। कजरी गीतों में राधा के प्रेम दीवाने कृष्ण का वेश बदलकर प्रेमरोगिनी राधा के उपचारार्थ जाने का वर्णन भी उपलब्ध है-

बैद बनि क्रिस्न चले बरसाने, कोउ न पहिचानै ए हारी।।
गलियन गलियन बैद पुकारै हर रोग कै लै लेउ दवाई हो सखियाँ।
दवा न देब बिना रोग जाने कोऊ ना पहिचानें ए हारी।।
महल ते बोलीं राधा प्यारी हम लेबै बैद दवाई हो रामा।
धइकै कलाई रोग लागि बतलाने कोऊ ना पहिचानै ए हारी।।
बैद जी कहत सुनो री सखियाँ तरुनाई तन जागी रतिया।
तन मा काम धनुस सर ताने कोऊ ना पहिचानै ए हारी।।
बिन पइसा हम देब दवाई, रोग दूरि होइ जाई हो सखियाँ।
सुनि कै राधा लागीं मुसकाने, कोऊ ना पहिचानै ए हारी।।
नाना रूप धरें मनमोहन बैद बने कबहूँ गोदनहारी ए सखियाँ।
आये छलिया छलै बरसाने कोऊ ना पहिचानै ए हारी।।

इसके अतिरिक्त जिन अन्य कृष्ण लीलाओं को कजरी गीतों में अपेक्षाकृत अधिक विस्तार मिला है, उनमें राधा-कृष्ण का सावन के पर्व पर साथ-साथ झूला झूलने, गोपियों का चीर हरण, मुरली ध्वनि की मोहकता पर शिव आदि का मोहित होना, कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात् राधा की वियोग-व्यथा आदि मुख्य हैं। अभिप्राय यह है कि कजरी गीतों में कृष्ण के बाल-जीवन से लेकर कैशोर्यावस्था तक की विविध क्रीड़ाओं एवं कार्य व्यापारों का सफल अंकन हुआ है।

अवधी भाषा अपने आरम्भ से ही राजाश्रयी की अपेक्षा लोकाश्रयी रही है। इसीलिए सर्वाधिक सन्त साहित्य अवधी भाषा प्रधान है, क्योंकि सन्त कवियों ने शास्त्रीय पद्धति के अनुरूप कविता न करके 'आँखिन देखी' को महत्व दिया। इसी लोकरुचि के अनुरूप कजरी गीतों में आध्यात्मिक भावों की व्यंजना हुई है। निर्गुण-निराकार ब्रह्म सर्वव्यापक एवं सर्वत्र विद्यमान है। ऐसा कोई स्थान शेष नहीं है, जहाँ उसका अस्तित्व न हो। यही आस्तिक्य बुद्धि ही मानव में अपने इष्टदेव के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न करती है। इसी ब्रह्म को प्राप्त करने के साधनों का उल्लेख करते हुए प्रस्तुत कजरी गीत में यह कहा गया है कि यदि प्रियतम रूपी परमात्मा से मिलन की आकांक्षा है, तो आत्मारूपी चुनरी को गुरुरूपी धोबी से इस तरह धुलवाओ कि वह स्वच्छ और निर्मल हो जाय -

जउ तुम पिया मिलन का चाहव तउ धोवउ उजरि चुँदरिया ना।।
अइसे दाग परे पापन के गुरु बिनु मिटइ तुम्हरिया ना।
गुरु धोबियन ते जाइ धोवावउ तउ निरमल होय चुँदरिया ना।।
हवै नौ लाख कइ चून्दरि तुम्हरी करती अजब बहरिया ना।
पंचरंग चमकैं न्यारे-न्यारे हँस बूटै अजब बहरिया ना।
बिनु सतसंग दाग ना छुटिहैं करि लेउ कोटि जतनिया ना।
ग्यानु क साबुन जउ करि लेउ निरमल होइ चुँदरिया ना।
ई चुँदरी अनमोल तुम्हारी देखउ नैन पसरिया ना।
जुगन-जुगन ते मइली कीन्हेउ भीखमदास पुकरिया ना।।

कुछ कजरी गीतों में यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि उस अलख, अनाम, अरूप परमतत्त्व से विलग हुआ जीव मायावशवर्ती हो संसार के आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है। जब तक वह माया के आवरण से पार नहीं पाता, तब तक संसार को ही सर्वस्व मानता है किन्तु जैसे ही उसका यह भ्रम दूर होता है, वैसे ही वह स्वयं को मुक्त करने हेतु बिना अवसर गँवाये तत्क्षण राम-नाम

का भजन प्रारम्भ कर देता है, क्योंकि राम नाम ही एकमात्र सत्य, शेष सब संसार मिथ्या है, समस्त नाते-रिश्ते झूठ हैं। अतः प्रभु का भजन ही कल्याणकारक है-

काहे मनुवा ब्याकुल भइला तू सब जानि कै, हरि का भजौ ध्यान ते ना।
दुरलभ देह मनुज तन पाई, अवसर बीते मन पछिताई।
नाही अइहै काम सारा जग बिनु राम के ना।। काहे मनुवा....।
नस्वर नगरी लोग लुगाई, साथी संगी बन्धु औ भाई।
कोऊ साथ ना दीहै अन्त समै हरि जान के ना।। काहे मनुवा....।
राजा रंक बली बल जाई रूप कुरूप क पायेउ भाई।
कोऊ रही ना सबही जाई जम के जान ते ना।। काहे मनुवा.....।

कहता हूँ मैं गोहराई हमरी बात तू मानौ भाई।
मन मा राम क राखउ रोजु सुबह औ साम के ना।। काहे मनुवा...।

ईश्वर के विभिन्न अवतारों की भाँति माँ आदिशक्ति के विविध रूपों--दुर्गा, काली, विन्ध्यवासिनी, अहरवा भवानी आदि की अवधी क्षेत्र में विशेष प्रतिष्ठा है। अवधी लोकगीतो में इन्हीं देवी रूपों का प्रभूत मात्रा मे गायन हुआ है। ऐसी लोकमान्यता है कि किसी भी शुभ या मांगलिक कार्य का आरम्भ विभिन्न देवीगीतों के गायन से करने पर अनिष्ट का निवारण हो जाता है। इसलिए अवसर विशेष पर तत्सम्बन्धी गीतों के गायन से पूर्व देवीगीत गाने की प्रथा है। इन देवीगीतों में सम्बन्धित देवी की प्रार्थना, स्तुति, पराक्रम और उनकी भक्तवत्सलता का वर्णन प्राप्त होता है। कजरी गीत भी इसका अपवाद नहीं है। मिर्जापुर और उसके आस-पास के क्षेत्र में तो अनिवार्यतः सर्वप्रथम माँ विन्ध्यवासिनी से सम्बन्धित कजरी गायन किया जाता है। अन्य प्रान्तों में भी कजरी गायन देवी सम्बन्धी कजरी से ही प्रारम्भ होता है। ऐसे कजरी-गीतों में देवी महात्म्य का गायन करते हुए माँ से कल्याण की कामना एवं बिगड़ी बनाने का अनुरोध प्राप्त होता है -

माई तोहरा के महिमा अपार बा, नइया मझधार बा ना।।
सुनि लेउ बिनती हमार, मइया आयेन तोरे द्वार।
माई तुमही पा आसरा हमार बा नइया मझधार बा ना।।
नाही कोऊ खेवनहार, नाही कउनिउ पतवार।
माई हमरा ते दूरि किनार बा, नइया मझधार बा ना।।
माई हम आहिन गँवार, कइसे थामी पतवार।
हमरी बिगरी तू आय के सँवार दा नइया मझधार बा ना।।
कजरी गाऊँ सकुचाइ, कहूँ भूल ना होइ जाई।
माई हमरा क आसरा तोहार बा नइया मझधार बा ना।।

साहित्य-शास्त्रियों ने काव्य प्रयोजन के रूप में 'मनोरंजन' को भी स्वीकृति दी है। अधिकांश साहित्य सर्जना मनोरंजनार्थ ही होती है। कजरी गीतों में अनेक ऐसे गीत उपलब्ध हैं जिनका उद्देश्य लोकरंजन है। झूला झूलती रमणियों के कजरी गायन से उनका तथा श्रोताओं का अनुरंजन, आखड़ों में कजरी गायन से उपस्थित जनसमूह के आह्लादित होने से इनकी लोकरंजकता स्वयंसिद्ध है। मनोरंजकपरक कजरी गीतों में प्राकृतिक दृश्यों एवं बिम्बों के माध्यम से 'खाँटी' अवधी शब्द प्रयोगों द्वारा 'सामाजिकों' को चमत्कृत करने का उद्यम किया गया है -

चारों खूटें घुमरी घुमावै हो मोरा सवन पहुनवा।
अँचरा अकास उड़ावै हो मोरा पवन पहुनवा।।
घमवा ते जब कि कल्हरि उठै देंहिया,
बदरी कै छतरी लगावै हो मोरा पवन पहुनवा।।
चुभा चुभि जियरा हउलि जौ पसरै,
रसे रस बेनिया डोलावै हो मोर पवन पहुनवा।।
फूले फुलवरिया ढरत अधरउटा,
आँगन घर मँहकावै हो मोरा पवन पहुनवा।।
रतन जड़त सतरंगिया बेड़उवा,
बहियाँ पकरि पहिरावै हो मोरा पवन पहुनवा।।
हरिया भरल थिर पोखरा कै पनिया,
लहर लहर लहरावै हो मोरा पवन पहुनवा।।

अभिप्राय यह है कि कजरी गीतों की एक सुदीर्घ परम्परा है। विषय वैविध्य, शिल्पगत वैशिष्ट्य एवं भाषिक प्रयोग आदि की दृष्टि से इनकी महत्ता असंदिग्ध है। आज सिनेमा तथा सी.डी., डी.वी.डी. आदि की उत्तरोत्तर प्रगति से इनके अस्तित्व पर संकट मँडराने लगा है। एक सुखद तथ्य यह है कि कजरी गायन परम्पर मिर्जापुर और उसके समीपवर्ती क्षेत्रों में अपेक्षित विकास कर रही है। इनके संरक्षण, संकलन और अनुसंधानपरक अध्ययन की महती आवश्यकता है। यदि समय रहते इस ओर पर्याप्त ध्यान न दिया गया तो बहुत सम्भव है कि पारम्परिक कजरी गीतों के साथ बहुतेरे लोकगीत अकाल काल- कवलित हो जायेंगे।

वरिष्ठ प्रवक्ता-हिन्दी,
तिलक महाविद्यालय, औरैया

अवध के लोकगीतों में वृक्ष वर्णन

डॉ. चम्पा श्रीवास्तव

मन बसा मोर वृन्दावन मा।
वृन्दावन बेली, चम्पा चमेली, गुलदावली गुलाबन मा।
गेंदा गुलमेंहदी, गुलब्बास, गुलखैरा, फूल हजारन मा।
कदरी, कदम्ब, अमरूद, तूत, फल लाग रसीले साखन मा।
भँवरा गुंजार बिहार करे, रस लेय फूल-फल पाकन मा।
वन-बागन मा लटके-फटके, फल लागे दाख छुहारन मा।
फफकी फुलवारी लौंग सुपारी, बैवारी बैपारन मा।
नेनू नौरंगी सब रसरंगी, लियो जौन जाके मन मा।
बोले बिहंग सब रंग-रंग, किलके करील की डारन मा।
मन बसा मोर वृन्दावन मा।।

यह है अवध का लोकगीत और उसमें वृक्ष वर्णन की अनोखी छटा। सुविदित है कि अवध हिन्दी प्रदेश का केन्द्र-स्थल है, यही वह पावन भूमि है जहाँ प्रेममार्गी कवि मलिक मोहम्मद जायसी तथा महाकवि तुलसीदास जैसे महान रचनाकारों ने अवधी लोकभाषा के माध्यम से अमर काव्यों का सृजन कर स्वयं भी अमर हो गये। घाघरा, सरयू, राप्ती, बिसुही, कुआना, टेंढ़ी तथा चमनई नदियों द्वारा सिंचित यह सप्त सिंधु प्रदेश इक्ष्वाकुवंशी राजाओं की धवल कीर्ति का अमर प्रतीक है। यह वह उर्वर भूमि है, जहाँ महाराज दिलीप ने मुनि वशिष्ठ की धेनु-नन्दिनी को 22 दिनों तक नंगे पाँव छाया की भाँति रहकर चराया था। यही वह भूखण्ड है जहाँ राजा रघु की लक्षाधिक गायें रहती थीं। अवध प्रदेश की इसी पावन भूमि की वन्दना करते हुए भक्त कवि तुलसीदास ने मानस के बालकाण्ड में लिखा है-

बन्दौं अवध पुरी अति पावनि। सरजू सरि कलि कलुस नसावनि।।

वास्तव में लोकगीत जन-जन की चेतना का श्रेष्ठ संवाहक होता है और अवध के ग्रामीणांचलों के लोकगीत अपनी सहजता, सरलता, सात्विकता, गेयता और मधुरता से जनमानस को प्रभावित करने में पूर्ण सफल होते हैं। आज के इस भौतिकतावादी शुष्क एवं संश्लिष्ट जीवन को लोकगीतों की ललित अभिव्यंजनाएँ अपूर्व ताजगी एवं स्फूर्ति प्रदान करती हैं।

अवधी के लोकगीतों के माध्यम से विभिन्न संस्कारों जैसे मुण्डन, नामकरण, अन्नप्राशन, बरहों तथा विवाह आदि का बहुलता के साथ व्यक्तीकरण किया जाता है। मानव के साथ ही साथ वृक्षों को भी सहानुभूति में बद्ध दिखाकर एक अखण्ड जीवन का आभास देना अवध के लोकगीतों की अपनी विशेषता है। अवधी लोकगीतों के वृक्ष कभी विरहाग्नि में जलती हुई नायिका के आँसू पोंछते हैं, कभी विवाह की शुभ घड़ी में मंडप छाते हैं, कभी सूर्यवंशी रामचन्द्र जी को अपने कलेवर में प्रश्रय देकर माँ कैकेयी की

इच्छापूर्ति करते हैं, कभी चम्पा चमेली, गुलदावली और गुलाबों की सुगन्ध बन समस्त वातावरण को सुगंधित कर देते हैं तथा कभी अपनी ही छत्र-छाया में विभिन्न संस्कारों को सम्पन्न कराने में अहम् भूमिका का निर्वहन करते हैं। महाकवि जायसी ने पद्मावत के नागमती विरह-वर्णन में वृक्षों को नायिका की असीम वेदना से पूर्ण प्रभावित दर्शाया है। उदाहरणार्थ -

जेहि पंखी के नियर होइ, कहे विरह की बात।
सोइ पंखी जाइ जरि, तरुवर होइ निपात।।

इतना ही नहीं, जायसी की विरह-विदग्धा नायिका तीव्र वेदना के परिणामस्वरूप कृशता और ताप के चरम रूप तक पहुँच जाती है -

कँवल सूखि पँखुरी बेहरानी।
गलि-गलि के मिलि छार हेरानी।।

इस पंक्ति को पढ़ते ही पाठक का मन विरहिणी के प्रति सहानुभूति और करुणा से आप्लावित हो जाता है। विवाह मानो जीवन का सर्वश्रेष्ठ शुभ अवसर है। आप सभी जानते हैं, हमारी भारतीय संस्कृति में विवाह के दो या तीन दिन पूर्व मनछूहा होता है, जिसमें मानव क्या माँ भवानी भी मार्ग में पुष्प बिखेर कर अपना आशीष वर और कन्या को देती हैं। लोकगीत की कुछ पंक्तियाँ सुनिये-

गलियन-गलियन रे फिरइ भवानी, कोलियन ठाढ़ि ओनाइ रे।
दइ के आशिष चली हैं भवानी, फुलवा दिहिन छितराइ रे।।

विवाह के अवसर पर गाया जानेवाला एक सुन्दर लोकगीत जिसमें मण्डप छाने का सुन्दर चित्रांकन किया जाता है, जिसके नीचे बैठकर सात फेरे लेकर वर व कन्या आजीवन साथ रहने का संकल्प लेते हैं, वह इस प्रकार है -

गिरि पर्वत के खम्भ मँगाये, पातन माड़ौ छवाये जी।
कंचन-कलस गंगाजल पानी, गज मोतिन कलश पुराये जी।
जबहि गोपाल चले मधुवन का, घर आँगन न सुहाये जी।।

इस प्रत्येक कन्या सीता और वर रामचन्द्र ही दिखाई देते हैं। वृक्ष-समूह के माध्यम से सुनिये, किस प्रकार वर व कन्या का साक्षात्कार होता है -

पाँचहि पेड़ बाबा बगिया लगाये, बगिया बैठे रखवार जी।
भितरा से निकसी बेटी कवन देई, धाय बगियवा मा जाये जी।
घोड़वा चढ़े आवैं राजा के पुतवा, बहिंया पकरि बेल्हमाय जी।
छोड़ो न छैला मोरी गोरी बहिंया, बहिंया अलप सुकुमार जी।।

वृक्ष के नीचे ही किस प्रकार प्रेमालाप होता है? किस प्रकार दोनों एक-दूसरे के निकट आते हैं और किस प्रकार प्रश्नों की बौछार होती है? इसका सफल अभिव्यक्तीकरण केवल लोकगीतों के माध्यम से हो सकता है जिसमें न दुराव होता है, न छिपाव। जब यही विवाह-गीत कन्या पक्ष के द्वारा गाया जाता है तो कितना मर्मस्पर्शी, कितना हृदय-विदारक और कितना समर्पण-युक्त हो जाता है। सुनिए-

मोरे पिछवरवा लवंगिया कै बिरवा, लवंग चुवै सारी रात।
लवंग मैं बिनि-चुनि ढेर लगाऊँ, लादि चले बनिजार रे।।

कन्या-पक्ष की नारियाँ जहां लवंग के वृक्ष को लोकगीतों में प्रयुक्त कर जनमानस को करुणा से

शराबोर कर देती हैं वहीं पर वर-पक्ष की नारियाँ चमेली के बिरवा को माध्यम बनाती हैं और गाती हैं-

मोरे पिछवरवा चमेलिया कै बिरवा, अलग-अलग गइहैं डारि।
बरजौ न ताहव अपने ललन का, नचावैं चमेलिया कै डारि रे।।

भारतीय परम्परा में पहले विवाह के पश्चात् भात (जेवनार भोज) दिया जाता था। अब तो लगभग वह समाप्त-सा हो गया है। किन्तु पहले तीन दिन बारात रुकती थी। प्रत्येक रस्म को बड़े मनोयोग से किया जाता था। उस समय बड़े मर्यादित ढंग से बारातियों को लोकगीतों के माध्यम से गाली दी जाती थी। एक उदाहरण देखिये-

चंदन की पिढ़ई बनि आई, पाँति-पाँति बिछाई कि हाँ जी।
पानन की पतरी बनि आई, नेऊँतन डोम डोमाई कि हाँ जी।।
अमवा औ भँटवा डारि-डारि, नखर को तरकारी कि हाँ जी।
निहुरे-निहुरे परसैं जनक जी, धोतिया महल खोइ गई कि हाँ जी।।

विवाह के पश्चात् गवन का नम्बर आता है, जिसमें वृक्ष के सहारे भावाभिव्यक्ति की जाती है। जैसे-

सरजू के तीरे दुइ रुखवा, एक महुआ एक आम।
तेहि तर खेलत दुइ रघुवंशी, एक लछिमन एक राम।।

गवन जब हो ही गया तो सुहाने सोहर सुनने की शुभ घड़ी आ जाती है और देवी गीत से किस प्रकार लोकगीतों का शुभारम्भ किया जाता है। सुनिये-

देवी झूल्यों जाय डारि के हिंडोला लवंग वन मा।
फूला मैं बिनि-चुनि सेजिया लगायों।
मइया झूल्यो जाय डारि के हिंडोला लवंग वन मा।।

इसी प्रकार के पाँच या सात देवी गीत के साथ ही सोहर अपनी सम्पूर्ण झंकार के साथ जनमानस को आह्लादित कर देता है।

शिशु के जन्म लेते ही हार्दिक अभिलाषा व्यक्त करती हुई अवध प्रदेश की नारियाँ गाने लगती हैं-

लाल जेहिके पिराये सोइ जानै, दूसर कोऊ का जानै।
अँगना मा नीबू बोयो भीतर अनार बोयो।
खिरकी मा दाख-छुहार दुआरे बोयो नरियर।
अँगना मा नीबू सींच्यो भीतर अनार सींच्यो।
खिरकी मा दाख-छुआर दुआरे सींच्यो नरियर।।

इसी प्रकार बधावा, अन्नप्राशन, छट्ठी, बरहौं, [illegible] तथा मुण्डन आदि स्वर्णिम अवसरों पर लोकगीतों के द्वारा जनमानस को पीढ़ी से पीढ़ी तक हर्षित कर देते हैं। अवधी लोकगीतों में सावन के गीतों का अपना अलग महत्व होता है, जिसमें वृक्षों के माध्यम से अपने भाई की याद की जाती है। इसी सन्दर्भ में एक बहन की भावना दृष्टव्य है-

नीम पेड़ निबुआ लगाइ कै, मोर भइया गए परदेस हो।

और जब प्रसन्नता का वातावरण होता है तो नीम के पेड़ पर झूला पड़ जाता है। आइये इसमें [illegible] झूलिए और देखिए कि कहाँ कैसे झूला पड़ा है -

कनक भवन में झेलुआ परि गए।
कहवाँ कै हरिअर निमिया रे, कहवाँ कै हरिअर बाँस।
कवनी डारी परा अरे हिंडोलना रे।।

इसके अतिरिक्त बासन्ती वातावरण जन-मन को मदमस्त करनेवाला है। आम की डार पर बैठकर जब कोयल मीठी तान सुनाती है तो तन-मन का रग-रग प्रसन्नता से आप्लावित हो उठता है। सुनिये-

सखी कोयलिया गावै, अमरइया की डार।
कलिन-कलिन पर भौंरा नाचै, आई बसन्त बहार।
फुलबगिया सब गमकि उठी हैं, बिहँसि उठी कचनार।।

बसन्तोत्सव के पश्चात ही होली की रंगीनियाँ चारों ओर व्याप्त हो जाती हैं जैसाकि सूरदास जी अवधी भाषा के माध्यम से व्यक्त करते हैं-

फागुन उड़े गुलाल चैत बन टेसुर फूलि रहे।

रामचरितमानस का शबरी-प्रसंग प्रसिद्ध है। शबरी अपनी आत्मीयता एवं भक्ति-भावना का व्यक्तीकरण वृक्षों के ही माध्यम से करती है, जो इस प्रकार है-

बैरी मकोइया कै भोग लगावै, अउर नहीं शबरी घर सामा।
फूस कै गोंदरी सेज बिछौना, लोटि-पोटि परभू करैं बिसरामा।।

इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं पर स्वाभाविक बालक्रीड़ा का भी चित्रांकन अवधी लोकगीतों में वृक्षों के माध्यम से दृष्टिगोचर होता है। जैसे-

एक चिरइया लेदी-बेदी
पान खाय भटकइया छेदी।
अमिली के पेड़े मा दुइ सौ अण्डा।
रामचन्द्र फटकारै डण्डा।।

इन लोकगीतों के अतिरिक्त अवध के लोकगीतों में यथा अवसर कजरी, मंगलगीत, बन्ना, धमार, कोल्हू गीत, जँतसारी, युद्धगीत तथा राह सम्बन्धी लोकगीत भी वृक्षों के माध्यम से गाये जाते हैं।

अंत में, मैं यही कहूँगी कि अवधी लोकगीतों के वृक्षों की विशाल सम्पदा मानव जीवन को सरसता से मण्डित कर आज के टूटते, सिमटते व्यक्तित्व को जीवन्तता प्रदान कर समाज को निरन्तर भव्य ऊर्जा प्रदान करती रहेगी।

लोक रीति-रिवाजों में पर्यावरण

डॉ. चम्पा श्रीवास्तव

"क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा।।"

वास्तव में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाशमण्डल का समन्वित रूप, जिसे हम पर्यावरण के नाम से अभिहित करते हैं, वही अपने अनन्त स्वरूपों के माध्यम से समस्त जन-समाज हेतु सुरक्षा-कवच का कार्य करता है। नदी, तालाब, जंगल, वन-सम्पदा तथा सम्पूर्ण प्राकृतिक वैभव मानव को समय-समय पर आह्लादित एवं विषादयुक्त बनाते रहते हैं। सम्पूर्ण जन-समाज जिसे लोक की संज्ञा दी जाती है, उनके सुख-दुःख, उल्लास-वेदना, हास-परिहास तथा जन्म और मरण से सम्बन्धित समस्त रीति-रिवाजों के बहुरंगी स्वरूप को पर्यावरण अपने इन्द्रधनुषी अदाओं से प्रभावित करते हैं। यही कारण है कि लोक रीति- रिवाजों में पर्यावरण का अभूतपूर्व योगदान होता है।

जन्म ही नहीं, जन्म के पूर्व से लेकर मृत्यु तक अनेक रीति-रिवाजों के प्रति आस्था जन-मानस की अपनी विशेषता है। लोकरीति-रिवाज मानव जीवन पर अनौपचारिक रूप से अंकुश रखते हैं। उदाहरण के लिए, बच्चा जब माँ के गर्भ में ही रहता है तो गर्भवती नारी को नदी-नाला पार करना वर्जित हो जाता है। ऐसी मान्यता है कि जलराशि पार करते समय भावी शिशु के गले में फंदा कस जाता है और उसकी मृत्यु की भी सम्भावना बन जाती है।

नवजात शिशु के जन्मोपरान्त जच्चा और बच्चा के पास गोबर-निर्मित 'कण्डा' सुलगा दिया जाता है, जिसके धुएँ से वाह्य हानिकारक तत्त्वों का समावेश नहीं हो पाता। इस शुभ अवसर पर जन-समाज में रिवाज है कि सोहर, सरिया, रोचना, पालना तथा बधाईगीत गाकर हर्ष की अभिव्यक्ति की जाती है। नवजात शिशु के सौन्दर्य का राज पूछने पर सुनिये ननदरानी को जच्चा क्या उत्तर देती हैः-

"पहिले पहर लट छोरउँ, दूसरे नहाइउँ।
ननदी! डीठि परी ननदोइया, होरिल बड़ा सुन्दर है।।"

कितनी सहज अभिव्यक्ति है जो आज के भौतिकतावादी युग में असम्भव नहीं तो दुष्कर अवश्य है। इसके अतिरिक्त नवजात शिशु की छठी, बरहों, मुण्डन, कर्णछेदन तथा यज्ञोपवीत संस्कार के समय पर्यावरण को ही आधार रूप में ग्रहण कर देवी-गीत गाने की रस्म अदा की जाती है। उस समय समग्र वातावरण आस्था के साथ ही साथ जीवन्त होकर हमारे तन, मन को झंकृत कर देता है। देवी-गीत की चंद पंक्तियों का आनन्द आप भी लीजिए -

"सावन की बरसे बदरिया माँ की भीगे चुनरिया।
अमवा की डारी पे छाई हरियाली, कोयलिया कूक रही मतवाली
बदरा मा कड़के बिजुरिया, माँ की भीगे चुनरिया।।"

ऐसा अहसास होता है कि सचमुच आम की डाली पर बैठी कोयल मदमस्त किये दे रही है। मानव जीवन की अनोखी रस्म 'विवाह' जिसे दो आत्माओं का पवित्र बन्धन स्वीकार किया गया है, तब तक पूर्ण नहीं होता, जब तक कि गेंडुवे की अनवरत जलधार से थारा भर नहीं जाता और माँ तथा पिता पैर पूजकर कन्यादान नहीं दे देते। उदाहरण के लिए-

"हाथे मा पानी भरा गेंडुवा कुसै केरी डाभ।
मड़ये मा काँपै कवन रामा, कन्यादान कैसे मैं देउँ।।"

कन्यादान के पश्चात् प्रज्ज्वलित दीपक की बाती मिलाने की रस्म दूल्हे के द्वारा सम्पन्न की जाती है जो आपसी प्रेम, आकर्षण और एकात्मकता का प्रतीक है। जैसे-

"बन्ना तुम काहे न भेरवउ बाती।
की बाती तुम्हें ताती लगतु है, की बरजेउ महतारी।।"

इसी प्रकार कुँआ पूजन तथा माँ का कुँए में पैर लटकाकर बैठना आदि भी पर्यावरण से ही अभिमण्डित रस्में हैं, जिनका आज भी हमारे समाज में निर्वहन किया जाता है। विवाह से सम्बन्धित समस्त रीतियों को सम्पादित करने हेतु सरपत तथा लकड़ी के योग से मण्डप छाया जाता है, जिसके नीचे कलश, दीवट, पिढ़ई, चौक तथा बरुआ आदि इस प्रकार सुसज्जित किया जाता है कि प्रत्येक रस्म को सफलतम् ढंग से क्रियान्वित किया जा सके। पर्यावरण के ये संसाधन अपनी रमणीयता में लोक संवेदनाओं की पुष्टि करते हैं। इस अवसर पर नारियाँ मधुर कण्ठों से गा-गाकर प्रत्येक उपकरण के सौन्दर्य का चित्रण करती हैं। आइये आप भी हमारे साथ गाकर कलश के सौन्दर्य का वर्णन कीजिए -

"कलसा तौ भल सुन्दर, नाहीं जानौं कउने गुन रे।
नाहीं जानौं कुम्हरा के गढ़बे, तौ नाहीं जानौं माटी गुना।।"

कहने का आशय यह कि पर्यावरण अपने प्रत्येक रूप में मानव को कभी अपना दुलार देता है, कभी अपने अनोखेपन से चौंका देता है, कभी हर्ष और कभी अश्रुधारा प्रवाहित करने का कारण बनकर अपना अमूल्य सन्देश हमें देता है। लोक-संस्कृति की यह विशेषता है कि विवाह के एक दिन पूर्व मातृ पूजन मंडप के नीचे बैठकर जहाँ नारियाँ ब्रह्मा, विष्णु, गौरी, गणेश, सूर्य, अग्नि और वरुण देवता को समस्त आयोजन में उपस्थित रहने हेतु आमंत्रित करती हैं, वहीं कुछ वर्जनाएँ भी हैं जिसके लिए वे इस प्रकार निवेदन भरा गीत गाती हैं-

"आँधी पानी! तुमहूँ नेवाते तीनि दिवस जनि आयो।
खई लड़ाई! तुमहूँ नेवाते तीनि दिवस जनि आयो।।"

माँगलिक भावनाओं से युक्त कितना सुन्दर लोकगीत है, जिसमें पर्यावरण से विघ्न न डालने हेतु विनम्र अनुरोध किया गया है। हमारी हिन्दू संस्कृति में भवन-निर्माण के शुभारम्भ में भूमि-पूजन का विधान है। धरती माँ की आराधना इस बात का प्रतीक है कि हे माँ! तू अपने आँचल में हमें शरण देकर उल्लसित जीवन व्यतीत करने का वरदान देना। भूमि-पूजन ही नहीं, प्रत्येक रीति-रिवाज के प्रारम्भ में वनस्पति, गौरी तथा नवग्रह आदि का नमन करके पर्यावरण के प्रति जनमानस अपनी आस्थावादी प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति करता है। इसी प्रकार कार्तिक माह में गंगा-स्नान करना, दीपक जलाकर तुलसी पूजन करना भी एक श्रेष्ठ लोक-रिवाज है। सर्वविदित है कि किसी भी प्रसाद में तुलसीदल अवश्य डाला जाता है और यदि प्रसाद में देने हेतु कुछ भी न हुआ तो जल में ही तुलसीदल डालकर दे दिया जाता है। लोक जीवन में एक महत्वपूर्ण पर्व है - करवा चौथ, जिसमें भारतीय नारियाँ दिन भर निर्जल व्रत रखकर अपने

सुहाग-रक्षा हेतु गेंडुवे में धान की सींक डालकर, दीपक जलाकर, रात्रि को चन्द्रमा का दर्शन करके आराधना करती हैं।

लोक जीवन में यह मान्यता है कि जब कोई मान्य घर आता है तो उसका पैर धोकर उसे सम्मान प्रदान किया जाता है। उदाहरण के लिए-

"लाऊँ न गंगा कै नीर तौ पाँव पखारऊँ।।"

इसके अतिरिक्त पितृ-पक्ष में पितरों को उनकी पुण्य तिथि पर जल देकर हमारी संस्कृति में उनका स्मरण एवं उन्हें तृप्त करने का विधान है। इसी प्रकार, बरगद की पूजा, कभी सर्वाधिक आक्सीजन प्रदायक पीपल के वृक्ष का नमन तथा उस पर जल चढ़ाना, कभी आम्र-मंजरी की आराधना तथा कभी धान आदि की उपासना का रिवाज है। स्पष्ट है कि लोक मानव अपने जीवन के हर्ष, उल्लास और संतोष की आकांक्षा प्रकृति से ही करता है। गीत गा-गाकर वातावरण को हर्ष से गुंजायमान कर देती है। आइये कुछ पंक्तियों का आनन्द आप भी हमारे साथ लीजिए -

"अरे रामा बेला फूले आधी रात, चमेली भिनसारे रे हारी।
झांझर गेंडुआ गंगाजल पानी, अरे रामा बलमा घुटैं आधी रात
देवर भिनसारे रे हारी।।"

लोक जीवन में प्रचलित रीति-रिवाजों को जीवन्तता तथा परिपूर्णता प्रदान करने हेतु कहीं जल का सुखद उपयोग, कहीं समीर का झोंका, कहीं प्रज्ज्वलित अग्नि, कहीं वृक्ष, नदी, तालाब तथा कहीं धरती माँ के रूप में पर्यावरण अपना सक्रिय योगदान देते हैं। जब तक इस धरती पर मानव और मानवता रहेगी, पर्यावरण से उनका नाता कभी समाप्त नहीं हो सकता, ऐसा मेरा विश्वास है।

रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
फीरोज गांधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायबरेली।

अवधी की लोक-कला

डॉ. चन्द्रिकाप्रसाद शर्मा

लोक-मानस की असम्य आकांक्षा एवं उसका सांस्कृतिक विलोड़न जब नित्य-प्रति की जिन्दगी में प्रयुक्त होनेवाले उपकरणों और जन-जन के कला-नैपुण्य का सहारा पाकर अपने धार्मिक एवं साम्प्रदायिक जीवानुभवों को सौन्दर्यमय आकार देने का प्रयत्न करता है, तब जिस कला का उदय होता है : उसे लोककला कहते हैं। लोक-कलाकार की साधना किसी सजग इरादे से नहीं बल्कि सर्वांश में एक आन्तरिक प्रेरणा से होती है। लोक-कलाकार समाज का कोई विशिष्ट प्राणी नहीं होता है। लोक-कला के क्षेत्र में यह सर्वमान्य तथ्य है कि रचनात्मक प्रतिभा प्रत्येक मनुष्य के पास होती है, किन्तु उसकी समुचित अभिव्यक्ति के लिए उचित अभिप्रेरणा और अनुशासित निर्देश आवश्यक होता है। इसीलिए लोक-कला के इतिहास की शुरूआत अनुष्यता के इतिहास के साथ मानी जाती है। सच यह है कि जिस दिन मनुष्य ने अपने को पशु से ऊपर उठाने की पहली सार्थका चेष्टा की होगी, उसी दिन धरती पर लोककला का जन्म हुआ होगा। मनुष्य मात्र जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति से ही संतुष्ट नहीं होता, वह आत्मिक सुख-सन्तोष के लिए भी कुछ करता है। उदाहरणार्थ, वह अपने रूप-स्वरूप को सँवारता है, घर-द्वार को सजाता है और अपने द्वारा प्रयुक्त जीवनोपकरणों को सुन्दरतर बनाकर रखता है। तात्पर्य यह कि मनुष्य की जीविका के साथ उसके रचनात्मक प्रयत्न का सामंजस्य प्रारम्भ से ही शुरू हो गया है। इसीलिए लोककला की अभिव्यक्तियों में जन्म के आश्चर्य, मृत्यु के रहस्य, प्रेम की समाधि-दशा और मनुष्य के आत्मीय सम्बन्धों की माधुर्यमय अभ्युन्नति छिपी रहती है। अस्तु, सभ्यता के विकास के साथ लोक-कलाओं की महत्ता निरन्तर बढ़ती जाती है, जबकि उसकी साधना दिनानुदिन कठिनतर होती जाती है।

चित्रकला - अवधी लोककलाओं में चित्र, मूर्ति और संगीत प्रमुख हैं। चित्रकला के विधान-भेद से तीन प्रकार बताये गये हैं- भितिचित्र, पटचित्र, फलकचित्र। दीवारों पर बनाये जानेवाले चित्र को भितिचित्र कहते हैं। जो चित्र कपड़े और चमड़े पर बनाये जाते हैं, उन्हें पटचित्र कहा जाता है। इसी प्रकार भूमि लकड़ी, पत्थर और हाथी-दाँत पर बनाये जाने वाले चिलों को फलकचित्र कहते हैं। अवध की लोक-चित्रकला में उक्त तीनों प्रकार के चित्र मिलते हैं किन्तु उनमें भित्तिचित्रों का प्रामुख्य है। यहाँ भित्ति-चित्रें की रचना होली, दीवाली, नागपंचमी तथा विवाह के अवसर पर होती है। दीवारों को या तो गोबर से लीपकर अथवा उनमें चूनाकारी करके उसे चित्र-रचना के योग्य बनाया जाता है। गोबर से पुती दीवार पर चित्र-लेखन चावल पीसकर बनाये हुए रंग अथवा सफेद चूने से टीककर किया जाता है। इसी प्रकार, चूने से पुती दीवार पर गेरू की रेखाओं से चित्र-लेखन होता है। कभी-कभी चित्र-रचना में जलरंगों का प्रयोग भी देखा जाता है। रेखाओं का चित्र-लेखन सीक की फुरेरी से किया जाता है और टीककर किया जानेवाला चित्रलेखन फूल अथवा कपड़े की पोटली से।

भित्तिचित्रें को लोक-जीवन में सामान्यतः खिलौना की संज्ञा दी जाती है। खिलौना में सरल रेखाओं, छोटे वृत्तों तथा बिन्दुओं में बँधी आकृतियों को अक्षरों की तरह लिखा जाता है। इस प्रकार की चित्र-रचना को लिखना कहते हैं; जैसे - करवा-चौथ लिखना, जन्माष्टमी लिखना, दीवाली लिखना, कोहबर लिखना आदि। यह कार्य घर की स्त्रियाँ ही करती हैं। कभी-कभी इन खिलौनों में बड़ी-बड़ी लोककथाएँ भी लिखी जाती हैं। खिलौना लिखने के लिए भित्ति को लगभग आठ दिन पूर्व से ही तैयार किया जाता है। लोककला के अनुसार हर त्यौहार के लिए अलग-अलग चित्रावली होती है।

अवध के लोक-भित्तिचित्रों में धर्मिक एवं पौराणिक कथाओं का लिखना अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस प्रकार के चित्र जब बहुत बड़े हो जाते हैं, तब उनमें कई अनुबन्ध कर दिये जाते हैं। इन अनुबन्धों के बीच-बीच में तांत्रिक प्रतीक, कदली-वृक्ष, वट-वृक्ष, पीपल, हिरन, तोता, हाथी, घोड़ा, सूर्य आदि के साथ कुल-देवता का प्रतीक अंकित किया जाता है। बारात की शोभा-यात्रा के चित्र भी मोहक होते हैं। कभी-कभी विनोद-भाव से हुक्का पीते हुए बड़े दादा या दादी के चित्र भी देखे जाते हैं।

पूरे अवध में उपयोगिता एवं खूबसूरती की दृष्टि से उकेरे जानेवाले चित्र रूमाल, चादर, तकिया के गिलाफ तथा साड़ी पर बेल-बूटे एवं फूल-पत्ती की छपाई-कढ़ाई के रूप में होते हैं। यहाँ के लोक-जीवन में चित्र-फलक का प्रयोग मुख्यतः लकड़ी और भूमि के रूप में होता है। लकड़ी के दरवाजों, चौखट- बाजुओं, पीढ़ों, मकान के टाँड़ों और आलमारियों पर लोक-कलाकार बढ़ई नाना प्रकार के चित्र उत्कीर्ण करता है। दरवाजे के चौखट और उतरंग पर कमल-पुष्प, सिंह, मछली और हाथी के चित्र खुदे हुए देखे जाते हैं। दरवाजों के पल्लों पर कमल-पुष्प का उत्कीर्णन अधिक होता है। धूलि-चित्रों की रचना सदैव धरातल पर होती है। रँगे हुए बुरादे, धान की भूसी, गेरू तथा चूने को जमीन पर भुरककर शादी आदि शुभ अवसरों पर चौक पूरने के साथ हाथी, घोड़े तथा देवी-देवताओं की आकृतियाँ बनायी जाती हैं।

गोदना भी अवधी लोक-चित्रकला का आवश्यक अंग है। यहाँ के लोक-जीवन में विवाहिताएँ हाथ में दर्पण, कंघी, पान, फूल, स्वस्तिक, हाथी तथा ठोड़ी, माथे अथवा कपोलों पर तिल गोदवाती है। गोदनहारिन का काम नट जाति की स्त्रियाँ करती हैं। यह कला नवशिक्षिता युवतियों में धीरे-धीरे कम होती जा रही है। हाथ में मेंहदी रचाने की कला आज भी यहाँ की स्त्रियों में प्रचलित है। पान, स्वास्तिक, मोर-पंख, हंस, सूर्योदय, सूर्य-मुखी आदि के चित्र मेंहदी की कला में विशेष लोकप्रिय हैं।

मूर्ति-कला- अवध की लोक-कलाओं में मूर्तिकला की लोकप्रियता अभी पहले-जैसी बनी हुई है। मूर्त्तिका-कला के अंग रूप में कुम्हारों के यहाँ मूर्तिकला परम्परागत ढंग से चली आ रही है। विजयादशमी, दीपावली तथा अन्य मेलों के अवसर पर कुम्हार मिट्टी से मूर्तियाँ बनाते हैं शिव, गणेश, लक्ष्मी, नटराज, काली, श्रीकृष्ण, हनुमान् प्रभृति देवी-देवताओं की सादी और प्रभामण्डलयुक्त, कलात्मक मूत्तियाँ प्रभूत यात्रा में बनायी जाती हैं। ऐसे अवसरों पर हाथी, मोर, घोड़ा, सिंह, तोता, हंस, कबूतर, मिट्टी की गाड़ी जाँता, चूल्हा, तराजू आदि के रूप में बहुत-सी कलाकृतियाँ देखी जाती हैं।

संगीत-कला - ऋतु, उत्सव और श्रम के गीतों के लय, ताल और तुक आवश्यकतानुसार ढोलक, मँजीरा, झाल, मृदंग, हुड़का, नगारा, खँझड़ी, एकतारा, सारंगी आदि लोकवाद्यों की संगत पाकर लोकसंगीत की अनूठी सृष्टि करते हैं। नृत्य के साथ वाद्य-यन्त्रों का प्रयोग अनिवार्य होता है, अन्यथा उनके बिना भी काम चल जाता है। अवध में फाग, आल्हा, कजरी, चैता, चनैनी का गायन ऋतु-पर्व के अनुसार होता है। बिरहा, विजयमल, लोरकी, सोरठी, कहरवा, नयकरवा और बंजरवा जातीय गीत है। जँतसार, रोपनी सोहनी आदि श्रम-गीतों के नाम हैं। सोहर, गारी, नकटा आदि का गायन अवसरानुकूल होता है। स्त्रियों

के गीत प्रायः मन्द स्वर में गाये जाते हैं, सारंगी और खँझड़ी वाद्ययंत्रों का प्रयोग भजन में होता है। अहीरों, धोबियों और कहारों के नृत्य लोक-संगीत में प्राण-संचार करते हैं।

इस प्रकार, अवध की लोक-कलाओं में यहाँ की धार्मिक आस्था, यहाँ का सुख-दुःख और यहाँ के लोगों की आशा-आकांक्षा का अंकन विविध रूपों में दिखायी पड़ता है। ये कलाएँ यहाँ के जन-जीवन की नैसर्गिक सौन्दर्य-चेतना को जिस आयासहीनता के साथ अभिव्यक्त करती हैं, वह सचमुच स्पृहा की वस्तु है। किन्तु, इनके संरक्षण एवं संवर्द्धन की दिशा में अभी तक लोगों का ध्यान अपेक्षित से बहुत कम गया है।

अवधी और उसके लोक-रंग

योगेश प्रवीन

कुछ समय पहले तक अवध के गाँवों में जागा लोग घर-घर जाकर रतजगे किया करते थे और सारी-सारी राते अपने गीतों की गूँज से रात के सन्नाटे की खाली गोद भरते थे। इनके गीत, जिनमें दोहे भी पढ़े जाते थे, शेर भी कहे जाते थे, सबके लिए होते थे और सबकी समझ में आते थे, जैसे कि यह सीधा-साद भजन -

भज रसना हरदम महाबली।
रामदुलारे, सिया जी के प्यारे,
महाबीर मोरी नाव चली!

और फिर अगर वह चौबारा मुसलमानों का है, तो उनका यही गीत इस तरह हो जाता था -

भज रसना हरदम अली अली
दास नईम को बेगि बुलाओ
शहर नजफ की अब तो गली।

यही कुछ हाल मीरासिनों का भी था। बच्चा हुआ तो, चाहे हिन्दू के घर हो या मियाँ के घर, उनकी ढोलक की थापों पर चटकीली आवाजों में से गीत गमक उठते थे -

अबे मोरी गुइयाँ घूमत पीरियाँ।

रतजगों की भोर में जैसे हिन्दू घरों की औरतें पूजा का थाल लेकर देवी-मन्दिर जाती हैं, मुस्लिम औरतें डलिया में गुलगुले लेकर वैसे ही मस्जिद का ताक भरवाने निकल जातीं।

छठी की धूम भी निराली होती। जच्चा का थाल भरा जाता और ननदें अपने दुलारे भतीजे के काजल लगाने आतीं तो गौनहारिनों के मुँह से सोहर सुनतीं -

गंगा पारे की बालू मँगवाइयो बालमा,
ओ के पोले पोले लड्डू बनवाइयो बालमा,
सब ननदिन का दै समझाइयो बालमा!

सांस्कृतिक एकता के धागे मिट्टी के सौरभ से ही बनते हैं। मिट्टी से मानव-मन का अटूट सम्बन्ध रहता है, जब तक कि इस बीच कोई मजहबी पाखण्ड या राजनीतिक दाँव-पेंच का मोहरा पेश नहीं आ जाता। सच कहा जाये तो संस्कृति की पहचान ही इसी भावभूमि से बनती है और जब मनुष्य अपनी धरती के संस्कारों से अलग होने लगता है, तब उसकी स्थिति कुछ-कुछ "धोबी के कुत्ते" जैसी हो जाती है। लोक-जीवन में तो यही सत्य सामाजिक चेतना का प्राण है, जहाँ धर्म या धर्माचरण बस निजी व्यवहार के लिए होते हैं, पारस्परिक प्रसंगों में एक-सी भाषा, एक-सी जीवन-शैली और एक-से संस्कार सबको आपस में जोड़े रहते हैं।

अवध में विदेशों से या दूसरे अंचल से आ-आकर बसनेवालों में भी यही बात पायी जाती है कि वे पहले अवधवाले हुए हैं, फिर कुछ और। इस सन्दर्भ में अवध के शिया नवाबों और उनसे पहले के दूसरे मुसलमानों के अनूठे उदाहरण द्रष्टव्य हैं, क्योंकि अवध-अवधी और मुसलमानों के बीच बड़ा भावभीना नाता रहा है।

पाली के कहार - अवधी को बोली की जमीन से उठाकर भाषा के सिंहासन पर बिठाने का कार्य गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा ही हुआ हो, ऐसा नहीं है। अवधी की पाली मुसलमान कवियों के काँधे-काँधे भी चलती रही है। इनमें पहल की थी मुल्ला दाऊद ने, जो चौदहवीं सदी ईसवी में ही अवधी में ''चंदायन'' प्रेम-काव्य की रचना कर चुके थे। अवध में बैसवारा क्षेत्र की बड़ी साहित्यिक भूमिका रही है। मुल्लादाऊद बैसवारे के ही निवासी थे। वे अवधी के प्रथम सूफी कवि तो थे ही, हिंदी के प्राचीन कवियों में भी सादर गणनीय हैं।

अब, कुतबन की बारी आयी जिन्होंने सन् 1501 में ''मृगावती'' प्रेमाख्यान की रचना की। चिश्ती-संप्रदाय से संबंधित कुतबन शेख बुरहान के शिष्य थे और जौनपुर के बादशाह हुसैनशाह के दरबार की शोभा थे।

सन् 1505 में मंझन ने ''मधुमालती'' की रचना की, जिसकी दो पंक्तियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं -

रतन कि उपजै सागरहिं, गजमोती गज कोइ।
चंदन की बन बन उपजै, बिरह कि तन तन होइ।।

सोलहवीं सदी के मध्य में ही इस परम्परा में एक साहित्यिक क्रान्ति हुई, जब मलिक मुहम्मद जायसी ने ''पद्मावत'' नामक महान् ग्रन्थ लिखा। जायस (रायबरेली) के इस कवि की साधना-भूमि अमेठी (सुल्तानपुर) रही है, जहाँ उन्हें दरबारी सम्मान मिला हुआ था। अमेठी में ही जायसी की समाधि बनी हुई है। उल्लेखनीय है कि ''पद्मावत'' ने ही रामचरितमानस'' के लिए भाषा-शिष्य का पूर्णाधार प्रदान किया। सारे प्रेमाख्यानों के बीच ''पद्मावत'' ऐसे ही है - ज्यों तारन में चंदा। सौन्दर्य, प्रेम, बिरह और घटना-विस्तार का यहाँ अद्भुत संगम है। हाँ, 'मानस' की तुलना में ''पद्मावत'' की भाषा अधिक सघन अवधी, रूढ़ियुक्त और पुरानी है।

इसके वाद सदियों तक यह सिलसिला चलता ही रहा। फिर सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में उस्मान ने ''चित्रावली'' की रचना की। सत्रहवीं सदी में जौनपुर के शेख नवी ने ''ज्ञानदीप'' की रचना की।

अठारहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में बाराबंकी के कासिमशाह ने ''हंस-जवाहिर'' नामक प्रेम-कथा लिखी, तो इसी दौर में नूर मुहम्मद ने ''अनुराग-बांसुरी'' की रचना की।

जौनपुर जिले के एक गाँव के निवासी नूर मुहम्मद ने 'इंद्रावती'' नामक एक और मसनवी लिखी। सन् 1848 में फाजिलशाह ने ''प्रेम-रतन'' शीर्षक से नूरशाह और माहेमुनीर की प्रेम-कथा लिखी। उन्नीसवीं सदी में ही मकसूद लखनवी ने अवधी तथा उर्दू का मिला-जुला 'बेकमसाल' बारामासा लिखा और इस तरह सात सौ बरस अवधी से मुलसमानों का अटूट नाता बना रहा।

लोक-रंग के संग - मुस्लिम कवियों ने हिन्दी साहित्य के लिए अवधी के माध्यम से जो साहित्यिक योगदान दिया सो दिया, अवधी ने भी मुसलमानों के लोक-जीवन और संस्कारों को अपने पूरे असर के साथ शराबोर रखा। उर्दू ने दिल्ली के बाजारों में जन्म लिया था, इसी कारण से जमाने में कुलीन मुस्लिम औरतें उसे बोलना उचित नहीं समझती थीं। अवधी भाषा के इतिहास में ये सभी प्रकरण सप्रमाण प्राप्त होते हैं।

महाकाव्य, खण्डकाव्य या मसनवी ग्रन्थों से पहले भी अवधी लोक-प्रसंगों को प्रभावित किये हुए थी, क्योंकि अवधी का लास्य एवं लावण्य काव्य-रचना के लिए तथा कमनीयता एवं माधुर्य गायन के

लिए सर्वथा उपयुक्त सिद्ध हुए हैं। मुगल पठानों का अहद रहा तो उनमें ये बैन कहे जाते थे -

मक्की मदनी कमलीवाले आका सैयदनी तुम्हारी शान बढ़े।
रब के प्यारे दुइ जग के दाता सैयदनी तुम्हरी शान बढ़े।
एकै तोहिका एक बनाइस तुम्हरा नाहिन कौनी सानी।
तोहरी अजमत कै गुन गावौं आवो नाहिंस दूजा आनी।।

और फिर जब शिया नवाबों की रियासत हुई, तब देसी जबान में लम्बे-लम्बे सोज और मातम ताजियों की ताजियत में पढ़े जाने लगे :

कहैं बानो मैं सीस नवाऊँ कहाँ !
मोरा सैंया तो मैका बिसारि गयी,
मोरी नाव भँवर बिच डारि गयो,
और आप उतरि दुहू पार गयी।
मैं तो दूधन धार नहावत थीं,
मैं तो पूतन भाग सजावत थी,
मैं तो हार-सिंगार बनावत थी,
मोरा हार-सिंगार उतारि गयो।
मैं तो बीच समंदर थाह लियो,
मोरी झोली में मोती समोय गयो,
मोरा कासिम रन माँ जूझि गयो,
मोरा मोतियन हार बिथार गयो।
कोऊ देस मदीना माँ जाय कहो,
कि रसूल का नाती खेत रह्यो,
आज बन माँ हुसैना जाइ बस्यो,
और आपन देस उजारि गयो।
कोऊ फातिमा बीबी से जाइ कहो,
ओ के सारे कुटुम्ब का लूट लियो,
कोऊ एकै चदरिया पठै न दियो,
मोरा बैरी तो सीस उघारि गयो।

इधर गाँवों के मुहर्रम में तो अब भी अवधी का बोलबाला रहता है--नौहा हो, सोज़ हो या ज़ारी हो-

केहू अभागिनि बतिया पूछै हो रे!
की केर जनाजा लिये जात हो रे!

कस्बाती जिन्दगी में तो नौहों का रंग और निराला रहता और बोली की बानगी वैसी ही बरकरार रहती -

मोरी लागी लागी बगिया न काटो रे!
वा की नान्हीं नान्हीं कोपल न छाँटो रे।

दरगाहों की चादर, गागर या कजरी-बसंत मनाने में लोग देसी बोली का ही सहारा लेते थे। उर्दू-फारसी की तरफ उनका ध्यान भी नहीं जाता था-

न जाने कब मिलिहौ अरे मोरे वारिस!

यहाँ तक कि रोज़ों के रम्माल भी अपने जंतर-मंतर अवधी में कहकर लोगों को टोटके द्वारा मरज़

का इलाज बताते थे, जैसे अवध के देहातों का यह चौपदा, जो बवासीर के लिए अक्सीर कहकर दिया जाता है-

रोम के मुलना नाँव मुहम्मद तुमका दुआ कहिन है भाई।
खुरासान माँ धूनी गाड़ी, खूनी बादी दुइनो जाई।

यही नहीं, मुस्लिम रचनाकारों ने हिन्दू-धर्म से सम्बन्धित रचनाएँ भी अपनी देसी बोली में की हैं-

सँवलिया प्यारे अब आओ हमारे धाम।
ढूँढ़ फिरी तोहे गलियन-गलियन
कहाँ कियो बिसराम। *(इल्म कानपुरी)*

इसी तरह तुराब अली कलंदर काकोरवी का लिखा हुआ बारहमासा भी बेजोड़ है। आम के बागों में डेरा डालनेवाली नटिनें दुआरे-दुआरे अँगुलियों की चटक बजाती हुई गातीं, तो सुननेवालों के दिल मचल जायें-

होत सबेरे चले जइयो राजा
तनिक बेरिया बोल बतियाय लेव!

और ऐसा नहीं कि ये गीत उन गानेवालियों के ही बिरसे में होते, घरों की बीवियाँ भी जब रिमझिम की झड़ी के साथ खड़ी-खड़ी गुनगुनातीं, तब यही कुछ गातीं-

अब के सवन घर आ जा
अरे मोरी ननदी के बिरना!

ये उस माटी के गीत थे, जिसकी गोद में सब खेले हैं, बसे-पले हैं, जिसकी छुअन से ही सब बढ़ते हैं और जिसके आँचल में ही सबको सिमटना है।

ये गीत सबके थे और सबको अपना बनाने के साथ सबको आपस में जोड़ने का जादू भी रखते थे। लेकिन अब वह जादू टूट रहा है। अपनी अलग-अलग पहचान बनाने की होड़ ने आज इंसान को इंसान से दूर कर रखा है और ऐसे में मिट्टी की महिमा और उसके संस्कारों का सन्देश समझने की बड़ी जरूरत है।

अवधी लोककला : परम्परा और परिप्रेक्ष्य

कमलनयन पाण्डेय

आदिम बर्बरता से संवेदनशील मानवता की ओर उन्मुख होने के क्षण से ही मनुष्य और कला में संगति रही है। गहराई से देखा जाय तो जीवन और कला में द्वन्द्वात्मक सम्बन्ध है। वस्तुतः कला वही है, जिसमें जीवन है और जीवन वही है, जिसमें कला है। कला जीवन को सुष्ठु और बृहत्तर बनाती है। जब कि जीवन कला की अन्तर्वस्तु है। श्रेष्ठ जीवन में कला श्रेष्ठतर होती है। और श्रेष्ठतर कला से जीवन उदात्त होता है। किसी भी अंचल की लोककला का आकलन करने के लिये यह ज़रूरी होता है कि वहाँ की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं पारम्परिक समझ हासिल कर ली जाय।

अवधी लोककला अवधी संस्कृति की उद्‌भाषिका है। यहाँ की लोककलाओं में जीवन के सभी रूप देखने को मिलते हैं। लेकिन समन्वयात्मकता का विशद् चित्रण अवधी लोक-कला की अपनी विशिष्टता है। वस्तुतः मिथकीय महानायक राम अवधी संस्कृति के आदर्श स्तम्भ हैं। राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। प्रगतिशील दृष्टि के आलोचकों का भाष्य स्पष्ट करता है कि रामचरितमानस अवधी संस्कृति का जीवन्त दस्तावेज़ है। मानस को संतुलित प्रवृत्तियों का महाकाव्य कहा गया है, जिसका अभीष्ट समन्वयात्मकता की विराट चेतना का स्वर मुखरित करना है। यह नहीं भूलना चाहिए कि रामचरितमानस लोक-हृदय का विस्तार है। अवधी लोक-कलाओं पर इसका साफ प्रभाव पड़ा है। अवधी लोक-कला की विधाओं का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाय तो यह तथ्य उजागर हो जाएगा कि इन कलाओं की छवियों में संतुलित प्रवृत्ति की उद्‌भावना अंकित है। कुल मिलाकर हमारा कहना है कि अवधी लोक-कलाएँ समग्र अवधी संस्कृति का दस्तावेज़ है। यही कारण है कि सुविज्ञ व सुधीजन लुप्त होती जा रही लोककलाओं के अनुरक्षण के प्रति चिन्तित हैं; क्योंकि इनका लुप्त होते जाना एक तरह से लोक-संस्कृति का ही तिरोहण है।

सृजन स्त्रियों का सहज धर्म होता है। शायद इसलिए कि स्त्रियाँ पर दुःखकातर होती हैं। वे सच्चे अर्थों में समूचे तंत्र की भोक्ता और संवेदनशील द्रष्टा होती हैं। ज़ाहिर है, ऐसे में उनके द्वारा रची कलाकृति में अतीव सहजता और प्रभाविता होती है ।

स्त्रियों की चित्रकला की निपुणता बहुविध है। भूमि-अलंकरण का मुद्‌दा हो या भित्ति-चित्र का। शरीर-चित्र का प्रसंग हो या पट्टिका तथा पात्र-चित्र का। थापे का सन्दर्भ हो या अन्य लोक विषयक कलाकृतियों का- इन सब में स्त्रियों के कलात्मक कौशल का उद्‌भास होता है। मेरे कहने का आशय यह नहीं है कि लोककला में पुरुष वर्ग की भूमिका नहीं है। सच तो यह है कि अधिसंख्य लोक-कलाकृतियों का सर्जक पुरुष वर्ग ही होता है। लेकिन कलाकृतियों के माध्यम से मर्म-भेदन तथा मानवीय करूणा की अभिव्यंजना व तरल रागात्मकता की अभिव्यक्ति का जो सामर्थ्य स्त्रियों की कलाकृतियों में होता है, वह पुरुषों की कलाकृतियों में प्रायः दुर्लभ होता है।

भित्ति-चित्रण लोककला की प्राचीनतम परम्परा है। आदिम अवस्था में आदि-मानव द्वारा खींची गयी

रेखाएँ तत्समय की परिस्थितियों और आदि-मानव के मन पर पड़नेवाले उसके प्रभाव का उद्बोधक हैं। आज रेखाओं के मनोविज्ञान पर बड़ा काम हो रहा है। रेखाएँ हमारे मन के भाव-प्रभाव और कामना-कल्पना आदि के प्रतीक होते हैं। मसलन, खड़ी रेखा अग्रगति व क्रियाशीलता को प्रकट करती है। पड़ी रेखा स्थिरता व निष्क्रियता का प्रतीक है। जब एक दूसरे को काटती हुई रेखा खिंची होती है, तो उससे युद्ध का भाव प्रकट होता है।

मानव-सभ्यता के विकासक्रम में भित्ति-चित्र भी सुसंगत होता गया। नई अवधारणाओं के साथ भित्ति-चित्र के रूप एवं अर्थच्छवि में भी परिवर्तन होता गया। संस्कार सम्बन्धी भित्ति-चित्र का आरम्भ प्रायः पुत्र-जन्म से माना गया है। लेकिन हमारी संस्कृति में गर्भधारण के पल से ही संस्कार का शुभारम्भ माना गया- खासतौर पर अवध-क्षेत्र में। अन्य अंचलों में शिशु के जन्म व छठी के दिन से भित्ति-अलंकरण का बनाना आरम्भ होता है। अवध के पश्चिमी जिलों के कुछ जातिगत परिवारों में शिशु-जन्म के पूर्व ही प्रसूति-गृह में भित्ति पर मानव की आकृति काजल से बनाई जाती है। अवध के कुछ क्षेत्रों में दीवार पर गेरू से फलक रचकर उस पर जच्चा के हाथ से घी के थापे लगवाए जाते हैं। लोक-मान्यता है कि यदि घी के लगे थापे के बाद घी बहने लगता है, तो कन्या-जन्म की संभावना बनती है। यदि घी नहीं बहता तो पुत्र-जन्म की आशा बँधती है।

अवध के साथ लगभग सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में जन्म के समय एक कलश स्थापित किया जाता है। और फिर गर्म किए जल में घरेलू औषधियाँ डालकर उसे स्थापित किये गये कलश में रखा जाता है। घड़े के ऊपरी हिस्से पर गोबर की खड़ी व आड़ी तिरछी रेखाएँ कलात्मक सौष्ठव के साथ गोंठी (खींची) जाती हैं। इनमें इतना उभार रखा जाता है, ताकि उसमें जौ भी गोदा जा सके। हालाँकि कहीं-कहीं जौ नहीं भी गोदा जाता है। कुछ अंचलों में प्रचलित लोक-परम्परा के अनुसार हल्दी के घोल में हाथ डुबोकर पूरे हाथ का छापा भी लगाने की प्रथा है।

इस प्रसंग में अवध में एक विशिष्ट परम्परा प्रचलित है। यहाँ दीवार को गेरू से लीपा जाता है। लीपी हुई परिधि में चावल-हल्दी के मिश्रित गाढ़े घोल से घर की आकृति दर्शाता चित्र बनाया जाता है। इस गृहचित्र के भीतर सिन्दूर से जच्चा तथा काजल से बच्चा रचा जाता है। छठी के दिन बच्चे के साथ जच्चा नूतन पीत-वस्त्र धारण कर उसकी पूजा करती है। बच्चे की बुआ काजल लगाती है और मंगल-कामना पूर्ति हेतु उसे नेग दिया जाता है। कहीं-कहीं स्वास्तिक चिन्ह भी अंकित किया जाता है। सिन्दूर से जच्चा रचने का अभिप्रेत सौभाग्य का अक्षुण्ण बने रहना है। काजल से बच्चा रचने का कलात्मक अभीष्ट बच्चे की दृष्टि को व्यापक बनाना है तथा इसमें यह कामना और कल्पना भी निहित है कि बच्चा अपने सुकृत्यों से सर्वप्रिय बने। इस प्रसंग के कई लोकगीत भी प्रचलित हैं-

पुतवा के जनमे कवन फल हे मोरे साहेब।
दुनिया अनन्द जब होय, तबै फल होइहैं।।

साथ ही गृह-रचना, कलश-रचना एवं उसमें औषधि का रखना रागात्मकता, समृद्धि व जीवन-रस तथा स्वास्थ्य का प्रतीक है। गोबर के लघु पिण्ड में जौ का गोदना उत्पादन व समृद्धि का प्रतीक है।

विवाह-संस्कार के अवसर पर वर एवं कन्या दोनों के घरों की चित्र-विचित्र सज्जा की जाती है। उत्तर प्रदेश के विभिन्न अंचलों में इसके भिन्न-भिन्न नाम हैं। नामभेद के बावजूद इन परम्पराओं का केन्द्रीय लक्ष्य विवाह-संस्कार का निर्विघ्न सम्पादन है। विवाह-संस्कार को निर्धारित करने हेतु निर्धारित कमरा को कलात्मक ढंग से सजाया जाता है। इसे ब्रज में अमला, कुमाऊँ में ज्योति, बुन्देलखण्ड में देवी-देवता तथा अवधी व भोजपुरी में कोहबर कहते हैं। कोहबर में मातृका वेदी की रचना तथा देव-स्थापना होती है। यहाँ विभिन्न मंत्रोच्चारण के साथ पुरोहित द्वारा यजमान के संग प्राकृतिक आपदाओं से संरक्षण

हेतु उनके तत्त्वों का आह्वान कर मिट्टी के पात्र में पीले वस्त्र से आबद्ध कर रख दिया जाता है। वैवाहिक संस्कार सम्पन्न होने तक उनसे प्रार्थना की जाती है कि तब तक वे घड़ा के भीतर ही अवस्थित रहें और बाहर न निकलें।

कोहबर का कमरा सजाने का ढंग अवध के अलग-अलग हिस्सों में अलग-अलग ढंग से होता है। कहीं केवल धार्मिक शुचिता की दृष्टि से सज्जा की जाती है। कहीं कलात्मकता की सुरुचि व सौन्दर्यबोध का भी आभास होता है। चित्रण की विशिष्टता यह कि इसमें प्रकृति के उन तत्वों को भी चित्रित किया जाता है, जो जड़-चेतन सबके हित में होते हैं। जैसे- केला, अनार, आम, सूर्य, चन्द्र आदि। यह चित्रण दर्शाता है कि लोक-कला की केन्द्रीयता लोक-मंगल की भावना है।

सामाजिक दृष्टि से जन-मुक्ति के मिथकीय महानायकों- राम, कृष्ण, गणेश आदि का भी चित्रण होता है। व्यक्तिगत उल्लास व मुक्ति-कामना के चित्रण में सुहाग के उपक्रमों व परिन्दों का चित्रण होता है। उत्पादन व उपयोगिता की दृष्टि से पशुओं का भी चित्रण होता है। इन चित्रणों से लोक-जीवन की सक्रियता अभिव्यंजित होती है। विघ्न-बाधा दूर करने की मंशा से घर के मुख्य द्वार के ऊपर गणेश जी का चित्र भी रचा जाता है। भू-चित्रण भी लोककला की प्राचीन परम्परा है। इस लोक-कला का प्रचलन अपनी जातीय व सांस्कृतिक परम्पराओं के अनुसार कुछ परिवर्तित रूप में सम्पूर्ण भारत में प्रचलित है।

गोदना लोक-कला का खास हिस्सा है। सौन्दर्यप्रियता की सहज वृत्ति के चलते इस कला का उदय हुआ है। अतिप्राचीनकाल में सौन्दर्य प्रसाधन की अनुपलब्धता थी। लोक ने प्रकृति के दृश्यों की सुषमा निहारकर सज्जित होने की सीख हासिल की। गोदना-कला की सीख भी प्रकृति से मिली है। रस या गोद प्राप्त करने के लिए वृक्ष को गोदा जाता था। कहीं-कहीं वृक्ष अनेक कारणों से लयात्मक रूप में छिद्रित हुए रहते थे। इसे देखकर ही लोक-समुदाय प्रकृति से उपादान हासिल कर अपने अंगों को गोदाकर अलंकारप्रियता की भावना की तृप्ति करता था। गोदना अंग-आलेखन है। गोदना पुरुष भी गोदाता है, लेकिन अधिकतर स्त्रियाँ ही गोदना गोदाती हैं। यह कला सम्पूर्ण हिन्दू-वर्ग में प्रचलित है। गोदना गोदाने की शुरूआत भले ही सौन्दर्यप्रियता से शुरू हुई है, लेकिन धीरे-धीरे इसके आशय व प्रयोजन में विस्तार होता गया। इस कला का प्रयोजन पवित्रता एवं धार्मिकता के साथ ही निष्ठा, आत्मविश्वास, समर्पण, परस्पर विश्वास एवं निश्चित पहचान स्थापित करना भी है। गोदना की कला अलग-अलग अंगों में अंकित होकर अलग-अलग भाव प्रकट करते हैं। साथ ही गोदना की अलग-अलग आकृतियों का भी अपना प्रतीकार्थ होता है। अवधी क्षेत्र में गोदना प्रायः शरीर के अधिसंख्य हिस्सों में गोदवाया जाता है। जैसे- बाँह, कलाई, पैर, माथा, गाल, ठुड्डी, ओंठ के नीचे आदि। गोदना के रूप व आकार भी अलग-अलग होते हैं। मसलन स्वास्तिक, देवी-देवता, पशु, पक्षी, नाग, मोर, फूल-पत्ती, ओइम्, राम-सीता, राधा-कृष्ण एवं हनुमान आदि। कुछ स्त्रियाँ अलग-अलग अंगों में पहनने वाले आभूषण भी गोदवाती हैं। उदाहरणार्थ माथे में बिन्दी, पैरों में पायल आदि। कुछ स्त्रियाँ गोदना कलाकारों से पति तथा देवी-देवता के नाम गोदवाती हैं। ठुड्डी, माथ तथा गाल के मध्य तिल के आकार का गोदना अप्रतिम श्री वृद्धि का कारक बनता है। गोदना गोदवाने की वजह सौन्दर्यवृद्धि के साथ ही, स्मृति, श्रद्धा, मंगल-कामना तथा सम्बन्धों के सनिष्ठ निर्वाह को जीवन्त बनाना भी है।

आधुनिक तकनीकी विकास के पूर्व पारम्परिक रूप से गोदने का कार्य गुदनहारिन (विशेष उपजाति) करती थी। उस दौर में गोदना की सामग्री बनाने के लिए घी के दीपक की कालिख, पत्तियों का रस एवं बेल की गोंद का प्रयोग होता था। इन चीजों को मिलाकर काली स्याही बनायी जाती थी। गोदने का लेप तैयार हो जाने के बाद सूखे काँटे से आलेखन किया जाता था। आजकल तो तकनीकी विकास के चलते विद्युत लेखनी से आलेखन किया जाता है।

गोदना-कला का केवल सौन्दर्यात्मक पक्ष ही नही है। इसका मनोवैज्ञानिक, वैज्ञानिक एवं चिकित्सीय पक्ष भी है। गोदना-आलेखन की प्रक्रिया में सम्पूर्ण स्नायुमण्डल प्रभावित होता है। इस आलोक में यह स्थापना समीचीन लगती है कि शरीर के अंग पर जो नाम, रूप, आकार या चित्र आदि गोदवाया जाता है, उसकी स्थिर व्याप्ति पूरी आन्तरिकता में हो उठती है। सम्भवतः इसी नाते पूर्व में अवधी जन गोदना गोदवाने के बाद ही स्त्री को पवित्र समझते थे और तभी उसका छुआ खाते-पीते थे।

गोदना-कला के प्रभाव से एक्यूपंचर चिकित्सा-पद्धति का उदय हुआ है। यह चिकित्सा-पद्धति साइटिका, गठिया, पीठ-दर्द, जोड़-दर्द, मांसपेशियों आदि के दर्द-निवारण का कारगर उपचार सिद्ध हुआ है। दुनिया के पैमाने पर लोक-कलाओं के सर्वेक्षण से यह तथ्य उजागर हुआ है कि प्रकृति के साथ संघर्ष और समायोजन की सतत प्रक्रिया में लोक-मानस लगभग एक समान कार्य करता रहा। गोदना-कला सिर्फ अवध, उत्तर प्रदेश या भारत में ही नहीं, वरन् पूरी दुनिया में प्रचलित है। आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, जापान, जर्मनी तथा इटली में गोदना-कला की प्रथा प्रतिष्ठित है। ग्रेटब्रिटेन में तो प्रतिवर्ष धूमधाम के साथ गोदना की प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। एक प्रतियोगी के शरीर का 96 प्रतिशत हिस्सा गुदा हुआ है।

लोक-कला के अन्तर्गत मेंहदी से आलेखन की भी लोक-व्याप्ति अधिकाधिक है। मेंहदी लगाने की कला हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों समुदायों में खूब प्रचलित है। विवाह के अवसर पर तथा सावन मास में मेंहदी लगाने की खास प्रथा है। नागपंचमी, रक्षा-बन्धन आदि अवसरों पर भी मेंहदी लगायी जाती है। मेंहदी से किया गया आलेखन देह-सौन्दर्य में जादुई वृद्धि करता है। पहले और अब भी मेंहदी के पेड़ से हरी पत्ती तोड़कर उसे पीस लिया जाता है और फिर सींक से आलेखन किया जाता है। वैसे अब पिसी हुई मेंहदी का पैकेट भी बाज़ार में बिकने लगा है। साथ ही प्लास्टिक का उपकरण भी बाज़ार में बिकने लगा है, जिसमें मेंहदी का घोल भरकर इच्छित आलेखन किया जाता है।

मेंहदी मुख्य रूप से हाथ एवं पैर में लगायी जाती है। माथ एवं नाखून में भी मेंहदी लगाने की प्रथा है। बाल रंगने में भी मेंहदी का उपयोग होता है। इस प्रक्रिया में संतुलन की विशेष कला देखने को मिलती है। इससे बाल का रंग सुनहरा होकर मोहक लगने लगता है। लोक-कला-उपादानों का महत्व इस मायने में अधिक है कि ये उपादान सौन्दर्य-वृद्धि के साथ स्वास्थ्य के लिए भी अनुकूल व उपयोगी सिद्ध होते हैं।

अवधी क्षेत्र में जिन वनस्पतियों, फूलों, डिज़ाइनों आदि की लोकप्रियता है, मेंहदी से उसका कलात्मक अंकन किया जाता है। कहीं-कहीं अंगों पर डिज़ाइन बनाकर बीच में 'ऊँ' भी आलेखित होता है। प्रकृति में व्याप्त लय से प्रभावित स्त्रियाँ जब हाथ पर मेंहदी से विभिन्न डिज़ाइनों को रचती हैं, तो लगता है प्रकृति की सारी सुषमा हाथ में ही सिमट आयी है। मेंहदी के आलेखन से लोक कलाकारों की मौलिक उद्भावनाएँ प्रकट होती हैं। साथ ही उनके द्वारा आलेखित रूपों, डिज़ाइनों तथा आकारों से अभिव्यंजित भाव-विचार विराट कला-दृष्टि के परिचायक भी हैं।

अवधी क्षेत्र में महावर की रचना भी कलात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में महावर रचने की निपुण स्त्रियाँ आदर के साथ आमंत्रित की जाती हैं। परम्परा के अनुसार महावर रचने की कलाकार नाइन होती हैं, लेकिन इस कला में कुछ अन्य स्त्रियाँ भी अपने कौशल से आसपास में चर्चित हो उठती हैं। महावर रचने का उपादान लाल या गुलाबी रंग होता है। इसे घोलकर महावर रचने की सामग्री तैयार कर ली जाती है। यों महावर रचने हेतु आलता बाज़ार में भी बिकता है। विवाह, पूजा आदि सभी शुभ अवसरों पर महावर लगाने का रिवाज़ है। महावर में विभिन्न तरह की डिज़ाइनें रची जाती हैं। बीच में बड़ा या छोटा बिन्दु रचा जाता है। महावर की रचना मंगल-कामना के साथ सौन्दर्य-वृद्धि के लिए भी होती है।

सुहागिन औरतें एड़ियों में भी महावर लगाती हैं, जबकि कुँआरी लड़कियाँ एड़ी में महावर नहीं लगातीं। मुस्लिमों के यहाँ मेंहदी से महावर की रचना की जाती है। महावर आलेखन में रेखाओं का ख़ास महत्त्व होता है। ये रेखाएँ अपनी भाषा में लोक-कामना का भाष्य रचती हैं।

लालित्य का महत्त्वपूर्ण स्थान होते हुए भी लोक-कला की विशिष्टता इस बात में भी है कि वह दैनिक उपयोग की वस्तुओं को भी कलात्मक सौष्ठव प्रदान कर उसके उपयोग से आनन्दातिरेक का अनुभव करता है। काढ़ने की कला इसी कोटि की कला है। अलग-अलग अचंलों की सांस्कृतिक परम्परा वहाँ की कला में प्रतिबिम्बित होती है। अवध में काढ़ने की कला के कई रूप हैं। यहाँ सिकौली (बड़ा पात्र, जिसमें विवाह के अवसर पर आटा, चावल आदि रखा जाता है), मौनी (भुना दाना चबाने का पात्र), चंगेली (फूल आदि रखने का पात्र), डेलरी (गोल आकार का पात्र), पेटारा तथा पेटारी (ढक्कनशुदा गोल आकार का पात्र), झपोली (टंगना युक्त पात्र) आदि पात्रों को कलात्मक कौशल के साथ बनाया जाता है। इसकी रचना का उपादान मुख्य रूप से मूँज (सरपत का डंठल, जिसे हल्के तौर पर पीटकर उसका छिलका निकाला जाता है) तथा कास है। कास के डंठल को पात्र के रूप व आकार के अनुसार मोड़ते हुए उसके ऊपर मूँज के छिलके को चढ़ाते हुए कलात्मक कढ़ाई की जाती है। मूंज के छिलके को विभिन्न रंगों में रंगकर मनपसन्द फूल-पत्ती, पशु-पक्षी तथा राम-सीता, राधा-कृष्ण तथा हनुमान आदि के रूप उभारे जाते हैं। कहीं-कहीं यह कढ़ाई इतनी साफ़ और चित्ताकर्षक होती है कि शिष्ट वर्ग इसे अपने ड्राइंग रूम में भी टाँग लेते हैं; हालांकि इसे शिष्ट वर्ग का लोक-कला के प्रति आस्था के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए।

कढ़ाई की कला अवधी लोक-मानस के सौन्दर्य-बोध एवं कलात्मक अभिरूचि का जीवन्त साक्ष्य है। काढ़े गए चित्रों का विश्लेषण किया जाय तो पता चलेगा कि लोक-मानस का पर्यवेक्षण कितना विस्तृत, गहन एवं सूक्ष्म है। कुछ पात्रों पर वनस्पतियों एवं पक्षियों के ऐसे चित्रों को काढ़ा जाता है कि जिसे देखकर लगता है कि पक्षी उड़ने को आमादा है। यह दृश्य लोक की मुक्ति-कामना का भी प्रतीक है। कढ़ाई में रंगों का प्रयोग भी अनायास नहीं होता। इसके भी अपने-अपने प्रतीकार्थ होते हैं। मसलन हरा रंग समृद्धि का प्रतीक है, मन की शाँति व दाह-मुक्ति का प्रतीक है। पीला रंग उल्लास, मंगल और सृजन का प्रतीक है। नीला रंग शीतलता का प्रतीक है।

बेना और पंखी में भी कढ़ाई की कला प्रदर्शित की जाती है। बेना की रचना का उपादान गेहूँ की सींक, सरपत का डंठल तथा बाँस की निश्चित आकार वाली पट्टी होती है। पंखी व पंखे की रचना का उपादान ताड़ का पत्ता, मोर पंख, कपड़ा आदि है। अवधी संस्कृति की झलक इन कढ़ाइयों में बखूबी मिलती है। हिन्दू वर्ग की सांस्कृतिक परम्परा में बिन्दी सौभाग्यवती स्त्रियों का मांगलिक श्रृंगार है। बिन्दी लगाने की कला श्री वर्धक है। बिन्दी विविध रंग की होती है। मनोवैज्ञानिक बिन्दी की पसंदीदगी के आधार पर स्त्रियों की मनःस्थितियों और चरित्र की वैज्ञानिक व्याख्या करने में समर्थ होते हैं। अवध-क्षेत्र में अगड़ी, पिछड़ी तथा दलित सभी वर्ग की स्त्रियाँ बिन्दी लगाती हैं। दलित वर्ग में बिन्दी को टीका या बुन्दा कहा जाता है। बिन्दी लगाने की कलात्मकता से स्त्री के मुख-मंडल की छवि निखर पड़ती है।

लोक-कला की विधाओं में खेल-खिलौने की रचना का विस्तृत फलक है। लोक कलाकार द्वारा निर्मित खेल-खिलौनों में लोक-विश्वास, लोक-रुचि, लोक-सौन्दर्यबोध, लोक-दृष्टि, लोक-कल्पना का चरणबद्ध इतिहास अंकित होता है। वस्तुतः लोक-कलाएँ मानव-विकास का सच्चा साक्ष्य है। लोक-रचना की सबसे बड़ी विशेषता लोक-मंगल एवं लोकरचना की है। लोक-रंजन भी रचनात्मक सीख देने का धनात्मक माध्यम है। घरौंदा, चकरी आदि खिलौने बच्चों में रचनात्मक विकास तो करते ही हैं, साथ ही उन्हें सक्रिय बनाये रखने का उपक्रम भी करते हैं। इसलिए जब यह बात की जाती है कि आज मशीनों द्वारा इन लोक-निर्मित वस्तुओं का स्थानापन्न होना, लोक संस्कृति का क्षरण है, तो इसका अभिप्राय

विज्ञान व विकास का विरोध करना नहीं होता, वरन् उसके चरित्र पर प्रश्न उठता है। या कि संस्कृति-अनुरक्षण पर उदासीनता को लेकर सवाल उठाया जाता है।

खेल-खिलौने के निर्माण के कई उपादान होते हैं- मिट्टी, कागज़, लकड़ी, कपड़ा, पौधे का डण्ठल, वृक्ष- खासकर आम के पत्ते, घास, फूस, धागा, रुई आदि। इन खिलौनों को निर्मित करने के प्रयोजन भी विविध हैं। कुछ खिलौने विभिन्न त्योहारों पर रचे जाते हैं। जैसे नागपंचमी त्योहार के अवसर पर अवध के विभिन्न भागों में कुछ परिवर्तन के साथ लड़कियाँ कपड़े से गुड़िया-गुड्डा बनाती हैं। गुड़िया-गुड्डा रच उठने पर उनका जन्मोत्सव मनाती हैं। उनका पोषण करने का प्रतीकात्मक उपक्रम करती हुई वय-विकास पर उन्हें विवाह योग्य मानकर उनकी शादी रचाती हैं। इन गुड़ियों-गुड्डों का रचाव, वस्त्र-विन्यास, शृंगार इतना आकर्षक होता है कि देखनेवाला मन्त्रमुग्ध हो जाता है। फिर अवध के अलग-अलग क्षेत्र की रीति के अनुसार कहीं प्रातः, कहीं मध्याह्न और कहीं अपराह्न लड़कियाँ इन्हें कहीं मैदान में तथा कहीं तालाब में फेंकती हैं, जिसे कलात्मक ढंग से रंगी हुई बेर की पतली तथा लम्बी छड़ी से लड़के पीटते हैं। अन्त में गुड़िया-गुड्डे को जल में विसर्जित कर दिया जाता है। इस खेल के माध्यम से बच्चों को सृष्टि-प्रक्रिया का सहज बोध कराया जाता है। समाज में नारी की नियति दर्शाकर उनके प्रति करुणा का भाव भी जगाया जाता है। इसके साथ ही यह खेल जीवन जीने की कला का पूर्वाभ्यास भी है।

विवाह के अवसर पर बढ़ई जाति का जातीय लोक-कलाकार लकड़ी की कारीगरी करता है। एक गढ़ी हुई लकड़ी की कलात्मक रंगाई कर उसे लड़की के विवाह-मंडप के मध्य गड़े बाँस के पास गाड़ देता है। तथा लकड़ी के परिन्दे- खासकर तोते गढ़कर रंग-संयोजन की सधी समझ से उसे रंगता है। कहीं-कहीं गौरैया तथा नीलकंठ आदि पक्षी भी गढ़े व रंगे जाते हैं। गड़े हुए रंगीन लकड़ी पर उन पक्षियों को जड़ दिया जाता है। अवधी परम्परा के अनुसार खिचड़ी खाने के बाद बच्चे उसे उखाड़ते हैं। लोक-कला की इस विधा से कई तरह की लोक-दृष्टियाँ उजागर होती हैं। विवाह के अवसर पर तोता 'संवदध्वम्' का बोध कराता है। अर्थात् समरसता, समायोजन का उद्बोध कराता है। इसी तरह नीलकण्ठ लोक-हित में विषपान का पाठ पढ़ाता है।

मिट्टी के बने खिलौने भी लोककला की अनूठी रचना है। लोकरंजन के लिए बने इन खिलौनों को बच्चे सदा पसन्द करते हैं। फिर भी दीपावली के अवसर पर मिट्टी के लोक कलाकार कुम्हार विशेष प्रकार के खिलौने रचता है- मुख्य रूप से जतोला, तराजू। यह श्रम के प्रति आस्था और परस्पर विनिमय का सार्थक संकेत है। साथ ही, इस अवसर पर मिट्टी से चिड़िया, हाथी, घोड़ा, मानव-आकृति, गणेश-लक्ष्मी, ग्वाल-ग्वालिन की भी रचना होती है। कहीं-कहीं ग्वालिन के हाथ पर दीप भी धरे जाते हैं। यह अन्धकार से प्रकाश की ओर गमन का प्रतीक है। इन रचनाओं में सम्पूर्ण सृष्टि को चित्रित कर सक्रियता तथा सभी जीव-जन्तुओं के प्रति सदय होने का उद्बोध कराया जाता है।

कृष्ण जन्माष्टमी, दुर्गा-पूजा आदि अवसरों पर भी मिट्टी के निपुण लोक कलाकार (ज़रूरी नहीं कि वह कुम्भकार ही हो), कृष्ण, दुर्गा, काली, सरस्वती, शंकर, पार्वती, गणेश, लक्ष्मी, पृथ्वी, गंगा आदि सभी देवी-देवताओं की ऐसी मूर्तियाँ रचते हैं, जिसे देखकर लगता है कि ये मूर्तियाँ नहीं, वरन् उनका प्राकृत रूप हो। दुर्गा और काली की ऐसी मूर्तियाँ रची जाती हैं, जिनकी अंकित छवि देखकर लगता है कि ये आसुरी शक्तियों पर ऐसी आक्रामक मुद्रा में है, कि जैसे प्रहार करने ही वाली हैं।

कागज़ की लुग्दी तथा लकड़ी से भी तमाम तरह के खिलौने बनाए जाते हैं। लकड़ी के बने दुपहिया, तिपहिया तथा चौपहिए से खेलता हुआ बच्चा मनोरंजन के साथ-साथ चलना भी सीख लेता है। प्रकृति के सहारे खेलनेवाले भी कई खिलौने बनाये जाते हैं। जैसे, कागज़ से 'फिरकी' बनाना। इसमें एक कागज़ को पंखे की पत्ती के आकार में बनाकर उसे एक डण्डे के मध्य शीर्ष पर काँटे से गोदकर उसे हवा में

घुमाया जाता है। लोक की इस खोज के सहारे वैज्ञानिकों ने तमाम आधुनिक यन्त्रों का निर्माण कर डाला है। लोक-कला में निपुण महिलाएँ कपड़े से भी शेर, कुत्ता, बिल्ली, घोड़ा, हाथी तथा तोता आदि निर्मित करती हैं। इससे बच्चों को दुनिया की चीज़ों का बोध होता है तथा उनके भीतर रचनात्मक धरातल को भी सृजित किया जाता है। मिट्टी से आम, केला, सन्तरा, सेब, पपीता, अमरूद आदि निर्मित होता है। इन चीज़ों को रचने का प्रशिक्षण प्रारम्भिक विद्यालय के बच्चों को भी दिया जाता है। इस प्रशिक्षण के माध्यम से बच्चे सीधे तौर पर रचना-प्रक्रिया से जुड़ते हैं। इस तरह की कार्यवाही के मद्देनज़र यह मानना पड़ेगा कि लोक-कला एक तरह से शिक्षणं-विधि भी है, जिसके प्रभाव से तमाम नवीन शिक्षण-पद्धतियों का उदय हुआ है- ख़ासकर माण्टेसरी शिक्षण-विधि।

गहना पहनने की परम्परा भी पुरानी है। गहना की कल्पना भी प्रकृति की देन है। रंग-बिरंगे फूलों, पत्तों एवं फलों से सज्जित वनस्पतियों तथा प्रकृति के अन्य दृश्यों व वन्य जीवों की नैसर्गिक सज्जा व सुषमा को निहारते हुए लोक-मानस में गहना की कल्पना का उदय हुआ। आरम्भ में प्रकृति के तत्त्वों से ही लोक ने अपना अलंकरण शुरू किया। धीरे-धीरे विकास के अनेक पड़ाव तय हुए। तमाम पदार्थों की जानकारी हासिल हुई। इन पदार्थों का शुद्धीकरण करते हुए पदार्थों से गहनों की गढ़ाई की कला शुरू हुई। पहले गिलट और ताँबे के गहने लोक में प्रचलित थे। दीवाली के अवसर पर लोहे की मुँदरी, ताँबे की तावीज़ पहनने की प्रथा थी। जैसा बार-बार कहा गया है कि लोक-कला निरा अलंकरण ही नहीं है, इसके पीछे वैज्ञानिक और सामाजिक सोच भी है। गहना पहनने से स्नायुमण्डल में संतुलन आने के साथ ही व्याधि-मुक्ति भी मिलती है, लोक की ऐसी सोच है।

आर्थिक विवशता व अलंकारप्रियता के चलते निर्बल वर्ग में गिलट के गहने पहने जाते थे। गिलट के गहनों पर स्वर्णकार द्वारा की गई नक़्क़ाशी उनकी कलात्मक ऊँचाई का परिचायक है। इनके आकार व डिज़ाइन का वैविध्य इन कलाकारों की कल्पना-शक्ति की अकथ कहानी भी कहते हैं। धीरे-धीरे उद्योगीकरण में वृद्धि हुई। सामन्ती शोषण की भयावहता कम हुई। श्रमिक वर्ग का शोषण भी कम हुआ तथा उनकी आर्थिक स्थिति भी पूर्व की अपेक्षा कुछ सुधरी। नतीजतन गिलट की जगह चाँदी का रिवाज फैला।

गहने की गढ़ाई करनेवाला लोक कलाकार जब सोना, चाँदी, मूँगा तथा मोती आदि की गढ़ाई करता है, तो केवल इन पदार्थों को कलात्मक रूप प्रदान करने तक ही सीमित नहीं होता। अंग-विन्यास पर भी ग़ौर करता है, जिसकी उसे गहरी समझ होती है। अंग विशेष के लिए गहने गढ़ते समय उसके दृष्टिगत ही वह आकार, रूप तथा डिज़ाइन तय करता है। ज़ाहिर है कि उसकी कलात्मक समझ इकहरी नहीं, वरन् संश्लिष्ट होती है।

अवध में प्रचलित प्रमुख गहने हैं- झुमका, टाप्स, तरकी, आइरन कीली (स्त्रियों के कान के गहने), कुण्डल (वर द्वारा कान में पहना जाता है), बाली (स्त्री-पुरूष दोनों का कर्ण-आभूषण। वैसे अधिकतर स्त्रियाँ ही पहनती हैं। हलवाई जाति के कुछ पुरुष भी इसे धारण करते हैं), कण्ठा, हार, हँसुली, हवेल, जंजीर, पटुली (स्त्री के गले का गहना), माला (स्त्री-पुरूष दोनों गले में पहनते हैं), टंड़िया, पहुँची, टड्डा (स्त्रियों के बाजू के गहने), कंगन, अगेला, छैल चूड़ी (स्त्रियों के हाथ के गहने), पायल, झाँझ, लच्छा, गोड़हरा, पैरी (स्त्रियों के पाँव के गहने, पैरी चौड़ी पट्टी का गहना होता है। इसका पहनना कष्टसाध्य होता है। इसका रिवाज़ समाप्तप्राय है। इस गहने के दबाव से रक्त-संचार संतुलित होता था), झुलनी, नथिया, नथुनी, नकबुल्ला, कील, फोंफी (स्त्रियों के नाक के गहने), माथबेंदी, टीका (स्त्रियों के माथ के गहने), कमरपेटी, करधन (स्त्रियों के कमर के गहने), बिछुआ (स्त्रियों के पैर की अँगुली का गहना), अँगूठी (स्त्री-पुरुष दोनों हाथ की अँगुली में पहनते हैं) आदि। इस तरह अनेक पदार्थों से विविध आकार एवं डिज़ाइन के बने गहनों का यदि व्यवस्थित अध्ययन किया जाय, तो हम अपनी सांस्कृतिक विकास-गति

का चरणबद्ध ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

अवधी लोक-कलाओं में संश्लिष्ट कला-रूप भी पर्याप्त मात्रा में देखने को मिलते हैं। चिपकाने की कला इसका आदर्श रूप है। इसमें कई कला-रूपों का संगुम्फन होता है। मिश्रित कला की ये छवियाँ अनुपम हैं। इनका प्रयोग कई अवसरों पर होता है।

लोक कला में हर्ष और शोक दोनों अन्तर्वस्तु बनकर आते हैं। जन्म का उत्सव हो या मृत्यु का अवसाद, लोक-कला में दोनों स्थितियाँ अंकित होती हैं; मोहर्रम मुस्लिम समुदाय का शोक-पर्व है। इस अवसर पर ताज़िया निकालने की प्रथा है। ताज़िया में चिपकाने की कला का सर्वाधिक उपयोग होता है। ताज़िया रचने का मुख्य उपादान है- बाँस, रंग-बिरंगा कागज़ व कपड़ा आदि। इनसे ताज़िया रचा जाता है। यह पर्व लोक के जीवट तथा आस्था को प्रकट करता है।

खेल हो या श्रृंगार, नृत्य हो या गायन कृष्ण लोक के अधिक निकट हैं। कृष्ण के सखा कृष्ण से यह भी कहते हैं- 'खेलन में को काको गोसइयाँ।' कृष्ण गाय भी चराता है। दधि भी चुराता है। आम बच्चे की तरह नटखट भी है। इसी कारण अवध में कृष्ण जन्माष्टमी सोल्लास मनायी जाती है। इस अवसर पर चिपकाने की कला की छवि अनुपम हो उठती है। कृष्ण की झाँकी रचनेवाला लोक कलाकार ऐसा रचाव करता है, जिसे देखकर प्रतीत होता है जैसे कृष्ण का समूचा चरित्र बोल उठता हो। झाँकी रचने का मुख्य उपादान कागज़, दफ्ती, पन्नी, मोती, पतंगी कागज़ तथा चमकीली अबरी आदि है। इनसे झालर, माला, बेल, फूल आदि बनाकर चिपकाए जाते हैं। कृष्ण की झाँकी में दफ्ती और काग़ज़ से जेल का रूप भी रचा जाता है।

अन्याय, असत्य, शोषण, दमन एवं उत्पीड़न के विरूद्ध संघर्षशील चेतना का उभार प्रदर्शित होता है, दशहरा त्योहार में। इस त्योहार में रामकथा के सभी पात्रों को ऐसा सजाया जाता है कि जैसे हम सचमुच राम-दल का दर्शन कर रहे हों। लोक-कला की यही सहज विशिष्टता है। इस सजावट के मुख्य उपादान हैं- विविध रंग, पाउडर, अबरी व पतंगी काग़ज़ आदि। इन उपादानों के उपयोग से चेहरे तथा मुकुट आदि का ऐसा रचाव किया जाता है कि सारे पात्र वांछित चरित्र के सहज पात्र प्रतीत होते हैं। यह भी चिपकाने की कला का अप्रतिम नमूना है। इस अवसर पर बाँस के बड़े ढांचे में काग़ज़ चिपकाकर रावण का पुतला रचा जाता है। अन्त में इसे जला व दगा कर जैसे अन्याय के अन्त का उद्घोष कर दिया जाता है।

चिपकाने की कला के विविध व आकर्षक रूप जातीय लोकनृत्यों में भी देखने को मिलते हैं। विवाह के अवसर पर चिपकाने की कला का भरपूर प्रयोग किया जाता है। रंग-बिरंगे कागज़ को कलात्मक रूप से काटकर उसका मोहक आकार बनाया जाता है। फिर उसे रस्सी में चिपका कर बीच-बीच में आम की पत्ती बाँध दी जाती है। इस प्रकार तैयार की गयी कलापूर्ण रस्सी को छाजन के समानान्तर चारों ओर बांस के सहारे बाँध दिया जाता है। मंडप के बीच सज्जित कलश भी रखा जाता है। कलश को विभिन्न रंगों एवं आटा से गोंठकर बीच-बीच में गोबर का पिण्ड चिपकाया जाता है। उस पिण्ड पर जौ को गोद दिया जाता है। सिन्दूर, दही, अच्छत, हल्दी, गुलाल तथा अबीर आदि को लगा देने के बाद मण्डप के बीच रखा हुआ कलश सौन्दर्य का छवि-पुंज-सा प्रतीत होता है। साथ ही मण्डप के धरातल पर कलात्मक रूप से चौक पूरा जाता है। अवध के अधिसंख्य भाग में मण्डप के बीच बाँस से सटाकर हेंगा (पाटा) गाड़ दिया जाता है। उस पर सिन्दूर, टिकुली, काजल, हल्दी आदि चिपकाया जाता है। इस तरह समूचा मण्डप आभा से भर उठता है। घर के मुख्य द्वारा के दोनों ओर पिंड़ोर से लिपाई करके चित्र बनाने की भी प्रथा है। उस चित्र पर भी सिन्दूर, दही, अच्छत, हल्दी आदि लगाया जाता है। ये कलाएँ जीवन के सौन्दर्य को निरूपित करते हुए श्रम में सुन्दरता की तलाश करती हैं। हेंगा (पाटा) इसी का प्रतीक है।

दूल्हा का मौर तथा दुलहन की मौरी की रचना भी इसी कोटि की कला है। इसकी रचना का ढाँचा

पटसन के डण्ठल से की जाती है। यह रचना धरिकार जाति का कलाकार करता है। इस ढाँचे को सुई-धागे की सहायता लेकर पतंगी काग़ज़ से आवरित किया जाता है। उसके बाद आवरण पर प्लास्टिक की बनी मोहक गुड़िया तथा पारदर्शी शीशा चिपकाया जाता है। अन्त में सुनहरी पन्नी से किनारे पर गोटा लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त विवाह के अवसर पर बहुविध कला-रूप कोहबर में भी प्रयुक्त होते हैं।

वस्त्र की ख़ोज एक तरह से मानव-सभ्यता के विकास का वह पड़ाव है, जिसे व्यवस्थित, साफ व प्रकट मानव-सभ्यता का प्रस्थान-बिन्दु माना जा सकता है। आदिम मानव प्राकृतिक त्रासदियों से मुक्ति पाने के लिए स्वयं किसी साधन-निर्माण का उपक्रम न कर गुफाओं, झाड़ियों तथा वृक्षों की शरण लेता था। धीरे-धीरे आदिम मानव प्रकृति के उन तत्त्वों की परख करता हुआ उसे बेहतर सुरक्षा-साधन के रूप में आकार देना शुरू किया। मसलन केले का पत्ता, भोज-पत्र, चौड़े पत्ते, खाल आदि को ऐसा रूप प्रदान किया, जो उसके लिए सुरक्षा-कवच बन गये। इसी का परवर्ती विकास छाता, बेना, पंखा, वस्त्र आदि है।

वस्त्र बनाने हेतु सूत तैयार करने एवं सूत से वस्त्र बनाने की सुदीर्घ परम्परा रही है। इसमें निरन्तर सुधार होता रहा। लम्बी अवधि के पश्चात् सूत बनाने एवं सूत से वस्त्र बनाने हेतु लोक ने अपने हाथों से यन्त्रों का निर्माण किया। लोक द्वारा निर्मित इन्हीं यन्त्रों का विकास आज स्थापित बड़ी-बड़ी मिलों के रूप में हमारे बीच है। इसके बावजूद अवध-क्षेत्र में हथकरघे से आज भी पर्याप्त मात्रा में वस्त्र बनाए जा रहे हैं। गौरतलब बात यह है कि बड़ी-बड़ी मिलों द्वारा बनाये जा रहे कपड़े पूँजीपतियों के मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति के चलते स्वास्थ्य-विरोधी हैं। जबकि हथकरघे द्वारा बनाए गए वस्त्र सज्जा, सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं सौन्दर्य की दृष्टि से जन हितकारी हैं।

पहले जुलाहा तथा दर्जी मौसम, पर्व, संस्कार, उम्र, देहदशा तथा समाज के अनुसार कपड़ा बनाते तथा सिलते थे। उन कपड़ों के रंग, डिज़ाइन तथा छापा आदि उसी अनुसार तय होता था। बहुत पहले अवधी मिरजई तथा छकलिया पूरे भारत में सराहे जाते थे। फिर धीरे-धीरे लँहगा, चुनरी, धोती, कुर्त्ता, पाजामा, कमीज़, रंग-बिरंगी तथा छापदार धोती, बहुरंगी किनारे वाली धोती, कुर्त्ता, सलवार, बुर्का, गमछा, साफा, शेरवानी तमाम तरह के वस्त्र लोक कलाकारों द्वारा बनाये जाने लगे। अवध के टाण्डा तथा मऊआइमा में पहले भी और आज भी विविध तरह के वस्त्र हथकरघे से बनते चले आ रहे हैं। इन कपड़ों की ख़ासियत यह है कि सभी मौसम में ये अनुकूल होते हैं। जबकि मिल के कपड़ों के साथ ऐसा नहीं है। वस्त्र के प्रसंग में भी साझा संस्कृति का बोध होता है। हिन्दू के प्रभाव से मुस्लिम वर्ग में धोती का प्रचलन हुआ और मुस्लिम के प्रभाव से हिन्दू वर्ग में पाजामें का।

खेद का विषय है कि एक ओर हमारी लोककलाएँ विलुप्त होती जा रही है और दूसरी ओर जो कुछ अवशिष्ट हैं, वे विरूपित होती जा रही हैं। इसलिए यदि हमें अपनी सांस्कृतिक विरासत बचानी है, तो लोक-कलाओं का सर्वेक्षण, संकलन, समीक्षण और संरक्षण की समवेत पहल करनी ही होगी।

लोक-कला और लोक-साहित्य

मार्कण्डेय

कला क्या है? इस प्रश्न का उत्तर अनेक शास्त्रीय मत-मतान्तरों द्वारा अनेकानेक उक्ति वैचित्रयों और गवेषणाओं से दिया जाता है, वस्तुतः यदि ध्यान से देखा जाय तो कला की वास्तविकता को मानसिक उलझाव द्वारा कुछ इतनी गहरी चीज बनाने की चेष्टा विचारकों ने की है, जो साधारण जन के लिए विस्मयजनक और चौंका देनेवाली हो। यद्यपि यह भी एक कला है, जिसने स्वयं अपनी परिभाषा को इतने उलझाव में डाल दिया है कि उसे साधारण सूझ-बूझ का आदमी अपने पास न देखकर कुछ ऐसी ऊँची वस्तु समझ ले, जिससे उसका सिर कला के प्रति श्रद्धा से नत हो जाय, आत्मीयता से नहीं। निश्चय ही इसमें कला के व्याख्याकारों की अहमन्यता छिपी हुई है, जिन्होंने अपनी ऊहा की तृप्ति के लिए कला को ईश्वरीय आत्मानन्द की वस्तु बनाकर उसे सर्वसाधारण से अलग कर दिया। कला की उन तमाम शब्दजाली परिभाषाओं में न जाकर हम यहाँ इतना कहना चाहेंगे कि मनुष्य का समस्त व्यापक, जीवन, उसकी रचना शक्ति, उसकी अनुभूतियाँ और व्यवहार सभी से कला का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। उदाहरणस्वरूप नगरों के बड़े संग्रहालय में संग्रहीत चित्र, मूर्तियाँ, पुस्तकें, सड़कों के अगल-बगल बने हुए पार्क, उनमें विभिन्न प्रकार के फलों और झाड़ियों के क्रम तथा किसी महापुरुष की बनी हुई संगमरमर की मूर्ति, विभिन्न प्रकार की मानव आकृतियों तथा उनके विभिन्न कपड़े, उनकी सिलाई तथा घरों में लगे चित्र, टेबुल पर रखी हुई पुस्तकें तथा उनकी सजावट के क्रम, सभी में कला का रूप छिपा हुआ है। 'इन पदार्थों की उपस्थिति हमें सूचित करती है कि कला सभ्य आदमी के जीवन का एक भाग है। क्योंकि हम प्रायः उससे या उन में सन्निहित विचारों से कभी-कभी घिरे रहना चाहते हैं। अन्यथा उन्हें यह स्थान न प्राप्त होता।'[1]

यहाँ दो प्रश्न स्वतः उठ खड़े होते हैं, जो एक दूसरे के सामान्यतः पूरक से हैं। पहला यह कि क्या कला की उपर्युक्त परिस्थिति लोक-जीवन में भी यही है। दूसरा यह कि वर्सफोल्ड के अनुसार क्या सभ्य आदमी ही इन कलात्मक वस्तुओं से घिरा रहना चाहता है और कभी-कभी उन वस्तुओं के बारे में या उनके अन्तर्निहित विषय के बारे कें सोचता है? इस प्रश्न के उत्तर ही में लोक-कला की परिभाषा निहित है। यदि थोड़ा सा ध्यान दिया जाय तो यह बात स्पष्ट हो जायगी कि लोक जीवन में कला का वह उपर्युक्त स्वरूप सामाजिक विकास के उस काल का है, जब उत्पादन की अवस्था उन्नत हो चुकी थी और यह उन्नत उत्पादन क्रिया आम जनता की पहुँच के बाहर हो चुकी थी। और इस काल में श्रम और कलात्मक निर्माण के बीच व्यापार घुस आया था, क्योंकि उन्होंने, जो श्रम को खरीदकर उत्पादन और व्यापार करने लगे थे, कला को भी खरीदकर उसे उत्पादन का साधन बना लिया और इस तरह कला भी व्यापारिक हो गयी। इसलिए कला मानव शरीर और मानव-मुखी न होकर मशीन-मुखी हो उठी। कथा और संगीत के लिए सिनेमा और रेडियो हो गये, ज्ञान और उल्लास का मौखिक शारीरिक रूप पुस्तकों में संग्रह होने लगा यानी प्रेस अस्तित्व में आ गया। फलतः कलात्मक सामग्रियों के लिए बाजारों की जरूरत उठ खड़ी

हुई, जिससे रचयिता और जनता में सम्बन्ध टूट गया। जनता का सम्बन्ध रचना से हो गया और रचनाकार का सम्बन्ध उसके प्रचारक या व्यापारी से, इसके फलस्वरूप कला में तीन बातें विशिष्ट हुईं, पहली- कला उन्हीं के द्वारा निर्मित होने लगी जो उत्पादन के साधनों पर प्रतिष्ठित थे, दूसरी- कला निर्माता एक व्यक्ति होने लगा जिससे वह आत्मपरक होने लगी, तीसरी- कला जनता के हाथों से निकल गयी और उसे बनाने सँवारने का अधिकार भी जनता के अधिकार से जाता रहा।

सभ्य आदमी की कला मध्यवर्ग के विकास के साथ भयानक व्यापारिक मनोवृत्तियों की शिकार होती गई। ये बुर्जवा समाज मनुष्य-मनुष्य के बीच आत्मस्वार्थ के अलावा कोई रिश्ता शेष नहीं छोड़ता।2 इसलिए असभ्य जिसे अंग्रेजी में 'फौक' और हिन्दी में 'लोक' कहा गया, की कला में स्वाभाविक वैपरीत्य आता गया, लोक-जीवन में उपर्युक्त प्रकार के कलात्मक स्वरूप न हों, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता, पर वे हैं नहीं के बराबर, अपने देश में तो इसके उदाहरण यदा-कदा ही मिलेंगे क्योंकि उत्पादन के साधनों का यहाँ उतना केन्द्रीकरण नहीं हुआ है, जितना कि पश्चिमी देशों में।

लोक-कला की वास्तविक व्याख्या, उसकी ऐतिहासिक परम्परा के अप्राप्य होने के कारण अनेक प्रकार की अटकलबाजियों का विषय बन गयी है, आदि मानव की भाषा, उसकी दस्तकारियाँ तथा अन्य सामाजिक आमोद-प्रमोद के साधनों के बहुत कम या नहीं के बराबर उद्धरण मिलते हैं। इससे लोक-कला के आदि स्वरूप का एक वास्तविक खाका बनाना मुश्किल हो जाता है। फिर भी इन बिखरे हुए सूत्रों की पकड़ के लिए निम्नांकित तीन बातों से सहायता ली जा सकती है।

सुसंस्कृत और सभ्य राष्ट्रों की उस जनता का जीवन रीति-रिवाज तथा संगीत-नृत्य आदि का अध्ययन जो नगर से दूर है, उदाहरणस्वरूप भारतवर्ष के गाँवों की जनता। यहाँ संभवतः यह कह देना अनुचित नहीं होगा कि ब्रिटेन आदि कतिपय देशों में लोक-जीवन का स्वरूप धीरे-धीरे लुप्तप्राय हो गया है, नगर की संस्कृति ने गाँव के आचार-विचार, उनकी रहन-सहन का आचमन कर लिया है। उसका एकमात्र कारण यही हो सकता है कि वहाँ उत्पादन के साधनों में मशीन का बहुत अधिक हाथ हो गया है जिससे कला के मशीन निर्मित माध्यमों का प्रभाव जनता के जीवन पर छा गया है, लेकिन एक बात का ध्यान रखना जरूरी है कि 'कभी-कभी कलात्मक अभिव्यक्ति इन सामाजिक उन्नत अथवा अवनत दशा का प्रतिबन्ध नहीं मानती। यह अच्छी तरह से ज्ञात है कि कलात्मक उत्कर्ष का कुछ काल आम सामाजिक उत्कर्ष से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। न तो उसकी भौतिक परम्पराओं या पिछड़ी हुई संस्थाओं ही से उसका कोई नाता होता है, ग्रीक्स का उदाहरण आज के राष्ट्रों को ध्यान में रखकर लीजिए या शेक्सपियर ही को देखिये।3

उन पिछड़ी हुई असभ्य जातियों का जीवन, उनकी प्रथाएँ, विश्वास और आमोद-प्रमोद इत्यादि का अध्ययन जो सभ्यता के संपर्क में आयी ही नहीं हैं। जैसे छोटा नागपुर इत्यादि के इलाका में बसनेवाले जंगली लोग या आसाम की पहाड़ियों में निवास करने वाली विभिन्न जातियाँ, जिनका श्रम आत्मपोषण ही के लिए है। इन जातियों में श्रम-विभाजन के रूप भी बहुत मामूली हैं। प्रायः वह स्त्री पुरुष के आधार पर ही है, इनके जीवन का अध्ययन हमें लोक-कला की उन परम्पराओं से परिचित करा देने में सफल होगा जिसे हम आदि मानव की कला कहते हैं और जिसका बहुत गहरा प्रभाव लोककला पर पड़ा है, उदाहरणतः जादू की कला, भूत-प्रेतों की कहानियाँ तथा लोक-जीवन पर उनका प्रभाव, उनके नृत्य-संगीत आदि।

लोक-कला तथा लोक-संस्कृति के अध्ययन के लिए निर्मित विभिन्न सिद्धान्त, जिससे उनके जीवन के विकास सम्बन्धी अनेक प्रकार के सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक कारण बनाये गये हैं, विभिन्न ऐतिहासिक खोजों, पुरातत्त्व तथा मूर्तिकला इत्यादि के प्राचीनतम नमूने, विभिन्न देशों के वे प्राचीनतम ग्रन्थ जिनमें सामाजिक जीवन को आदि परम्परा का आभास मिलता है, इस काम को वैज्ञानिक बनाने में सहायता दे सकते हैं। गोमैं महोदय की यह स्थापना है लोक-साहित्य में इतिहास की वैज्ञानिक

परम्परा छिपी हुई है। इसी के अध्ययन से आदिकालीन मानवता का उचित इतिहास लिखा जा सकता है।4 वेदों के अध्ययन में भी काफी सामग्री मिल सकती है। लोकगाथाओं का आदि स्वरूप इन्हीं धर्मगाथाओं में छिपा हुआ है, इसी तरह लोक-कथाओं की प्राचीनतम जानकारी के लिए पंचतंत्र का अध्ययन कतिपय देशी एवं विदेशी विद्वानों द्वारा किया गया है।

प्रस्तुत सामग्री और विचार-विमर्श को देखते हुए लोक-कला को हम जनता की रचना के नाम से अभिहित कर सकते हैं, क्योंकि आदिकालीन मानव की समस्त क्रिया ही कला के क्षेत्र-विस्तार में आ जाती है। श्रम-विभाजन न होने के कारण एक ही व्यक्ति को भौतिक और मानसिक दोनों प्रकार के कलात्मक निर्माण करने पड़ते थे। तीरन्दाज तीर चलाने में ही निपुण होकर अपना काम समाप्त नहीं समझता था, उसे तीर बनाने की कला में प्रवीणता प्राप्त करनी पड़ती थी। आज की तरह शिकारी को केवल अच्छा निशाना लगा लेने ही से फुरसत नहीं मिल जाती थी। इस तरह कलात्मक निर्माण में दैनिक जीवन की आवश्यकताओं ही की प्रधानता थी और इसकी रचना तथा उपभोग में सारे समुदाय का एक-सा हाथ था। रचनाकार और उपभोक्ता में कोई भी बिलगाव नहीं था, फल यह हुआ कि इस कला में एकरूपता की प्रधानता होती गयी। यह तो सामाजिक विकास का फल था कि बाद की मानसिक और भौतिक कलात्मक निर्माण की कोटियाँ अलग हुईं, लेकिन इसका अभिप्राय यह नहीं कि कलात्मक निर्माण में भौतिक उपयोग का प्रयोग ही रुक गया। एक नन्हीं सी टोकरी बनाने की जहाँ सामाजिक उपयोगिता थी, वहीं उसमें नयी बुनाई, और नया रूप देने के लिए मानसिक कलात्मक अभिरुचियों का पुट देना पड़ा। यह अवश्य हुआ कि धीरे-धीरे इन कला वस्तुओं के बनाने की कला में विशेषीकरण की प्रवृत्ति बढ़ने लगी और समुदायों में खाद्य सामग्री के दिन-दिन अधिक इकट्ठी होने अथवा खेती के प्रारम्भ होते-होते इनका प्रभाव बहुत बढ़ गया। उसे दो रूपों में देखा जा सकता है। एक तो यह कि प्रचुर खाद्य सामग्री के इकट्ठी होने पर कलाकार मनोयोगपूर्ण इस काम में लगा। दूसरा यह कि उन लोगों के लिए कलात्मक वस्तुओं का निर्माण होने लगा जो अधिक से अधिक खाद्य सामग्री रखते थे और कलात्मक वस्तुओं को खरीदते थे। ऐसी हालत में कला की किस्म और गुण पर उनकी विशेष दृष्टि रहती थी जो इसे खरीदते थे।

आदिम मानव की कला में अस्तित्व रक्षा की ही प्रधानता दिखायी पड़ती है। वह सारे उपक्रम, जिनसे आदिम युग का मानव जीवन यापन करता था, उसकी कला के क्षेत्र में आ जाते हैं, पर लोक-कला का क्षेत्र इससे अधिक विस्तृत और समय बाद का है। यदि ध्यानूपर्वक देखा जाय तो लोक-कला सवर्ग समाज में श्रमशील जनता द्वारा अर्जित कलात्मक अभिव्यक्तियों के रूप में हमारे सामने आती है। समाज में वर्गों के निर्माण हो जाने पर श्रमिक वर्ग की मूल चेतना ही परिवर्तित हो गयी, क्योंकि श्रमिकों का जीवन-निर्वाह, आचार-व्यवहार, शिक्षा-दीक्षा, सब पर उनकी सामाजिक स्थिति का प्रभाव पड़ा। और फलस्वरूप सौन्दर्य के प्रति उनकी दृष्टि भी बदलती गई। धीरे-धीरे जीवन की सच्चाइयों में सौन्दर्य की यथार्थवादी रुचि तथा अपने शोषकों के प्रति आक्रोश की भावना लोक-कला का क्षेत्र बनती गई। यद्यपि इसकी परम्परा में आदिम अन्धविश्वास की कहानियाँ और भूत-प्रेतों के गीत धीरे-धीरे कम होते गये पर उनका पूर्ण ह्रास अब तक भी नहीं हो पाया।

जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है कि लोक-जीवन का समस्त निर्माण लोक-कला के अन्तर्गत आ जाता है पर लोक-मानस की व्यापक अनुभूतियों का प्रचार उनके कुछ ही माध्यमों से प्रस्तुत हो पाया है। उदाहरण स्वरूप लोक-नृत्य और लोक-साहित्य। वैसे भिन्न-भिन्न कला के रूपों में उत्सवों या शादी-ब्याहों की अल्पना, स्त्रियों के हाथ पर गुदे हुए गोदने इत्यादि भी लोकमानस की अभिव्यक्तियों में शामिल किये जाते हैं, पर उनका भी परम्परागत स्वरूप नहीं मिल पाता। जहाँ तक उपयोगी कलात्मक वस्तुओं का प्रश्न है उन्होंने श्रम-विभाजन में अलग-अलग रूप ले लिया है जैसे-- लुहार, कुम्हार, सुनार

इत्यादि जो आज भी देहातों में अपनी पारिवारिक परम्परा से लगे हुए हैं और इनकी कला भावात्मक अभिव्यक्ति न होकर एक पेशा बन गयी है जो उनके जीविकोपार्जन का माध्यम है।

यहाँ यह बात जान लेना जरूरी है कि हमारे देश की समस्त लोक-कला वर्गों से भी नीचे अन्तःवर्गों में विभक्त है। अपनी पारिवारिक परंपरा से एक निश्चित काम में लगी हुई जातियों का एक अलग सौन्दर्य-शास्त्र बन गया है। इसी कारण गीत और नृत्य भी हमारे देश में भिन्न-भिन्न जातियों के नाम पर हैं।

इस तरह लोक-कला को यदि जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्तिवाले वस्तु निर्माणों से अलग करके देखा जाय तो लोक-नृत्य और लोक-साहित्य ही दो ऐसे रूप मिलते हैं, जिनमें लोकमानस की सौन्दर्य-दृष्टि पूर्ण कलात्मक रूप में समाहित मिलती है, क्योंकि उपयोगी कला में, जैसा हमने ऊपर देखा है, जनता की जीवन-वृत्ति का साधन छिपा हुआ है, जिसका विस्तार उनका समस्त जीवन ही है। लेकिन कला की कोटि ही कुछ दूसरी है। यह प्रतीकात्मक अथवा यथार्थ-निष्ठ चित्रण का वह माध्यम है जो किसी वस्तु विशेष के माध्यम से किसी अन्य भाव का आभास देता है। दूसरे शब्दों में कला भौतिक स्थूलता नहीं, भावात्मक अभिव्यक्ति है। इस तरह से 'यह जीवन और संसार के बीच सच्चाइयों का अप्रत्यक्ष तन्तु है।'5

श्रमशील जनता द्वारा श्रमशील जनता के लिए रची जानेवाली कला जो मौखिक या शारीरिक भावाभिनय के माध्यम से उत्पन्न होकर कानों या आँख के सहारे दूसरों तक पहुँचती है, इसे ही लोक-कला के अन्दर ले सकते हैं। सुप्रसिद्ध विद्वान् हीगल वास्तुकला को निम्नतम और काव्य को उच्चतम कला मानते हैं। संभवतः वास्तुकला को इतना नीचा स्थान देने का कारण यही है कि इसमें भावाभिव्यक्ति के लिए भौतिक पदार्थों की सहायता ली जाती है और काव्य में भावों का सूक्ष्म चित्रण ध्वनियों मात्र से हो जाता है। सभ्य समाज के साहित्य में भी इसी प्रकार की भौतिक साधनों के शक्तियों का उपयोग होने लगा है। महाकवि की रचना बढ़िया पेपर पर अच्छी छपाई और रंग-बिरंगे कवर में छपकर ही जनता को नयनाभिराम लगती है पर लोक-कला में इन समस्त भौतिक पदार्थों का कोई उपयोग नहीं होता। ध्वनि और भावों का प्रयोग मानवीय यथार्थ को इतनी गहराई से व्यक्त करता है कि श्रोता या दर्शक अपने जीवन की सच्चाई का प्रत्यक्ष दर्शन उसमें पाने लगते हैं। लोक-साहित्य में इस तरह का कोई भौतिक उपक्रम नहीं प्रयुक्त होता। लोक-मानस की सर्वाधिक कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए लोक-साहित्य को लोक-कला के प्राण के रूप में स्वीकृत किया जा सकता है।

फॉकलोर शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 1846 ई. में डब्ल्यू.जे. थाम्सन ने प्रारम्भ किया था। हमारे यहाँ इसको कई संज्ञाये दी गई हैं, जिनमें 'लोक-साहित्य', 'लोकवार्ता', 'लोकगीत', 'ग्राम-गीत' इत्यादि प्रमुख हैं। फॉकलोर के क्षेत्र विस्तार को देखते हुए इसे 'लोक-साहित्य' कहना ही उपयुक्त होगा। शार्लट सोफिया बर्न के अनुसार इसके अन्तर्गत परम्परागत विश्वास, रीति-रिवाज, कथायें, गीत और असभ्य लोगों के या उन अर्ध-विकसित वर्गों की कहावतें जो किसी विकसित समाज के पीछे रह गए हैं, आ जाती हैं। इसमें आदि युग के जंगली विश्वास भी आ जाते हैं जो या संसार के या आदमी के स्वभाव या उनके द्वारा बनायी गई चीजों के प्रति हों। आत्मा की दुनियाँ और आदमी का उससे सम्बन्ध, भूत-प्रेतों की कथाएँ, भाग्य, रोग और मौत इत्यादि का भी चित्रण इनमें मिलता है। इनमें विवाह आदि प्रथाओं, त्योहारों, लड़ाइयों, शिकार, चरवाओं तथा मछुआरों की भी चर्चा रहती है।

मुख्य रूप से इसमें जादू सम्बन्धी चमत्कारिक प्रवृत्तियों से युक्त कथाएँ, गाथाएँ, गीत, मुहाविरे और नन्हें बच्चों के गीत होते हैं,6 लेकिन यहाँ हम लोक-साहित्य को मुख्यतः तीन रूपों ही में लेंगे, लोक-गीत, लोक-गाथा और लोक-कथा। गीतिनाट्य की तरह मिलनेवाली छोटी-छोटी कहानियों को हम लोक-गाथाओं

के अन्दर ही लेंगे। इस तरह नरसरी रीम्स को लोक-गीतों के अन्दर ही रखना उचित है।

समस्त लोक-साहित्य की भावाभिव्यक्ति दो प्रकार की है। एक को उत्सवप्रभूत और दूसरी को जातिप्रभूत कहा जा सकता है। इस उत्सवप्रभूत साहित्य में जनजीवन का सामयिक उत्साह भरा हुआ है। यदि उन्हें जनजीवन की विजय के गीत कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। ऐसा नहीं है कि इनमें जनता का संघर्ष चित्रित नहीं है, पर उनमें कहीं भी निराशा और अवसाद के चिह्न नहीं मिलेंगे। जातिप्रभूत साहित्य में पेशे की बातों और कठिनाइयों का चित्रण मिलता है। यहाँ यह भी कह देना अनुचित नहीं होगा कि विशेष जातियों के भी विशेष त्योहार होते हैं। इस तरह जाति तथा उत्सव-साहित्य का एक दूसरे से अनन्य सम्बन्ध है।

कुछ विद्वानों का कहना है कि लोक-नृत्य मानव की आदि-कला है। शब्द तो आदमी ने बाद को सीखे और शारीरिक भावाभिव्यक्ति को धीरे-धीरे ध्वनियों से भरकर उसने संगीत बनाये। पर लोक-जीवन और उसकी कला का अध्ययन करने पर पता लगता है कि बाद को चलकर धीरे-धीरे गीतों ने लोक-मानस के चित्रण का अधिक हिस्सा ले लिया। आज तो प्रायः नृत्य का भी आधार गीत बन उठा है। शायद ही लोक-नृत्यों का कोई हिस्सा होगा जो गीतों के बिना चलता हो। जातिगत नृत्यों में भी नृत्य का प्रारम्भ गीति से होगा, और उन्हीं भावों के संकेत पर शारीरिक चालन होगा, जो गीत में सन्निहित है। इसी तरह त्यौहारों के नृत्य में भी गीत की प्रधानता हो उठी है। इतना ही नहीं, उपयोगी कला-निर्माण में लगे हुए नर-नारियों की भावाभिव्यक्ति के लिए गीत और कहानियाँ बनी हुई हैं, इस तरह लोक-कला के व्यापक क्षेत्र में लोक-साहित्य का इतना अधिक प्रभाव है कि लोक-साहित्य का अध्ययन ही लोक-कला का अध्ययन बन उठा है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से भी अन्य माध्यमों का कोई परम्परागत अवशेष उपलब्ध नहीं है। हाँ, लोक-मानस में अनादिकाल से मौखिक परम्परा स्वरूप चलते हुए लोकगीत, कथाएँ और लोक गाथाएँ हमें इस ओर कुछ दूर तक पहुँचाने में समर्थ हो पाती हैं। सम्भवतः महात्मा गाँधी ने इसलिए कहा है, 'लोकगीत ही जनता की भाषा है।'7

लोक-साहित्य ही में लोक-कला का समस्त सार उपस्थित है। इसी के माध्यम से लोक-जीवन की समस्त क्रियाओं का लेखा-जोखा उपस्थित किया जा सकता है, क्योंकि कला के अन्य पक्ष बदली हुई परिस्थितियों में या तो लुप्त हो गये या उनके आधार पर बने भी तो बहुत कम, क्योंकि आम जनता के मनोभावों के आधार पर इस काल में कला का वह व्यापारिक स्वरूप शुरू हो गया, जिसे मिल से थककर लौटा हुआ मजदूर कमाई की गिनी-गिनाई कौड़ियों के माध्यम से खरीदने लगा और इस तरह आर्थिक घुटन में पिसकर उसकी कलात्मक भावना सोती गयी।

इसलिए लोक-साहित्य को लोक-कला के प्रतिनिधि रूप में स्वीकार करना चाहिए। मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि लोकजीवन की भावाभिव्यक्तियों के अन्य माध्यम नहीं हैं या लोक-कला के अन्य रूप लोक-साहित्य के पूरक मात्र हैं, या उनका स्वतन्त्र अध्ययन अपेक्षित नहीं है, पर लोक-साहित्य में लोक-कला तथा लोक-जीवन की मुख्य भावाभिव्यक्तियाँ सर्वाधिक और सर्वश्रेष्ठ मात्रा में चित्रित मिलती हैं, जो लोककला के अन्य माध्यमों में भी समाहित हैं। वैसे लोक-साहित्य, लोक-कला का अंग मात्र है, पर उसके समग्र स्वरूप का प्रतिनिधि भी है।

सन्दर्भ : 1. डब्ल्यू.वैसिल वर्सफोल्ड, जजमेन्ट इन लिटरेचर, पृ.1, 2. मार्क्स और एन्जिल्स, कम्युनिस्ट मैनिफैस्टो। 3. कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एन्जिल्स, लिटेरेचर एण्ड आर्ट, 4. जी.एल. गौमैं, फौक लोर एज हिस्टारिकल साइन्स, 5. लुइस हैरप, सोशल रूट्स आफ दी आर्ट्स, पृ.16, 6. शार्लट सोफिया बर्न, दी हैण्डबुक आफ फॉकलोर, पृ.1, 7. महात्मा गाँधी, भूमिका-दे.स., धरती गाती है।

लोकभाषाओं का प्रभामण्डल

जगन्नाथ त्रिपाठी 'शारदेय'

किसी भी भाषा का सहज, अनगढ़ रूप ही लोकभाषा कहलाता है। लोकभाषा जनसामान्य की जिह्वा पर आरूढ़ होकर नितान्त स्वाभाविक रूप से, मुक्तभाव से गतिमान रहती है। इसके विपरीत साहित्यिक भाषा का परिष्कार होता रहता है, व्याकरण के नियमों से उसे नियन्त्रित करने का या बाँधे रखने का प्रयत्न होता रहता है। लोकभाषा इसी आधार पर साहित्यिक भाषा से भिन्न हो जाती है कि साहित्य की रचना के कारण क्योंकि साहित्य की रचना तो साहित्यिक भाषा और लोकभाषा दोनों में होती रहती है।

लोकभाषा को ही बोली भी कहा जाता है। यहां यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि किसे भाषा कहा जाए और किसे बोली। वास्तव में भाषा और बोली में तात्विक अन्तर नहीं होता। आज की बोली कल की भाषा बन सकती है (जैसे भोजपुरी, यदि संविधान की आठवीं सूची में चली जाए) और आज जो भाषा बनी बैठी है, कल एक बोली मात्र रह जाए। एक हाल का उदाहरण सामने है। दिल्ली के आस-पास की बोली परिष्कृत होते-होते पूरे भारत की राष्ट्रभाषा-राजभाषा बन गई और कभी जो भाषा के नाम से अभिहित थी, वह ब्रजभाषा आज एक बोली मात्र रह गई है। (ब्रजभाषा की कभी यह स्थिति थी कि वह उत्तर भारत की काव्यभाषा तो थी ही, दक्षिण के एक राजा भी ब्रजभाषा में काव्य रचना करते थे।)

सुप्रसिद्ध भाषाविद् डॉ. रामविलास शर्मा का कहना है कि लन्दन (या मिड्लैण्ड) की बोली आज विश्वस्तर की भाषा बनी बैठी है। मास्को की बोली रूस जैसे महादेश की भाषा है और कलकत्ते के आस-पास की बोली परिनिष्ठित बंगला भाषा बन गई है। एक बात यह भी ध्यातव्य है कि इन भाषाओं के विभिन्न स्थानीय रूप भी अपने-अपने क्षेत्र में साथ साथ चल रहे हैं। डॉ. शर्मा का मानना है कि वास्तव में जो स्थान सत्ता या उत्पादन-वितरण का केन्द्र होता है, वहां की बोली विकसित होकर व्यापक परिनिष्ठित भाषा बन जाती है।

भाषा एक समष्टि या समूह का द्योतन करती है, जिसके अंतर्गत कई-कई बोलियां आ जाती हैं जो अपने अलग-अलग क्षेत्रों में बोली जाती है। 'पांच कोस पर पानी बदले, सात कोस पर बानी' वाली कहावत इन बोलियों पर ही लागू होती है न कि भाषाओं पर। भोजपुरी, अवधी, ब्रजभाषा आदि इस अर्थ में भाषाएं मानी जा सकती हैं कि इनमें से हर एक का क्षेत्र बहुत विस्तृत है और एक एक भाषा के अंतर्गत कई-कई बोलियां आती हैं। बैसवाड़े की बोली वही नहीं है जो गोंडा, बहराइच की है फिर भी दोनों अवधी भाषा ही हैं। इसी प्रकार वाराणसी और बलिया की बोलियां आपस में बहुत कुछ भिन्न होते हुए भी भोजपुरी भाषा की ही बोलियां हैं।

लोकभाषाओं की विशिष्टता की चर्चा करने से पूर्व कुछ भ्रान्त धारणाओं का निराकरण आवश्यक है। यह धारणा भ्रान्तिपूर्ण है कि मध्य एशिया के किसी स्थान पर कोई एक मूलभाषा प्रचलित थी, जिसके बोलने वाले धीरे धीरे बिखर गए और उसकी एक शाखा संस्कृत को लिए भारत आ गई। संस्कृत भारत

की ही किसी अति प्राचीन प्राकृत से विकसित हुई है। हमारी खड़ी बोली वाली हिन्दी भी एक अन्य प्राकृत से विकसित हुई है। यह धारणा भी भ्रान्तिपूर्ण है कि हिन्दी संस्कृत की पुत्री है। संस्कृत भाषा हिन्दी की धात्री है, पोषिका है, मौसी है, दादी है, नानी है, पर माता नहीं। दोनों की प्रकृति में मौलिक अन्तर है। संस्कृत में 'रामस्य पुत्र', 'रामस्य पुत्री', 'सीतायाः पुत्रः', 'सीतायाः पुत्री' होता है, जबकि हिन्दी में 'राम का पुत्र', 'राम की पुत्री', 'सीता का पुत्र', 'सीता की पुत्री' होता है। संक्षेप में, सम्बन्ध सूचक विभक्ति संस्कृत में 'पुत्र' हो या 'पुत्री' 'रामस्य' ही होगी, जबकि हिन्दी में 'पुत्र' के पहले 'का' और 'पुत्री' के पहले 'की' होगा। संस्कृत में 'सः गच्छति', 'सा गच्छति' होता है, जबकि हिन्दी में 'वह जाता है', 'वह जाती है' होता है। लिंग, वचन, सम्बन्धी भी कई भेद हैं।

इसी प्रकार एक भ्रान्त धारणा यह है कि भोजपुरी, अवधी, ब्रजभाषा, आदि भाषाएं खड़ी बोली की अपभ्रंश हैं अर्थात् इसका बिगड़ा रूप, गँवारू रूप हैं। उर्दू के एक विद्वान ने उर्दू को ब्रजभाषा से निकली हुई बताया था और पं. रामनरेश त्रिपाठी ने अवधी को हिन्दी की पुत्री बताया था जिसका प्रतिवाद राहुल जी ने किया था।

हमें यह समझ लेना चाहिए कि जैसे हिन्दी की अपनी स्वतन्त्र सत्ता है, अपना व्याकरण है, अपने नियम हैं, कानून हैं, वह संस्कृत की दासी नहीं है। उसी प्रकार ये लोकभाषाएं भी खड़ी बोली की अपभ्रंश नहीं हैं। धातुगत समानता होते हुए भी प्रत्येक की अपनी स्वतन्त्र सत्ता है, अपना व्याकरण है।

एक छोटे से उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी। खड़ी बोली का एक वाक्य है, 'वह चलता है।' भोजपुरी का भी एक वाक्य है 'ऊ चलत ह।' ऊपर से देखने में लगता है कि भोजपुरी का वाक्य खड़ी बोली के वाक्य का अपभ्रंश मात्र है, जरा सा रूपान्तरित हो गया है। पर जरा बारीकी से देखिए। 'ऊ चलत ह' वास्तव में 'वह चल रहा है' का समानार्थी है, 'वह चलता है' का नहीं। 'वह चलता है' का भोजपुरी रूप होता है 'ऊ चलेला'। यह कितने विस्मय की बात है कि खड़ी बोली का 'चलता है' च्तमेमदज प्दकमपिदपजम ज्मदेम है जबकि भोजपुरी का 'चलत ह' च्तमेमदज ब्वदजपदनवने ज्मदेम है। ऐसी स्थिति में किसी को यह कहने का दुस्साहस नहीं करना चाहिए कि लोकभाषाएं खड़ी बोली की अपभ्रंश मात्र हैं।

एक और उदाहरण है धातुओं का। लोकभाषाओं की धातुएं खड़ी बोली की धातुओं के निकट होते हुए भी अपना अलग अस्तित्व रखती हैं। बहु प्रयुक्त धातु 'आना', 'जाना' से हम सभी परिचित हैं। खड़ी बोली में होता है 'आता है', 'जाता है', परन्तु भोजपुरी में 'जात ह' तो होता है, पर 'आत ह' नहीं, बल्कि 'आवत ह' होता है। (अपवाद स्वरूप इटावा की बोली में 'आत है' भी होता है।) इसी प्रकार खड़ी बोली में 'आता है' 'बजाता है' आदि होता है, जबकि भोजपुरी में 'गावत ह', 'बजावत ह', 'बनावत ह' आदि। इसका क्या कारण है? कारण है धातुओं की भिन्नता। खड़ी बोली की धातुएं हैं 'आना', 'गाना', 'जाना', 'बनाना' आदि जबकि भोजपुरी की धातुएं हैं, आवना (आवल), गावना (गावल), बजावना (बजावल), बनावना (बनावल) आदि। हँसना, चलना, पढ़ना, लिखना, आदि धातुएं दोनों भाषाओं में समान हैं। हँसेला, चलेला, पढ़ेला और आवेला, गावेला, बनावेला, आदि से स्थिति और स्पष्ट हो जाती है।

खड़ी बोली और भोजपुरी में और भी कई भिन्नताएं हैं। क्रिया रूपों के कुछ उदाहरण यहां देखें। सकर्मक क्रियाओं के सामान्य भूतकाल के रूप खड़ी बोली में कर्म के लिंग, वचन के अनुसार बदलते हैं किन्तु भोजपुरी में कर्ता के अनुसार, जैसे-

राम ने एक केला खाया।
राम ने दो केले खाए।

राम ने एक बिल्ली देखी।
राम ने दो बिल्लियां देखीं।

क्रिया के रूप 'खाया', 'खाए', 'देखा', 'देखी' कर्म 'केला', 'केले', 'बिल्ली', 'बिल्लियां' के अनुसार परिवर्तित हुए हैं। कर्त्ता राम के स्थान पर 'सीता' या कोई 'बहुवचन' शब्द रख देने से भी क्रिया में कोई अन्तर नहीं आएगा। इसके विपरीत भोजपुरी में-

राम एक केला खइलें।
राम दू केला खइलें।

राम एक बिलार देखलें।
राम दू बिलार देखलें।

होता है। इन वाक्यों में कर्म 'केला' और 'बिलार' के वचन परिवर्तन के कारण 'खइलें' क्रिया में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। परन्तु 'कर्त्ता' 'राम' के स्थान पर 'सीता' कर देने से क्रिया 'खइलीं' और 'देखलीं' हो जाएँगी। कर्त्ता के वचन परिवर्तन से भी क्रिया परिवर्तित हो जाएगी। अवधी में भी भोजपुरी वाली बात है। हां, ब्रजभाषा में परिवर्तन खड़ी बोली की तरह होता है। कितना अन्तर है खड़ी बोली और भोजपुरी अवधी की भाषाई संरचना में। इसी अन्तर के आधार पर तुलसी के 'मानस' पर अवधी का एकाधिकार नहीं हो पाता है। तुलसी ने लिखा है-

'मैं पुनि निज गुरु सन **सुनी कथा** सो सूकरखेत'
'तदपि **कही** गुरु बारम्बारा'
'**कही** जनक जस अनुचित बानी'
'सीता परम रुचिर **मृग देखा**'

इतना ही नहीं-

'प्रथम राम भेंटी कैकेयी'
'तापस वेस जनक सिय देखी'
'फिरहि राम सीता मैं हारी'

अर्थात् 'राम ने कैकेयी भेंटी', 'जनक ने सीता देखी' तक लिखने का आग्रह है तुलसी का।

यह विषयान्तर हो गया। चलते चलते इतना और कि भोजपुरी, अवधी में प्रायः 'मैं' की जगह 'हम' का प्रयोग होता है। 'मैं', 'मों' कभी कभार बोले जाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि लोकभाषाएं और खड़ी बोली एक दूसरे से प्रभावित हैं, उनमें शब्दों का आदान-प्रदान भी है, परन्तु व्याकरण, भाषाई संरचना अपनी अलग अलग हैं। इसी प्रकार हिन्दी भी संस्कृत से अनुप्राणित है और पोषित भी, पर अपनी स्वतन्त्र सत्ता रखती है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। हिन्दी ने 'संस्कृत' के 'शंकर' और 'शुद्ध' को ज्यों का त्यों ले लिया परन्तु 'शिर' को 'सिर' और 'दश' को 'दस' बनाकर स्वीकार किया। इसी प्रकार भोजपुरी, अवधी ने 'शंकर' और 'शुद्ध' को तो 'संकर' और 'सुद्ध' कर लिया और 'झगड़ा' का 'झगरा', 'रगड़ा' का 'रगरा' और 'लड़का' का 'लरिका' या 'लइका' कर लिया परन्तु 'सड़क', 'बड़ा', 'कड़ा', 'खड़ा', 'छोड़ना' आदि को 'सरक', 'बरा', 'खरा', 'करा', 'छोरना' नहीं बनाया गया क्योंकि 'छोड़ना' और 'छोरना', 'बड़ा' और 'बरा' अलग अलग अर्थों में प्रयुक्त होते हैं। इस प्रकार लोकभाषाओं का अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व है, अपनी सत्ता है, अपने नियम हैं, और नियमों का एक तर्कसंगत आधार है।

कहने का आशय यह है कि शब्दों के ये परिवर्तन किसी विकृति और गँवारूपन के कारण नहीं, बल्कि माधुर्य, उच्चारण, सुकरता ओर अर्थ की स्पष्टता के कारण होते हैं। छायावाद के उदयकाल में सुप्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पंत जी ने ब्रजभाषा को खड़ी बोली से हीन दिखाते हुए कटाक्ष किया था कि हमारी भाषा ने अब तुतलाना छोड़ दिया है, वह अब 'पिय' को 'प्रिय' कहने लगी है। इस

पर आचार्य किशोरीदास बाजपेयी ने टिप्पणी की कि ये कवि जिसे तुतलाना समझते हैं, वह शब्द सौष्ठव हैं, जिसे वे समझ नहीं पाए हैं। उन्हें जानना चाहिए कि वह 'प्रिय' को 'पिय' बना डालती है 'प्रिया' को 'पिया' नहीं बनाती। कितने पते की बात है!

ये लोकभाषाएं खड़ी बोली की अपेक्षा अधिक सशक्त हैं। संस्कृत, अंग्रेजी की भाँति ये भी प्रायः हर शब्द से क्रिया बनाने की क्षमता रखती हैं जो खड़ी बोली में न के बराबर हैं। संस्कृत में 'द्रुमायते' जैसे शब्द तो हैं ही 'हिटलरायते' तक बना लेते हैं। वैसे ही लोकभाषाएं हथियाना, गरियाना, छँहाना, हड़राना, लकड़ियाना, सिहरना (शिथिल-सिहर से), ओराना (ओर से), मेहराना (मेहर) आदि अगणित शब्द बनाने की क्षमता रखती हैं, जबकि बहुत प्रयास करके भी खड़ी बोली अभी तक स्वीकारना, महसूसना, फिल्माना जैसे इने-गिने शब्द ही बना पाई है और ये भी उसके प्रकृति में खपते नहीं जान पड़ते।

खड़ी बोली से कई बातों में श्रेष्ठ और समर्थ होते हुए भी लोकभाषाओं ने खड़ी बोली को उसके परिनिष्ठित स्वरूप, व्यवहार, व्यापकता और विपुल साहित्य रचना के कारण अपने सिर माथे लिया है। यह उनकी उदारता का परिचायक है। यों हिन्दी क्षेत्र की सभी भाषाएं हिन्दी के विशाल साम्राज्य क्षेत्र के ही अंतर्गत आती हैं। आचार्य किशोरीदास बाजपेयी ने इनकी पहचान सम्बन्धकारक के चिह्न 'क' से की है। जिन जिन भाषाओं में 'का' 'के' 'की' का प्रयोग होता है, उन सबको हिन्दी के अंतर्गत माना जा सकता है जिसमें इस क्षेत्र की गढ़वाली, कुमाऊँनी, बुन्देलखण्डी से लेकर मैथिली तक सभी भाषाएं आ जाती हैं। पंजाबी, बंगला, गुजराती, मराठी आदि में रामदा, रामेर, रामना, रामचा होने के कारण ये भाषाएं हिन्दी के अंतर्गत परिगणित नहीं होती हैं।

यों तो सभी भाषाएं न्यूनाधिक एक दूसरे को प्रभावित करती हैं, परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि अपने को हीन समझने के कारण और खड़ी बोली के प्रभाव विस्तार से आतंकित होकर लोकभाषाएं अपने व्यक्तित्व को संकुचित करती जा रही हैं, अपनी विशिष्ट शब्द-सम्पदा का क्षय करती जा रही हैं। कुछ उदाहरण देखें-

भोजपुरी की संरचना में 'ही' और 'भी' नहीं है। इनके स्थान पर क्रमशः 'ए' और 'ओ' अपने पूर्ववर्ती शब्द के साथ जुड़ जाते हैं, जैसे 'आज ही' के लिए 'अजुए' और 'आज भी' के लिए 'अजुओ' (आजो)। इसी प्रकार 'रामे के' और 'रामो के'। हां, सर्वनाम के साथ 'ही' और 'हूं' जुड़ते हैं, जैसे 'उनहीं के', 'हमहीं के', 'तूंहीं के' और 'उनहूं के', 'हमहूं के', 'तुहूं के'। परन्तु अब गाँव के लोगों में 'भी' का प्रयोग प्रवेश करता जा रहा है, जैसे 'हमके भी', 'उनके भी', 'राम के भी'। हां, 'ही' तो सर्वनाम के साथ पहले से था, अब अन्यों के साथ भी कभी कभार सुनाई पड़ने लगा है, जैसे 'राम के ही'।

भोजपुरी में भी बीते हुए कल के लिए 'काल्हि' और आगामी कल के लिए 'बिहान' का प्रयोग होता है। परन्तु खड़ी बोली के प्रभाव से अब गाँव के लोग 'काल्हि' या 'कल' बोलने लगे हैं दोनों के लिए। यह हमारी लोकभाषा का अपकर्ष है। तुलसीदास जी ने भी लिखा है 'पुनि आउब एहि बिरियां काली' अर्थात् यह घाल-मेल़ अवधी में पहले से ही था।

इसी प्रकार लोकभाषाओं के बड़े सुन्दर सुन्दर शब्द वहिष्कृत होते जा रहे हैं। जुड़ाना, धिकना, उसिनना, ओलरना, ओंठघना, सिहरना, धावना, ओंहाना, गारना, झुराना, लौकना, जोहना, अगोरना, छेंकना, हेराना, ओरमाना, ओराना, ठाढ़, तात, ओद, अबेर, हाली हाली, आदि कितने ही शब्द हैं, जिनका प्रयोग कम होता जा रहा है और हमारी अभिव्यक्ति-क्षमता घटती जा रही है। 'का मुँह ओरमा के बइठल बाटऽ', 'उढुक लागल डगरा गइलें' जैसे वाक्यों की व्यंजना कुंठित हो रही है। लोकभाषाओं में जो मिट्टी की गन्ध थी, वह मन्द पड़ती जा रही है। न जाने कितनी लोकोक्तियों और मुहावरों का लोप हो चुका है।

इस स्थिति का निराकरण आवश्यक है। इसके लिए हमें अपनी हीन भावना को त्यागना होगा।

जैसा कि ऊपर की पंक्तियों से स्पष्ट किया गया है, लोकभाषाओं का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है, वे किसी की दासी नहीं हैं। उन्हें अपने व्यक्तित्व पर गर्व करना चाहिए, उन्हें स्वयं को समृद्ध करना चाहिए। अन्य भाषाओं से अधिक से अधिक ग्रहण करना चाहिए, परन्तु जो कुछ भी लें अपना बनाकर, अपने रंग में रँगकर, अपने साँचे में ढालकर ही लें।

यहाँ स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि लोकभाषाओं के संरक्षण, संवर्धन, परिपोषण पर बल देने का तात्पर्य उन्हें अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दी के समानान्तर खड़ा करना नहीं है। लोकभाषा तो हमारे लोकजीवन की आधार भूमि है और राष्ट्रभाषा हिनी की जड़ें इन्हीं लोकभाषाओं से जीवन रस ग्रहण करती हैं। इस प्रकार लोकभाषाओं का पोषण वस्तुतः राष्ट्रभाषा का ही पोषण है। जो भाषा जीवन से कट जाती है, उसका विकास अवरुद्ध हो जाता है। वह कृत्रिम और प्राणहीन हो जाती है।

अतः हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लोकभाषाओं के सौन्दर्य, मार्दव एवं अभिव्यक्ति की क्षमता को न केवल कायम रखें बल्कि इन गुणों से अपनी राष्ट्रभाषा को भी सुवासित करें।

से.नि.वनाधिकारी,
सी-423, इंदिरा नगर, लखनऊ

अवधी लोक-साहित्य के अध्ययन एवं संरक्षण की परम्परा

डॉ. महेन्द्र सिंह

लोकसाहित्य एवं लोकसंस्कृति का क्षेत्रीयता से गहरा सम्बन्ध होता है। क्षेत्र विशेष के आचार-व्यवहार, लोकाचार, अनुभूतियाँ, धार्मिक विश्वास, लोकभाषा, गीत-संगीत एवं भावानुभूति तथाकथित लोकसाहित्य संज्ञा की आत्मा है। भारत विभिन्न भाषा-भाषी, संस्कृतियों का राष्ट्र है किन्तु यहाँ की विशेषता है कि अनेकता भारत में ही एक समान प्राप्त होती है। इसके पश्चात् भी राष्ट्रीय संस्कति के हृदय में झाँकने के लिए, हमें विभिन्न क्षेत्रों की लोकसम्पदा का अवलोकन करना होगा, जो कि भारत के सांस्कृतिक हृदय को रक्त-वाहिका की भाँति उर्जस्वित करती है।

भारतीय संस्कृति में विशेष भूमिका निभानेवाली है - हिन्दी की जातीय संस्कृति। ज्ञात हो कि हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है, राजभाषा है। इसके अन्तर्गत सत्रह बोलियाँ आती हैं, जिनमें से वर्तमान में खड़ी बोली मानक भाषा के रूप में स्थापित है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि खड़ीबोली के जहाँ अपनी अपार सम्भावनाओं को चरितार्थ करते हुए, अपना उत्तरदायित्व वहन किया है, वहीं अन्य भाषा-विभाषायें भी पीछे नहीं हैं। सभी भाषाएँ अपने-अपने क्षेत्र पर पूर्ण-रूपेण प्रतिनिधित्व करती हैं। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि हिन्दी के विकास में पूर्वी हिन्दी की प्रमुख बोली-अवधी और पश्चिमी हिन्दी की प्रमुख बोली-ब्रज ने महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह की है। मध्यकाल से लेकर भारतेन्दु काल तक, इन बोलियों ने अपनी क्षमताओं से हिन्दी और भारत प्रतिनिधित्व से लेकर भारतेन्दु काल तक, इन बोलियों ने अपनी क्षमताओं से हिन्दी और भारत का प्रतिनिधित्व किया था। प्रस्तुत लेख में इन बोलियों में अवध से सम्बन्धित अवधी के लोक-साहित्य के अध्ययन एवं विकास को परखना हमारा अभीष्ट रहा है।

ये बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि बिना क्षेत्र विशेष की लोकसम्पदा को पहचाने, हम समेकित भारत की तस्वीर प्रस्तुत नहीं कर सकते। समेकित भारत की लोकसम्पदा से परिचित होने के लिए अनेक विद्वानों ने प्रयास किये हैं। यह बात दूसरी है कि जन से अनुप्राणित इस सम्पदा की ओर पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि पहले गयी। इसका कारण यह था कि पाश्चात्य जगत में पुरातात्त्विक और लोकसाहित्य के अध्ययन-विश्लेषण की विधि परम्परा सन् 1687 ई0 में जॉन आम्ब्रे से प्रारम्भ हो गयी थी। जब अंग्रेज शासक-प्रशासक, मिशनरियां ब्रिटिश काल में भारत आयीं, तब भारतीय जीवन-दर्शन से प्रभावित होकर, उनका ध्यान सुदूर भारत में बिखरी लोकसम्पदा की ओर गया। सन् 1784 ई0 में सर विलियम जोन्स ने ऐशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना करके; इसकी विधिवत परम्परा प्रारम्भ की।

भारत में हिन्दी के प्रभुत्व के कारण हिन्दी प्रदेशों का महत्त्व निर्विवाद है। एक लम्बे समय तक भारत की राजधानी का सम्बन्ध हिन्दी प्रदेशों से होने के कारण इसका आकर्षण और बढ़ जाता है। हिन्दी लोकसम्पदा और साहित्य का विधिवत अध्ययन सन् 1829 ई0 में कर्नल टाड द्वारा प्रकाशित एनालिसिस एण्ड एन्टीक्वेरीज ऑफ राजपूताना' नामक ग्रन्थ से माना जाता है, जिन्होंने राजस्थानी भाषा में प्रचलित

लोकगाथा को संग्रहीत करके 'राजस्थान का इतिहास' संयोजित करने का प्रयत्न किया था। कर्नल टॉड के पश्चात् सर रिचर्ड टेम्पल, ईवान पावलोविच मिना, एवं जॉर्जगियर्सन, विलियम क्रुक, एलबिन आदि विदेशी विद्वानों ने क्षेत्रीय जन की सहायता से इस क्षेत्र में अपने सफल कदम बढ़ाये। अपने कार्यों को संरक्षित एवं प्रचारित करने के लिए अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया।

पाश्चात्य विद्वानों से प्रेरित होकर भारतीय मनीषियों का ध्यान भी इस ओर उन्मुख हुआ और हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषाओं में लोकसाहित्य, लोकसंस्कृति, लोककलाओं से सम्बन्धित खोजें प्रारम्भ हुई। भारतीय स्तर पर स्वतंत्र रूप से लोकसाहित्य पर कार्य प्रस्तुत करनेवाले विद्वानों में तारुदत्त का नाम उल्लेखनीय है। जिनकी पश्चात् लाल बिहारी डे, नरेन्द्रशास्त्री, दिनेशचन्द्र सेन, श्री शरतचन्द्र राय, श्री झबेरचन्द्र मेधाणी आदि के नाम उभरे।

हिन्दी-साहित्य के अध्येताओं में गुरू जैन यति ज्ञानचन्द्र का नाम उल्लेखनीय है। जिन्होंने सन् 1818 ई0-1822 ई0 के मध्य कर्नल टॉड की लोक-सम्बन्धी सामग्री को संकलित एवं संयोजित करने में महती भूमिका निर्वाह की है। इस क्रम में जॉर्ज गिर्यसन की सहायता करने वाले सुधाकर द्विवेदी, बापू शिवनन्दन लाल आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। हिन्दी लोकसाहित्य पर स्वतन्त्र अध्ययन करनेवालों में कुमायूँनी लोकोक्तियों (सन् 1892 ई0 में) का संग्रह करनेवाले गंगादत्त उप्रेती का नाम शीर्ष स्थान पर रखा जा सकता है। इसी क्रम में 'सरवरिया' (सन् 1913 ई0) के सम्पादक पं. मन्नन द्विवेदी, कविता-कौमुदी (सन् 1929 ई0) के सम्पादक पं. रामनरेश त्रिपाठी का नाम उल्लेखनीय है। इसके पश्चात् डॉ. सत्येन्द्र, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, सत्यव्रत सिन्हा, त्रिलोचन पाण्डेय, गोविन्द चातक, कृष्णानन्द गुप्त आदि ने अपनी-अपनी क्षेत्र की लोक-सम्पदा को संरक्षित करने का स्तुत्य उपक्रम किया।

अवध क्षेत्र की लोक सम्पदा पर भी विदेशी विद्वानों की दृष्टि पहले गयी। विलियम क्रुक, जार्ज ग्रिर्यसन आदि ने इस क्षेत्र में पहल की। विलियम क्रुक की सहायता करनेवाले भारतीय सहयोगियों में पं. रामगरीब चौबे एवं ललितप्रसाद का नाम उल्लेखनीय है। उपर्युक्त विद्वानों द्वारा किये गये कार्य 'द इण्डियन एन्टीक्वेरी' एवं 'नार्थ इण्डियन नोट्स एन्टीक्वेरीज' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुए। अवधी लोक साहित्य पर स्वतंत्र रूप में कार्य करने वाले अध्येताओं में 'सरवरिया' (सन् 1913 ई0) पं0 मन्नन द्विवेदी, कविता कौमुदी पाँचवाँ भाग (सन् 1929 ई0) पं. रामनरेश त्रिपाठी, डॉ. बाबूराम सक्सेना द्वारा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में शोधोपाधि हेतु, प्रो0 टर्नर के निर्देशन में प्रस्तुत - 'अवधी कोश' के सम्पादक पं. रामाज्ञा समीर का नाम अग्रणी है।

उपर्युक्त कार्यों से प्रेरित होकर अनेक विद्वानों ने अवधी लोकसाहित्य के संकलन, विश्लेषण पर ध्यान केन्द्रित किया। अपने कार्यों को मूर्त रूप देने के लिए पत्र-पत्रिकाओं, ग्रन्थों एवं शोध प्रबन्धों को प्रस्तुत करने का कार्य प्रारम्भ हुआ। अवधी के विकास के लिए एक ओर रमई काका, वंशीधर शुक्ल, पढ़ीस, मृगेश आदि कवियों ने युगानुकूल पद्धति एवं विषयों को अपना कर, साहित्य रचना कर, अवधी भाषा एवं साहित्य को नयी दिशा प्रदान दी। वहीं क्षेत्रीय विद्वानों, समाज सुधारकों, राजनीतिज्ञों, संस्थाओं एवं क्षेत्रीय विश्वविद्यालयों में अध्ययन-अध्यापन का कार्य प्रारम्भ करके; अवधी लोकसाहित्य के संवर्धन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह की।

सर्वेक्षणों से ज्ञात होता है कि स्वतंत्रता से पूर्व व्यक्तिगत प्रयास और पत्र-पत्रिकाओं ने अवधी लोकसाहित्य को संरक्षित करने का बीड़ा उठा रखा था। प्रारम्भ में यदि पं. मन्नन द्विवेदी, पं. रामनरेश त्रिपाठी, पं. रामाज्ञा समीर, डॉ. बाबूराम सक्सेना आदि के व्यक्तिगत प्रयास फलीभूत हुये, वहीं पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी, वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. देवेन्द्र सत्यार्थी, राहुल सांकृत्यायन, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय आदि विद्वानों के लोक-सम्पदा सम्बन्धित विचार-विमर्श विश्लेषण ने इस दिशा में आग में घी

की भांति कार्य किया।

सर्वेक्षण के आधार पर स्पष्ट होता है कि अवधी लोकसाहित्य पर आधारित लगभग पचास संकलनात्मक एवं समीक्षा ग्रंथ अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। साथ ही लगभग तीन दर्जन शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किये गये हैं। जिनमें सर्वाधिक योगदान हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ का है। ये प्रबन्ध अवधी लोकसाहित्य की विभिन्न विधाओं एवं रूपों को लक्ष्य बनाकर लिखे गये हैं। कुछ प्रबन्ध तुलनात्मक भी है, जो कि संस्कृतियों के आदान-प्रदान एवं राष्ट्रीय चेतना की दृष्टि में महत्वपूर्ण हैं।

इन प्रबन्धात्मक प्रयासों के अतिरिक्त संस्कृति निदेशालय उ0प्र0 एवं अन्य विश्वविद्यालयों के साथ-साथ अनेक गैरसरकारी संस्था और व्यक्ति अवधी साहित्य के संरक्षण-संवर्धन के लिए प्रयत्नरत हैं। इस कार्य हेतु इन संस्थाओं के तत्त्वावधान में पत्रिकाओं का प्रकाशन होता है, सांस्कृतिक समारोह, कवि संगोष्ठियाँ एवं साहित्यिक परिचर्चाएँ आयोजित की जाती हैं। समय-समय पर लोककलाकारों और अध्येताओं को प्रोत्साहन देने के लिए पुरस्कृत एवं सम्मानित किया जाता है। अवधी अकादमी गौरीगंज-सुलतानपुर, दिव्या समिति, सिविल लाइन्स-सुल्तानपुर, अवध भारती समिति हैदरगढ़, बाराबंकी, अवधी साहित्य संस्थान, अयोध्या एवं अवधीमंच कादीपुर, सुल्तानपुर आदि संस्थाएँ इस दिशा में अग्रणी हैं। अवधी, जोंधइया, बिरवा अवध-ज्योति, बोली-बानी, आखत आदि कुछ उल्लेखनीय पत्रिकाएँ हैं, जिन्होंने अवधी लोकसाहित्य की अध्ययन परम्परा को बढ़ाने में महत्वपूर्ण कार्य किया है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि अवधी लोकसाहित्य के अध्ययन-विश्लेषण का कार्य अपने उत्कर्ष पर है। हाँ! यह अवश्य है कि आर्थिक एवं राजनैतिक दबाव के कारण वर्तमान में इनको सुचारू रूप से संचालित करने के लिए सरकारी सहायता की अपेक्षा है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सरकार की उपेक्षा के कारण अनेक मौलिक शोध-कार्य अप्रकाशित पड़े हुए हैं। इनके प्रकाशित होने से अवध-क्षेत्र की भाषा, साहित्य एवं संस्कृति की समृद्धि तो होगी ही, राष्ट्रीय स्तर पर भी अनेक ऐसे मूल्य प्रस्तुत होंगे; जो राष्ट्रीय ऐक्य में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करेंगे। हालाँकि वर्तमान समय में समाज में क्षरण होती हुई नैतिकता और भौतिकता प्रेम के कारण, सरकारी प्रोत्साहन से पथ-विमुख होने का खतरा भी है, लेकिन समय की आवश्यकता है कि अवध क्षेत्र की लोक सम्पदा को संग्रहीत विश्लेषित करने के लिए सरकार का सहयोग प्राप्त हो।

उपर्युक्त कार्यों के लिए सुझाव है कि अप्रकाशित ग्रन्थों को प्रकाशित करने का उत्तरदायित्व सरकार अपने उपक्रमों को दे दें। वहीं संकलन एवं विश्लेषण का दायित्व विश्वविद्यालय के साथ मिलाकर योजनाबद्ध रूप से सम्पन्न करने के लिये, परियोजनाएँ बनाएँ। क्षेत्रीय संस्थाओं ओर सरकारी उपक्रमों के संयुक्त तत्वावधान में सांस्कृतिक-समारोह का आयोजन किया जाए। लोककलाकारों को प्रोत्साहित करने के लिए पुरस्कृत किया जाए। लुप्त होती कलाओं के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए आडियो-वीडियो रिकार्डिंग किया जाए। विशिष्ट कलाओं के संवर्धन के लिए प्रमुख कलाकारों एवं विषय-विशेषज्ञों के निर्देशन में शिक्षण-प्रशिक्षण की योज़नाएँ चलायी जाएँ। वृद्ध कलाकारों को पेंशन दी जाय एवं युवाकलाकारों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाय। इसके साथ-साथ लोकसाहित्य पर समय-समय पर गोष्ठी आयोजित की जाय और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिये दलों को प्रदेशों और देशों में सरकारी खर्चों पर प्रदर्शन के लिए भेजा जाय। लोकसाहित्य अध्येताओं को सम्मानित किया जाय।

विश्वास है कि उपर्युक्त सुझावों को साकार करके, अवधी लोकसाहित्य के विकास को नयी दिशा दी जा सकती है। अवधी लोकसाहित्य एवं कलाओं के प्रचार-प्रसार से, अवध की गंगा-जमुनी संस्कृति को उभारने से, साम्प्रदायिक सद्‌भाव उपस्थित किया जा सकता है।

लोक-भाषा और मुहावरे

डॉ. रामबहादुर मिश्र

भारत विविध प्रकार की भाषाओं का एक सुरम्य उद्यान है। यहाँ जितनी अधिक भाषाएं हैं और उनके जितने अधिक प्रकार हैं उतने शायद किसी अन्य एक देश में दुर्लभ हैं। विश्व के भाषा शास्त्रियों की प्रेरणा से जब यहाँ भाषा सर्वेक्षण का कार्य सम्पादित हुआ तब इस देश की अकूत भाषा सम्पदा के बारे में जानकारी प्राप्त हुई।

सर जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन के सुयोग्य निर्देशन में हुए भारतीय भाषा सर्वेक्षण के अनुसार भारत में 179 भाषाएं और 544 उप भाषाएं हैं जो चार भिन्न भिन्न कुलों की है - भारोपीय, द्रविड़, आस्ट्रो ऐशियाटिक और चीनी तिब्बती। इसके अतिरिक्त सेमेटिक कुल की अरबी भाषा का भी यहाँ काफी दिनों तक प्रचलन रहा और उसका कुछ न कुछ प्रभाव भारतीय भाषाओं पर पड़ा है। इस देश में इतनी सारी भाषाएं कैसे और कहाँ से आई इसका ऐतिहासिक सिंहावलोकन वांछित है -

मानव जाति विज्ञान बताता है कि इस देश में पहले शायद नीग्रो कल्प या नीग्रिटो प्रजाति के लोग बसते थे जिनके वंशज भारत में तो नहीं रहे किन्तु अंडमान आदि भारतीय द्वीपों में अब भी पाये जाते हैं इनकी भाषा पापुअन कुल की है। भारत की परवर्ती भाषाओं पर इसका कुछ न कुछ प्रभाव रहा है।

नीग्रिटो के बाद आदि आस्ट्रेलियाई कल्प प्रजाति के लोग यहाँ आये जो आस्ट्रिक कुल की भाषा बोलते थे। कुछ विद्वानों की मान्यता है कि हिन्दू वर्ण व्यवस्था में चतुर्थ वर्ग में पड़ने वाली आज की अधिकांश जातियां मूलतः इसी प्रजाति की थी। इस कुल की भाषाओं में आज संथाली आदि इनी गिनी जनजातीय भाषाएं अभी शेष हैं।

इसके बाद द्रविड़ों का आगमन होता है जो द्रविड़ की भाषाएं बोलते थे। इस कुल की भाषाओं में आज दक्षिण भारत की तमिल आदि भाषाएं हैं। द्रविड़ों के बाद आर्यो का आगमन हुआ जो भारोपीय कुल की भाषा बोलते थे इस कुल की तथा द्रविड़ कुल की भाषाएं बहुत अधिक प्रभावशाली हुईं और अन्य सभी कुलों की भाषाओं को दबाकर व्यापक रूप से फैल गई। एक उत्तर भारत में दूसरी दक्षिण भारत में। इन दोनों का प्रभाव एक दूसरे पर व्यापक रूप से पड़ा।

भारत के उत्तर भाग में तिब्बती-चीनी प्रजाति के लोग बसते थे। इनमें जो फैलते -फैलते समतल में आए वे कोलों और द्रविड़ों तथा बाद में आर्यो के बीच समाहित हो गए। जो पहाड़ों तथा जंगलों में रहे वे आज तिब्बती वर्मी की कई भाषाएं बोलते हैं। भारत की आधुनिक भाषाओं पर इनका प्रभाव नगण्य है।

इसके अलावा भारत पर समय-समय पर विदेशियों का आक्रमण और प्रभुत्व होता रहा है जिसके फलस्वरूप कई भाषाओं का प्रचार और प्रभाव यहाँ काफी रहा है यथा पारसी, यूनानी, तुर्की, अरबी, पुर्तगाली और अंग्रेजी। इनमें तुरकी भाषा तूरानियन कुल की और अरबी सेमेटिक कुल की है शेष सभी भाषाएं

भारोपीय कुल की है। इन भाषाओं ने भारत में अपना क्षेत्र तो कहीं नहीं बनाया किन्तु अपना प्रभाव कई भाषाओं पर जमाया है।

सर विलियम जोन्स ने 1786 ई0 में यह आश्चर्यजनक खोज परक तथ्य प्रस्तुत किया कि संस्कृत लैटिन और ग्रीक ये तीनों भाषाएं किसी एक ही मूल भाषा से निकली प्रतीत होती है जो मूल भाषा अब लुप्त हो गयी है। तब से विद्वानों का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ और भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन वैज्ञानिक पद्धति से किया गया, तब से तुलनात्मक व्याकरण या भाषा विज्ञान नामक शास्त्र का जन्म हुआ। इस शास्त्र के अनुसार यूरोप से भारत तक की बहुत सी भाषायें मूलतः समान पाई गई और भाषाओं के इस कुल का नाम भारोपीय कुल अर्थात भारत यूरोपीय परिवार रखा गया। इन भाषाओं के आधार पर जो इन सभी की मूल भाषा अनुमानतः तय की इस का नाम मूल अर्य भाषा रखा गया गया। इस प्रकार विश्व के आधे से अधिक क्षेत्रें में फैले इस भारोपीय कुल की सहस्राधिक आधुनिक भाषायें आपसी सादृश्य के आधार पर लगभग एक दर्जन से अधिक शाखाओं में बंट गयी।

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के दो स्वरूप प्रचलित हुए वैदिक और लौकिक। वेदों और ब्राह्मणों की भाषा वैदिक भाषा कहलाती है और उस काल की लोक व्यवहार की भाषा लौकिक। वैदिक भाषा को काल विशेष की ग्रंथ भाषा (स्पजमतंतल स्ंदहनंहम) और लौकिक भाषा को उस काल की मुख भाषा (ॅचवामद स्ंदहनंहम) कहा जा सकता है। इस मुख भाषा को विद्वान ब्राह्मणों ने अपने ज्ञान विज्ञान की वाहिनी बनाया। ग्रंथ निबद्ध होने पर इसका स्वरूप स्थिर और परिष्कृत होता गया इसलिए बाद में इसका नाम संस्कृत पड़ा। प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के बाद भी यह संस्कृत भाषा अखिल भारतीय सम्पर्क भाषा के रूप में सभी भारतीय ज्ञान-विज्ञान की एक मात्र वाहिनी बनी रही और आज भी कुछ न कुछ मात्र में उसी रूप में जीवित है।

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के विकास के सम्बन्ध में दो तीन बातें विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिनका ज्ञान अवधी सहित उत्तर कालीन लोकभाषाओं के विकास को ठीक से समझने में सहायक होगा। पहली बात तो यह कि आर्य भाषा जब भारत में प्रविष्ट हुई तभी से इस पर स्थानीय भाषाओं का प्रभाव बहुत तेजी से बढ़ता गया। आज हमारे समक्ष जो संस्कृत भाषा का विशाल शब्द भंडार है उसका कम से कम चौथाई भाग स्थानीय आर्येतर भाषाओं से लिया गया होगा।

दूसरी बात यह कि प्राचीन भारतीय आर्य भाषा के केवल दो स्वरूपों का दर्शन होता है एक वैदिक दूसरा संस्कृत। ये दोनों ही भाषाएं जिस रूप में प्राचीन ग्रंथों में निबद्ध हैं, मुख्यतः साहित्यिक प्रतीत होती हैं। लोक मुख में कुछ औपभाषिक स्वरूप भी रहे होंगे और वे ही मौखिक भाषायें बहुत हद तक आधुनिक आर्य भाषाओं की जननी रही होंगी।

भाषा मनुष्य की बनाई चीज है परन्तु इसका विकास नैसर्गिक रूप में हुआ है - धीरे-धीर। इस विकास में युग के युग बीत गए हैं। जैसे जैसे भाषा का विकास होता गया, मानव का विकास होता गया। यदि भाषा न बनती तो मनुष्य कभी भी मनुष्य न बन पाता। मनुष्य ने भाषा का निर्माण किया और भाषा ने मनुष्य का निर्माण किया।

भाषा एक सामाजिक सम्पदा है। इसका प्रयोग समाज अपने उद्देश्यों की पूर्ति के साधन के रूप में करता है। समाज के उद्देश्य भांति-भांति के होते हैं जिनकी प्राप्ति उनके अनुकूल साधनों से होती है। भाषा हमारे भावों और विचारों को दूसरों तक पहुंचाने का साधन है। हम किसी भाषा में बोलकर या लिखकर अपने मंतव्य को दूसरों तक पहुंचाते हैं। यहाँ भाषा एक साधन के रूप में प्रयुक्त होती है। वैसे भावों को वहन करने के अनेक साधन हैं लेकिन दो व्यक्तियों के बीच आपसी विचार-विनिमय का साधन भाषा ही बनती है। व्यावहारिक जीवन में साधन से कई कार्य सिद्ध किए जाते हैं यथा उत्पादन, संरक्षण,

सम्प्रेषण, भण्डारण और अनुरंजन। भाषा की भूमिका इन सभी संदर्भों में है। समाज की भोली भाली जनता यह नहीं समझ पाती कि भाषा भी एक हथियार है। वस्तुतः भाषा समाज के लिए एक हथियार है।

भाषा का आदि रूप लोक भाषा है। लोक भाषा का सम्बन्ध मानव जाति के उद्‌गम के साथ जुड़ा हुआ है। मानव ने अपनी सभ्यता के साधन के रूप में जिस भाषा का विकास किया उसका आदि रूप लोक भाषा है। इस दृष्टि से आदिम मानव की मूल प्रवृत्तियां जिसमें भावावेग प्रधान है से भाषा का निकट सम्बन्ध ज्ञात होता है। इन भावावेगों का सीधा प्रभाव लोक भाषा पर पड़ा है। अस्तु लोक भाषा की संरचना के प्रधान तत्व के रूप में उस भाषा में प्रचलित भावावेग प्रधान ध्वनियों को स्वीकार किया जा सकता है। भावावेग प्रधान ध्वनियों में मानव के हर्ष-विषाद, सुख-दुख, राग-द्वेष भय-क्षोभ आदि व्यक्त होते हैं आज भी लोक जीवन का बहुलांश भावनाओं में जीवित है और लोकभाषा में सर्वाधिक प्रधानता भावावेग प्रधान ध्वनियों में निर्मित शब्दावलियों की ही है। आज भी लोक जीवन बहुत हद तक भावनाओं में ही केन्द्रित और जीवित है। गांव कस्वों के अल्प शिक्षित, अशिक्षित या फिर निरक्षर समाज और लोगों के जीवन में भूख-प्यास हर्ष-विषाद का ही अधिक महत्व है। इससे अधिक विचार, दर्शन या चिन्तन के स्तर पर वे विधि-निषेध की बहुत सी बातें नहीं जानते। उनका विधि - निषेध विषयक चिंतन परम्परागत लोक मान्यताओं और लोक विश्वासों के आधार पर है। उनके जीवन की आवश्यकतायें वस्तुतः उनके भावना संसार तक ही सीमित है और उन्हें व्यक्त करने के लिए उनके पास बहुत थोड़े से शब्द है। वे अपने प्रेम, घृणा, क्रोध अथवा दया के भाव भी बहुत कम शब्दों में व्यक्त करते हैं।

लोक भाषा की संरचना में लोक जीवन की दशाओं और मानसिकता की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। लोक जीवन में जटिलता अपेक्षाकृत कम सरलता और सहजता अधिक होती है। इसी के अनुरूप लोकभाषा की संरचना में भी सरलता को कई तरह से समझाया जा सकता है। सर्वप्रथम लोक भाषा में प्रायः वे ही ध्वनियं गृहीत होती हैं जो लोक जीवन में पूरी तरह घुली मिली या आत्मसात हुई रहती हैं। लोक ध्वनियों से निर्मित शब्द या पद भी सर्व ग्राह्य होते हैं। ये इतने परिचित होते हैं कि इनका अर्थ किसी शब्द कोष में नहीं खोजना पड़ता है। लोकभाषा की शब्दावली परपम्परा वाहित होती है। लोक भाषा के वाक्य भी सामान्यतः सरल होते हैं। साधारणतः जीवन की दैनिक आवश्यकताओं के अनुरूप विषय को व्यक्त करने के लिए शब्दों और वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। लोकोक्तियों और मुहावरों का व्यवहार कथन को सरस और आकर्षक बनाने के लिए किया जाता है। लोक की प्रकृति सहजता को बनाये रखना चाहती हैं।

लोक भाषा चूंकि प्रकृति के अधिक निकट होती है इस लिए उसमें सांगीतिक माधुर्य प्राचुर्येण मिलता है। लोकमानव ने प्रकृति के नदी, हवा, पर्वत, पशु पक्षी, आकाश, सूर्य और नक्षत्रदि अनेक पदार्थों से स्वर माधुर्य की प्रेरणा ली होगी। माधुर्य तत्व को लेकर लोक भाषा और शिष्ट भाषा का अन्तर आज भी बना हुआ है। ब्रजभाषा, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, बज्जिका, मंगही, अंगिका आदि लोक भाषाओं की तुलना में आज भी खड़ी बोली में माधुर्य तत्व (संगीत तत्व) कम है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय तथ्य है कि उक्त लोकभाषाएँ शिष्ट भाषा की प्रवृत्तियों को जैसे ही अंगीकृत करती जायेंगी, ये लोक भाषा के अन्य तत्वों के साथ उक्त माधुर्य तत्व की मौलिक प्रकृति से भी बहुत दूर होती जायेंगी क्योंकि तब भी लोक भाषा और शिष्ट भाषा का अंतर कहीं न कहीं बना रहेगा।

लोक भाषा की संरचना में एक अन्य महत्वपूर्ण घटक है और वह है क्षेत्रीयता आंचलिकता। लोक भाषा की शब्द सम्पदा का व्यवहार विशेष रूप से किसी क्षेत्र विशेष में ही होता है। अलग अलग क्षेत्र विशेष की लोकभाषाएं शब्दों के आंशिक ध्वनि परिवर्तनों के साथ तथा किंचित पाठान्तर के साथ प्रकारान्तर से सर्वत्र बोली जाती है। लोकभाषा की ध्वनियों, पदों, शब्दों से किसी भी लोक जीवन की

दशाओं का अध्ययन किया जा सकता है। किसी भी लोक जीवन की जब कोई विशेष घटना घटती है तब उसे व्यक्त करने के लिए अवश्य ही कुछ नयी ध्वनियां, नए पद, शब्द बन्ध निर्मित होते हैं। लोक भाषा के विकासात्मक अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि परिस्थितियों और जीवन दशाओं से लोक भाषा निर्मित होती रही है। लोक जीवन में प्राकृतिक आपदाएं बाढ़, अकाल महामारी, राजनैतिक विप्लव आदि के कारण भी नई ध्वनियां पद बन्ध निर्मित होकर व्यवहार में आ जाते हैं। बदलती जीवन दशाओं के अनुरूप लोक भाषा में भी नूतन ध्वनियों और पदों की सृष्टि होती है।

लोक भाषा लोक जीवन को अभिव्यक्त करने का मौखिक और लिखित साधन है। वैसे लोकभाषा का बहुत सा अंश अब भी लोक कंठ में सुरक्षित है और अब धीरे-धीरे उसे लिखित रूप देने का प्रयास किया जा रहा है। लोक जीवन की विशेषता है इसकी विविधता। वस्तुतः लोक जीवन विविधताओं से ही बना हुआ है इसमें एक ओर जहां प्राकृतिक बनावट की विविधता है वहीं वातावरण के साथ समाज की रचना, व्यक्ति के रहन सहन और सोचने विचारने के तौर तरीके में भी विविधता है। इन समस्त विविधताओं को लोक भाषा में व्यक्त हुआ देखा जा सकता है।

लोक भाषा की शब्दावली में एक बड़ी संख्या, प्राकृतिक वस्तुओं जैसे नदी, जंगल, बाग, खेत, खलिहान, पहाड़, पशु पक्षी आदि को व्यक्त करने वाले शब्दों की है। लोक जीवन और प्रकृति का निकट सम्बन्ध रहा। आज शहरीकरण बड़ी तेजी से हो रहा है किन्तु हमारे राष्ट्रीय जीवन का अधिकांश भाग प्रकृति की गोद में बसा हुआ है। यहां रहने वाले अपनी दिनचर्या में लोक भाषाओं का ही प्रयोग करते हैं। लोकभाषा की शब्दावली में दूसरी सबसे बड़ी संख्या व्यावसायिक शब्दावली की है। व्यवसाय प्राचीन काल से ही जीवन का प्रमुख अंग रहा है। लोक भाषा में व्यावसायिक कार्यों के लिए जो शब्दावली प्रचलित और मान्य रही है, उसका लोकभाषा में विशेष महत्व है। लोक जीवन के व्यावसायिक उद्देश्यों की सिद्धि में उक्त व्यावसायिक शब्दावली की रचनात्मक भूमिका रही है। आज व्यवसाय केवल लोक जीवन तक ही सीमित नहीं है इसका क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक हो गया है। लोक जीवन में प्रचलित व्यवसाय के कई क्षेत्र हैं, कृषि व्यवसाय, खाद्यान्न व्यवसाय, वस्त्र, शृंगार सामग्री, बैंकिंग, बीमा आदि। लोक भाषा में इन व्यवसायों की शब्दावली प्रचलित है। लोक जीवन का क्षेत्र घर-परिवार से खेत-खलिहान तक सीमित रहा है। इस दृष्टि से लोक भाषा में घरेलू काम काज सम्बन्धी शब्दावली का विशेष महत्व है। गांव-गेराव का आदमी भोर से बिस्तर पर जाने तक अपनी लोकभाषा में ही बात करता है। वस्तुतः घरेलू काम काज सम्बन्धी शब्दावली के माध्यम से हम लोक जीवन को बड़ी निकटता से समझ सकते हैं। लोकभाषा और लोक जीवन का अत्यन्त निकट का सम्बन्ध है। अतः लोक भाषा शब्दावली के अध्ययन से लोक जीवन की सामाजिक सांस्कृतिक दशाओं को प्रामाणिक रूप से जानने की सम्भावना बढ़ती है। लोक भाषा से ही शिष्ट भाषा को विकास की प्रेरणा मिलती है। भाषा विकास की दृष्टि से भी लोक भाषा से ही शिष्ट भाषा उत्पन्न हुई। सामाजिक व्यवहार की दृष्टि से लोक भाषा की उपयोगिता प्रत्येक युग में रही है और लोक भाषा ने शिष्ट भाषा की अपेक्षा मानव जाति की अधिक सेवा की है। भाषा शास्त्रीय दृष्टि से लोक भाषा और उसके साहित्य का महत्व सर्वोपरि है। इसके अन्तर्गत भाषा शास्त्रियों के लिए अमूल्य निधि भरी पड़ी है। शब्द वांग्मय का अक्षय भंडार है। लोक साहित्य में शब्दावली का वह अक्षय भंडार सुरक्षित है जिसकी उपादेयता भाषा वेत्ताओं के लिए युग-युग तब बनी रहेगी।

सुप्रसिद्ध भाषा वेत्ता नेशनल प्रोफेसर सुनीतिकुमार चटर्जी ने लोक साहित्य को भाषा शास्त्र के लिए अमूल्य सामग्री बताया है - **"जो लोक साहित्य का संग्रह कर रहे हैं वे भावी भाषा शास्त्रियों के लिए अमूल्य सामग्री उपस्थित कर रहे हैं। लोकगीतों, लोककथाओं और लोकगाथाओं में व्यवहृत शब्दों की निरूक्ति का पता लगाने पर भाषा शास्त्र सम्बन्धी अनेक गुत्थियां सुलझायी जा सकती हैं। इनमें प्राचीन शब्दों द्वारा**

हिन्दी के अनेक शब्दों की विकास परम्परा को हम वैदिक संस्कृत से जोड़ सकते हैं।''

भाषा विज्ञान किसी शब्द पद ध्वनि और वाक्य के अतिरिक्त उसके अर्थ का भी अध्ययन करता है। यही नहीं इन सभी अंगों के विकास का ऐतिहासिक अध्ययन भी इसके अन्तर्गत किया जा सकता है। इस प्रकार के विकास में अर्थ, ध्वनि और शब्द रूप के विकार, उत्कर्ष, अपकर्ष आदि का अध्ययन करने के लिए भाषा विज्ञान क़ो प्रचुर सामग्री लोक साहित्य में प्राप्त हो सकती है।

भाषा के अतीतकालीन इतिहास तक जाने के लिए भी लोक बोलियों में प्रचुर सामग्री मिल जाती है। जनपद कल्याणी योजना के संस्थापक आचार्य डॉ0 बासुदेव शरण अग्रवाल ने इस सम्बन्ध में लिखा है - ''मेरा तो विश्वास है कि हिन्दी बिना जनपद की बोलियों के लिए उन्नति नहीं कर सकती। भाषा की दृष्टि से जनपदों में बेहिसाब मसाला भरा पड़ा है।''

अर्थ विज्ञान की दृष्टि से भी लोक साहित्य में प्रयुक्त शब्दों की अर्थ घटनाओं एवं अर्थ विन्यासों का अध्ययन करने वाले लोगों के लिए भी इस साहित्य का विशेष महत्व है। लोकगीतों के सन्दर्भ में व्यक्त श्री देवेन्द्र सत्यार्थी का यह कथन द्रष्टव्य है -

''भाषा विज्ञान का विद्यार्थी लोक साहित्य के एक-एक शब्द को उठाकर देखता है और मानव संस्कृति के किसी लुप्त पृष्ठ को टटोलना चाहता है। किस प्रकार एक शब्द सहस्त्रें कोस की यात्र करता हुआ इधर से उधर चला। किस प्रकार यह थोड़े बहुत बदले रूप में अपनी मौलिकता का उल्लेख कर रहा है।''

लोक भाषा शिष्ट भाषा की जननी है। लोक भाषा ही वह घटक है जिससे शिष्ट समाज की भाषा को सृजन शक्ति प्राप्त होती है। लोक भाषा किसी देश और समाज के ऐतिहासिक विकास की साक्षी है। इस दृष्टि से किसी समाज और राष्ट्र के लिखित इतिहास की अपेक्षा कहीं अधिक प्रामाणिक वह लोक भाषा शब्दावली है जो कहवतों, मुहावरों, लोकगीतों, लोक कथाओं तथा लोक गाथाओं आदि के द्वारा विविधता पूर्ण लोक जीवन में प्रचलित रही है।

प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से अवधी लोक भाषा के प्रतिनिधि मुहावरों का विवेचन किया गया है। मुहावरों में सर्वाधिक रूप से लोकभाषा की शब्दावली संचित है। प्रकारान्तर से ये लोक भाषा के कोश हैं। साहित्य शास्त्र में शब्द शक्तियों का शास्त्रीय विवेचन निरूपित किया गया है, उनके माध्यम से विविध प्रकार के चुटीले अर्थों का प्रकाशन किया जिनमें अर्थ गौरव है, भाव गाम्भीर्य है, कथ्य की तीक्ष्णता है, एक आह्लाद है। ये सारे गुण लोक ने अपनी बोलचाल की भाषा में छोटे-छोटे मुहावरों के माध्यम से व्यक्त किया है। ये मुहावरे कथ्य के समग्र वातावरण को समक्ष उपस्थित कर देते हैं। एक बिम्ब बनता है। भावों में तीव्रता गंभीरता, व्यंग्यात्मकता तथा चुटीलापन आ जाता है। अतः एक दृष्टि से इन लोक के अनपढ़ पंडितों में आचार्यत्व के दर्शन होते हैं।

मुहावरे

मुहावरे भाषा के प्राण कहे जाते हैं, भावों की अभिव्यंजना शक्ति तथा प्रभविष्णुता मुहावरों से ही बढ़ती है। मुहावरे भाषा में चटपटापन ला देते हैं। उसकी धार को पैनी करते हैं, उस पर सान चढ़ाते हैं, अवधी काव्य में मुहावरों द्वारा कविता को शक्ति और सौन्दर्य प्राप्त हुआ है। ये लोकजीवन के प्रतिदिन और प्रतिक्षण के साथी हैं। प्रकृति के सम्पूर्ण तत्व वायु, आकाश, रात-दिन, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु से सम्बन्धित सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक जीवन मानव के कार्यकलाप उसकी अनुभूतियां, अन्धविश्वास, रूढ़ियों और मान्यतायें सभी का मुहावरों से अटूट सम्बन्ध है। मुहावरों की विशेषता है कि वे वाक्य के साथ आते हैं, उनकी स्वतंत्र सत्ता नहीं है, जैसे कान देना, अर्थात बात को ध्यान से सुनना।

मुहावरों की पूर्णतया वाक्य के साथ ही है। उनका प्रयोग अपनी ही बोली के शब्दों में रहता है। मुहावरों की सबसे बड़ी विशेषता है कि उनकी अभिव्यंजना शक्ति में किसी कथन को सीधे न कहकर प्रतीकों के माध्यम से कहते हैं, इनमें व्यंजना शक्ति की प्रधानता है। इनका लक्ष्य कहीं पे निगाहें, कहीं पर निशाना की उक्ति को पूर्णतः चरितार्थ करते हैं। अर्थात् कहते कुछ हैं, किन्तु अर्थ उसका कुछ दूसरा ही होता है। जैसे-कौआ से गोर, कौआ तो इतना काला होता है कि उसमें गौरवर्ण की कल्पना भी नहीं की जा सकती, किन्तु कोई आदमी जब इतना अधिक काला कलूटा हो कि उसकी उपमा न मिले तो सीधे से कौआ की कालिमा से उसकी तुलना की जाती है।

मुहावरा अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है परस्पर बात-चीत करना, और सवाल-जवाब करना। अंग्रेजी भाषा में इसे 'ईडियम' के नाम से जाना जाता है। अरबी भाषा में मुहावरे का अर्थ सीमित और संकुचित है, किन्तु हिन्दी और उसकी विभाषाओं में यह विकसित होकर व्यापक भाव को प्रकाशित करता है। यह अभिधेयार्थ से कुछ भिन्न अर्थ देता है। अतः इसके अर्थ की सिद्धि लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों के ऊपर आश्रित रहती हैं।

मनुष्य के कार्य क्षेत्र विस्तृत हैं, इसके मानसिक भाव भी अनन्त हैं, घटना और कार्य कारण परम्परा से जैसे असंख्य वाक्यों की उत्पत्ति होती है, उसी प्रकार मुहावरों की भी उत्पत्ति होती है। जीवन में अनेक ऐसे अवसर आते हैं, जब मनुष्य अपने मन के भावों के कारण विशेष संकेत या व्यंग्य द्वारा प्रकट करना चाहता है। कभी-कभी कई एक भावों को ऐसे थोड़े शब्दों में प्रकट करने का उद्योग करता है, लम्बे चौड़े कथनों को वह संक्षेपित करता है। प्रायः हास, परिहास, घृणा, आवेग, उत्साह आदि के अवसर पर उस प्रवृत्ति के अनुकूल वाक्य योजना होती देखी जाती है। सामाजिक अवस्था और परिस्थितियों का भी वाक्य विन्यास पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है, और इसी प्रकार के साधनों से मुहावरों का आविर्भाव होता है।

भाषा शास्त्रियों का मानना है कि मानव प्रकृति शब्दों के उच्चारण में प्रयत्न लाघव को अधिक अपनाती है, यही बात भाषा के प्रयोग के सम्बन्ध में लागू होती है, मनुष्य अपने भावों को संक्षेप में प्रकट करना चाहता है। अतः वह ऐसी शब्दावली का प्रयोग करता है, जो संक्षिप्त हो। अत्यन्त घने तथा निखण्ड अन्धकार का वर्णन करने के लिए जिसमें मनुष्य के अपने ही हाथ पैर न दिखाई पड़ते हों। इन दो छोटे शब्दों में कितना बड़ा और गम्भीर भाव समाहित है।

मनुष्य की एक और प्रवृत्ति गोपनीयता की है। वह किसी कारणवश अपने भावों को ऐसी भाषा में प्रकट करना चाहता है, जो सर्व साधारण के लिए सरल या बोधगम्य न हो। ब्रजयानी बौद्धों में तथा हिन्दू तांत्रिकों ने इसी लिये एक प्रतीकात्मक भाषा का आविष्कार किया था, जो गोपनीय होने के कारण जनसाधारण की बुद्धि से परे थी। पंचमकारों के ठीक अर्थ को न समझ सकने का यही कारण था। मुहावरों के विषय में यही प्रवृत्ति लागू होती है। अधजल गगरी छलकत जाय का तात्पर्य अल्पज्ञता से है जो अभिधा से नहीं सूचित होता। यही कारण है कि इसमें गोपनीयता की गणना विद्यमान है।

परिभाषा

मुहावरे की परिभाषा करते हुए पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा है, "मुहावरा किसी बोली अथवा भाषा में प्रयुक्त होने वाला वह अपूर्ण वाक्य खण्ड है, जो अपनी उपस्थिति से समस्त वाक्य को सबल, सहज रोचक और चुस्त बना देता है। संसार में मनुष्य ने अपने लोक व्यवहार में जिन-जिन वस्तुओं और विचारों को बड़े कौतूहल से देखा है और समझा है तथा उस का बार-बार अनुभव किया है, उन्हीं को अपने शब्दों में बांध दिया है, वे ही मुहावरे कहलाते हैं।"

महत्व

मुहावरे किसी भाषा की संजीवनी शक्ति है, ये उस भाषा के प्राण हैं। इनके द्वारा भाषा में सुघराई और चुस्ती आती है। मुहावरों के प्रयोग से रोचकता आ जाती है, और उनका प्रभाव पाठकों के हृदय के ऊपर सीधे होता है। रोचक भाषा भावों की अभिव्यंजना में कितनी समर्थ होती है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। यही कारण है कि जो लेखक मुहावरों का अधिक प्रयोग करते हैं, उनकी भाषा टकसाली होती है। मौलाना हाजी ने इनके महत्व के विषय में मुकदमा शेर व शायरी में लिखा है कि "मुहावरा अगर उम्दा तौर से बांधा जावे तो बिला सुबहा पस्त शेर को बुलन्द से बलन्दतर कर देता है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उचित मुहावरों के प्रयोग से शैली में माधुर्य, सौन्दर्य और शक्ति आ जाती है, विस्तृत भावों को थोड़े शब्दों में प्रकट करना मुहावरों का ही काम है। इनके प्रयोग द्वारा कोई भी भाषा संस्कारित होकर चमत्कृत हो जाती है।

उद्‌भव परम्परा

मुहावरों का इतिहास इतना प्राचीन है कि जितना भाषा की उत्पत्ति का। संस्कृत साहित्य में इनका प्रयोग प्रचुरता के साथ हुआ हैं। संस्कृत महाकाव्यों तथा नाटकों में ये विशेष रूप से प्रयुक्त हुए हैं। अत्यन्त शीघ्रता से रात बीत जाने के लिए अश्वो प्रभातः मासती का प्रयोग पाया जाता है। किसी बात को सामने देखते हुए भी उसके अस्तित्व को न स्वीकार करने के लिए गंज निमोलिका का व्यवहार पंडित लोग किया करते हैं। संस्कृत में कुछ ऐसे मुहावरे हैं, जिनकी परम्परा को राष्ट्रभाषा हिन्दी भी अक्षुण्ण बनाये हुए है। बिना समझे बूझे अन्धविश्वास के कारण किसी कार्य को सामूहिक रूप से करने के लिए गड्डलिका प्रवाह को प्रयुक्त करता है। यह मुहावरा भेड़िया धसान के रूप में हिन्दी विद्यमान है। विशेष रूप से अवधी लोक भाषा में प्राकृत तथा पालि भाषा में भी मुहावरे पाये जाते हैं।

हिन्दी की विभिन्न बोलियों अवधी, ब्रज, भोजपुरी, बुन्देलखण्डी, कन्नौजी, कुमाऊंनी, गढ़वाली आदि में हजारों की संख्या में मुहावरे उपलब्ध और प्रचलित हैं, जो नितान्त मौलिक हैं। इन विभिन्न बोलियों के मुहावरे आज तक खड़ी बोली में नहीं प्रयुक्त हो पा रहे हैं। अवधी के कुछ मुहावरे द्रष्टव्य हैं :-

1. कौआ से गोर (बहुत काला, सांवला व्यक्ति)।
2. तावा कै खपरी (निन्दित कर्म)।
3. गगरी दाना सूद उताना (छिछला आदमी)।
4. हाँका रथ चलत है (वर्चस्व होना)।
5. सुअरी कै बियाना (अधिक बच्चों वाला घर)।
6. टठिया कै जूँठ (अकड़बाज आदमी)।
7. चैलाफार (कर्कश और अपशब्द बोलना)।
8. खटिया उतान (मृत्यु होना)।
9. लिबरी पहिती, चिपरा भात (अखाद्य भोजन)।
10. लढ़िया कै काठ (अनावश्यक अवरोध)।
11. उसरे कै बटेर (आफत का मारा)।
12. जिउ धरत उठावत है (असमंजस)।
13. सपटा साधे हैं (सन्नाटा मारना)।

मुहावरों का प्रयोग बड़ा ही व्यापक है। हमारे जीवन का कोई भी ऐसा कार्य नहीं जिसके वर्णन में मुहावरों का प्रयोग न होता हो, हजारों वर्षों से बोल-चाल में बार-बार आते रहने से मुहावरे मानव जीवन के अभिन्न अंग बन गये हैं। वे मानव की भांति गति, क्रिया अनुभूति, उसके शरीर के अंग उपागों, भोजन के पदार्थों, घर गृहस्थी के कामकाज, प्रकृति के विभिन्न तत्व, आकाश, अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी, दिन-रात, पशु-पक्षी, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु सभी से सम्बन्ध रखते हैं। कहने का आशय है कि सृष्टि में जो कुछ भी व्याप्त है, उन सभी से इनका सम्बन्ध है।

मुहावरा का प्रयोग

मुहावरों में जनजीवन की झांकी देखने को मिलती है। सामाजिक प्रथाओं, रूढ़ियों और परम्पराओं का उल्लेख इनमें पाया जाता है। साथ ही साधारण जनजीवन की व्यथा, कथा, आर्थिक दशा आदि का भी इनमें उल्लेख रहता है। अनेक टूटी और बिखरी हुई कड़ियाँ भी इनकी सहायता से जोड़ी जा सकती हैं। भारतीय संस्कृति की विराट झांकी भी इनमें देखी जा सकती है। इन दृष्टियों से इनका अत्यधिक महत्व है।

जनता की आर्थिक दशा को दर्शाने वाले कुछ मुहावरे द्रष्टव्य हैं - गरीबी में आटा गीला करना एक मुहावरा है, गरीब के पास एक निश्चित मात्र में एक ही बार भोजन करने का आटा है, यदि गूंथते समय कहीं अधिक मात्र में पानी पड़ जाने के कारण वह इतना गीला हो जाय कि रोटियां बेलने लायक न रहे, और उसे रोटी बेलने लायक बनाने के लिए सूखा आटा उपलब्ध न हो तो उस गरीब पर क्या दशा गुजरेगी? इसी प्रकार 'सेतुवा बांधि कै पीछे परे हैं' अवधी का एक मुहावरा है। गांव के लोग जब भी यात्र करते थे, तब अपने खाने का सामान भी साथ लेकर चलते थे। सत्तू एक प्रकार से बना-बनाया भोजन है, और सर्व सुलभ है। इसको खाने में भी सुविधा रहती है। पकाने की जरूरत नहीं है। अतः जब कोई व्यक्ति किसी के पीछे उसका अहित करने के उद्देश्य से बराबर पीछा करता है, और समय नहीं देता, उस व्यक्ति के लिए यह मुहावरा प्रयोग होता है। इसी प्रकार पेट काटना भी एक मुहावरा है, जिसका तात्पर्य है -भरपेट भोजन न देना।

सामाजिक प्रथाओं का चित्रण भी मुहावरों में बहुतायत के साथ हुआ है। 'चौके बैठि हैं' यह मुहावरा अवध में बहुत प्रयुक्त होता है, जिसका सीधा अर्थ है, चौके अर्थात् भोजन के स्थान पर बैठे हैं। किन्तु मुहावरे का लक्ष्य उस विशेष भाव को दर्शाता है, जब विवाहादि संस्कारों के समय दूल्हा दुल्हन अथवा दूल्हा की मां कुछ लौकिक संस्कारों के उद्देश्य से तब तक बैठे रहते हैं जब तक संस्कार पूरा न हो जाय। जनजीवन में जब कोई व्यक्ति बार-बार बुलाने पर अपना स्थान नहीं छोड़ता तो उसके लिए यही मुहावरा प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार जनवासी चाल का प्रयोग दूल्हे की चाल के लिए प्रयुक्त होता है। दूल्हा और बाराती जब अगवानी के लिए चलते हैं तो वह गति बड़ी शालीन और धीमी होती है, जो अवसरानुसार अच्छी लगती है, किन्तु जब किसी काम के लिए जल्दी मची हो और कोई धीरे-धीरे चले तो उसके लिए यही मुहावरा कहा जाता है।

वैवाहिक संस्कारों में गठबन्धन सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण संस्कार-कर्म है। स्त्री-पुरुष दोनों के कपड़ों को आपस में जोड़कर गांठ दी जाती है। यहा पारस्परिक शाश्वत प्रेम का द्योतक है, इस अर्थ को द्योतित करेन वाला मुहावरा है 'गांठ जोरे बैठि हैं। जब कोई दो मित्र अथवा व्यक्ति आपस में इतना घुल-मिल जाते हैं कि दोनों एक दूसरे का साथ नहीं छोड़ पाते, तो कहा जाता है कि गांठ जोराये हैं। इसी प्रकार गौने के दुलहिन, मड़ये के बिहान, आदि मुहावरे सांस्कृतिक कृत्यों का रूपायन करते हैं। इसी प्रकार पर्वों और त्यौहारों तथा व्रत सम्बन्धी मुहावरे भी पाये जाते हैं, जिसमें इन विषयों की जानकारी

दी जाती है। होली के बल्ला, फाग खेलने, चौथ के चंदरमा, छट्ठी के चाउर, आदि मुहावरे किसी अंचल या संस्कृति का दिग्दर्शन कराते हैं।

कुछ मुहावरों में पौराणिक कथाओं का उल्लेख भी मिलता है, 'पथरा, चउथ और चौथी के चाँद देखेउ है, ये दोनों ही मुहावरे भादौं मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी तिथि के चन्द्र दर्शन के सम्बन्ध में हैं। लोक मान्यता है कि इस दिन जो चन्द्रमा देख लेगा उसे व्यर्थ ही कलंक लगेगा, और जो लोग चन्द्रमा देख लेते हैं, वे इस दोष को दूर करने के लिए किसी के घर में पत्थर फेंकते हैं। जब उस घर का मालिक गाली देता है तो ऐसी मान्यता है कि व्यक्ति को चन्द्र दर्शन का कलंक नहीं लगता। इस लोक विश्वास के पीछे एक पौराणिक कथा भी है। भाद्र मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्थी तिथि को चन्द्र दर्शन निषिद्ध माना गया है। एक पौराणिक कथा के अनुसार, भगवान श्रीकृष्ण ने इस दिन चन्द्र का दर्शन कर लिया था, फलस्वरूप उन्हें स्यन्तक मणि चुराने का आरोप लगा। आज भी गांवों में जब लोग न चाहते हुए भी चन्द्र दर्शन कर लेते हैं, अपने कलंक को निष्फल बनाने के लिए दूसरे के घरों में पत्थर ईंटा आदि मारते हैं, या फिर सुख सागर में वर्णित श्रीकृष्ण की स्यन्तक मणि विषयक कथा सुनते हैं।

मुहावरों में ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लेख भी देखने को मिलता है। 'नवाबी लागि हैं' नामक मुहावरा है जो बलपूर्वक किसी की सम्पत्ति को अनैतिक रूप से आहरित करने का संकेत देता है। नवाबों के शासनकाल में गरीब जनता के साथ यही सलूक किया जाता था। इसी प्रकार एक और मुहावरा प्रयुक्त होता है। 'बड़े नबाब बने हैं' जिसका तात्पर्य यह है कि शानो-शौकत के साथ रहना, नजाकत और नफासत का आचरण करना। नबाबों की विलासिता और अकमर्ण्यता जगजाहिर है।
कुछ मुहावरों में जातिगत बातें परिलक्षित होती हैं। ज्ञातव्य है कि इन मुहावरों में किसी जाति विशेष को अपमानित या लज्जित करने का प्रयास नहीं किया गया, बल्कि उस जाति के कार्य, स्वभाव, चरित्र और प्रवृत्ति को दर्शाया गया है। चइतही चमारिन, सूत न कपास कोरी के घर लट्ठम-लट्ठा, अहिर कै अकिल, कुर्मी कै खेती, धोबी का कुत्ता, बभने कै तरकारी, नाऊ कै जामा, भैंसा भीजै लोध पसीजै, धोविया राग, आठ कनवजिया, नौ चूल्हा, धाने अउ बभने कै जाति, बाभन का घिउ मैदा, ठाकुर भगत, न मूसर धनुही आदि मुहावरे जातीय चरित्र को उद्घाटित करते हैं।

पशु-पक्षियों और जानवरों से सम्बन्धित मुहावरे भी लोक प्रचलन में बहुतायत के साथ देखे जा सकते हैं। बड़े कौआ हैं, बिलारी की आंख, छंछूदर की नाक मेघा अस टर्रात हैं, भैंस के आगे बीन वाजै भैंस ठाढ़ि पगुराय, करिया अच्छर भैंस बराबर, भदइला भैंसा, मर्द और बर्ध कै पेट, मुर्गा कै बांग कौआ रिरियावा करे सुखवन झुरावा करे, कौआ रोर, कौआ कान लइगा, कौआ बोलाव, अंधरे कै बटेर, सुग्गा जस रट्टू, सुअरी कै बियाना, हरहट गाय, कूकूर धोये बछिया न होये, कुकरे की मौत, कुकुर निंदिया आदि मुहावरे पशु पक्षियों की प्रवृत्तियों को दर्शाते हुए इनके समान आचरण करने वाले मनुष्यों को इंगित करते हैं।

मुहावरों में लोक विश्वासों शकुन अपशकुन आदि का भी चित्रण रहता है। आंख फरकत है, रात म बोलै काग दिन मा बोलै सियार, मसान परा है, पचखा कै लोथ, सियार के मुंह से मंगल, बिल्ली रोना, पैर खुजलाना आदि मुहावरे दैनिक जीवन में मानव के क्रिया कलापों की जानकारी देते हैं। इन मुहावरों का यदि विस्तृत अध्ययन किया जाये तो इनमें लोक संस्कृति के अनेक महत्वपूर्ण तथ्य उद्घाटित होते हैं। एक प्रकार से ये मुहावरे लोक संस्कृति के मुंह बोलते उद्धरण हैं जो जनमानस के विधि क्रिया कलापों और जीवन जगत का चित्र उपस्थित करते हैं।

विशेषताएँ

मुहावरों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह किसी वाक्य का अंगीभूत बनकर रहता है। किसी वाक्य के साथ ही ये प्रयुक्त हो सकते हैं भाव प्रकाशन में इनकी स्वतंत्र सत्ता नहीं है। आंख दिखाना एक मुहावरा है किन्तु जब हम कहेंगे कि वह मुझे आंख दिखा रहा था तो इसका तात्पर्य होगा- धमकी दे रहा था।

मुहावरा अपने मूल रूप में ही सदैव प्रयुक्त होता है। यदि इसमें आये हुए शब्दों के पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया जाय तो मुहावरे का मूल रूप नष्ट हो जायेगा। जैसे तावा कै खपरी एक मुहावरा है। किन्तु तावा की कलिमा का प्रयोग मुहावरा न रहकर सामान्य वाक्य रह जायेगा।

मुहावरे का वाच्यार्थ तक ही सम्बन्ध नहीं रहता अपितु लक्ष्यार्थ द्वारा अभीष्ट अर्थ भी प्राप्ति होती है। उदाहरण के लिए अधजल गगरी छलकत जाय का सीधा अर्थ होगा कि जो घड़ा कम भरा होता है वह छलकता हुआ जाता है परन्तु इसका अभीष्ट अर्थ होगा थोड़े पैसे वाला आदमी या थोड़ा पढ़ा लिखा व्यक्ति उतावला होकर चलता है। वस्तुतः मुहावरों के अर्थ और दिशा भी बहुआयामी होती है। मुहावरे काव्य के विविधि रूपों में अपने को संजोये रहते हैं। कहीं व्यग्यार्थ होता है, कहीं वक्रोक्ति होती है कहीं अन्योक्ति होती है, उक्त मुहावरे अधजल गगरी ... में अन्योक्ति है। प्रस्तुत उपादन तो गगरी या घट है किन्तु अप्रस्तुत क्षुद्र (नीच) मनुष्य है। जिसे लक्ष्य करके कहा गया है यह शैली व्यापकता लिए हुए है। इसमें उन सभी संकीर्ण बुद्धि वाले लोगों की और इंगित किया गया है जो अपनी अल्पज्ञता में बहुज्ञता का दंभ भरते हैं।

वास्तव में सामान्य कथन और काव्यात्मक उक्ति में बड़ा अंतर होता है। काव्यात्मक उक्ति लोक में, शास्त्र में, एक सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठित हो जाती है तथा उसमें अन्तर्मन को प्रभावित करने की अद्भुत शक्ति आ जाती है जबकि सामान्य कथन न तो प्रभावकारी होता है और न ही उसमें सार्वकालिकता होती है। सामान्य कथन एक वैयक्तिक व्यवहार तक सीमित रहता है उसमें दीर्घ कालिक प्रभावकारी क्षमता नहीं रह जाती। निश्चय ही काव्य बहुजन हिताय होता है और चिरस्थायी होता है। अतः काव्यात्मक उक्तियों का अधिक प्रभाव पड़ता है। यों भी साहित्य में काव्य का पहले सृजन हुआ है। मुहावरों की विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में कतिपय उल्लेखनीय बिन्दु इस प्रकार हैं -

1. शब्द समूह : शब्द भाषा की इकाई है। शब्दों के माध्यम से वाक्य बनते हैं तथा वाक्य ही किसी भाषा का निर्माण करते हैं। अतः किसी भाषा के अध्ययन के लिए हमें सर्वप्रथम शब्दों पर ध्यान देना होगा। अवधी मुहावरों के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के शब्दों का समावेश हुआ है। तत्सम शब्दों का प्रयोग प्रायः अत्यल्प है किन्तु तद्भव शब्दों की भरमार है। मुहावरों में बहुत सारे आंचलिक शब्द निरूपित हैं जिन्हें हम देशज शब्द कहते हैं। विदेशी शब्दों में अरबी, तुर्की, फारसी तथा अंग्रेजी और योरोपीय भाषाओं के भी शब्द मिलते हैं लेकिन देशज और तद्भव शब्दों की प्रमुखता है।

कुछ तद्भव शब्दों की बानगी।

तद्भव	तत्सम
सांझ	संध्या
नरक	नर्क
बिरथा	व्यर्थ
कलेश	क्लेश
मरजाद	मर्यादा

भतार	भर्तार
जोगी	योगी
नोन	नमक (लवण)
नाव	नाम
दरसन	दर्शन
बज्जर	बज्र
सराप	श्राप
सरग	स्वर्ग
सुवारथ	स्वार्थ
सपनेखा	सूर्पणखा
धीर	धैर्य
परतीत	प्रतीत (विश्वास)
लहुरा	लघु
अनरीति	अनीति
उछाह	उत्साह

तत्सम की भांति ही मुहावरों में देशज शब्दों की भी बहुलता होती है लोकभाषा में प्राप्त देशज शब्द अपना विशिष्ट भाव प्रकट करते हैं और ये भाव उस क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा की सीमा में प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करते ही इनका महत्व समाप्त हो जाता है। अवधी मुहावरों में प्राप्त देशज शब्दों की एक बानगी प्रस्तुत है -

झमाझम - किसी वाद्य यंत्र अथवा पायल और नुपूरों की ध्वनि को व्यंजित करता है

घाम	धूप
झलकारे	भरपूर श्रृंगार, चटकीला श्रृंगार
जगत	कुंवा का चबूतरा
डुडुही	चौखट
झकझोरी	छीना झपटी, हुड़दंग आदि
मरदब	आंटा गूंथने को मरदब कहते हैं
कनिया	गोद में
नगीचे	सामीप्य

2. शब्द शक्तियाँ

जिस शक्ति व्यापार अथवा वृत्ति के द्वारा शब्द में अन्तर्निहित अर्थ को स्पष्ट करने अथवा ग्रहण करने में सहायता मिलती है, उस माध्यम को शब्द शक्ति कहते हैं। शब्द शक्ति का तात्पर्य शब्द शक्ति के वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ से है। शब्दों का अर्थ प्रसंग एवं कथन के अनुसार रहता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि शब्द शक्ति वह विधा है जिसके द्वारा शब्द का प्रसंगानुसार वांछित अर्थ प्राप्त होता है।

अवधी मुहावरों की सर्वप्रमुख विशेषता उसकी शब्द शक्तियाँ ही हैं अभिधा, लक्षणा और व्यंजना तीनों शब्द शक्तियाँ किसी न किसी रूप में प्रत्येक मुहावरे में दृष्टिगोचर होती हैं। कतिपय उद्धरण द्रष्टव्य है -

1. अभिधात्मक मुहावरे

नीकी करै बदी म परै
नीकि नीकि गप्प करू करू थू
नाव बड़े दरसन थोरे नीकि लागि मैं तोरेन रहिहउँ
भंडा फूटिगा

2. लक्षणापरक मुहावरे

बारह बिगहा पोदीना बोवा है
भूसा भरि दिहिन
मतौनी कोदई खाये हैं
मन मोर महुवा चित्त भुसइले
मुंह फूलि गवा
कौआ से गोर
मुंह मा खपरी लागि गै
मरी बछिया बभने का
मिया कै दाढ़ी चुम्मै भर का
मुंह झरसत हैं।

3. विषय वैविध्य

मुहावरों का वर्ण्य विषय बहुत ही व्यापक है। समाज परिवार, प्रकृति, पशु, आचार-विचार, नीति-रीति, खान-पान लोक व्यवहार आदि अनेक विषय है जिनका विवरण इनमें देखने को मिलता है। सामाजिक संदर्भों को रेखांकित करने वाले मुहावरों की प्रायः बहुलता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है -

सामाजिक मुहावरे - बूढ़ा नये नहीं देखिन
बूढ़ न मरा दइव परका
बतबढ़ होइगै
बाँसन बैर बाँधे है
पारिवारिक मुहावरे - बतिया है करतुतिया नाही, मेहरी हैं घर खटिया नाहीं
बहुत मयानी अजिया सास लइके कंडा पोछैं आंस
बिटिया न बेटवा फत्ते बरातै जायँ
फुफ्फा फरेंद लायें
पशु पक्षी सम्बन्धी - बिलारिन कै भैंस नहीं लागत
मांगा बैल उंजेरिया रात
खरी चलौना चांदा खाय, हर जोतै का डंगरू जाय।
कुकरे कै पूंछ
बिलारि के आवंरि
उंटवा कै लटकनि
भैंस के आगे बीन बाजै भैंस ठाढ़ि पगुराय।

4. बिम्ब प्रधान

मुहावरे का प्रयोग होते ही एक बिम्ब उभरता है। जैसे एक मुहावरा है - मुंह लाल होइगा (क्रोध की पराकाष्ठा) यह मुहावरा सुनते ही ऐसे व्यक्ति का बिम्ब उभरता है जो क्रोधाग्नि में जलता हुआ लाल-लाल (रक्ताभ) मुखाकृति का होता है।

इसी प्रकार सावन कै हरेरी नामक मुहावरे को सुनकर सावन की हरियाली का बिम्ब उभरता है।

5. प्रतीकात्मकता

चूंकि मुहावरों में लक्षणा और व्यंजना शब्द शक्तियों का अधिकांशतः प्रयोग होता है इसलिए स्वाभाविक रूप से प्रतीकात्मक शैली की प्रमुखता होती है।

6. सूक्ति परक (लघु कथन)

मुहावरे सूक्तियों की भांति ही प्रयुक्त होते हैं।

इनका कथन तो लघु होता है किन्तु कथ्य बहुत ही व्यापक होता है। यथा नाव कइ दिहिन एक मुहावरा है लेकिन इसका आशय बहुत ही व्यापक है जतने कै ढोल नहीं वतने कै मंजीरा' का भाव यह कि प्रधान वस्तु की अपेक्षा गौण वस्तु या व्यक्ति का अधिक महत्व हों इस विसंगति पूर्ण स्थिति को दर्शाने के लिए इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

7. अनुभव सिद्धता

मुहावरों का प्रयोग अनुभव सिद्धता पर आधारित है। इनमें अनुभव जन्मय कथ्यों और तथ्यों का समावेश होता है। मुहावरे और कहावतें दोनों ही लोक मानस के नीति नियामक सूत्र हैं। किसी घटना अथवा कार्य व्यापार या फिर व्यक्ति की प्रवृत्ति की सम्यक जानकरी इनमें देखने को मिलती है। मारे गये मराये गए, कनिया लरिका गांव गोहार, नाव बड़े दरसन थोर, नौ कै लकड़ी नब्बे खर्च, नौ दिन चलै अढ़ाई कोस, नीम हकीम खतरे जान, निर्बल के बलराम, पिपरे कै परियत, फूहर चली तौ सब घर हाला, बौरहा कुकूर हन्ना खेदै, बीछी कै बियाना, बाप-पूत बराती-माई धिया घराती आदि।

8. काव्यात्मक प्रवृत्ति (तुकान्त)

अधिकांश मुहावरे काव्यात्मक प्रवृत्ति के होते हैं। कुछ में तुकान्त का सुन्दर संयोग देखने को मिलता है -

यथा -
पाल-पाल मैं तोहिका होइहौं काल।
बतिया हैं करतुतिया नाही। मेहरी है घर खटिया नाही।।
मिया बीबी राजी, तौ का करे काजी।
मुद्दई सुस्त, गवाह चुस्त।
मारे न मरैं, बिराये मरैं।
सात दई सतुल्ला, भतार के आगे कुल्ला।
दौरत चलै त कूकुरि आय, धीरे चलै त फूहरि आय।
काल्हि कै लीपा गवा बिलाय, आज कै लीपा देखौ आय।
बहुत मयानी अजिया सास, लइके कंडा पोंछैं आंस।

न हर चलै न चलै कुदारी बैठे भोजन देयं मुरारी।

राड़े रोवैं सेर, सेर अहिबाती रोवैं दस दस सेर।

9. मुहावरे किसी भी वाक्य के वाक्यांश बनकर रहते हैं। उनकी अपनी कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं होती।

10. मुहावरा अपने मूल रूप में ही सदैव प्रयुक्त होता है। इसके शब्दों में परिवर्तन करने से अथवा किसी शब्द का पर्यायवाची लिख देने से उसका अर्थ नष्ट हो जाता है।

11. मुहावरों में जनजीवन की झांकी प्रतिबिम्बित होती है, उनमें साधारण प्रथाओं, रूढ़ियों और परम्पराओं के चित्र अंकित होते हैं। मुहावरों द्वारा कभी-कभी इतिहास की कड़ियों को जोड़ने में भी सहायता मिलती है तथा सम्बन्धित समाज के सांस्कृतिक स्तर तथा महत्वपूर्ण सांस्कृतिक तथ्यों को भी उजागर किया जा सकता है।

12. मुहावरों द्वारा जातिगत विशेषताओं से सम्बन्धित विवरण भी प्राप्त होते हैं।

वर्गीकरण : वैसे तो मुहावरों का वर्गीकरण करना एक कठिन समस्या है। कभी-कभी एक ही मुहावरा अनेक संदर्भों को व्यक्त करता है या फिर एक ही संदर्भ को प्रस्तुत करने के लिए कई मुहावरे प्रयुक्त होते हैं। ऐसी दशा में उनका तर्क सम्मत वर्गीकरण करना कठिन है फिर भी मोटे तौर पर उनका निम्नवत वर्गीकरण हो सकता है -

1. संस्कार सम्बन्धी मुहावरे
2. शकुन, जयोतिष, अंधविश्वास सम्बन्धी मुहावरे
3. पौराणिक मुहावरे
4. नीति सम्बन्धी मुहावरे
5. जातिगत मुहावरे
6. राजनैतिक मुहावरे
7. ऐतिहासिक मुहावरे
8. सामाजिक मुहावरे
9. विविध मुहावरे।

वस्तुतः अवधी लोक साहित्य में मुहावरों का अक्षुण्ण भंडार है। आज भी अधिकांश अक्षर ज्ञान शून्य लोक मानस को तत्सम शब्दों की जानकारी नहीं है। जन जीवन अपनी प्रकृत बोली में स्वाभाविक उद्‌गारों को इन्हीं मुहावरों द्वारा व्यक्त करता रहता है। जीवन का कोई भी पहलू मुहावरों से अछूता नहीं। लोक मानस अपने सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक आशयों और तथ्यों का प्रकटीकरण इन्हीं मुहावरों के माध्यम से किया करता है। मुहावरों में संक्षिप्त पदावली, गोपनीयता व जीवन की व्यापकता का भाव विद्यमान रहता है।

मुहावरा

काँध लगाय दियौ - (सहारा देना)
दूसरे को सहारा देने के लिए प्रेरित करने की स्थिति में इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है। इसमें सहारा देनेवाले को कर्तव्यबोध कराने का भी भाव छिपा है।
कचूमर निकरि गै - (पूरी ताकत समाप्त कर देना)
जब कोई व्यक्ति अपनी पूरी ताकत लगाकर भी कार्य में सफल नहीं होता, उस स्थिति में यह मुहाविरा चरितार्थ होता है।
कच्चै खाय जाब - (अत्यधिक क्रोध की अभिव्यक्ति करना)
इस मुहाविरे से क्रोध की त्वरा का पता चलता है।
कच्चा चिट्ठा - (सारी कमियों का रहस्य खोलना)
जब कोई व्यक्ति कृत्रिम रूप से अपने को बड़ा नैतिक तथा सदाचारी सिद्ध करता है, ऐसी स्थिति में उसकी आत्मप्रशंसा को न सहन कर सकनेवाला दूसरा उसका अत्यन्त नजदीकी व्यक्ति उसकी अनेक कमजोरियों को उजागर कर देने की बात कहता है।
कफन घसीटी - (औचित्य का ध्यान दिये बिना लाभ कमाना)
यह मुहाविरा उस मनःस्थिति का व्यंजक है, जब कोई व्यक्ति बिना ग्राह्य व अग्राह्य का विचार किये सर्वत्र कुछ न कुछ पाने की लालसा रखता है।
कफन बाँधि के निकरे - (शरीर की परवाह न करना)
जीवन अत्यन्त मूल्यवान है किन्तु, जब कोई व्यक्ति बिना सोचे-विचारे प्राणों की परवाह न करके बुरे कार्यों में प्रवृत्त होता है तब उसके मनोभाव को व्यंजित करने के लिए इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।
कबर मा गोड़ लटकाये हैं - (मृत्यु के अत्यन्त निकट)
बिना कठिन अभ्यास के जीवन के अन्तिम क्षणों तक तृष्णा का नाश नहीं होता ऐसी स्थिति में जर्जर देहवाला भी आसक्ति को नहीं छोड़ता, तब वह लोक में इसी मुहाविरे से अभिव्यंजित होता है।
कम खर्च बालानसीन - (थोड़े खर्च में उच्च्य कार्य करना)
प्रायः स्तरीय कार्य करने के लिए तदनुकूल सामग्री की भी आवश्यकता होती है, किन्तु जब कोई व्यक्ति अपनी बुद्धि से थोड़ा व्यय करके अच्छी तरह सौन्दर्यपूर्ण कार्य कर लेता है, तब कमखर्च बालानसीन की कहावत चरितार्थ होती है।
करिहाँव तौ सौंहाय लेई - (क्षणभर आराम करना)
कार्य का अत्यधिक दबाव होने तथा विश्राम का जरा भी समय न मिलने पर यह उक्ति गतार्थ होती है। इस दशा में कार्य करनेवाले की परतन्त्रता भी होती है।

कलई खुलिगै - (भेद खुल जाना)
प्रायः मनुष्य अपनी आन्तरिक कमजोरियों को बाहरी आडम्बरों से छिपा लेता है, किन्तु जब बात बिगड़ जाती है और उसकी छिपी असलियत का पता चल जाता है तब कहा जाता है 'कलई खुलि गै'।

कलम से मारब - (कानूनी दाँवपेंच से हराना)
जब शारीरिक रूप से लड़ाई न करके कानूनी प्रक्रिया के द्वारा किसी को पराजित कर दिया जाता है तब उसे कलम से मारना माना जाता है।

कर्ज लइके कर्ज करै - (उधार लेकर उधार देना)
कुछ लोग पैसे में असमर्थ होने पर महाजन बनना चाहते हैं। इसके लिए वे दूसरे से उधार लेकर कर्ज बाँटते हैं, उनकी स्थिति को व्यक्त करनेवाला यह प्रभावी कथन है।

करेज जुड़ाय गवा - (मन को शान्ति मिल जाना)
बहुत दिनों से चली आ रही अभिलाषा के पूरी हो जाने पर 'करेज जुड़ाय गवा' की उक्ति सार्थक होती है।

करेज निकरि गवा - (जीवन्तता का ह्रास हो जाना)
किसी कार्य को पूरा करने पर जब मनुष्य का सब कुछ लग जाता है, सारा उत्साह भी समाप्त हो जाता है, किन्तु उस कार्य की पूर्ति नहीं होती, 'तब करेज निकरि गवा' की स्थिति होती है।

कहाँ कै ईंट कहाँ कै रोड़ा - (इधर-उधर से, बिना किसी मेल से कार्य पूरा करना)
प्रत्येक कार्य की अपनी क्रियाविधि तथा उसका सौन्दर्य होता है। किन्तु जब उसकी परवाह किए बगैर उस कार्य को किसी तरह पूरा किया जाता है ऐसी स्थिति को व्यंजित करनेवाला यह मुहाविरा है।

काँटा खरकत है - (चिन्तित रहना)
जब किसी इच्छित कार्य के पूरा न कर पाने से, उसके प्रति सदैव चिन्ता बनी रहती है, तब वह काँटा जैसा खरका ही होता है।

कागद हेराय गा - (किसी कार्य-विशेष में विलम्ब)
कागद का तात्पर्य क्रम से है। जब किसी को अपनी प्रस्तुति का समय मिलने में देर लगती है, तब 'कागद हेराय गा' कहा जाता है। प्रायः इस मुहाविरे का प्रयोग जीवन से ऊबकर मृत्यु की प्रतीक्षा होने पर किया जाता है।

काजर की कोठरी - (कलंक लगने का स्थान)
जहाँ कार्य करने पर यश मिलने की अपेक्षा अपयश मिलने की अधिक सम्भावना है।

काटै दौरत हैं - (रूखा व्यवहार करना)
प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से मधुर तथा प्रेमपूर्ण व्यवहार की आशा करता है, किन्तु जब इसके विपरीत कोई, रूखा व्यवहार करता है तब उसके लिए इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

काटौ तो खून नहीं - (दंग रह जाना) ऐसी स्थिति जब कोई व्यक्ति आशा के विपरीत किसी से अचानक मर्मभेदी उत्तर पाता है, तब वह 'काटौ तौ खून नहीं' की दशा में पहुँच जाता है।

कान नहीं दै जात - (सर्वत्र निन्दा फैलना)
किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में जब बुराई सीमा का अतिक्रमण कर जाती तो 'कान नहीं दै जात' की स्थिति पैदा होती है।

काठ मारि गवा - (शरीर शून्य हो जाना)

अप्रत्याशित घटना घटित होने पर काठ मार जाने की स्थिति हो जाती है।

कान फूँकत है - (चुगली करना)

इस मुहावरे का व्यंग्यार्थ है कि चुपके से किसी के खिलाफ चुगली करके झगड़ा करने के लिए उकसाना।

कानी कौड़ी नहीं - (अत्यधिक धनहीनता)

जब मनोरथ बड़ा ऊँचा होता है और पास में उसकी पूर्ति के लिए जरा भी धन नहीं होता ऐसी स्थिति में 'कानी कौड़ी नहीं' का प्रयोग किया जाता है।

कोख भरिगै - (सन्तान की प्राप्ति होना) भारतीय जीवन में किसी नारी का निःसंतान होना बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण माना जाता है। अतः सन्तान-प्राप्ति को कोख भरना कहा जाता है।

कानौ कान खबर- (खबर का अत्यन्त गुप्त रहना)

संसार में अच्छी खबर उतनी तीव्रता से लोगों तक नहीं पहुँचती जितनी निन्दापरक खबर एक दूसरे से सुनकर चारों तरफ फैल जाती है। कर्ण परम्परा से खबर फैलने की प्रक्रिया को कानोकान खबर कहा जाता है।

काम तमाम होइगा - (षड्यंत्र सफल होना)

जब कोई व्यक्ति किसी के विपरीत षड्यंत्र में सफल हो जाता है और जिसके प्रति षड्यंत्र किया जाता है उसे पता नहीं चल पाता।

काला पानी होइ गवा - (अपने स्थल या कार्य क्षेत्र से बहुत दूर हो जाना)

ब्रिटिश शासनकाल में यह एक सजा थी। आज यह मुहाविरा उस स्थिति का द्योतक है जिसमें व्यक्ति को इतनी दूर भेज दिया जाय कि अपने मूल स्थल पर आने की नौबत ही न आ जाये।

किनारा खैंचि लिहिन - (सहभागिता से अलग हो जाना)

सामुदायिक भावना मनुष्य का विशेष गुण है किन्तु जब कोई व्यक्ति सामुदायिक हित की अपेक्षा अपना हित देखने लगता है तो उसे सामुदायिक सहयोग करने में व्यक्तिगत लाभ नहीं दिखाई देता वह अलग हो जाता है।

किल्ली ऐंठि दिहिन - (बहका देना)

प्रायः जो लोग स्थिर और गम्भीर विचारों के नहीं होते वे बहकावे में आ जाते हैं उनको बहकाने में देर नहीं लगती।

किस्मत फूटि गै - (अचानक काम बिगड़ जाना)

अप्रत्याशित रूप से बना बनाया काम जब बिगड़ जाता है तो इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

कागद पूरा होइ गवा - (मृत्यु की घड़ी निकट आना)

असमय दिवंगत होने की स्थिति में इस प्रकार का संवेदनायुक्त कथन किया जाता है।

कौने मनई से पाला परा - (अनजाने में किसी तिकड़मी या ताकतवर व्यक्ति से भिड़ना)

प्रायः मनुष्य अपने समान सामर्थ्यवाले व्यक्ति से ही विवाद अथवा मैत्री करता है किन्तु जब ऐसी स्थिति आ जाय कि कोई व्यक्ति इतना ताकतवर या तिकड़मी या हथकंडेबाज मिल जाय, जिससे पीछा छुड़ाना कठिन हो तब कहा जाता है - 'कौने मनई से पाला परा है'।

कान पै जुवाँ नहीं रेंगत - (अत्यधिक निश्चिंत रहना)

किसी दायित्व के प्रति सचेत किये जाने पर भी कोई व्यक्ति जरा सा भी ध्यान नहीं देता तब उस मनोदशा को व्यंजित करने के लिए इस मुहावरे का प्रयोग होता है।

कानून बघारत हैं - (परिस्थिति जन्य तथ्य के विपरीत आचरण)
कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो किसी कार्य के प्रयोजन की सार्थकता से हटकर कोरे सिद्धान्तों की बात करते हैं ऐसी स्थिति का द्योतक है यह मुहाविरा।
किरवा परिहैं - (शरीर की बुरी दशा होने का शाप)
कुआँ मा भाठि दिहिन - (गैर जिम्मेदारी अथवा उपेक्षापूर्ण कार्य करना)
उत्तरदायित्व का सम्यक् निर्वहन न करना।
कूकुर काटे है - (मानसिक रूप से असंतुलित होना)
जब कोई व्यक्ति उचित-अनुचित का विचार किये बिना अत्यन्त सामान्य व्यवहार के प्रति भी विपरीत आचरण करता है तब इस कथन का प्रयोग किया जाता है।
कुबेर कै खजाना - (अति सामर्थ्यवान)
अप्रत्याशित रूप से अथवा बिना अपेक्षित श्रम के अत्यधिक सम्पत्ति मिल जाने पर इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।
कतनेउ कोठे मा जिउ गवा - (अनेकानेक प्रकार की शंकाएँ करना)
किसी प्रिय वस्तु की हानि हो जाने पर उसके कारणों के प्रति सम्भावित-असम्भावित अनेक व्यक्तियों या स्थितियों पर शंका करने की मनःस्थिति का यह मुहावरा द्योतक है।
कौड़ी मोल - (मूल्यहीन होना)
जब कोई वस्तु इतनी सुलभ हो जाती है कि उसका अवमूल्यन हो जाये।
कौआ से गोर - (अत्यन्त काला, कुरूप)
कौआ स्वभावतः अत्यन्त काला होता है यदि कोई व्यक्ति बहुत काले रंग वाली हो तो उसके लिए यही मुहाविरा व्यंजनार्थ प्रयुक्त होता है।
करम ठोंकि के - (भाग्य के भरासे छोड़ देना)
जब मनुष्य किसी कार्य के भविष्य पर सही निर्णय नहीं ले पाता और यह कार्य सम्पादित करना अनिवार्य भी होता है तब उसे भाग्य पर छोड़ने का निश्चय कर ले।
कुकुरे की मौत मरि गे - (बुरी दशा को प्राप्त होना, दुर्दशापूर्ण मृत्यु)
मनुष्य का जीवन अत्यन्त मूल्यवान है। उसकी मृत्यु का भी मूल्यांकन किया जाता है। अतः जब कोई अनजाने स्थान पर बड़े ही कष्ट के साथ मृत्यु को प्राप्त करता है तब इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।
कुम्हड़ा कै बतिया - (अत्यधिक संवेदनशील)
ऐसी मान्यता है कि कद्दू (कुम्हड़ा) का फल अपने उद्भव काल में इतना संवेदनशील होता है कि छूते ही धीरे-धीरे मुरझा जाता है, अतः उसका व्यंग्यार्थ है अत्यधिक कमजोरी।
कुआँ मा बोरि दिहिन - (नष्ट कर देना)
किसी कार्य के परिणाम को समझते हुए भी कोई प्रयास न करना अपितु उसे भार समझकर मात्र उत्तरदायित्व का निर्वहन करने हेतु कर देना।
कोरी के दुलहा - (बेतुकी सजावट में होना)
बेमेल उपादानों से अलंकृत होने पर असहज स्थिति का पैदा होना।
कुफार बोलत है - (कटुवाणी का प्रयोग)
मर्यादा तथा औचित्य का विचार किये बिना मर्म 'घातक वाणी बोलने' वाले को 'कुफार बोलत हैं' ऐसा कहा जाता है।

खटिया खड़ी होइ गै - सर्वथा असहाय हो जाने की स्थिति

खटिया लाग है - (असहाय और दयनीय स्थिति)

जब आदमी इतना अधिक बीमार हो जाय कि उठ-बैठ न पाये तब यह स्थिति 'खटिया लगनेवाली' होती है।

खटिया पकरि लिहिन - (अन्तिम अवस्था)

ऐसी बीमारी हो जाना कि उस आदमी का मरण निश्चित हो जाय।

खार खात हैं - ईर्ष्या करना, द्वेष करना, डाह करना।

खलरी निकारि लिहिन - (निर्दयतापूर्वक शोषण करना)

जब कोई व्यक्ति बड़ी बेरहमी के साथ किसी का शोषण करता है तब इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

खिचरी चुरत है - (षड्यंत्र करना)

किसी प्रयोजन अथवा कार्य के निष्पादन में विघ्न डालने के उद्देश्य से प्रतिपक्षियों द्वारा की जानेवाली कुटिल मंत्रणा को 'खिचरी चुरत है' कहा जाता है।

खीस निपोरत हैं - (निर्लज्जता करना)

चापलूसी करना। अमर्यादित आचरण करना।

खूँट खाये हैं - (ऋणी होने जैसा कार्य करना)

किसी के मुरीद होकर उसकी इच्छानुसार उसका कार्य हित करना। बंधुआ मजदूर की भाँति कार्य करना। अकारण ही किसी के प्रति आस्था पैदा होना।

खून-पसीना यक कइ दिहिन - (अत्यधिक परिश्रम करना)

अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए इतना परिश्रम किया जाय कि शरीर की भी परवाह न हो।

खून चूस लिहिन - (भरपूर शोषण करना)

शरीर की जीवनी शक्ति रक्त में ही होती है। उसके अभाव में मनुष्य निष्प्राण हो जाता है अतः जब कोई व्यक्ति किसी का इतना अधिक शोषण करता है कि वह इतना अधिक धनहीन हो जाता है कि उसे अपने शरीर-यात्र के सम्पादन में भी कठिनाई आ जाती है।

खोद-खोद के पूछत हैं - जीवन में अनेक ऐसी चुभने वाली बातें होती हैं। जिन्हें मनुष्य स्मरण नहीं करना चाहता ऐसी स्थिति में जब कोई व्यक्ति किसी से जानबूझकर बार-बार उस घटना का स्मरण कराता है तब उस भाव भूमि को 'खोद-खोद के पूछत हैं' मुहावरे से अभिव्यक्ति किया जाता है।

खोपड़ी पिरात है- (ऊब और रंज की स्थिति)

मनुष्य के अन्तःकरण में ईर्ष्या, द्वेष आदि अनेक भाव जानेअनजाने छिपे रहते हैं। जब कोई एक ही बात किसी को प्रिय लगती है तथा दूसरे को अप्रिय लगती है। इस अप्रियत्व में कभी कभी व्यक्तित्व का द्वेष भाव भी छिपा रहता है। अतः द्वेषवश जब किसी से सम्बन्धित वार्ता प्रिय या अनुकूल नहीं लगता तब प्रिय न लगनेवाले के लिए इस मुहावरे का लाक्षणिक प्रयोग किया जाता है।

खोपड़ी अदहन होइगै - (बिना वजह मानसिक परेशानी)

जब कोई व्यक्ति आवश्यकता से अधिक बोलता है, जिसका विषय से कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं होता। बोलनेवाला सुननेवाले की अनिच्छा का ध्यान न देकर अपनी ही बात करता रहता है तब सुननेवाले की अनिच्छा, ऊबन की मनोदशा को 'खोपड़ी अदहन होइगै' से प्रकट किया जाता है।

खटाई मा परिगा - (कार्य का उलझ जाना)
कोई कार्य जब कई लोगों के विवाद में उलझ जाता है और उसके फलागम तक पहुँचने में सन्देह पैदा हो जाता है, उस स्थिति को व्यक्त करने के लिए यह मुहाविरा अत्यन्त सटीक है।
खाय दौरत हैं - (अत्यन्त रूखा व्यवहार करना)
प्रत्येक मनुष्य अपने प्रति मधुर व्यवहार की अपेक्षा रखता है किन्तु उसके विपरीत जब उसे अत्यन्त कठोर व्यवहार मिलता है तब वह सहज ही कह उठता है - 'यह तौ खाय दौरत है'। वस्तुतः 'कांट खाना' पाशविक व्यवहार में माना जाता है। यह उक्ति मनुष्य के पशु-तुल्य व्यवहार को व्यंजित करती है।
खून कइ दिहिन - (हत्या कर देना)
किसी सिद्धान्त या व्यक्ति को समूल नष्ट कर देने की स्थिति को 'खून कइ दिहिन' कहा जाता है।
खून-खच्चर मचिगै- साधारण मारपीट का वीभत्स रूप। सामान्य मारपीट की स्थिति में अत्यधिक रक्त स्राव हो जाने पर विवाद की वीभत्सता को व्यंजित करने के लिए लोक जीवन में इस मुहाविरे का प्रचुर प्रयोग होता है।
खूनै कै घूंट - (विवशता में अपमान सहना)
मानव मात्र की प्रत्येक स्थिति में सम्मानपूर्वक समाधान की प्रवृत्ति होती है किन्तु कभी कभी ऐसी स्थिति आती है जब बुद्धिमान व्यक्ति को अपमान सहकर भी मौन रहना पड़ता है। इस स्थिति को व्यक्त करने में यह मुहावरा सर्वथा समर्थ है।
खेल बिगड़ि गा- (अचानक परिस्थितियों का विपरीत हो जाना)
यों तो सम्पूर्ण जगत एक रंगमंच है। यहाँ का प्रत्येक कार्य-सुव्यवस्थित एक खेल है, किन्तु सामान्यतया जब किसी परिवार की सब तरह से चल रही सुव्यस्थित स्थिति में अचानक ऐसा व्यवधान आ पड़ता है जिससे सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था बुरी तरह से प्रभावित हो जाती है उसके सुधरने का दूर-दूर तक उपाय नहीं दिखाई पड़ता तब यह कथन प्रयुक्त होता है।
खोदिन पहाड़ निकरा मूस - (परिश्रम के अनुरूप फल न मिलना)
जीवन में किये जानेवाले प्रत्येक श्रम का एक प्रयोजन होता है। श्रम के अनुरूप फल की आकांक्षा प्रत्येक मनुष्य को होती है किन्तु जब श्रम बहुत अधिक करना पड़ता है और उससे उपलब्धि नहीं के बराबर होती है। यहाँ पहाड़ श्रम का तथा मूस (चूहा) फल का प्रतीक है। यह मुहाविरा प्रतीकबद्ध है।
खरमकरा लागि हैं - (बेचैन रहना)
जब कोई व्यक्ति किसी साधारण कार्य करने की अधिक त्वरा में होता है और उसकी समझ में उस कार्य को करने का सही तरीका नहीं होता है ऐसी बेचैनी भरी स्थिति को व्यक्त करने के लिए यह मुहाविरा प्रयुक्त होता है।
खूँटा नास होइ गवा - (सम्पूर्ण कुल विनाश)
भारतीय संस्कृति में कुल-परम्परा का चलते रहना शुभ माना जाता है। इसके विपरीत जब किसी कारणवश कुल में कोई शेष नहीं बचता अपितु सभी असमय में काल-कवलित हो जाते हैं। इस स्थिति को व्यंजित करने के परिप्रेक्ष्य में यह मुहाविरा प्रयुक्त होता है।
खोपड़ी पर होरा भूजत हैं - (सदैव के लिए संकट बन जाना)
असहयोग की स्थिति पैदा करना। व्यवधान डालना, अकारण ही कार्य बाधित करना।

खपरी लागि गै - (गहरा कलंक लगाना)
जीवन का गौरव सामाजिक सम्मान से ही आँका जाता है। जब कोई लाभ कामादि के वशीभूत होकर ऐसा कार्य कर डालता है जो अत्यन्त घृणित होता है और वह व्यक्ति समाज के सामने जाने में स्वयं भी लज्जा का अनुभव करता है यह मुहाविरा उस स्थिति का द्योतक है।

खाये कै मोटाई - (अत्यधिक सुख-सुविधा मिल जाने पर इतरा जाना)
यह मुहावरा किसी व्यक्ति की संस्कारहीनता का परिचायक है। जब कोई अभावग्रस्त व्यक्ति समुचित सुविधाओं के मिलने पर अपनी पूर्व स्थिति को भूलकर कार्य के प्रति उपेक्षित और अमर्यादित व्यवहार करने लगता है तब उसे यही समझा जाता है कि वह 'खाये कै मोटाई कर रहा है'।

खनखजूरे कै टाँग - (अत्यधिक सामर्थ्यवान की नगण्य हानि)
जब किसी अत्यन्त समृद्ध एवं सामर्थ्यवान व्यक्ति की कोई ऐसी हानि हो जाती है जिससे उसकी समृद्धि में कोई प्रभाव नहीं पड़ता तब उसके लिए यह हानि 'खनखजूरे कै टाँग' ही कही जाती है।

खेते कै बदला मेंड़े पर - (तत्काल प्रतिफल मिलना)
यह मुहाविरा उस स्थिति का द्योतक है जब कोई व्यक्ति किसी से बदला या प्रतिफल पाने की अत्यन्त सन्निकटता में होता है।

खाये न मरै बिराये मरै - (अभाव की अपेक्षा अपमान से कष्टानुभूति का होना)
सम्मान मनुष्य मात्र की निधि है। मनुष्य अभाव की पीड़ा को तो सहन कर सकता है किन्तु अपमान मरणतुल्य होता है। अभावों में रहकर भी मनुष्य सम्मानपूर्वक जीना चाहता है।

गुरमा जीत लागि गयें - (कार्य की अपेक्षा से अधिक समय लगना)
प्रत्येक कार्य की सम्पन्नता का न्यूनाधिक रूप से लगनेवाला समय नियत होता है किन्तु जब कार्य कम समय में होनेवाला होता है और उसके पूरा होने में अधिकाधिक समय लगने लगता है, उस कार्य स्थिति को व्यक्त करने के लिए लोक में इस ज्योतिष सम्मत मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

गड़ा चूर बैठ हैं - (किसी स्थान पर बहुत देर तक रुकना)
जब कोई व्यक्ति किसी कार्य या बात को गोपनीय रखना चाहता है किन्तु जिससे गोपनीयता की रक्षा करनी है वह जाने-अनजाने लगातार उपस्थित रहता है और हटने का नाम नहीं लेता है ऐसी स्थिति को 'गड़ा चूर बैठे हैं' से व्यक्त किया जाता है।

गंगाघाट रोके हैं - किसी सार्वजनिक स्थल को अधिग्रहीत करने का प्रयास करना अपना स्वामित्व स्थापित करने का प्रयास करना।

गउनें कै दुलहिन - (अति संरक्षणीय)
प्रायः लोकजीवन में नवविवाहिता वधू को अत्यंत सुख-सुविधा पूर्वक संरक्षण प्रदान किया जाता है उसे साधारणतया कठिन गृहकार्यों से भी बचाया जाता है अतः लोक में जब कोई व्यक्ति श्रम करने से बचता है और अपनी सुकुमारता का दिखावा करता है तब उसे 'गउने की दुलहिन' कहा जाता है।

गूलरि कै फूल - (दुर्लभ होना)
जब कोई व्यक्ति चिर प्रतीक्षा के बाद बहुत दिनों पर दिखाई देता है तब गुलरी के फूल कहकर उसकी दुर्लभता व्यक्त की जाती है।

गऊ मनई - (अत्यधिक सीधा)
वस्तुतः गाय को सबसे सीधा माना जाता है। अतः जब कोई व्यक्ति अपनी हानि अथवा अपमान पर प्रतिक्रिया नहीं व्यक्त करता तब उसे 'गऊ मनई' कहा जाता है।

गुर के बाप कोल्हू - (झगड़े का मूल)
समाज में विभिन्न स्वभाव के लोग होते हैं जो व्यक्ति किसी झगड़े का मुख्य कारण होता है और प्रकाश में बाद में आता है उसे 'गुर के बाप कोल्हू' से अभिहित किया जाता है।

गोसाई कै धन - (त्याज्य सम्पत्ति)
लोक में समाज के स्वस्थ संचालन हेतु कुछ वर्जनाएँ निश्चित की गई थीं। सामाजिक दृष्टि से गोसाईं की सम्पत्ति भी वर्जित की गयी हैं।

गाभिन बात - (संदिग्ध बात)
कथन की स्पष्टता न होना। वास्तविकता को गोपनीय बनाये रखना।

गुर-चूँटा भये हैं - (एकाकार हो जाना)
किसी व्यक्ति में स्वार्थ-सिद्धि को लेकर प्रगाढ़ किन्तु अस्थायी मित्रता स्थापित करना।

गरहन लागि गें - (कार्य का बाधित हो जाना)
जब कोई कार्य किसी कारण अचानक अवरुद्ध हो जाता है तब उस स्थिति को गरहन लागि गे मुहाविरे से अभिव्यंजित किया जाता है।

गाड़ी उखारी - (पुराने मुद्दे उभारना)
प्रायः लोक में देखा जाता है कि सामान्य व्यक्ति आपसी विवाद में एक दूसरे की पुरानी चुभनेवाली बातें कहने लगते हैं इसे ही गाड़ी उखारी कहा जाता है।

गंगा लाभ - (शुभ एवं पवित्र कार्य)

गच्चा खाय गें - (धोखा खा जाना)
जब कोई व्यक्ति अपनी योजना के अनुसार सफल नहीं होता अपितु अप्रत्याशित रूप से धोखा खा जाता है तब उसे 'गच्चा खाय गयें' कहा जाता है।

गजब होइ गवा - (आश्चर्यजनक घटना)
प्रायः मानवीय सामर्थ्य की एक सीमा होती है किन्तु जब मनुष्य की शक्ति सामर्थ्य से बहुत अधिक बड़ी घटना हो जाती है तब उसे 'गजब होइ गवा' कहकर व्यक्त करते हैं।

गढ़ि-गढ़ि के बात करत हैं - (बनावटी बातें करना)
वस्तुतः खुले हृदय से व्यक्त होनेवाले भाव अत्यन्त अपनापन प्रकट करते हैं किन्तु इसके विपरीत जब कोई व्यक्ति वास्तविकता से रहित किन्तु भाषा बनाकर कहता है तब इससे मुहाविरे का प्रयोग होता है।

गढ़ जीति लिहिन - (महत्त्वपूर्ण कार्य पूरा करना)
जब कोई व्यक्ति अपने पुरुषार्थ के बल से कोई महत्त्वपूर्ण कार्य कर लेता है, तब 'गढ़ जीति लिहिन' ऐसा कहा जाता है।

गड़हा मा ढकेल दिहिन - (उपेक्षापूर्ण व्यवहार करना)
प्रत्येक व्यक्ति या वस्तु के साथ उसके स्तरानुकूल व्यवहार करने से उसकी शोभा होती है किन्तु जब उसके साथ निम्नतापूर्ण व्यवहार होता है तब उसे 'गड़हा मा ढकेल दिहिन' कहा जाता है।

गटई काटि लिहिन - (धोखा देना)
विश्वस्त व्यक्ति के साथ बहुत बड़ा धोखा करने को 'गटई काटि लिहिस' कहा जाता है।

गटई पै छूरी धै दिहिन - (जबर्दस्ती करना)
जब किसी व्यक्ति से उसकी इच्छा के विपरीत कार्य करवाया जाता है तब उसकी स्थिति 'गटई पै छूरी धै दिहिन' की होती है।
गटई नहीं उतरत - (स्वीकार न करना)
मन के बिल्कुल विपरीत बात को मनवाने या करवाने की स्थिति को 'गटई नहीं उतरत' कहा जाता है।
गटई लगावत है - (जबर्दस्ती करना)
जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु या व्यक्ति अथवा कार्य को पसन्द नहीं करता फिर भी उसे स्वीकार करने के लिए बाध्य किया जाता है तब 'गटई लगावत हैं' की स्थिति होती हैं।
गाँठ परिगै - (अनबन या शत्रुता हो जाना) किसी बात को लेकर जब एक-दूसरे के प्रति विश्वास समाप्त हो जाता है तब ऐसी स्थिति को 'गांठ परिगै' कहा जाता है।
गाजर मूरी समझे हैं - (बिल्कुल महत्त्व न देना)
जब कोई व्यक्ति किसी को उसकी वास्तविकता अथवा गौरव के अनुरूप महत्व नहीं देता, अपितु तिरस्कार करता है तब यह मुहाविरा चरितार्थ होता है।
गाढ़े कै कमाई - (परिश्रमपूर्वक अर्जित करना)
किसी वस्तु के उत्पादन में मनुष्य का श्रम लगता है। उसके उपयोग एवं संरक्षण के प्रति वह सावधान रहता है और यह मानकर उसकी सुरक्षा करता है कि यह उसके गाढ़े की कमाई है।
गाढ़े सकरे मा - (संकट के समय)
बुद्धिमान व्यक्ति सम्भावित विपत्तियों के प्रति सदैव सजग एवं सावधान रहता है क्योंकि उसे 'गाढ़े सकरे' समय की चिंता रहती है।
गाढ़े माँ जिउ परा - (अनिर्णय की स्थिति)
कभी-कभी जीवन में ऐसी स्थिति आ जाती है जब मनुष्य एक निर्णय करने की स्थिति में नहीं होता, उसका मन द्विविधा में रहता है यही भाव इस मुहाविरे में व्यक्त किया गया है।
गाढ़े दिनन पर - (संकट के समय)
लोकजीवन में मुसीबत के समय को 'गाढ़े दिनन' पर कहा जाता है।
गाल फुलाये हैं - (नाराज होना)
जब कोई व्यक्ति किसी से नाराज हो जाता है और अपनी नाराजगी खुलकर प्रकट भी नहीं करता अपितु उसका गुस्सा उसके अनमने चेहरे से विदित होता है। इसी भाव को इस मुहाविरे में व्यक्त किया गया है।
गोंइता होइ गवा - (बेकार हो जाना)
जब कोई वस्तु धीरे-धीरे बर्बाद हो जाती है तब उसे 'गोंइता होइ गवा' कहकर व्यक्त किया जाता है।
गुलछर्रे उड़ावत हैं - (मौज करना)
जब कोई व्यक्ति अपनी परिस्थिति को ध्यान में न रखकर खूब खुशियाँ मनाता है तब उसे गुलछर्रे उड़ावत हैं कहा जाता है।
गंगा उठाय लिहिन - (झूठी कसम खाना)
जब कोई व्यक्ति असत्य बात सत्य सिद्ध को करने के लिए बहुत बल देकर कसमें खाता है, तब उसे 'गंगा उठाय लिहिन' कहा जाता है।

गंगा नहाय आयें - (महत्त्वपूर्ण दायित्त्व पूरा कर लेना)
किसी महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी के पूरा हो जाने पर दायित्व का निर्वाह कर लेने वाले पर यह मुहाविरा घटित होता है।
गठरी होइ गयें - (अस्तित्व का सिमटना)
किसी कार्य में अप्रत्याशित रूप से असफल होनेवाले को इस मुहाविरे का दंश झेलना पड़ता है।
गड़े मुरदा उखारत हैं- (अर्थहीन बीती बातों की चर्चा करना)
जीवन में कुछ ऐसी बातें घटित हो जाती हैं, जिनका कोई महत्त्व नहीं होता फिर भी जब बार-बार उनकी चर्चा की जाती है तब 'गड़े मुरदा उखारत हैं' का प्रयोग किया जाता है।
गैताल मनई - (ओछा कृतित्व)
ओछी बातें, ओछे कार्य तथा ओछा आचरण करनेवाले को 'गैताल़ मनई' कहा जाता है।
गरदा फाँकत हैं - (उपेक्षा का शिकार होना)
जब कोई व्यक्ति या वस्तु सामयिक अनुपयोगिता के कारण उपेक्षित हो जाती है तथा उसे 'गरदा फाँकत' हैं कहा जाता है।
गटई रेतत हैं - (धीरे-धीरे परेशान करना)
यह मुहाविरा अत्यन्त क्रूरतापूर्ण व्यवहार का परिचायक हैं।
गटई मा बाँधि दिहिन - (जबरदस्ती साथ कर देना)
बेमेल विवाहादि के कारण होनेवाले संग को 'गटई मा बांधि दिहिन' कहा जाता है।
गटई मा मिढ़ि दिहिन - (अनचाही वस्तु को लेने के लिए मजबूर होना)
न चाहते हुए भी दबाववश किसी वस्तु को अपने पास रखने पर यह मुहाविरा प्रयुक्त होता है।
गोटैय्या चाली करत हैं - (चुपके-चुपके चालाकी का व्यवहार करना)
यह मुहाविरा उस स्थिति का प्रकाशक है जब कोई व्यक्ति किसी के साथ चुपके-चुपके चालाकी का बर्ताव करता है।
गली-गली छुछुवात हैं - (इधर-उधर भटकना)
जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए अपने मान-सम्मान तथा स्वाभिमान की परवाह न करके इधर-उधर भागता फिरता है और तिरस्कृत किया जाने पर भी ध्यान नहीं देता, तब उसे 'गली-गली छुछुवात हैं' कहा जाता है।
गोहूँ कै घानी - (स्वस्थ-सुन्दर)
यह मुहावरा प्रायः किशोरियों के लिए प्रयुक्त होता है जो देखने में स्वस्थ, सुन्दर तथा गौरवर्ण की होती है।
गाल बजावत है - (झूठा प्रलाप करना)
अकर्मण्य लोग बिना कुछ किये धरे ही अपना गुणगान और बखान किया करते हैं उनके सन्दर्भ में यह मुहाविरा कहा जाता है।
घिउ कै दिया बारौ - (खुशियाँ मनाना)
किसी चिर प्रतीक्षित कामना के पूर्ण हो जाने पर मन में जो उल्लास होता है उसके प्रकटीकरण को 'घिउ कै दिया बारौ' कहकर व्यक्त किया जाता है।
घोड़ा बेंचि के सोवत है - (जिम्मेदारी से बेखबर रहना)
यह मुहाविरा अत्यधिक निश्चितता का परिचायक है। इससे व्यक्ति की लापरवाही भी प्रकट होती है।

घर मा भूँजी भाँग नहीं - (अत्यधिक अभावग्रस्तता)
वास्तव में यह मुहाविरा वहाँ प्रयुक्त होता है जहाँ किसी व्यक्ति की अत्यधिक गरीबी की स्थिति होती है साथ ही वह अकड़बाजी का व्यवहार भी प्रदर्शित करता है।
घोड़ा चढ़ि के गदहा पै चढ़े- (उत्कृर्षता के बाद अपकर्षता की स्थिति)
व्यक्ति के साथ कभी-कभी ऐसा दुर्योग आता है कि अपनी उत्कृष्ट स्थिति पर होने के बाद उसे पराभव के चलते या फिर उसकी अकर्मण्यता के चलते उसे नीचा देखना पड़ता है।
घर उजरि गवा - (बर्बाद हो जाना)
किसी परिवार की धन-जन की अत्यधिक हानि हो जाने की उस स्थिति को दर्शाता है जिसमें उसके पुनः निकट भविष्य में पनपने के आसार नहीं दिखायी देते।
घर फूँक तमासा देखत है - (अपना ही नुकसान करके खुशी मनाना)
जब कोई व्यक्ति अपनी आधारभूत पूँजी को नष्ट करके उत्सव मनाता है तब उसे 'घर फूँक तमासा देखत हैं' कहा जाता है।
घर फोरत है - (फूट डालना)
एकता ही परिवार, समाज, समुदाय तथा राष्ट्र की शक्ति है। अतः किसी का अहित चाहनेवाला ईर्ष्यालु व्यक्ति उस समूह की शक्ति को कमजोर करने की नीयत से जब आपस में भेद डालने का प्रयास करता है तब उसे 'घर फोरत है' की संज्ञा दी जाती है।
घर बसिगा - (पुनर्स्थापित हो जाना)
यह मुहाविरा उस स्थिति में प्रयोग किया जाता है जब विवाह न होने की स्थिति में वंश-परम्परा के समाप्त होने का लक्षण दिखायी देने लगता है किन्तु किसी प्रकार विवाह-सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।
घर लुटाय दिहिन - (अत्यधिक फिजूलखर्ची)
सामान्यता आवश्यकता एवं व्यय में एक संतुलन होता है, इसके विपरीत कम व्यय के प्रसंग में अत्यधिक अनावश्यक खर्च किया जाता है जिसका कोई औचित्य नहीं होता। ऐसे बार-बार किये जानेवाले अपव्यय को 'घर लुटाय दिहिन' की संज्ञा दी जाती है।
घर से गोड़ निकरि गवा - (मर्यादा तोड़ देना)
मर्यादित रहने में ही जीवन का आनन्द है। जब कोई व्यक्ति सामाजिक या पारिवारिक मर्यादा का उल्लंघन करके स्वच्छन्दतापूर्वक आचरण करने लगता है तो उसे 'घर से गोड़ निकरि गवा' कहा जाता है।
घिग्घी बँधि गै - (भयवश बोलने की हिम्मत न पड़ना)
यह मुहाविरा उस परिस्थिति का परिचायक है जब एक सामान्य व्यक्ति किसी उद्दण्ड व्यक्ति के सामने भयवश कुछ कह पाने की स्थिति में नहीं होता। इस मुहाविरे के परिप्रेक्ष्य में एक स्थिति यह भी होती है कि जब कोई व्यक्ति सेखी बघारता फिरता हो और उसका पाला अपने से दबंग व्यक्ति से पड़ जाता है तब उसकी बोलती बन्द हो जाती है। कभी-कभी साक्षात्कार देते समय अभ्यर्थियों को पूछे गये सामान्य प्रश्नों के भी उत्तर नहीं आते तब यह मुहाविरा प्रयुक्त होता है।
घिउ कै गगरी ढरकि गै - (मूल्यवान वस्तु की हानि)
जीवन में मूल्यवान वस्तु या व्यक्ति ही संरक्षणीय होता है। इस मुहाविरे का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब किसी की आधारभूत निधि का एकाएक नुकसान हो जाता है।
घुन लागि गे - (क्षणिता आ जाना)

जब किसी व्यक्ति वस्तु, या स्वस्थ परम्परा में कोई विकार प्रारम्भ हो जाता है और उसके दूर होने का कोई लक्षण नहीं दिखाई देता तब उसे घुन लागि गे' की संज्ञा दी जाती है।

घोरि के पी लियौ - (सब्र करना)

यह मुहाविरा किसी व्यक्ति के संवेगात्मक क्रोध की प्रतिकारात्मक चुनौती के अर्थ में किया जाता है।

घर कै घरायँ - (कुल क्रमागत दुर्गुणों का अनुसरण करना)

यद्यपि इस मुहाविरे का प्रयोग स्वस्थ कुल-परम्परा के अनुपालन में नहीं किया जाता है। प्रायः जब कोई व्यक्ति खानदानी ओछापन करता है तभी उसके लिए 'घर कै घरायँ' कहा जाता है।

चिरई कै दूध - (दुर्लभता)

जब कोई व्यक्ति किसी ऐसी वस्तु की प्राप्ति की कामना करता है जो संसार में होती ही नहीं अथवा जिसका मिलना सर्वथा असम्भव होता है तब उसे इसी मुहाविरे से व्यक्त किया जाता है।

चोर-चोर मौसेइत भाय - (बुरे लोगों की घनिष्ठता)

यद्यपि मेल तथा समान विचारधारा एक प्रशंसनीय गुण है किन्तु जब दो ऐसे लोगों में ऐक्य होता है जिनकी विचार धारा रचनात्मक नहीं होती। तब उन दोनों को 'चोर-चोर मौसेइत भाय' कहा जाता है।

चोर के घर मा छिछोर - (धोखे बाज को भी धोखा)

इस मुहाविरे का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब कोई चालाक व्यक्ति अपनी चालाकी से दूसरों को ठगता रहता है किन्तु समय आने पर कोई व्यक्ति उससे अधिक चालाकी कर ठग लेता है।

चहँटा कै ईंट (दुर्गम कुसंग की स्थिति)

जब कोई भला व्यक्ति बुरे संग में इस प्रकार फँस जाता है कि उसका निकल पाना कठिन हो जाता है तब उसे 'चहँटा कै ईंट' कहा जाता है।

चरबी चढ़िगै - (संवेदनहीन हो जाना)

जब कोई व्यक्ति अपने शारीरिक सुख तक ही सीमित रहता है और अपने से इतर व्यक्तियों एवं वस्तुओं के प्रति अत्यधिक उपेक्षा का बर्ताव करता है तब इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

चक्कर मा नहीं परे - (विषम परिस्थितियों में न पड़ना)

साधारणतया परिस्थितियाँ दो प्रकार की होती हैं एक सामान्य दूसरी जटिल। यहाँ पर चक्कर में न पड़ने का आशय जटिल स्थितियों में न पड़नेवाले तथा अपनी कुशलता एवं चतुरता का दम्भ भरनेवाले व्यक्ति से है।

चक्कर खाय गें - (भ्रमित हो जाना)

जब कोई व्यक्ति सामान्य स्थिति में अपने कर्तव्याकर्तव्य का निश्चय नहीं कर पाता और उसी में उलझकर अनिर्णय की स्थिति में पहुँच जाता है तब उसके लिए यही मुहाविरा गतार्थ होता है।

चक्कर मा परिगें - (मुसीबत में फँस जाना)

यह मुहाविरा उस स्थिति का द्योतक है जब कोई व्यक्ति ऐसे संकट में फँस जाता है जिससे निकल पाना मुश्किल होता है।

चापरकरन - (हर काम को बिगाड़ने वाला)

अपनी नकारात्मक सोच से हर काम को बिगाड़ देने वाले व्यक्ति के लिए इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

चाँदी कै जूता मारि दिहिन - (धन सम्पत्ति के बल पर वशीभूत करना)
प्रयोजन की पूर्ति में व्यक्ति साम-दाम विविध उपायों का प्रयोग करता है। जब पैसा देकर न बननेवाला कार्य भी करवा लिया जाता है तब उसे इसी मुहाविरे से अभिव्यंजित किया जाता है। वस्तुतः यह उत्कोच या घूस को देकर काम बनाने की परिस्थिति को दर्शाता है।
चारि के काँधे - (अशुभ कामना करना)
चारि के काँधे जाना मृत्यु का परिचायक है। मृत्यु ही मनुष्य के लिए सबसे अशुभ व अप्रिय है। अतः किसी के प्रति अशुभ कामना के अर्थ में इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।
चारि दिन कै चाँदनी - (अस्थायी सुविधा)
जब कोई सुख-सुविधा बहुत कम समय के लिए मिलती है और बाद में पुनः कष्ट एवं असुविधापूर्ण समय आने का निश्चित भान रहता है तब यही मुहाविरा चरितार्थ होता है।
चित्त से उतरिगें - (किसी के प्रति धारणा बदल जाना)
यह मुहाविरा किसी के प्रति अच्छी धारणा के बदल जाने का द्योतन करता है। मूलतः चित्त से उतरना किसी के प्रति सम्मान कम पड़ जाने के अर्थ में प्रयुक्त होता है।
चित नहीं लागत - (उच्चाटन हो जाना)
जाने-अनजाने किसी चिन्ता के कारण जब मन किसी एक कार्य में स्थिर नहीं होता उस स्थिति को इसी उक्ति से प्रकाशित किया जाता है।
चिल्ला कै जाड़ - (शैत्याधिक्य)
हांड़ कंपा देनेवाली अत्यधिक ठंडक को 'चिल्ला कै जाड़' कहकर व्यक्त किया जाता है।
चुरुवा भरे पानी मा बूड़ि मरौ - (मरणान्तक निन्दा)
लोक निन्दा मरणतुल्य होती है। अतः जब कोई व्यक्ति अत्यन्त बुरा एवं निन्दनीय कार्य करता है तब उसे धिक्कारों के अर्थ में यह मुहाविरा प्रयुक्त होता है।
चुटकी बजाय के - (आसानी से सफलता मिलना)
यह मुहाविरागत एक लाक्षणिक प्रयोग है जिसका अर्थ होता है किसी कार्य का बिना किसी बाधा या अत्यल्प श्रम के पूरा हो जाना।
चुरिया पहिरि लेव - (उत्तेजित करना)
इस मुहावरे का प्रयोग उस स्थिति में होता है जब कोई व्यक्ति उत्साहहीन हो जाता है तब उसे कार्य में पुनः प्रवृत्त करने के लिए उत्तेजित किया जाता है। इसके मूल में व्यक्ति की कायरता की निन्दा का भाव छिपा रहता है।
चेहरा बिगड़ि गवा - (कान्तिहीन हो जाना)
अप्रत्याशित रूप से असफल होने अथवा मनवांछित उपलब्धि की प्रत्याशा में निराशा की स्थिति और मनोगत भावों की प्रतिच्छाया चेहरे पर दिखायी देने की स्थिति में यह उक्ति चरितार्थ होती है।
चोर की दाढ़ी मा तिनका - (दोषी व्यक्ति का सदैव अपने प्रति संशकित रहना)
दोषी व्यक्ति कभी भी निश्चिन्त नहीं रहता। अतः जब कोई व्यक्ति किसी के प्रति किए जाने वाले आक्षेप को सुनकर अपने प्रति लोगों में होनेवाले सम्भावित सन्देह की सफाई देने लगता है उसके लिए इस मुहाविरे का प्रयोग होता है।
चोला मगन है - (अपने आप में प्रसन्न रहना)
सबके प्रति निष्पक्ष भाव से मैत्री रखने वाले तथा सभी विवादों से दूर प्रसन्न रहने वाले व्यक्ति

के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

चौक पूरत हैं - (महत्त्वपूर्ण कार्य की तुलना में गैर जरूरी काम में अधिक समय लगाना)
समयानुसार सम्पादन में ही कार्य की महत्ता एवं शोभा होती है। जब समय के अनुकूल किसी महत्त्वपूर्ण कार्य की उपेक्षा करके कम महत्त्वपूर्ण काम में अधिक समय और ध्यान लगाया जाता है तब उस स्थिति को व्यंजित करने के लिए यही उक्ति वक्ता के कथन से सार्थक होती है।

चैतही चमारिन - (ओछापन)
जब कोई नितान्त निर्धन एवं संस्कारहीन व्यक्ति थोड़ा ही धन पाकर उच्छृंखलता का आचरण करने लगता है तब उसकी स्थिति क़ो इसी उक्ति से अभिव्यंजित किया जाता है।

चौके बैठि हैं - (मौका परस्त)
यह उक्ति उस व्यक्ति पर व्यंग्य करती है जो दुर्व्यसनपूर्ण कार्य में तो लगा रहता है किन्तु किसी अच्छे कार्य के लिए क्षण भर भी अपने स्थान से नहीं हटता।

चिल्हवा नोचनि - (छीना-झपटी करना)
स्वार्थवश एक ही वस्तु को अत्यन्त असभ्यपूर्ण तरीके से पाने के लिए तत्परता। स्वार्थ पूर्ति करने की एक मर्यादित विधि होती है। जब कुछ लोग मर्यादा का सर्वथा तिरस्कार कर एक ही वस्तु को पाने का असंयत प्रयास करते हैं उस स्थिति का ही अभिव्यंजक यह मुहाविरा है।

चोरी उप्पर से सीना जोरी - (गलत काम करके भी रोब जमाना)
यह उस स्थिति का द्योतक है जब कोई व्यक्ति गलत काम करके अपनी गलती स्वीकारने के बजाय अकड़ता है।

चाट्टे गट्टा अस - (मूल्यहीनता)
जब कोई व्यक्ति या वस्तु अपने किसी आचरण से महत्त्वहीन हो जाती है, तब उसे यही उपमा दी जाती है।

चरखा चलत है - (हर समय बकवास करना)
मुखरता समय पर ही शोभा देती है। इसके विपरीत बिना समय या प्रसंग का विचार किये अत्यधिक असमीचीन भाषण को इसी उक्ति से उपमित किया जाता है।

छाती जुड़ाय गै - (मनोनुकूल उपलब्धि)
अपने शत्रु की किसी भारी जन या धन हानि होने पर मन को जो सन्तोष मिलता है उसे इस मुहाविरे से अभिव्यक्त किया जाता है।

छाती फाटि गै - (अपार दुःख होना)
मनुष्य के दुःख का एक बहुत बड़ा कारण ईर्ष्या भी है। अतः जब कोई ईर्ष्यालु व्यक्ति किसी के उत्कर्ष को सुनकर ईर्ष्यावश अत्याधिक कष्ट का अनुभव करता है अथवा उसे उत्कर्ष अच्छा नहीं लगता, तब इस मुहाविरे का प्रयोग होता है।

छट्ठी कै चाउर (कसी कार्य का परिणाम आने के बहुत पूर्व ही उत्सव मनाने की तैयारी करना)
मनुष्य उत्सवप्रिय होता है। वह अनुकूल परिणाम मिलने पर उत्सव मनाता है किन्तु कार्य प्रारम्भ होने से पहले ही परिणाम का दूर-दूर तक कोई लक्षण न दिखाई देने पर भी सुखद परिणाम की कल्पना मात्र करके उसका उत्सव मनाने की तैयारी को इस छोटे से मुहाविरे से व्यक्त करना कितना चुटीला है।

छोटे भूत बड़े डेरुवावैं - (सामर्थ्य से अधिक दिखावा करना)
जब व्यक्ति अपनी सामर्थ्य से अधिक प्रदर्शन करता है अथवा प्रभाव जमाता है तब उसके लिए

यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

छक्के पंजे उड़ावत हैं - (अपव्यय करना) यह मुहाविरा व्यक्ति की अपव्ययी प्रवृत्ति का परिचायक है।

छिया कै थुवा होइ गवा - (बुरी तरह से अपमानित होना)

जब कोई व्यक्ति अपने निन्दनीय कार्यों से बुरी तरह से अपमानित हो जाता है और उसकी चर्चा दूर समाज में फैल जाती है तब उसके लिए इसी उक्ति को उद्धृत किया जाता है।

छाती ठोंकत हैं - (चुनौती देना)

छाती ठोंकना व्यक्ति के अति आत्मविश्वास का परिचायक है। कभी-कभी यह विरोध व्यक्ति के सामने वाद-विवाद के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

छाती पै पाथर धै गा - (किसी बड़ी अप्रत्याशित घटना को बर्दाश्त करना)

प्रायः मनुष्य बड़ी अप्रत्याशित हानि से विचलित हो जाता है किन्तु जो व्यक्ति ऐसी घटनाओं से विचलित नहीं होता अपितु गम्भीरतापूर्वक सहन कर लेता है उसके लिए यही उक्ति गतार्थ होती है।

छाती पीटत हवैं - (अत्यधिक विकलता)

इसका तात्पर्य किसी हानि या प्रतिकूल परिस्थिति में होनेवाली व्यक्ति की अत्यधिक छटपटाहट से है।

छाती फारि के काम - (क्षमता से अधिक कार्य करना)

प्रत्येक मनुष्य के सामर्थ्य की एक सीमा होती है किन्तु जब वह लोभवश अपनी शक्ति का अतिक्रमण कर कार्य करता है तब उसे इसी उक्ति से सम्बोधित किया जाता है।

छाती फूलि के गरगज होइ गै - (अत्यधिक प्रसन्न होना)

वस्तुतः प्रसन्नता की अनुभूति हृदय की वस्तु है अतः जब अनुकूल कार्य होने पर अत्यधिक प्रसन्नता की अनुभूति होती है तो उस स्थिति को इस मुहावरे से व्यक्त किया जाता है।

छाती पेटे लगाये हैं - (गुण-दोषों का विचार किए बिना ममता बनाये रखना)

इसका तात्पर्य बिना गुण-दोष का विचार किए ममतापूर्वक निरन्तर अपनत्व बनाये रखने से है।

छाती लगाय लिहिन - (अत्यन्त आत्मीयता के साथ मिलना)

खुले हृदय अत्यधिक प्रेम पूर्वक मिलने की स्थिति को छाती लगाना कहा जाता है।

जतने कै ढोल नहीं वतने कै मंजीरा - (प्रधान वस्तु की अपेक्षा गौण वस्तु को अत्यधिक महत्त्व देना)

इसका तात्पर्य किसी प्रधान वस्तु या व्यक्ति के गौण हो जाने से है।

जोतै का खेत गावै का सीताहरन - (कार्य के अनुरूप बातें न करना)

वस्तुतः कार्यक्षेत्र के अनुरूप ही भाषण करने की शोभा होती है। जब कोई व्यक्ति अपनी कार्यसीमा के बाहर बड़े ऊँचे ज्ञान का वर्णन करता है तब इस मुहाविरे का प्रयोग होता है।

जरे पै नोन लगावत हैं - (दुःखी व्यक्ति को और दुःख पहुँचाना)

दुःख में पड़े हुए व्यक्ति को कुछ अच्छा नहीं लगता किन्तु जब कोई व्यक्ति बार-बार उसके दुःख के कारणों का स्मरण कराता है अथवा तत्सम्बन्धी मर्मस्पर्शी चर्चा करता है तो उस स्थिति को 'जरे पै नोन लगावत हैं' कहा जाता है।

जिह के गाल मा चाउर वहि से बतलात बनत है - (सम्पन्न व्यक्ति का दूसरे को बढ़-चढ़कर उपदेश देना)

प्रायः सुखी व्यक्ति अपने समान सभी को सुखी ही समझता है और वह बढ़-चढ़कर दूसरों को उपदेश देता है, किन्तु वह यह विचार नहीं करता कि दूसरा व्यक्ति किस परिस्थिति में है। ऐसी स्थिति में अभावग्रस्त व्यक्ति इसी मुहावरे को उद्धृत कर आत्मसन्तोष करता है।

जरि मरे- (किसी आवश्यक कार्य की सम्पन्नता में अपनी पूरी शक्ति लगा देना)
इसका तात्पर्य किसी कार्य की सम्पन्नता में अपनी शक्ति से अधिक योगदान करने से है।

जिउ आजिज होइ गवा - (परेशान हो जाना)
जब कोई व्यक्ति किसी के बार-बार अनुचित व्यवहार से परेशान हो जाता है तो वह सहज ही कह उठता है - 'जिउ आजिज होइगा'।

जतने छोट वतने खोट - (अनेक दुर्गुण होना)
जब किसी की उम्र कम होती है तथा दुर्गुण अधिक होते हैं, तब उसके लिए यही मुहाविरा कहा जाता है।

जवान मा लगाम नहीं - (असंयमित बोलना)
संयत बोलने में ही वाणी की शोभा होती है किन्तु जब कोई व्यक्ति देश, काल व्यक्ति का विचार किये बिना बोलता है तब उसके लिए यह मुहाविरा प्रयुक्त होता है।

जंगल मा मंगल - (उपेक्षित या सुनसान स्थान पर चहल-पहल हो जाना)
जब कोई स्थान वर्षों से उपेक्षित और जनशून्यप्राय रहता है वहाँ पर एकाएक जनसम्पर्क कार्य व्यापार बढ़ जाने पर 'जंगल में मंगल' कहा जाता है।

जरि काटत है - (अहित करना)
इसका तात्पर्य ईर्ष्यावश चुपके-चुपके नुकसान करने से है ।

जवान बहुत चलत है - (अशिष्टता पूर्वक बोलना)
जब कोई व्यक्ति बिना छोटे-बड़े का विचार किए उत्तर प्रत्युत्तर करता है तब उसे इसी मुहाविरे में व्यक्त किया जाता है।

जबान पै धरा है - (अच्छी तरह याद रहना)
जब कोई व्यक्ति किसी समस्या या प्रश्न का उत्तर तुरन्त दे देता है तब उसे यही कहा जाता है।

जवान दै दीन - (वायदा कर लेना)
प्रतिज्ञा का निर्वाह मनुष्य का आभूषण है। अतः स्वाभिमानी या सत्यवादी व्यक्ति कही हुई बात का निर्वाह करता है। ऐसा ही व्यक्ति इस मुहाविरे का प्रयोग करता है।

जबान लड़ावत हैं - (अनुचित रूप से प्रत्युत्तर करना)
जब कोई छोटा अपने से बड़े के साथ तर्कहीन उत्तर-प्रत्युत्तर करता है तब उसके लिए यही मुहाविरा प्रयुक्त होता है।

जवानी चर्रान है - (ऊर्जा का अविचारित उपयोग)
युवावस्था व्यक्ति की शक्तिमत्ता का शीर्षकाल होता है अतः इस काल में जब व्यक्ति बुद्धि बल की अपेक्षा शक्ति का अनवसर में अधिक प्रकाशन करता है तब उसकी यही स्थिति होती है।

जबान हारे हन - (प्रतिज्ञा के प्रति प्रतिबद्धता)
मनस्वी व्यक्ति अपनी कही हुई बात से कभी पीछे नहीं हटता, वह अपनी बचनबद्धता को 'जबान हारे हन' कह कर दृढ़ता व्यक्त करता है।

जबान नहीं हाली - (बोलने का अवसर होने पर चुप रह जाना)
जब कोई व्यक्ति कहने मात्र से किसी का हित-अहित होने की स्थिति में मौन रह जाता है तब

इस मुहाविरे का प्रयोग होता है।

जय-जयकार मची है - (चारों तरफ प्रशंसा होना)

जब किसी व्यक्ति के कार्य से प्रभावित होकर जनमानस में चारों तरफ उसके कार्यों की प्रशंसा होने लगती हैं तब जय-जयकार मची है कहा जाता है।

जल मा रहि के मगर से बैर - (अपने ही परिवेश के लोगों या महत्त्वपूर्ण आवश्यक व्यक्ति से बैर बनाना)

यों तो सर्वत्र मैत्रीभाव मनुष्य का गुण है तथापि अपने परिवेश और पड़ोस के प्रति तो निर्बैर अवश्य रहना चाहिए। विशेष रूप से ऐसे प्रभावशाली महत्त्वपूर्ण तथा अधिकार प्राप्त व्यक्ति से बैर के सन्दर्भ में यह कथन समीचीन होता है।

जवाब तलब करत हैं - (अभद्रता करना)

जब कोई अपनों से बड़े के क्रिया कलापों पर सन्देह करके प्रश्नोत्तर करता है तब ऐसी स्थिति को यह वाक्यांश व्यक्त करता है।

जिउ का लागि है - (किसी कार्य को कराने के लिए दबाव डालना)

जब कोई व्यक्ति अपने प्रयोजन की सिद्धि के लिए किसी से बार-बार आग्रह करता है तब यही कहा जाता है - 'जिउ का लागि हैं'।

जिउ गाढ़े मा परा है - (अनिर्णय और दुर्गम स्थिति)

व्यक्ति के समक्ष ऐसी समस्या या परिस्थिति आ जाय जिसका निस्तारण करने में वह अक्षम तथा असहाय हो जाता है।

जिउ चोरावत है - (कार्य से बचना)

श्रम करने से बचने के कारण कार्य से विरत हो जाने को 'जिउ चोरावत है' कहा जाता है।

जान बचिगै - (किसी तरह छुटकारा पाना)

अनचाहे कार्य के प्रति अत्यधिक दबाव होने की स्थिति में जब किसी तरह उससे छुटकारा मिल जाता है तब यही मुहाविरा गतार्थ होता है।

जिउ निकारि के दिहिन - (पूरी ताकत लगा देना)

जब कोई व्यक्ति किसी कार्य के प्रति अपनी पूरी शक्ति लगा देता है कोई कसर नहीं रखता है उस स्थिति को इस मुहावरे से व्यक्त किया जाता है।

जिउ पर खेलत हैं - (जान-बूझकर संकट में पड़ना)

यद्यपि साहस मनुष्य का बहुमूल्य गुण है किन्तु जब कोई किसी कार्य के परिणाम की भयंकरता को जानते हुए भी उसमें प्रवृत्त होता है तब उसके लिए यही मुहाविरा उदाहरणीय हो जाता है।

जामा से बाहेर - (अत्यधिक क्रोधित होना)

जब क्रोध व्यक्ति की शारीरिक क्षमता से कई गुना बढ़ जाता है तब उसे 'जामा से बाहेर होइ गए' कहा जाता है।

जिउ मजबूत कइ लिहिन - (सम्भावित संकट को सहन करने के लिए मानसिक रूप से तैयारी)

न चाहने पर भी अप्रत्याशित हानि का विभिन्न कारणों से विनिश्चय हो जाता है तब उसको सहन करने के लिए तैयार होने की स्थिति का व्यंजक है यह मुहाविरा।

जिउ खोलि के लड़ौ - (खुलकर लड़ने की चुनौती देना)

यह एक प्रकार से प्रतिद्वन्दी की शक्ति को एक चुनौती है। इसमें लड़नेवाले व्यक्ति की शक्तिमत्ता का अहंकार भी झलकता है।

जिउ लाग है - (चिन्तित रहना)
जब किसी प्रिय व्यक्ति या वस्तु के सुख-दुख या हानि-लाभ की चिन्ता के कारण मन उधर ही लगा रहता है तब उसे यही कहा जाता है।
जिउ टूटि गवा - (हताश हो जाना)
किसी कार्य को पूरे मनोयोग से करने पर भी सफलता न मिलने से जो निराशा या अरुचि पैदा होती है उसे 'जिउ टूटि गवा' से व्यक्त किया जाता है।
जिउ धुकुर-पुकुर करत है - (कार्य की सफलता के प्रति सन्देह व्यक्त करना)
वस्तुतः इस मुहाविरे का प्रयोग उस स्थिति में होता है जब मनुष्य को लगता है कि उसकी क्षमता कम है और कार्य बड़ा है उसके पूरे होने के प्रति जो सन्देह पैदा होता है वहीं 'जिउ धुकुर-पुकुर करत है' कहलाता है।
जिउ भरिगा - (परेशान हो जाना)
किसी के व्यवहार से क्षुब्ध होकर जब उस व्यक्ति के प्रति अनिच्छा का व्यवहार किया जाता है तो उसे 'जिउ भरिगा' कहा जाता है।
जीतै मरिगें - (यश प्रतिष्ठा नष्ट होना)
व्यक्ति का सार्थक जीवन यश पर ही निर्भर करता है किन्तु जब किसी से कोई ऐसा कार्य हो जाता है जिससे उसकी सारी प्रतिष्ठा मिट जाती है, तब वह मरे हुए के समान हो जाता है।
झख मारि के - (मजबूर हो जाना)
वस्तुतः इस मुहाविरे में व्यक्ति की विवशता झलकती है। व्यक्ति जब किसी काम को अनचाहे या अनमने मन से मजबूरी में करता है।
झलकारे बैठि हैं - (परिश्रम के कार्य से दूर रहना)
जब कोई व्यक्ति कार्य करने से बचता है और शारीरिक शौकीनी करता है तब उसे यही कहा जाता है।
झण्डा फहरात है - (दूर-दूर तक प्रतिष्ठा फैलना)
जब कोई व्यक्ति अपनी उदारता, दानशीलता आदि के कारण चर्चित हो जाता है तब उसकी अतिशय प्रतिष्ठा का द्योतन इसी वाक्यांश से होता है।
झरिहाय दीन - (बातों में हरा देना)
किसी व्यक्ति की कमियों को उजागर करके उसके निरुत्तर बनाना ही इस मुहावरे का आशय है।
झगड़ा मोल लेत हैं - (अनावश्यक विवाद में पड़ना)
जब कोई व्यक्ति विवादित व्यक्ति या वस्तु से जान-बूझकर सम्बन्ध जोड़ता है, तब उसे यही कहा जाता है झगड़ा मोल लेत हैं।
झूँठी फुरी उड़ावत है - (बहकाना)
जब कोई व्यक्ति अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए कुछ सत्य, कुछ झूठ प्रशंसात्मक बातें करता है तब उसे यही कहा जाता है - 'झूठी फुरी उड़ावत हैं' ।
टण्टा रोपत है - (दीर्घकालीन विवाद करना)
इसका तात्पर्य विवाद को बढ़ाना है जो अर्थहीन हो किन्तु वह दीर्घकालीन हो जिसके भविष्य में भी न सुलझने के आसार हों।
टका कै हँडिया गै कुकुरे कै जाति पहिचान गै - (थोड़े नुकसान से व्यक्ति के स्वभाव को परख लेना)

वस्तुतः व्यवहार या सम्बन्ध से ही किसी के स्वभाव का पता चलता है यह एक घटनामूलक मुहाविरा है।

टका सेर बिकात है - (अत्यधिक अवमूल्यन)

किसी वस्तु का अवमूल्यन हो जाता है तब उसके लिए यही कहा जाता है।

टस्स से मस्स न भयें - (निश्चय पर अडिग रहना)

वस्तुतः इस मुहाविरे का प्रयोग सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही भावों में होता है। किसी व्यक्ति को संकट में देखकर उसकी सहायता के लिए किंचित मात्र उद्यम न करना इस मुहाविरे का नकारात्मक पक्ष है। दूसरे अर्थों में अपने संकल्प से न हटना, इस मुहाविरे का सकारात्मक पक्ष है।

टँगरी पसारि के सोवत हैं - (कार्य की ओर से बिल्कुल निश्चिन्त रहना)

लोक में इस मुहाविरे का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब कोई व्यक्ति अपनी जिम्मेदारी को छोड़कर चिन्तारहित होकर बेखबर सोता है।

टाँय टाँय फिस्स होइ गवा - (शुरूआत में ही कार्य का विफल हो जाना)

जब कोई व्यक्ति किसी कार्य को प्रारम्भ कर देता है किन्तु उसे फलागम तक नहीं पहुँचा पाता है तब उस के लिए यही मुहाविरा चरितार्थ होता है।

टेक किहे फ़िरत हैं - (नाराजगीपूर्ण हठ धर्मिता)

इसका तात्पर्य उस स्थिति से है जब कोई व्यक्ति नाराज होकर सम्बन्धित व्यक्ति से बैर ठान लेता है।

टेकुई कइ दिहिन - (विवाद का शुभारम्भ करना)

टेकुई करने का शाब्दिक आशय पेड़ में पड़े झूले को प्रारम्भिक गति देने से है। लोक-जीवन में इस मुहाविरे का आशय किसी व्यक्ति द्वारा अकारण ही किसी झगड़े की शुरूआत करने से है।

टटका कइ दिहिन - टोटका कइ दिहिन

लोक में टोना-टटका बहुत माना जाता है जब कोई व्यक्ति किसी के प्रति अकल्याण की भावना से लोक प्रचलित (फल फूल अच्छत, लौंग, नीबू, तेल) द्रव्यों से टटका करता है तो उसे इसी कृत्य की संज्ञा दी जाती है।

टिकुरी भै जमीन - (नगण्य भूमि)

प्रायः यह मुहाविरा नितान्त धन हीन की सम्पत्ति के प्रति उपेक्षा भाव दर्शाने के लिए किया जाता है।

टिन्न बांधे हैं - (हठधर्मिता)

कुछ लोग हठधर्मी होते हैं वे अकारण ही अपने इष्ट मित्रें तथा स्वजनों से भी हठ ठानकर विचार विनिमय नहीं करते।

टठिया के जूँठ अस कर्रान - (अकारण ही अकड़पन दिखाना)

ठण्डे परि गयें - (शान्त हो जाना)

जब कोई व्यक्ति विवाद में दीर्घकाल तक पड़कर उसकी निरर्थकता को समझ लेता है और शान्त हो जाता है, अथवा दूसरे अर्थ में परास्त हो जाने पर शान्त होकर बैठ जाने की स्थिति को ठण्डा हो जाना कहते हैं।

ठग कै गठरी - (अत्यधिक चालाक तथा धोखेबाज)

जो व्यक्ति सर्वत्र सबके साथ चालाकीपूर्वक अपने स्वार्थ साधना में लगा रहता है उसे 'ठग की

गठरी' कहा जाता है।

ठट्ठा मारत है - (दूसरे की हँसी करना)

जब कोई व्यक्ति मुसीबत में पड़े हुए व्यक्ति का भी उपहास करता है तब उस स्थिति को ठट्ठा मारना कहा जाता है।

ठाठ बनाये घूमत हैं - (झूठी शान)

इसका तात्पर्य आन्तरिक रूप से कमजोर होने पर भी बाह्य रूप में अपनी मजबूरी बनाये रखने से है।

ठेंगा देखावत है - (मौके पर धोखा देना)

जब कोई व्यक्ति किसी प्रकार के सहयोग करने का पूर्व में आश्वासन देकर समय पड़ने पर साफ इन्कार कर जाता है उस स्थिति को उस मुहाविरे से व्यक्त किया जाता है।

ठेंगा लै लियौ - (अवमानना करना)

इसका तात्पर्य सहयोग चाहनेवाले व्यक्ति को जवाब देकर अवमानना करने से है।

ठोंक बजाय के देखौ - (सब तरह से परीक्षित करना)

किसी भी व्यक्ति या वस्तु के प्रति विश्वस्त होने के पूर्व उसके गुण-दोषों का सम्यक् विचार करना आवश्यक होता है। इसी समुचित जानकारी करने को ठोंक बजाकर देखना कहते हैं।

ठोकर लागि गै - (एकाएक हानि हो जाना)

इस मुहावरे का तात्पर्य किसी सामान्य स्थितिवाले व्यक्ति की एकाएक हो जाने वाली हानि से होता है।

ठोकर खात फिरत हैं - (अभावग्रस्तता तथा उपेक्षा)

जब कोई व्यक्ति किसी कारणवश अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सबके पास जाता है किन्तु उसे समुचित सहयोग तथा आदर नहीं मिलता, इसी स्थिति को यह मुहाविरा व्यंजित करता है।

तुरुक से भुड्डुक - (निम्नतर स्थिति को प्राप्त होना)

समाज में ऐसे भी लोग होते हैं जो अपने क्रियाकलाप और आचरण से अपना अस्तित्व मिटाने में लगे रहते हैं। एक बार गड्ढे में गिरने के बाद और उससे गहरे में चले जाते हैं। अपने अस्तित्व के रक्षार्थ सजग नहीं रहते।

ताते डार गुलगुले निकार - (अत्यधिक उतावला पन)

किसी कार्य की सम्पन्नता में एक निश्चित समय लगता है किन्तु कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो कार्य प्रारम्भ होते ही परिणाम की तुरन्त अपेक्षा करने लगते हैं।

तेलिया मसान परिगा - (सन्नाटा छा जाना)

इस मुहाविरे का प्रयोग ऐसी स्थिति में किया जाता है जब सामूहिक रूप से कुछ लोग इतने निश्चित होकर सो जाते हैं कि उनमें जरा भी होश नहीं रहता।

तुम डार-डार उइ पात-पात - (एक का दूसरे के साथ अत्यधिक चालाक निकल जाना)

जब कोई व्यक्ति किसी के साथ चालाकी करता है और यह समझता है कि अमुक व्यक्ति मेरी चालाकी को नहीं जान पाया है किन्तु परिणाम से पता चलता है कि पहलेवाले से दूसरा अधिक चालाक निकला।

तरवा चाटत हैं - (अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए अत्यधिक दीन बन जाना)

जब कोई व्यक्ति अपने स्वार्थ में इतना गिर जाता है कि स्वार्थपूर्ति करनेवाले व्यक्ति के सामने

उसके अनुकूल व्यवहार करने लगता है तब उस स्वार्थी व्यक्ति की मनोदशा को व्यक्त करने के लिए इस चुटीली उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

तेली कै बरधा - (विवेकहीन श्रम करना)

वस्तुतः जब कोई व्यक्ति बुद्धि-विवेक रहित होकर अनवरत परिश्रम के कार्य में संलग्न रहता है, साथ ही कृत कार्य के परिणाम के प्रति सावधान नहीं रहता उसके लिए इसी मुहाविरे का प्रयोग समीचीन लगता है।

तहस-नहस कै डारिन -

इस उक्ति में क्रोध, क्रूरता तथा बदले की भावना भी होती है।

तंग आय गें - (परेशान हो जाना)

जब कोई धैर्यशील व्यक्ति किसी के ऊटपटांग व्यवहार से परेशान हो जाता है तब उसके प्रति यही मुहाविरा सटीक लगता है।

तीन-पाँच - (कुतर्क करना)

जब कोई व्यक्ति अपनी बात सिद्ध करने के लिए अथवा दूसरे को ठगने के लिए बेमेल तर्क देता है तब उसे 'तीन-पाँच करना' कहा जाता है।

तीन मा न तेरह मा - (निष्पक्ष रहना)

जब कोई व्यक्ति किसी प्रपंच में नहीं पड़ता है, तटस्थ एवं निष्पक्ष रहता है, उसके लिए 'न तीन मा न तेरह मा' मुहाविरा प्रयुक्त होता है।

तीन तिकट - (अशुभ लक्षण)

भारतीय जीवन में तीन लोगों का संग चलना अशुभ माना जाता है, ऐसा करने पर भावी अनिष्ट की आशंका की जाती है। ऐसे कुसंयोग की स्थिति में तीन तिकट का प्रयोग किया जाता है और कहा भी जाता है - 'तीन तिकट, महाविकट'।

तराहि मची है - (वातावरण का अत्यधिक शोकाकुल होना)

किसी दैवी या मानुषी विपत्ति के एकाएक पड़ जाने पर जब सामूहिक रूप से शोक उमड़ने लगता है उस स्थिति को त्रहि मची है कहा जाता है।

तावै-भाँव - (क्रमागत)

एक के बाद एक (दूसरी) संतान के पारस्परिक अन्तर को 'ताँवै भाँव' कहा जाता है।

तकदीर खुलिगै - (भाग्योदय होना)

साधारण स्थिति में रहते हुए किसी कार्य-व्यवसाय आदि में आशातीत सफलता मिल जाने पर तकदीर खुल जाना कहा जाता है।

तबीयत भरिगै - (किसी के व्यवहार से रुरूचि पैदा हो जाना)

जब कोई व्यक्ति किसी के बार-बार चालाकीपूर्ण व्यवहार से उद्विग्न (ऊब) हो जाता है तब यही उक्ति चरितार्थ होती है।

तबला गमकत है - (प्रसन्नता और उत्साह का वातावरण)

जब कोई निरन्तर नूतन उत्साह एवं उमंग में रहता है तब उसके मनोभाव को व्यंजित करने के लिए इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

ताँता लागि गवा - (क्रम न टूटना)

यह उक्ति सुख अथवा दुख उभयविध परिस्थितियों के अविच्छिन्न क्रम का द्योतक है।

ताना मारत हैं - (चिढ़ाना)

किसी के जीवन में किसी कमजोर पक्ष की ओर बार-बार अपमानपरक संकेत को 'ताना मारना' कहते हैं।

तार-तार होइ गें - (छिन्न-भिन्न हो जाना)

यह मुहाविरा व्यक्ति एवं वस्तु दोनों की जर्जरता को द्योतित करता है।

ताड़ी पीटि लिहिन - (सामूहिक उपहास का पात्र बनना)

जब कोई व्यक्ति अपने सिद्धान्त या विचार से खुलेआम गिर जाता है और जन-समुदाय उसका उपहास करने लगता है तब यही दशा होती है।

ताव देखावत हैं - (क्रोध प्रदर्शित करना)

जब कोई व्यक्ति अपने को समर्थ तथा सामनेवाले को असमर्थ समझकर अपना प्रभाव दिखाने हेतु उत्तेजक वाणी में बोलता है उसे 'ताव दिखाना' कहा जाता है।

तिल धरै कै ठौर नहीं - (अपार भीड़)

किसी अत्यधिक व्यस्त स्थान को देखकर उसकी अतिशय निरवशता को द्योतित करने के लिए 'तिल धरै क ठौर नहीं' कहा जाता है।

तिल के ओट मा पहाड़ - (महत्त्वहीन व्यक्ति या वस्तु से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण का उल्लंघन होना)

जब कोई महत्त्वपूर्ण वस्तु पीछे हो जाती है और महत्त्वहीन वस्तु को आगे कर दिया जता है तब उसे देखकर यही उक्ति प्रयुक्त होती है।

तीन तेरह करत है - (अर्थहीन बहस)

जब निरुद्देश्य होकर केवल असंगत तर्क बढ़ाने के लिए बात कही जाती है उस स्थिति को तीन तेरह करना कहा जाता है।

थका न होय पैरा हिलावै - (अनुचित स्थान पर श्रम लगाना)

जब कोई व्यक्ति किसी ऐसे कार्य में लगता है जिससे केवल परिश्रम ही हाथ लगता है उसी स्थिति को व्यंजित करनेवाला यह बड़ा ही चुटीला मुहावरा है।

थूँक के चाटै - (अपने संकल्प पर दृढ़ न रहना)

जब व्यक्ति अपने निश्चय अथवा संकल्प से सामान्यतया बदलता रहता है उस स्थिति को 'थूँककर चाटना' कहते हैं।

थरिया के बैगन - (अस्थिर स्वभाव)

जब कोई व्यक्ति अपने निश्चय या विचार पर रंचमात्र भी स्थिर नहीं रहता अपितु बहुत मामूली चढ़ाव-उतार में इधर-उधर भाग जाता है अथवा पक्ष बदलता रहता है उसे 'थरिया के बैगन' कहा जाता है। ऐसा व्यक्ति प्रायः स्वार्थी होता है अपने स्वार्थ को सर्वोपरि रखने की लालसा में वह ऐसा करता है। यह व्यक्ति की अत्यन्त हल्की मनोवृत्ति का परिचायक है।

थाह मिलिगै - (वास्तविकता का आभास)

यह मुहाविरा प्रायः उस मनोवृत्तिवाले व्यक्ति के लिए प्रयुक्त किया जाता है जो अपने को बढ़ा-चढ़ाकर प्रदर्शित करता है किन्तु अवसर पड़ने पर खरा नहीं उतरता है।

दलिद्दुर कै गुर - (गुण एवं परिणाम दोनों में ही न्यूनता)

उदार एवं कृपण व्यक्ति में स्पष्ट भेद होता है कि उदार व्यक्ति अच्छी वस्तु को प्रचुर मात्र में प्रस्तुत करता है जबकि संकीर्ण चित्त का व्यक्ति अनुपयोगी वस्तु को भी न्यून मात्र में प्रस्तुत करता है। अतः संकीर्ण चित्त वाले व्यक्ति के लिए यही उक्ति गतार्थ होती है।

दूधन नहाव पूतन फरौ - (सुख-समृद्धि की कामना)

वस्तुतः विशाल परिवार का सुख तभी अच्छा लगता है जब तदनुरूप पर्याप्त आर्थिक समृद्धि भी होती है, इसलिए शुभेच्छु व्यक्ति की सद्भावना इसी मुहाविरे से व्यंजित होती है।

देही मा घुन लागि गै - (शरीर का धीरे-धीरे कमजोर हो जाना)

जब किसी व्यक्ति में किसी रोग या चिन्ता के कारण शारीरिक दुर्बलता धीरे-धीरे इस तरह बढ़ने लगती है कि उसके घटने का कोई उपाय ही नहीं रहता तब उसे 'देही मा घुन लागि गें' कहा जाता है।

दुइ अँखी करत है - (भेदभाव करना)

समूह में सबके साथ समानता का व्यवहार करना मानवीय धर्म है, जब इसके विपरीत किसी के प्रति छोटे-बड़े का भाव दिखाई देने लगता है तब उसे इसी उक्ति के साथ व्यक्त किया जाता है।

दिन बहुरे - (परिस्थितियों का अनुकूल होना)

जब खराब परिस्थितियों के बाद अनुकूल समय आ जाता है तब 'दिन बहुरे' कहा जाता है।

दहिउ के भेलसे कपास - (धोखे में रहना)

प्रायः जब आकृति के अनुसार मूल्यांकन करने पर बाह्य रूप से दो वस्तुओं में समानता दिखाई देती है किन्तु उनके आन्तरिक गुणों में सर्वथा वैभिन्न्य होता है यह मुहाविरा प्रायः इस सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है जब लोकजीवन में कोई व्यक्ति अपने से अधिक समृद्ध, सम्पन्न तथा बलशाली व्यक्ति को ताल ठोककर चुनौती देती है।

दूर के ढोल सुहावन - (वास्तविकता न जानते हुए श्रद्धा बने रहना)

प्रायः जीवन में अनेक व्यक्तियों से दूरी होने के कारण सुनी-सुनायी बातों से श्रद्धा बनी रहती है क्योंकि गुण दोषों का सही पता तो निकटता से ही लगता है अतः ठीक ही कहा गया है 'दूर के ढोल सुहावन' होते हैं।

दाना नहीं हजम होत - (गम्भीरता का अभाव)

जो व्यक्ति सर्वथा असहिष्णु और गम्भीर होता है उसके लिए यह मुहाविरा बहुत ही सटीक है।

देखे तरास लागत है - (अत्यधिक दीन-हीन)

यह उक्ति किसी की अत्यधिक दयनीयता के प्रति संवेदनशीलता की द्योतक है।

दफा होइगें - (दूर हो जाना)

यह उक्ति अनपेक्षित से छुटकारा मिल जाने की स्थिति का द्योतन करती है।

दम फूलि गै - (अत्यधिक थक जाना)

जब कोई व्यक्ति अपनी कार्य क्षमता से अधिक कार्य करके सर्वथा असमर्थ हो जाता है, तब यह उक्ति चरितार्थ होती है।

दम टूटि गै - (अशक्त हो जाना)

सामर्थ्य के अनुसार कार्य करनेवाला व्यक्ति देर तक कार्य करता रहता है किन्तु जब व्यक्ति अपने पूरे सामर्थ्य को एक ही समय में लगा देता है और ऐसा करने से उसकी ऊर्जा सदा के लिए छिन्न-भिन्न हो जाती है उस स्थिति को 'दम टूटि गै' कहा जाता है।

दम निकरि गै - (सामर्थ्यहीन हो जाना)

जीवन में कार्य का आनन्द उत्साह में ही होता है किन्तु यह उत्साह व्यक्ति की कार्य-क्षमता या सामर्थ्य पर निर्भर करता है। सामर्थ्य समाप्त हो जाने पर उत्साहहीनता आ जाती है, इसी को दम निकरि गै कहा जाता है।

दम लगाय के - (शक्ति अर्जित करना)

जीवन के प्रत्येक कार्य का सम्पादन स्वार्जित ऊर्जा से ही सम्भव है अतः यह उक्ति शक्ति-संचय की साधना के प्रति प्रेरणा देती है।

दम साधि के - (शक्ति संचित कर कार्य में पुनः प्रवृत्त होना)

शक्ति-संचय के लिए किंचित विश्राम आवश्यक होता है। इससे पूर्ववत शक्ति आ जाती है अतः रुककर किसी श्रम साध्य कार्य के प्रति प्रवृत्त करने के लिए यह उक्ति प्रयुक्त होती है।

दर-दर के ठोकर - (हर जगह अपमानित होना)

यह उक्ति अस्थिर तथा अनिर्णय की स्थिति में रहनेवाले व्यक्ति के मनोभाव की सूचक है। ऐसा व्यक्ति किसी एक जगह पर स्थिर या एक निर्णय पर टिक नहीं पाता। अतः वह सर्वथा तिरस्कृत होता है जिससे उसे दर-दर की ठोकरें खाना पड़ता है।

दाँत काटी रोटी है - (अत्यधिक घनिष्ठता)

यह मुहाविरा सम्बन्धों की अत्यधिक निकटता एवं प्रेम का परिचायक है।

दाँत खट्टे होइगे - (किसी व्यक्ति या वस्तु से वितृष्णा हो जाना)

इस मुहाविरे का प्रयोग आशा के विपरीत आचरण करने से उत्पन्न हुए पार्थक्य भाव को व्यक्त करने के उद्देश्य से किया जाता है।

दाँत बूड़ि गें - (लालच आ जाना)

जब कोई व्यक्ति किसी के सम्पर्क में आकर अनायास ही उससे लाभ पा जाता है और उसके प्रति निरुत्तर स्पृहा करने लगता है तब उस सस्पृह व्यक्ति को यही कहा जाता है।

दाँत पीसि के रहिगे - (क्रोध को अपने अन्दर ही दबाकर रह जाना)

क्रोध व्यक्ति का स्वाभाविक संवेग है किन्तु कभी-कभी ऐसी स्थिति होती है कि क्रोधास्पद के समीप रहने पर भी विवशतावश क्रोध अपने में ही छिपा लेना पड़ता है।

दाँते तरे अँगुरी दवाय के - (आश्चर्य में पड़ जाना)

जब किसी व्यक्ति से आशा के विपरीत उत्तर या आघात मिलता है वह स्थिति 'दाँते तरे अँगुरी दबाय के' होती है बहुधा आश्चर्यजनक तथा अनहोनी घटना होने पर भी यह स्थिति आती है।

दाना-पानी उठि गवा - (एकाएक वियोग हो जाना)

ऐसी स्थिति किसी प्रियजन या व्यक्ति के दूर चले जाने अथवा न रह जाने की दशा में होती है जिसे 'दाना-पानी उठि गवा' इस उक्ति से व्यंजित किया जाता है।

दाना-दाना का मुहताज है - (अत्यधिक अभाव में जीना)

जब कोई व्यक्ति इतनी निर्धनता में होता है कि वह अपनी उदरपूर्ति भी नहीं कर पाता है तब उसकी इस विपन्नतापूर्ण स्थिति को इस उक्ति से अभिव्यक्त किया जाता है।

दाँव मारि दिहिन - (चालाकी में सफल हो जाना)

जब कोई व्यक्ति बिगड़ते हुए काम को युक्तिपूर्वक एकाएक सँभाल लेता है तब उसे 'दाँव मारि दिहिन' कहा जाता है।

दाल न गले - (अपनी बात मनवा पाने में असमर्थता)

जब कोई व्यक्ति लाख प्रयास करने पर भी किसी कठोर हृदय व्यक्ति को अपने पक्ष में सहमत नहीं कर पाता तब उसके लिए यही मुहाविरा कहा जाता है।

दाल मा नोन जस - (पूँजी के अनुरूप ही लाभ कमाना)

प्रायः इसका प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब कोई क्रय मूल्य से अत्यधिक विक्रय कर लाभ कमाना चाहता है तब उसे इसी उक्ति के माध्यम से संयमित किया जाता है।

दाल-रोटी चलिगै - (सामान्यतया सुखपूर्वक जीविका चलाना)
जब कोई व्यक्ति अपने अर्जित धन से साधारणतया अपना जीवन-निर्वाह करने में समर्थ हो जाता है तब उसके लिए 'दाल रोटी चलिगै' की कहावत ठीक चरितार्थ होती है।
दिन काटत हैं - (अनिच्छापूर्वक कार्य करके समय बिताना)
जब कोई व्यक्ति रुचि एवं उत्साहपूर्वक कार्य नहीं करता अपितु उसे भार समझकर न चाहते हुए भी लगा रहता है, उसके लिए यही मुहाविरा प्रयुक्त होता है।
दिन का दिन नहीं समझत - (निरन्तर अपने कार्य में लगे रहना)
अपने कार्य में आसक्त व्यक्ति विश्राम आदि की चिन्ता किये बिना अनवरत लगा रहता है अतः उसके लिए यही मुहाविरा सटीक बैठता है।
दोख लागि गा - (पाप लगना)
दोख शब्द अवधी लोकजीवन में व्यक्ति या पशु की हत्या करने वाले के लिए प्रयुक्त होता है। जिसे दोख (दोष) लगता है उसका सामाजिक बहिष्कार कर दिया जाता है। समाज में कभी-कभी अति निन्दनीय कार्य करनेवाले को भी इसी मुहाविरे से सम्बोधित किया जाता है।
दिन लागि गा - (अपेक्षा से अधिक समय लगना)
किसी कार्य के लिए वांछित समय से अधिक भागदौड़ करनी पड़े और तब भी पूरी सफलता न मिलने पर 'दिन लागि गा' इस मुहाविरे का व्यवहार होता है।
दिनन से हैं - (आसन्न प्रसवा)
यह मुहाविरा उस गर्भिणी के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है जिसके गर्भ का समय पूरा हो चुका है तथा प्रसव होने की प्रतीक्षा की जाती है।
दिन गिनत है - (किसी तरह से समय बिताना)
यह मुहाविरा व्यक्ति की विवशता का प्रकाशन करता है। इसके अतिरिक्त किसी आशान्वित भावी सफलता की प्रतीक्षा के अर्थ में भी व्यवहृत होता है।
दिन दूनी रात चौगुनी - (निरन्तर वृद्धि विकास होना)
जब कोई व्यक्ति प्रत्येक क्षेत्र में आशातीत सफलताएँ प्राप्त करने लगता है तब उसके उत्कर्ष को व्यंजित करने के लिए इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।
दिन-रात यक कइ दिहिन - (काम की धुन में समय असमय का विचार न करना)
इस मुहावरे का प्रयोग उस स्थिति में होता है। जब कोई व्यक्ति बिना अपने शारीरिक सुख की चिन्ता किये निरन्तर कार्य में लगा रहता है, वह भोजन और विश्राम की ओर भी ध्यान नहीं देता।
दिल न कच्चा करौ - (हिम्मत न हारना)
संसार का प्रत्येक कार्य मनुष्य के आत्मबल से ही सम्भव है, अतः इस मुहाविरे के द्वारा शिथिल हो रहे व्यक्ति को उत्साहित किया जाता है।
दिल गवाही नहीं देत - (मन से किसी अनैतिक कार्य के प्रति सहमत न होना)
प्रायः मनुष्य का अंतःकरण प्रथमदृष्टया अनुचित कार्य को समझ लेता हैं और विरत हो जाता हैं ऐसे मनुष्य अपनी मनोदशा को इसी मुहाविरे से व्यक्त करते हैं।
दिल बैठि गा - (गहरा आघात लगना)
जब कोई व्यक्ति किसी प्रिय व्यक्ति से अपने प्रति अनुकूल व्यवहार की अपेक्षा करता है किन्तु उसे विपरीत ही प्रतिफल मिलता है तब अपेक्षा करनेवाले व्यक्ति को जो आघात पहुँचता है उसे व्यक्त करने के लिए इसी मुहावरे को उद्धृत किया जाता है।

दिल मिला है - (प्रगाढ़ मित्रता होना)
उक्ति पारस्परिक सघन प्रीति एवं मैत्री का द्योतन करती है।
दिल मा गाँठ परिगै- (किसी कारणवश सम्बन्धों में दूरी आ जाना)
यह उस स्थिति में होती है जब कोई विश्वसनीय व्यक्ति स्वजन के प्रति ऐसा आचरण कर बैठता है जिसकी आशा नहीं की जाती है इस आघात से जो दुराव उत्पन्न होता है उसे 'दिल मां गांठ परिगै' कहा जाता है।
देवाला निकरि गवा - (समूल नष्ट हो जाना)
यह व्यक्ति की अचानक होनेवाली सर्वस्व हानि का परिचायक है।
दिया लइके ढूँढै - (उत्कृष्ट)
यह उक्ति किसी व्यकित या वस्तु की सर्वोत्कृष्टता का द्योतन करती है।
दुख के मारे - (विपदाग्रस्त)
अत्यधिक संकट में पड़ जाने के कारण व्यक्ति का जीवन निराशापूर्ण एवं नीरस हो जाता है अतः इसे देखकर ही जनमानस सहजतः समझ लेता है।
दुखड़ा रोवत हैं - (अपनी मुसीबतों को दूसरों से कहना)
प्रायः बड़े गम्भीर व्यक्ति ही अपने दुखों को धैर्यपूर्वक सहन करते हैं किन्तु जो धैर्यवान नहीं होते वे अपने ऊपर आयी मुसीबतों को सिलसिलेवार दूसरों से कहते रहते हैं।
दुनिया कै हवा लागि गै - (अपनी परम्परा व मर्यादा से हट जाना)
जीवन का सौन्दर्य अपने वातावरण एवं परिवेश के नियमों एवं परम्पराओं के अनुसार ही चलने में है किन्तु जब कोई व्यक्ति बढ़ते हुए फैशन के अवांछित व्यवहार को अपना लेता है तब वह अपने समाज का सम्मान खो देता है और उसे यही कहा जाता है कि 'दुनिया कै हवा लागि गै'।
दुहाई दियै लाग - (सफाई देना तथा याचक की मुद्रा)
अपने स्वार्थवश या भयवश किसी से याचनापूर्ण व्यवहार दुहाई देना है।
दूध कै दूध पानी कै पानी - (यथार्थ विश्लेषण)
इसे नीर-क्षीर विवेक कहा जाता है, सत्य और असत्य के मिश्रण का अनुसंधान करना बड़ा कठिन होता है किन्तु जब कोई व्यक्ति अपने विवेक से ही सही गलत का निर्णय कर देता है उस स्थिति को 'दूध का दूध पानी का पानी' कहा जाता है।
दूरिन से डण्डवत - (दिखावे का प्रेम)
जब कोई व्यक्ति किसी से हार्दिक प्रेम नहीं करता केवल औपचारिकता निर्वाह के लिए सम्बन्ध रखता है तब उस स्थिति में यही उक्ति चरितार्थ होती है।
देखतै-देखत - (अचानक)
यह किसी अनुकूल या प्रतिकूल घटना के एकाएक घटित होने को द्योतित करता है।
दूध के माछी - (तिरस्कार)
इस उक्ति का प्रयोग प्रायः घृणापूर्वक किए गए तिरस्कार के अर्थ में किया जाता है।
धक्का खात फिरत हैं - (इधर-उधर भटकना)
यह उक्ति बेकारी की स्थिति में भटकते हुए तिरस्कृत होने की स्थिति का प्रकाशन करती है।
धज्जी उड़िगै - (किसी की कमजोरी को हर तरह से उजागर करना)
वाह्य रूप से दिखावटी प्रतिष्ठा से मण्डित व्यक्ति की जब कोई तर्कपूर्ण ढंग से उसके दुर्बल पक्ष अथवा अनीति को कोई खुलेआम उजागर कर देता है तब उसके लिए यही मुहाविरा चरितार्थ होता

है।

धतूर मदार खाये हैं - (सांसारिक प्रपंचों से सर्वथा निर्लिप्त)

यह उक्ति व्यक्ति की सम-विषम सभी परिस्थितियों में अनासक्ति एवं निर्लिप्तता का द्योतक है।

धब्बा न लागै पावै - (सम्मान के प्रति सचेत रहना)

यह उक्ति सम्मान एवं प्रतिष्ठा के प्रति सतत सजग रहने के लिए प्रयुक्त की जाती है।

धाक जमी है - (प्रभाव बना रहना)

यह उक्ति किसी व्यक्ति के कुछ प्रभावशाली कार्यों से उपजी प्रतिष्ठा के लिए प्रयुक्त होती है।

धावा बोलि दिहिन - (आक्रमण कर देना)

एकाएक किसी कार्य करने के लिए जुट जाने को 'धावा बोलने' की संज्ञा से अभिहित किया जाता है।

धाकर होइगैं उप्पर - (अच्छों की उपेक्षा कर निकृष्ट को आगे बढ़ाना)

यह उस विसंगति को द्योतित करता है जिसमें गुणी व्यक्ति पीछे रह जाते हैं और निर्गुणी आगे बढ़ जाते हैं।

धूनी रमाये हैं - (साधना में लग जाना)

यह किसी व्यक्ति की एकनिष्ठता का परिचायक है।

धूरि फाँकत है - (किसी उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए इधर-उधर प्रयास करना)

यह उक्ति किसी कार्य के प्रति संलग्न रहने एवं उसकी पूर्ति में विलम्ब होने में जो परेशानी उठानी पड़ती है, उसकी व्यंजना के लिए यह मुहाविरा प्रयोग किया जाता है।

धोखा होइ गवा - (चूक जाना)

यह उस स्थिति का द्योतक है जब आशा के विपरीत एकाएक विफलता मिल जाती है।

धोबी के कूकुर न घर कै न घाट कै - (हर तरफ से हानि उठाना)

जब व्यक्ति ऊहापोह में पड़कर अनिर्णय का शिकार हो जाता है, अपेक्षित लाभ से वंचित हो जाता है तब उसके लिए यही उक्ति चरितार्थ होती है।

धोती ढील होइगै - (डर जाना)

किसी आतंक या भय के कारण शिथिल हो जाने की दशा को 'धोती ढील हो जाना' कहा जाता है।

धौंस जमावत है - (बनावटी प्रभाव दिखाना)

यह प्रभाव जमाने की इच्छा रखनेवाले किसी हल्के व्यक्ति की मनोदशा का परिचायक है।

नाऊ के बार आगे - (प्रत्यक्ष के लिए अनुमान की निरर्थकता)

जो स्थिति बिल्कुल सामने आनेवाली है उसके लिए अनुमान लगाना और तर्क करना निरर्थक होता है उसी के लिए यह उक्ति प्रयुक्त होती है।

नाति पढ़ावै आजा सोला दूनी बत्तिस - (अल्पज्ञ द्वारा बहुज्ञ को उपदेश देना)

जब कोई अज्ञानी व्यक्ति किसी अनुभवी व्यक्ति को उल्टा-सीधा समझने की कोशिश करता है, तब इस मुहाविरे का प्रयोग किया जाता है।

नई भुजइन खोपड़ी प खरही - (विसंगति पूर्ण नवाचार का प्रयोग)

जब कोई संस्कारहीन व्यक्ति स्वयं किंचित संस्कारित होकर अभद्र आचरण करने लगता है तभी यह उक्ति चरितार्थ होती है।

नई भुजइन खोपड़ी प खरही - (विसंगति पूर्ण नवाचार का प्रयोग)

जब कोई संस्कारहीन व्यक्ति स्वयं किंचित संस्कार होकर अभद्र आचरण करने लगता है तभी यह उक्ति चरितार्थ होती है।

नरकौ मा ठेली कै ठेला : (जनवृद्धि एवं स्थान की अल्पता) नरक का स्थान प्रायः बड़ा ही उपेक्षणीय होता है वहाँ कोई भी नहीं जाना चाहता। मजबूरी में कोई व्यक्ति वहाँ पहुंच जाय और वहाँ भी उसे बैठने की जगह न मिले तब यही स्थिति होती है। नारकीय स्थल भी जनसंख्या वृद्धि के कारण भीड़-भाड़ युक्त होते हैं।

नेबुवा नोन चाटत : (प्रत्याशा की असफलता) व्यक्ति को जब सफलता के बदले असफलता प्राप्त होती है तब उसका चेहरा देखते ही बनता है। यह मुहावरा यही भाव दर्शाता है।

नौ मन तेल सुवांगे मा जाय : (अपव्यय करना) जब जरूरी काम को छोड़कर गैर जरूरी काम में अधिक व्यय किया जाता है तब उसे नौ मन तेल सुवांगे मा जाय कहा जाता है। स्वांग अवध क्षेत्र का एक प्रसिद्ध लोकनाट्य एवं लोक नृत्य है जो रात को होता है। स्वांग के समय प्रकाश की व्यवस्था हेतु तेल का प्रयोग किया जाता है। स्वांग में इतना अधिक तेल जल जाय कि अन्य कार्यों के लिए न बचे तब यह उक्ति कही जाती है।

नीकि-नीकि गप्प, करू-करू थू : (अच्छाइयों का श्रेय लेना) यह उक्ति उस मनुष्य की मनः स्थिति का परिचय देती है जब किसी काम के बन जाने का श्रेय अपने ऊपर और बिगड़ने का भार दूसरे पर डाला जाता है।

नीकी करै बदी म परै : (उपकार का समुचित फल न मिलना) इसमें उस स्थिति का पता चलता है जब कोई उपकारी व्यक्ति शुद्ध भाव से उपकार करते हुए भी दुर्योग से अपयश का भागी बन जाता है।

नास कै नगाड़ा बाजत है : (अशुभ लक्षण) यह किसी सर्वथा आचरण हीन व्यक्ति के भावी अनिष्ट की संभावना को देखकर अभिव्यक्ति किया जाता है।

ना पाये के भगत : (चारित्रिक दृढ़ता का अभाव) वस्तुतः विकार उत्पन्न होने की परिस्थितियों में भी जो विकृत अथवा विचलित नहीं होता वही व्यक्ति चरित्र का धनी माना जाता है।

न गूलर फूटै न भुनगा उधराय : (बिना फूट के रहस्योद्घाटन न होना) गूलर नामक फल जब पककर लाल हो जाता है तब उसके अंदर भुनगा (उड़ने वाले लघु कीट) भर जाते हैं जैसे ही वह फल फाड़ा जाता है भुनगा उड़ने लगता है। यह एक स्वाभाविक एवं प्राकृतिक प्रक्रिया है। इसी प्रक्रिया को लक्षित करते हुए लोक में यह मुहावरा प्रचलित हुआ है। प्रायः झगड़े एक दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप के कारण होते हैं इससे बचने का प्रयास करना चाहिए।

नये घोड़िहा पूंछी मा लगाम : (अपरिपक्व विकास) विकास के वातावरण से प्रभावित अल्पज्ञ अविकसित लोग जब कोई अर्थहीन या विकास के नाम पर उल्टा कार्य करने लगते हैं तब उसके लिए यही उक्ति गतार्थ होती है।

निमरे कै जोइया सब कै सरहज : (दुर्बलता का दुरूपयोग) यह उक्ति वहीं चरितार्थ होती है जहाँ किसी कमजोर या असमर्थ व्यक्ति के प्रति सभी लोग निर्भयता पूर्वक उपहास अथवा अपमान करते हैं। इसमें असमर्थ व्यक्ति की जानबूझ कर अवमानना का भाव व्यंजित होता है।

नये जोगी : इस मुहावरे का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति या स्थिति से है जब कोई एकाएक नया काम शुरू करता है और उसे परम्परागत ढंग से न करके बिना चार लोगों का समर्थन लिए अपनी तरफ से नया नियम लागू करने लगता है। इसमें त्वरा तथा प्रदर्शन अधिक किन्तु गम्भीरता का अभाव होता है।

नोन के बोरा : इस उक्ति की सार्थकता वहां होती है जब कोई व्यक्ति आकार अथवा डील डौल में भारी होता है किन्तु बिल्कुल निष्क्रिय होता है। वह अपने जीवन संचालन के लिए दूसरों पर ही आश्रित रहता है।

नेवता बाभन बैर : यह उक्ति परम्परागत रूढ़ ब्राह्मण जाति विशेष की प्रवृत्ति का प्रकाश करती है। निमंत्रित ब्राह्मणों को समुचित सत्कार के साथ भोजन न दिए जाने पर ब्राह्मण असंतुष्ट हो जाता है इतना ही नहीं वह अतिथेय के लिए शत्रु तुल्य हो जाता है।

न धोवी के अउर परोहन न गदहा के अउर किसान : (एक दूसरे की अन्योन्याश्रित्ता) समाज में कुछ लोग एक दूसरे के पूरक होते हैं एक दूसरे का पारस्परिक सम्बन्ध कुछ इस तरह होता है कि वे आपस में एक दूसरे को चाह कर भी नहीं छोड़ सकते। उनकी परस्पर एक दूसरे पर आश्रित रहने की बाध्यता को इस मुहावरे द्वारा व्यक्त किया जाता है।

नीकि लाग मैं तोरेन रहिहउँ : (रूचिकर और प्रिय लगने वाली वस्तु के प्रति एकाग्र आसक्ति) बहुधा स्वादिष्ट वस्तु या व्यंजन के प्रति सबकी रूचि होती है किन्तु जब कोई सब कुछ छोड़कर उसी के पीछे पड़ जाय तो यही कहा जाता है।

नउवा कै जामा : यह एक घटना मूलक मुहावरा है। जामा वह वस्त्र है जो हिन्दू दूल्हे विवाह के अवसर पर पहनते हैं। (अब तो इसका प्रचलन ही बंद हो गया है) जामा हर दूल्हे के लिए नया नहीं बनवाया जाता एक ही जामा पहनकर सैकड़ों लोग दूल्हा बनते हैं किसी नाई ने अपना जामा दूल्हे को पहना रखा था। नाई भी दूल्हे के साथ विवाह के अवसर पर हर जगह साथ रहता। वह बार बार दूल्हे से कहता संभालकर रखना, गंदी नहीं होने पाये। नाई की बार-बार टोक से आजिज होकर किसी ने पूछा तुम्हें जामा की इतनी चिन्ता क्यों है तब उसने बताया कि वह जामा उसी का है इसीलिए वह चिन्तित हो गया। पोल खुल जाने पर दूल्हे की अवमानना स्वाभाविक थी। ऐसी ही घटना जब कहीं घटती है तब वह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

नाच न जानैं आंगन टेढ़ : (अपनी कमी छिपाने के लिए बहाना बनाना) प्रायः जब कोई अहंमन्य व्यक्ति किसी कार्य को अच्छी तरह या समुचित रूप से नहीं कर पाता है तो अपनी अज्ञानता या कमी को छिपाने के लिए ऐसे हल्के बहाने ढूंढता है जिससे स्पष्ट रूपेण उस व्यक्ति की कमजोरी का पता चल जाता है और ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति के लिए यही उक्ति सटीक बैठती है। 'नाच न आवै आंगन टेढ़'।

नउनिया वड़ी की धोबिनिया : (वर्चस्व की लड़ाइ) प्रायः दो समकक्ष व्यक्ति जब अपनी अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने में एक दूसरे को अपने से अधिक प्रभावशाली या श्रेष्ठ सिद्ध करने की होड़ करते हैं तब यही कहा जाता है।

न बल चलै न धनुहा नवै : बड़े लक्ष्य को पाने के लिए तदनुकूल सामर्थ्य की आवश्यकता होती है। जब कोई व्यक्ति कार्य के अनुरूप शक्ति नहीं रखता है और कार्य करने की इच्छा मात्र रखता है उस परिस्थिति में इस लोकोक्ति का बड़ा मार्मिक प्रयोग होता है।

नाव कइ दिहिन : यह लोक आभाणक वाच्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ दोनों को अपने में समेटता है। जब कोई व्यक्ति अपनी कुल परम्परा से बढ़कर वहुत अच्छा कार्य करता है जिससे उसकी एक अलग पहचान वनती है तव यह अभिधा में कहा जाता है कि नाव कइ दिहिन। अर्थात यश फैला दिया। इसके विपरीत जब कोई व्यक्ति अपनी उत्तम कुल परम्परा के विपरीत बहुत ही निष्कृष्ट या निन्दनीय कार्य करता है तव भी व्यंग्य में कहा जाता है कि नाव कइ दिहिस।

नाव बूड़िगा : भारतीय संस्कृति यश प्रधान है। यशस्वी व्यक्ति कभी नहीं मरता। जब उसका यश

समाप्त हो जाता है तभी उसका नाम मिटता है। लोक में नाम यश के ही अर्थ में प्रयोग होता है। जब किसी व्यक्ति अथवा उसके परिवार के किसी सदस्य के द्वारा कोई ऐसा कार्य हो जाता है जो पूर्व में किंए गए यश को दुष्प्रभावित करता है, तब इस लोकोक्ति का प्रयोग किया जाता है।

नाव न लेव : इसका प्रयोग लोक में दो अर्थों में प्रचलित है। अत्यन्त निकृष्ट काम करने वाले व्यक्ति का स्मरण करना भी लोक में पापकर माना जाता है। अतः उसकी त्याज्यता प्रदर्शित करने के लिए इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी किसी वस्तु या व्यक्ति की अत्यधिक दुर्लभता को लक्ष्य करके भी यह उक्ति प्रयुक्त होती है।

नाव बड़े दरसन थोर : (बाह्य प्रदर्शन की अधिकता तथा वास्तविकता का अभाव) जब किसी के सम्बन्ध में दूर से बड़ी ही प्रतिष्ठा, सम्मान, वैभव सुनायी देता है किन्तु निकट जाने पर उसमें सुनी गयी प्रतिष्ठा की बहुत कमी होती है तब इस आभाणक का संदर्भ दिया जाता है।

नाव बिकाऊ है : जब कोई व्यक्ति अपने व्यावहारिक कार्यों से प्रसिद्धि प्राप्त कर लेता है और बाद में वह गुणवत्ता नहीं रह जाती तथापि बहुत दिनों तक लोग उसकी पूर्व प्रतिष्ठा या गुणवत्ता पर विश्वास करके उसके पास आते हैं किन्तु समुचित विशेषता नहीं दिखाई देती तब वे सहसा कहने लगते हैं - नाव बिकाऊ है।

नाव गंधात है - जब कोई व्यक्ति अपने कुकृत्यों से इतना बदनाम हो जाता है कि लोग उसका नाम न लेना चाहते हैं न सुनना चाहते हैं ऐसी स्थिति में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

नेउछावरि होइगें : (पूर्ण रूपेण समर्पित हो जाना) जब कोई व्यक्ति किसी उत्तम उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने सुख-दुख की चिन्ता किए बिना पूर्ण रूपेण अपने को समर्पित कर देता है तब उसे नेउछावरि होइगें उक्ति से विभूषित किया जाता है।

निन्नानबे कै फेर : सौ एक पूर्ण संख्या है (थोड़ा रखकर उससे सम्बन्धित बहुत पाने के लिए परेशान होना) किसी के पास एक रूपया मात्र हो और वह सौ रूपया पाने के लिए निन्यानबे जुटाने में संघर्ष कर रहा है। निन्यानबे होने पर एक जोड़ना सरल है किन्तु केवल एक ही हो और निन्यानबे जोड़ना हो तो उसमें कठिनाई होती है। इस उक्ति का लक्ष्यार्थ यह है कि व्यक्ति आंशिक वस्तु होने पर अधिकाधिक पाने के लालच में फंस जाता है।

निर्बल के बल राम : (असहाय को भगवान का भरोसा) यह उक्ति समाज की दुर्बलों के प्रति उपेक्षा का भाव व्यक्त करती है।

नीचा खायगे - जब कोई व्यक्ति बड़ा होशियार बनता है। सही गलत किसी भी तरह से अपना कार्य बनाता रहता है और दैवयोग से कभी उसकी चाल सफल नहीं होती और उसका सारा भेद खुल जाता है तब इसी चुटीली उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

नीचा देखाय दिहिन : (अपमानित कर देना) इस उक्ति की गतार्थता उस संदर्भ में होती है जब कोई स्वजन कोई ऐसी परिस्थिति पैदा कर देता है जिससे समूह के सामने लज्जित अथवा अपमानित होना पड़ता है।

नीम हकीम खतरे जान : (अल्पज्ञता घातक होती है) किसी भी क्षेत्र में बिना सम्यक क्रमबद्ध ज्ञान के उसके प्रयोग से सदैव बहुत बड़ा खतरा बना रहता है।

नीयत खराब है : जब कोई व्यक्ति बाहर से सरलता का व्यवहार करता है किन्तु उसके मन में अपना स्वार्थ सिद्ध करने की छलपूर्ण भावना होती है तब इस उक्ति का प्रयोंग किया जाता है।

नेव डारि दिहिन : (किसी कार्य की शुरूआत करना) इसका अर्थ सही लक्ष्य की शुरूआत तथा

गलत लक्ष्य की ओर कदम रखने में किया जाता है।

नौ के लकड़ी नम्बे खर्च : किसी वस्तु को सजाने में उस वस्तु की कीमत से अधिक समलंकरण में लगा देना।

नौ दिन चलै अढ़ाई कोस : (बहुत सुस्त कार्य करना) यह कार्य के प्रति अत्यधिक आलस्य का द्योतन करने वाली किसी आलसी के प्रति कही गयी उक्ति है। कभी-कभी यह उक्ति मार्ग की दुरूहता के कारण लगने वाले अधिक समय की ओर भी इंगित करती है अर्थात थोड़े से काम का बहुत अधिक समय में सम्पन्न होता।

नौ नगद न तेरह उधार : किसी वस्तु की सद्यः प्राप्ति अधिक हितकर होती है भले ही वह मात्र में कम क्यों न हो।

नौ सै मूस खाय बिलारि भई भगतिन : इस उक्ति का उपयोग वहाँ होता है जब कोई व्यक्ति तमाम अनीति, अन्याय करके भी अपने को साधु (सज्जन) सिद्ध करना चाहता है अथवा जब कोई व्यक्ति जीवन भर अनाचार तथा अनीतिपूर्ण कार्य करता हो और शक्ति क्षीण हो जाने पर विवशता में अपने को सदाचारी सिद्ध करता हो।

निन्हियात हवैं : (दीनता दिखाना) प्रायः समृद्ध और सम्पन्न व्यक्ति भी स्वभाववश दरिद्र ही बने रहते हैं ऐसी स्थिति में इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है।

नहिला प दहिला : यह उक्ति वहां चरितार्थ होती है जब किसी बहकने वाले अहंकारी व्यक्ति जो अपने को बहुत कुछ समझता है उसके सामने उससे भी बढ़कर कोई आ जाता है।

नरक मचाये है : (परेशान करना) जब कोई व्यक्ति अपनी स्वाथपूर्ति हेतु किसी से बार-बार कहता है, उसी के पास बना रहता है तब वह व्यक्ति परेशान होकर कह उठता है। नरक मचाये हैं।

नौबत बाजत है : (खुशी मनाना) किसी कार्य की सिद्धि पर मनाये जाने वाले अत्यधिक उत्साहपूर्ण उत्सव को नौबत बजना कहा जाता है।

नकुना रगरि डारिन : अपने लाभ के लिए स्वभिमान छोड़कर अत्यन्त दीनतापूर्ण बार-बार तरह तरह से निवेदन करना ही 'नकुना रगरि डारिन' कहा जाता है।

नाहा झारि मची है : (असहनीय वेदना) किसी व्यक्ति को जब असहनीय शारीरिक पीड़ा होती है तब इस उक्ति का प्रयोग किया जाता है। नाखून की चोट प्रायः शरीर को झकझोर देती है। यह मुहावरा इसी स्थिति का द्योतक है।

नेउतियाय भगतियाय : (ओझा और ताजिरों का खेल। नेउता शब्द निमंत्रण के लिए लोक में प्रचलित होता है। अशिक्षित अज्ञानी तथा अंधविश्वासी लोगों की आपदा को मिटाने के लिए तमाम तांत्रिक ओझाई का काम करते हैं इसमें वे भूतों-प्रेतों को मंत्र शक्ति से बुलाते हैं और पीड़ित व्यक्ति के मानसिक रूप से कष्टमुक्त करने का दावा करते हैं।

नौहंड़िया बनत है : (खान-पान के प्रति दिखावट) स्वच्छता।

पराये धन पर लक्ष्मी नरायन - प्रायः लोग दूसरों के धन पर उत्सव मनाने में अगुवा बन जाते हैं। दूसरों का धन खर्च करने में कोई हिचक नहीं होती ऐसी स्थिति में इस वाक्यांश का प्रयोग किया जाता है।

पथरे प दूब जामी : (असम्भावना में सम्भावना का उदय) किसी निर्दय क्रूर व्यक्ति से दया की आशा नहीं की जाती फिर भी यदि वह कदाचित किसी के साथ दयालु हो जाय तब पथरे पर दूब जामना ही है। यह उक्ति लोक जीवन में प्रायः उस स्त्री के संदर्भ में प्रयुक्त होती जिसे शादी के बहुत दिन बीत जाने पर भी गर्भाधान न हुआ हो या गर्भधारण की आयु निकल रही हो दैवयोग

से वह गर्भवती हो जाय तो यह मुहावरा प्रयुक्त होता है। यह मुहावरा इस सन्दर्भ में अधिक सटीक बैठता है।

पिपरै कै परियत : (हठधर्मिता) अपनी बात पर हठपूर्वक अड़ जाने की स्थिति में इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

परका घोड़ भुसैले ठाढ़ : जब कोई व्यक्ति किसी से बड़ी आसानी में भरपूर मदद कर जाता है तो बार-बार उसी के पास जाता है ऐसी स्थिति में यही उक्ति उस व्यक्ति की मनोदशा को व्यंजित करने में सुतरां समर्थ है।

परेते कै चुरकी : (किसी को अपने वश में रखना) यह उक्ति लोक में प्रचलित अंधविश्वास पर आधारित है। ऐसा माना जाता है जब कोई व्यक्ति किसी का बिल्कुल वशवर्ती हो जाता है तो उस सन्दर्भ में यही लोकोक्ति सटीक चरितार्थ होती है। ऐसा लोक विश्वास है कि यदि प्रेत की चोटी (शिखा) प्राप्त कर ली जाय तो प्रेत वशवर्ती हो जाता है और अहर्निश आज्ञापालन में तत्पर रहता है।

पहाड़ फाटि परा : (एकाएक अत्यधिक संकट में पड़ जाना) जब अप्रत्याशित रूप से कोई बहुत बड़ा संकट आ जाता है तो उस आकस्मिक विशाल संकट को पहाड़ टूट जाना से व्यंजित किया जाता है।

पेड़ से गिरे - (आशा के विपरीत किसी से जवाब पाना) जब कोई व्यक्ति किसी से आश्वासन पाये रहता है और आवश्यकता पड़ने पर उसे नकारात्मक उत्तर मिल जाता है तो उसे पेड़ से गिरे कहा जाता है।

परसी टठिया आगे से टरि गै - (पाकर खो देना) यह उक्ति भाग्य की प्रबलता को दर्शाती है। कोई वस्तु हाथ में आकर किसी अनपेक्षित आकस्मिक कारण से हाथ से निकल जाती है तब यही उक्ति चरितार्थ होती है।

पूजा की जूनी बकड़ा हेरान : निश्चित प्रयोजन के लिए रखी गयी वस्तु का एकाएक गायब होना। जब कोई व्यक्ति पहले से बड़ी तैयारी करके अवसर विशेष की उपयोगिता के लिए किसी वस्तु को रखता है किन्तु असावधानी वश यदि वह अनुपलब्ध (इधर-उधर) हो जाती है तभी इस उक्ति का लाक्षणिक प्रयोग गतार्थ होता है।

पेट पकरि के बैठि गएं (किसी निर्धन का सर्वस्व नष्ट हो जाना) जब किसी सामान्य स्तर के व्यक्ति की सारी पूजी एकाएक नष्ट हो जाती है तब उसे जो अकथनीय वेदना होती है उसकी प्रभावशाली अभिव्यक्ति इसी साहित्यिक शैली से व्यक्त होती है।

पेट के कच्चे : (छिछलापन) जब किसी गोपनीय बात को कोई अनवसर पर बता देता है तब उसे पेट का कच्चा कहा जाता है।

पानी कै किरवा (किसी क्षेत्र विशेष का गम्भीर अनुभव होना) जो किसी क्षेत्र विशेष में बड़ा सूक्ष्म अनुभव रखता है उसे पानी कै किरवा कहकर तत्सम्बन्धी सूक्ष्म जानकारी का प्रख्यापन किया जाता है।

फूहरि कै लपसी : लपसी लोक जीवन का सरल भोज्य पदार्थ है। इसमें किसी प्रकार के पाक-कौशल की आवश्यकता नहीं होती, किन्तु जो महिला बिल्कुल ही असभ्य होती है वह लपसी जैसे सरल भोज्य को भी बिगाड़ देती है। इसी सन्दर्भ में जब कोई व्यक्ति नितान्त सहज काम को नहीं कर पाता उसमें उसकी बेशहूरी झलकने लगती है तो इसी तथ्य को व्यंजित करने के लिए उक्त मुहावरे का आश्रयण किया जाता है।

फुफ्फा फरेंद लायें : (स्तरानुकूल अपेक्षा के अनुसार खरा न उतरना) जब कोई महत्वपूर्ण व्यक्ति अत्यन्त साधारण व्यक्ति द्वारा किये जाने वाले कार्य को गर्व पूर्ण दृष्टि से देखता है तब उस महत्वपूर्ण व्यक्ति की उपेक्षा प्रदर्शित करने के लिए इस मुहावरे का प्रयोग किया गया है।

फूहर चली तौ सब घर हाला : असभ्य संस्कारहीन व्यक्ति का प्रत्येक क्रिया कलाप असभ्यता से भरा होता है। यहां तक कि उसके चलने-फिरने में भी उसकी संस्कारहीनता स्पष्ट हो जाती है यह उक्ति व्यक्ति की नितान्त असभ्यता को लक्षित करती है।

फंदे परि गे : (फंस जाना) जब कोई व्यक्ति अकस्मात किसी धूर्त या ठग की चाल बाजी का शिकार हो जाता है तब उसे फंदे म परिगे मुहावरे से व्यंजित किया जाता है।

फांका मारत है : (भुखमरी) यह उक्ति सीधे भुखमरी की दयनीय स्थिति को व्यक्त करती है। जब दो एक दिन के अंतर में भोजन सुलभ हो पाता है उस स्थिति को फांका मारना कहते हैं।

फंसरी परि गै : (अपरिहार्य बंधन) जब कोई व्यक्ति ऐसे बंधन में पड़ जाता है जिससे छूटना मुश्किल होता है और जिसका निर्वाह करना नैतिक रूप से अनिवार्य होता है।

फरूहा भांजत है : (अत्यधिक परिश्रम) फावड़ा श्रम यंत्र है यह अत्यधिक श्रमशीलता का भी प्रतीक है। कृषि में सर्वाधिक श्रम का कार्य फावड़े से ही होता है, किन्तु लोक में जब कोई व्यक्ति निष्क्रिय रहता है कोई काम नहीं करता है तब उसके प्रति अन्योक्ति रूप में इस मुहावरे का प्रयोग होता है।

फांसी कै फंदा : (ऐसा धर्म संकट जिससे छुटकारा पाना कठिन हो) जीवन में कभी कभी ऐसी जटिल स्थिति आ जाती है कि उससे निकल पाना संभव नहीं दिखायी देता ऐसी स्थिति में वह फांसी का फंदा लगता है।

फगुई खेलत हैं : (स्वच्छन्दता) फगुई लोक का सामाजिक स्वच्छन्दता का पर्व है इसमें वय, पद आदि की उन्मुक्तता रहती है। हास-परिहास विनोद का बंधन नहीं होता किन्तु यह एक निश्चित अवधि का वातावरण होता है और जब कोई व्यक्ति ऐसी स्वच्छन्दता का उपयोग अनवसर पर करता है तब फगुई खेलत हैं इस मुहावरे से व्यंजित किया जाता है।

फारि खात हैं : (असहज एवं कटु बोलना) जब कोई व्यक्ति सहज भाव से किसी प्रश्न का उत्तर नहीं देता अपितु वह बहुत जोर से बोलता है उसके बोलने में कटुता तथा असम्मान का भाव होता है। कटुकथन का द्योतक है यहा मुहावरा।

फलफलहा मनई : (बकवादी व्यक्ति) अनावश्यक रूप से समय-कुसमय बिना सोचे समझे बोलने वाले व्यक्ति को फलफलहा कहा जाता है।

फूंकि मारि दिहिन : (झाड़ फूंक का मंत्र) लोक जीवन में यह सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों अर्थों में समयानुकूल प्रयुक्त होता है। कभी-कभी जब व्यक्ति को अचानक लाभ हो जाता है तो यह सकारात्मक स्थिति होगी और यदि बुरी नीयत से किसी का अहित करने के उद्देश्य से कोई दुष्कृत्य किया जायेगा तो यह नकारात्मक स्थिति होगी।

फूटिउ आंखी नहीं देखत : (किसी के प्रति अनिच्छा तथा उपेक्षापूर्ण व्यवहार) कभी कभी घृणा, ईर्ष्या अथवा उपेक्षा के कारण व्यक्ति अच्छे आदमी से भी बुरा व्यवहार करता है इसी सन्दर्भ में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

फूटी कौड़ी नहीं : (अति निर्धनता, दरिद्रता) घर गृहस्थी तथा अधिक परिवार होने के कारण गृह स्वामी की ऐसी स्थिति आ जाती है कि उसके पास एक भी पैसा नहीं रहता। यह अति दीनता की स्थिति को दर्शाता है।

फूल झरत हैं : (वाचिक मृदुता, मृदुभाषी) समाज में कुछ लोगों का स्वभाव इतना अच्छा होता है कि उनके बोलनें पर सुनने वाले का मन वैसे ही प्रसन्न हो जार्ता है जैसे खिला हुआ फूल। ऐसा व्यक्ति अंदर और बाहर दोनों से निश्छल होता है। यह एक दैवी गुण तो है ही व्यक्ति के स्वनिर्मित व्यक्तित्व की भी खासियत है।

फूलि के कुप्पा होइ गयें : (प्रसन्नता का पारावार) कभी-कभी कुछ व्यक्तियों के समक्ष ऐसी अवांछित खुशी का अवसर मिल जाता है जो उसकी अपेक्षा से अधिक हो, तब इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

फूले फिरत हैं : (अकारण ही इतराना) हल्के स्वभाव के लोग बिना किसी विशिष्ट उपलब्धि अथवा सामर्थ्य के ही अपने ऊपर इतराते रहते हैं।

फरौ-फूलौ : (शुभासंशा, आशीर्वाद) फलना फूलना प्रकृति का नियम है। कभी-कभी ऐसी भी स्थिति आती है कि प्रारब्धवश या किसी कारणवश फलने-फूलने की प्रक्रिया बाधित रहती है यह प्राणी के लिए अभिशप्त स्थिति है। इसीलिए लोक जीवन में उसकी कामना और वंश वृद्धि के लिए आशीर्वाद स्वरूप फलने फूलने की बात कही जाती है।

फेरफार होइगा : (अंधविश्वास की स्थिति) लोक मानस में झाड़ फूंक और तंत्र पर बहुत अधिक विश्वास किया जाता है विशेषकर अशिक्षित और अज्ञान लोगों के बीच। जब उनकी जीवन यात्र सामान्य रूप से चल रही हो, प्रसंगवश कही ठोकर लग जाय, या बीमार हो जायें तो ऐसे लोगों को यह आभास होने लगता है कि उनके परिवार पर आने वाली विपत्ति का कारण फेरहार (भूत प्रेत की बाधा) है।

फोकट के माल : (हराम खोरी) समाज में एक बहुत बड़ा वर्ग अकमर्ण्य लोगों का है वे भाग्यवादी तो होते हैं किन्तु कर्मवाद पर विश्वास नहीं करते हैं और निठल्ले बैठे रहते हैं। वे इस मौके की तलाश में रहते हैं कि कब उन्हें बिना परिश्रम के धन लाभ हो जाये।

फांक लेव : कभी-कभी ऐसी स्थिति आती है कि व्यक्ति के ऊपर सामर्थ्य से अधिक कार्य का बोझ आ जाता है। वह अपनी सामर्थ्य भर श्रम करता है किन्तु जब कोई उस काम को शीघ्र पूरा करने के लिए दबाव डालता है तब वह कहता है का फांक लेई।

फइलहर होइगा : (सीमा विस्तार) समाज में जब किसी स्थान या वस्तु के लिए दो-तीन लोग दावेदार हों और किसी कारणवश अन्य लोग उस स्थान या वस्तु से बेदखल हो जायें या मजबूरी वश अपना दावा छोड़ दें तो अकेले वाले व्यक्ति के लिए यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बारह बिगहा पोदीना बोवा है : (बढ़-चढ़ कर बात करने वाले के सन्दर्भ में) पुदीना एक औषधीय खाद्य पदार्थ है प्रायः लोग घरों में या दरवाजे पर एक दो फिट क्षेत्रफल में इसकी फसल लगात हैं लेकिन इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति कहे कि हमारे पास बारह बिगहा पोदीना लगा है तो अत्युक्ति ही होगी।

बहुत मयानी अंजिया सास, कंडा लइके पोछैं आस : (दिखावटी प्रेम) औपचारिकता का निर्वहन करने या फिर किसी के प्रति दिखावे की प्रवृत्ति का सूचक है यह मुहावरा। किसी के आंसू पोछने के लिए कंडे का प्रयोग और भी कष्टदायक होता है।

बौरहा कै भैंस बियान सगरा गाँव दुहनी लइके दौरा : (सीधे सादे व्यक्ति का शोषण) समाज में स्वार्थपरक तत्वों की कमी नहीं है वे अपनी स्वार्थपूर्ति का अवसर पाकर नहीं चूकते हैं। किसी भोले-भाले अथवा अल्प बुद्धि के व्यक्ति से स्वार्थपूर्ति करना तो आम बात है।

बेलवा के बियाह : (बहुत सी अनहोनियों का घटित होना) किसी मांगलिक कार्य में जब एक

साथ कई दुर्घटनायें घटित हो जायें। कई प्रकार से अनिष्ट हो जाय तो उस अवसर को सन्दर्भित करने के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बहि-वहि मरे बैलवा बांधे खायं तुरंग : (परिश्रम करने वाले की उपेक्षा) खेतों में जो सर्वाधिक तथा परिश्रमपूर्ण कार्य होता है वह है खेतों की जुताई-बुवाई। यह कार्य बैलों द्वारा ही किया जाता है किन्तु दरवाजे पर बंधे हुए घोड़े की अधिक सेवा की जाती है उसे अच्छा खाने को मिलता है बदले में काम कोई नहीं। इस विसंगति पूर्ण व्यवहार के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बन पटे कै फकीरी : फकीरी का वेश धारण करना और फकीर बनना आसान काम नहीं। कोई संयोग वश यदि फकीर बन जाय तो उसे यही कहा जाता है।

बूढ़ा नये नहीं देखिन : (वयवृद्धा का लोकानुभव) हमारे समाज में वयवृद्ध को ज्ञानवृद्ध माना जाता है जिसका जीवन जितना ही अधिक होता है उसके पास उतना ही अनुभव अर्जित ज्ञान होता है। कभी-कभी नये पीढ़ी के युवक/युवतियाँ जब वृद्धों की अवमानना करने लगते हैं तब यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बाभन होइके हर जोतै, तवौ बांह रहि जायः भारतीय समाज में एक व्यवस्था थी कि ब्राह्मण को हल नहीं जोतना चाहिए। यह रूढ़ परम्परा आज तक चली आ रही है। मजबूरी वश यदि कोई ब्राह्मण हल जोतने ही लगे तब उसे पूरा बांह जोतकर ही दम लेना चाहिए।

बिलारिन के भैंस नहीं लागत : बिल्लियाँ घर में रखे गये दूध को मौका पाते ही पी जाती हैं। बिना गाय भैंस या दुधारू जानवर को पाले ही उन्हें दूध मिल जाता है। समाज में कुछ लोग ऐसी प्रकृति के होते हैं जो काम धाम तो करते नहीं किन्तु इधर उधर जुगाड़ करके धनार्जन करते रहते हैं। ऐसे ही लोगों के लिए यह मुहावरा है।

वाप पूत बराती, माई धिया घराती : (सामाजिक रूप से वहिष्कृत) शादी ब्याह में वर पक्ष तथा कन्या पक्ष दोनों ही तरफ से लोग इकट्ठा होते हैं वैवाहिक वातावरण भीड़-भाड़ वाला तथा उत्सव प्रधान होता है किन्तु समाज में निन्दनीय कार्य करने वालों का सामाजिक बहिष्कार होने के कारण उनके दरवाजे पर कोई नहीं जाता है। ऐसे में दूल्हा और उसका पिता तथा कन्या तथा उसकी मां ही एक मात्र वैवाहिक आयोजन की औपचारिकता पूरी करते हैं।

बंदरे कै फोरिया : बंदर की आदत होती है किसी चीज को बार बार कुरेदना। उसे कहीं घाव या फोड़ा हो जाये तो वह उसे बार-बार खरोचता रहता है यहां तक घाव सूखने के बाद भी वह खुरचता रहता है इससे उसका घाव बार-बार ठीक होने पर भी फिर हो जाता है। कुछ सामाजिक लोगों के इसी वानरी स्वभाव और चरित्र को बताने के लिए इस मुहावरे का प्रयोग होता है।

बौरहा कूकुर हन्ना खेदै : (अनावश्यक परिश्रम, उद्देश्यहीन कार्य) हन्ना (हिरन) बहुत ही तेज धावक पशु है। उसका पीछा करना असम्भव होता है। यदि कोई कुत्ता उसका अनुगमन करे तो उसे पागल ही कहा जायेगा। इसी प्रकार समाज में उद्देश्यहीन असम्भव काम करने वाले को इसी मुहावरे से अभिहित किया जाता है।

बीछी कै बियाना : (अधिक बच्चों वाला दम्पत्ति) बिच्छू एक बार मैं कई बच्चों को जन्म देती है। इसी प्रकार यदि किसी दम्पत्ति के अधिक बच्चे हैं और उनका पालन पोषण ठीक से नहीं हो पाता तब बीछी कै बियाना मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बरिखा थोर भरभरहट जादा : (कार्य की अपेक्षा अधिक प्रचार प्रसार करना, शोर मचाना) आज का समय और समाज प्रदर्शन की संस्कृति को अधिक महत्व दे रहा है। काम भले ही थोड़ा हो किन्तु अखबारों, विज्ञापनों आदि के माध्यम से उसका प्रचार अधिक होता है।

बड़े-बड़े बहे जायँ गदहऊ थाह पूंछे : (सामर्थ्य सीमा का अतिक्रमण) अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही प्रत्येक व्यक्ति कोई कार्य करता है किन्तु यदि वह अपनी सामर्थ्य के बाहर काम करने की बात करता है तब लोग उसे यही कहते हैं।

बिटिया न बेटवा फत्ते बरातै जायं : (उद्देश्यहीन योजनायें बनाना) असम्भावनाओं में सम्भावना की तलाश तथा योजना बनाने के प्रति यह मुहावरा प्रयोग होता है।

बियाह नहीं कीन बरातै गये हन : (लोक व्यवहार का ज्ञान) यह बात अलग है कि कोई व्यक्ति कुंवारा है लेकिन उसे वैवाहिक संदर्भों की जानकारी समाज में हो रहे विवाहों के जरिये मिलती है। वैवाहिक संस्कार तथा उसकी क्रिया विधि का ज्ञान उस व्यक्ति को अधिक होता है जो असंख्य बारातों में शामिल हुआ हो।

बूढ़ मरा दइव परका (कई वृद्ध व्यक्तियों की मृत्यु के बाद) : जब गांव में किसी युवा व्यक्ति की मृत्यु हो जाय तब लगता है कि दइव (ईश्वर) अर्थात् यमराज का मन बहक गया।

बिटिया चमार के नाव राजरानी : काम के अनुरूप ही जब नाम होता है तब उसकी सार्थकता होती है किन्तु यदि काम ओछा है और नाम बहुत ही सुन्दर और सुयोग्य सूचक है तब यह उक्ति कहीं जाती है। इस सन्दर्भ को रेखांकित करने वाले तमाम **मुहावरे प्रचलित** है - आंख के आंधर नाम नैन सुख, नाव बड़े पर दरसन थोर, नाव पिरथीपाल भुइं बिसुवौ भर नहीं, नाव सुर्जमुखी मुह करमुखी, नाव फत्ते सिंह पोत अढ़ाई आना, नाव सुदरसन, भेस कुलच्छन, नाव गोसाईं काम कसाई।

बलई आपन घोड़ी पावैं, सहिबाला होइ भरि पाइन : यह एक अन्तर्कथात्मक मुहावरा है। दूल्हे की ही भांति सहबाला भी महत्वपूर्ण एवं समादर का पात्र होता है। सहबाला बनने से आर्थिक लाभ भी होता है। बलई (मिसिर) से कहा गया आप घोड़ी बारात के लिए दे दो तो तुम्हें ही सहबाला बना दिया जायेगा। दूल्हे को तो घोड़ी पर चढ़ाया गया, बलई पैदल चल रहे थे, घोड़ी की भी दुर्दशा हो गयी उसे ठीक से चारा पानी नहीं दिया गया। यह देख बलई ने अपनी पीड़ा व्यक्त की और तभी से यह मुहावरा प्रचलित हो गया।

बात के पक्के : (बचनबद्धता) बचन बद्धता एक प्रमुख मानवीय गुण है लोक में इसे संदर्भित करने के लिए तमाम मुहावरे हैं। यथा, बात के धनी बतधर आदि।

बात के कच्चे : उपरोक्त मुहावरे के ठीक विपरीत। किसी से कोई बात या काम कहकर पीछे हट जाना।

बधिया बैठि गै : (किसी व्यवसाय में धन हानि) व्यापार या व्यवसाय में यदि मूलधन भी शेष न बचे तब ऐसी स्थिति को व्यक्त करने के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बधावा बाजत है : (आनन्दोत्सव) पुत्र जन्म विवाहादि ऐसे अवसर है जो हर्षोल्लास प्रकट करने के अवसर है। ऐसे अवसरों पर बजाये जाने वाले वाद्य बधावा नाम से अभिहित किए जाते हैं।

बला फाटि परी : (मुसीबत आ जाना) सामान्य जीवन यापन की प्रक्रिया के बीच जब कोई कठिन मुसीबत आ जाती है तब यही कहा जाता है।

बलि बलि जात है : (बलिहारी जाना) आंनदातिरेक और भावातिरेक में किसी व्यक्ति के प्रति आसक्ति का भाव होने पर उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करना।

बखिया उघारत हैं : (बखिया उधेड़ना) अनावश्यक रूप से किसी व्यक्ति की आलोचना करना। उसकी कमजोरियों को उजागर करना।

बहत्तर घाट के पानी पियत हैं : (अस्थिर चित्त एवं अविश्वासी व्यक्ति का कृत्य) जब हर घाट पर एक सा पानी उपलब्ध हो तब क्या जरूरत है कि कई-कई घाटों पर जाया जाय। यह तो वही

व्यक्ति करता है जो अस्थिर चित्तवाला तथा अविश्वासी होता है।

बांस-बल्ली न लागे : किसी कार्य में बाधा होने की आशंका।

बांह गहि लिहिन : (शरणागत या अशक्त व्यक्ति की रक्षा और सुरक्षा का दायित्व निर्वहन करना)। किसी कमजोर सताये हुए असहाय व्यक्ति की रक्षा करने वाले को बांह गहि लिहिन कहा जाता है !

बाघ कै भाठी : (असुरक्षित स्थान) कभी-कभी व्यक्ति ऐसी जगह पर शरण लेता है जहां उसे भारी नुकसान की संभावना रहती है। कुछ लोग तो जानबूझकर ऐसा करते हैं। उनके लिए यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बाट जोहत हैं : (प्रतीक्षा करना, आशा करना) किसी अपेक्षित व्यक्ति के आने की प्रतीक्षा इस अर्थ में करना कि वह आकर उसकी अपेक्षा पूरी करेगा। राह देखना मुहावरा भी इसी अर्थ में प्रयुक्त होता है।

बात के धनी : यह मुहावरा बात के पक्के का पर्यायवाची है पिछले पृष्ठ में इसकी विशद विवेचन की जा चुकी है।

बात न काटौ : (अपेक्षा के विपरीत कार्य) किसी व्यक्ति से की गयी अपेक्षा यदि नहीं पूरी होती तब यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बात कै बतंगड़ : (अर्थहीन वार्तालाप) कभी-कभी अपनी जिद या अपनी बात को ऊंचा रखने के लिए लोग झगड़े करने की हद तक आ जाते हैं। यही स्थिति बात कै बतंगड़ कहलाती है।

बात-बात मा : (बात बात में) किसी अनावश्यक कथन की पुनरावृत्ति करना।

बात नहीं करत : (उपेक्षित भाव) कुछ स्वार्थी तत्व किसी व्यक्ति से तभी बात करते हैं जब उनका कोई स्वार्थ सिद्ध होता हो अन्यथा वे निस्वार्थ भाव से किसी से बात भी करना पसंद नहीं करते।

बतबढ़ होइगै : (अनावश्यक तकरार, बात का बढ़ जाना) पारस्परिक संवाद अथवा वार्तालाप होने पर जब दो पक्षों में किसी मुद्दे या संदर्भ को लेकर अपने अपने तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं। और अपने तर्क को मान्यता दिलाने के लिए रोषपूर्ण स्थिति पैदा करने को बतबढ़ कहते हैं।

बात बनावत : (तथ्य छिपाना) कमियों को छिपाने का प्रयास करना।

बात राखि लिहिन : (अपेक्षा पर खरे उतरना) अपेक्षित व्यक्ति की अपेक्षा पूरा करने पर कहा जाता है कि फलां व्यक्ति ने बात रख ली।

बात लागि गै : (अन्तःकरण का उद्वेलित होना) किसी व्यक्ति द्वारा जब कोई अप्रिय बात कही जाती है और सुनने वाले का अन्तःकरण उद्वेलित हो जाय तो इसे ही बात लगना कहा जायेगा।

बात हार गयें : (हामी भर लेना) किसी से वायदा कर लेना। कोई कार्य अथवा सहायता का बचन दे देना आदि।

बातन मा आयगें : (छलावा) कोई सीधा सादा व्यक्ति जब किसी कपटी या छली व्यक्ति की बातों पर विश्वास कर लेता है और धोखा खा जाता है तब इस स्थिति और कपटपूर्ण व्यवहार को बातन मा आयगें कहा जाता है।

बाल मा खाल निकारत हैं : (छिद्रान्वेषण करना) इस मुहावरे का शाब्दिक अर्थ है बाल की खाल के बारे में चर्चा करना। जब बाल में खाल ही नहीं होती तो बिना मतलब इसकी चर्चा क्यों की जाय। समाज के ऐसे ही लोगों जिनकी अकारण या निरर्थक कार्यों में अभिरूचि होती है उनके लिए ही यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बीरबल कै खिचरी : किसी कार्य में अनावश्यक रूप से विलम्ब का विस्तार। बीरबल की खिचड़ी

एक अन्तर्कथा है जिसे प्रायः भारतीय समाज अधिकांशतः जानता है। जब किसी कार्य के सम्पादन में अनावश्यक रूप से बहुत अधिक विलम्ब होने लगता है तब यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बारे पूत हरेरी खेती : (अपरिपक्व संसाधन) बाल पुत्र तथा हरियाली युक्त फसल का कोई भरोसा नहीं। बच्चों की प्रायः शैशवावस्थी में बीमारी आदि से बड़ा खतरा रहता है अतः उसके ऊपर भविष्य की कल्पना तथा योजना बनाना असंगत कार्य है ठीक इसी प्रकार लहलहाती फसल जब तक पक कर तैयार न हो जाये उसका कौन भरोसा। कब पाला-पाथर पड़ जाय, प्राकृतिक आपदा आ जाय, कीट पतंगे खा जायें या फसल को कोई बीमारी लग जाय।

बाल बांका न होये : (पूर्णतया सुरक्षित) किसी संभावित खतरे के प्रति यदि व्यक्ति सचेत रहे तो उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता है।

बीछी कै मंतर न जानैं कीरा के बिल मा हाथ डारैं : (अल्पज्ञ व्यक्ति का कृत्य) जो व्यक्ति बीछी (बिच्छू) के काटने का उपाय, इलाज और मंत्र न जानता हो वह (सांप) के बिल (बांबी) में हाथ डाले तो उसी के संदर्भ में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है। वैसे तो यह शब्दार्थ है। लोक जीवन में यदि कोई व्यक्ति किसी छोटे वस्तु या कार्य की जानकारी नहीं रखता और किसी बड़े काम में हाथ डाल देता है तब उस व्यक्ति के लिए ही यह उक्ति गतार्थ होती है।

बीच मा कूदि परें : (अनावश्यक हस्तक्षेप) यदि दो लोग आपस मा बातचीत कर रहे हों या वाद-संवाद अथवा वाद प्रतिवाद कर रहे हैं ऐसी स्थिति में यदि कोई तीसरा व्यक्ति बीच में कूद पड़े तब उस व्यक्ति के संदर्भ में यह मुहावरा प्रयोग किया जाता है।

बीच मा न परौ : उपरोक्त मुहावरे के साम्यार्थ में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है इसमें निषेधात्मक कथन व्यक्त किया गया है।

बीरा चबाये हैं : (चुनौती स्वीकारना) किसी कठिन कार्य को सम्पादित करने के लिए प्रतिबद्ध होना।

बेगारी मा पकरे हैं : (अनमनस्क भाव से काम करना) जब कभी कोई व्यक्ति इच्छा रहित होकर अनमनस्क भाव से कोई काम करता है तब उसे देखकर यही कहा जाता है। बेगार प्रथा सामंतवादी शक्तियों के शोषण की प्रथा थी जिसमें गरीबों को पकड़कर उनसे बलपूर्वक काम तो कराया जाता था किन्तु पारिश्रमिक नहीं दिया जाता था।

विना मौत मरिगैं (अकारण ही दुष्परिणाम का घटित होना)

बटिया परिगै : (सर्वस्व नष्ट होना) किसी कार्य में ऐसी बिघ्न बाधा पड़ जाय कि प्रयोजन की सार्थकता ही नष्ट हो जाय, ऐसी दशा में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बोझ उठावा न उठे : (सामर्थ्य से बाहर) व्यक्ति जब अपनी शक्ति और सामर्थ्य से ऊपर उठ कर किसी कार्य को करने की अनावश्यक चेष्टा करता है तब यह उक्ति गतार्थ होती है।

बोरिया बिस्तर बांधि गा : (स्थानापन्न की स्थिति, स्थानान्तरण हो जाना) किसी भी कार्य से छुट्टी मिल जाना, दायित्व से मुक्त पाना, पद से मुक्ति हो जाना। यह मुहावरा विभिन्न संदर्भों एवं अर्थों में प्रयुक्त होता है।

बोलती बंद होइ गै : (निरुत्तर हो जाना) लोक जीवन में ऐसे अवसर या प्रसंग आते हैं जब व्यक्ति की सूझ-बूझ जवाब दे जाती है। ऐसी स्थिति प्रायः नकारात्मक प्रवृत्ति के चलते भी होती है और कभी-कभी बुद्धि से परे होने के कारण भी होती है।

बांसन बैर बांधे हैं : (शत्रुता का भाव) अकारण ही जब किसी व्यक्ति से बैर भाव की स्थिति आ जाती है तब यह मुहावरा प्रयोग किया जाता है।

बोली-बोलत है : (उत्तेजित करना) प्रायः प्रतिद्वन्द्वी या विरोधी व्यक्ति को देखकर परोक्ष रूप से उस पर टीका टिप्पणी करने को बोली-बोलत है कहा जाता है।

बड़ी अत्ति किहे हैं : (अत्यधिक अन्याय के सन्दर्भ में) कोई दबंग या दुष्प्रवृत्ति का व्यक्ति यदि अपने पड़ोसी अथवा बस्ती में रहने वालों के प्रति अन्याय की पराकाष्ठा पार कर देता है, परेशान करता है या सताता है तब उसे बड़ी अत्ति किहे हैं कहा जाता है।

बड़ा अंधेर मचाये हैं : यह मुहावरा उपरोक्त मुहावरे का समानार्थी है। अत्याचार और अनाचार करने वाला व्यक्ति कभी अपने बुरे कामों के प्रति सोचता नहीं। उसे तो अपने प्रतिद्वन्द्वियों को सताने में ही आनन्द मिलता है।

बूड़त-उतिरात है : (डूबना और उतराना) जब व्यक्ति के जीवन में उहापोह की स्थिति आ जाती है तब इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

बड़े धन्ना सेठ बनत हैं : (धन का दिखावा) धनवान न होते हुए भी धनवान बनने का ढोंग करना, दूसरों को प्रभाव में लेने के लिए बड़ी-बड़ी बातें करना। इस मुहावरे का गतार्थ होता है।

बैसाखी पहिरे हैं : (प्राकृतिक प्रतिकूलता की स्थिति) यदि कोई व्यक्ति भयंकर ठंड के मौसम में बैशाख में पहने जाने वाले वस्त्र पहनता है तब उस पर व्यंग्य कसने के लिए यह मुहावरा घटित होता है।

बैसाखी मुसकी मारत हैं : (बनावटी हंसी) बैसाख का महीना धन धान्य तथा अन्न से पूर्ण होने वाला समय है। जब घर भरा पूरा होता है तब मन सहज ही प्रसन्न रहता है किन्तु अभाव की स्थिति में मन की प्रसन्नता का दिखावा बैसाखी मुसकी के समान होता है।

बतिया हैं करतुतिया नाही, मेहरी हैं घर खटिया नाही : (व्यक्ति की अकमर्ण्यता) इस मुहावरे का शब्दिक अर्थ है बातें तो बहुत लम्बी-चौड़ी करते हैं किन्तु वास्तविकता बिलकुल विपरीत। स्थिति तो इतनी विकराल है कि भोजन वस्त्र की कौन कहे घर में औरतों के लिए लेटने को चारपाई तक नही है।

बाजि आयेन : (हारी मान लेना) : किसी व्यक्ति की हठधर्मिता अथवा निठल्ले पन के कारण उस व्यक्ति से सहयोग न करने की भावना।

बखिया उधेरत हैं : (बखिया उघड़ना) किसी व्यक्ति की कमजोरी का सार्वजनिक रूप से उजागर हो जाना ही बखिया उधरना कहा जाता है।

बगलै झांकत हैं : (निरूत्तर हो जाना) कभी कभी ऐसे अवसर आ जाते हैं जब आदमी निरूत्तर हो जाता है उसे कुछ सूझ नहीं पड़ता, ऐसी स्थिति ही बगलै झांकत हैं कही जाती है।

बज्जर फाटि परा : (बज्रपात होना) अचानक किसी व्यक्ति पर असहनीय विपत्ति आ जाय जिससे उसका भविष्य अंकधकारमय हो जाय तब यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बज्जर परै (अशुभ कथन) : आदमी जब किसी कार्य या व्यक्ति से अत्यधिक पीड़ित या व्यथित हो जाता है तब उसकी अंतरात्मा अनायास ही उसके प्रति श्राप देती है और मुह से निकल पड़ता है बज्जर परैं।

बट्टा लागि गा : (छीजन होना) किसी भी व्यक्ति अथवा वस्तु के प्रति संदेह का भाव पैदा हो जाने पर यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

बड़की बकतही आवत हैं : (वाचालता) यह अभिधापरक मुहावरा अधिक वाचाल लोगों के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है।

बत्तीसी निपोरत हैं : (अमर्यादित आचरण) यह खीस निपोरने का पर्यायवाची है। समाज में कुछ

ऐसे अकमर्ण्य लोग होते हैं जिनके बारे में यह कहा जाता है काम के न काज के, दुसमन अनाज के। ऐसे ही लोग अनवसर पर अपना स्वभाव प्रकट करते देखे जा सकते हैं।

भेंडा मोट भवानी दूबर (असामंजस्य की स्थिति) तालमेल का अभाव न होने पर जो विसंगति पूर्ण स्थिति होती है उस स्थिति का सूचक यह मुहावरा है।

भुजवा कै भरसारि : अव्यवस्था तथा अराजकता की स्थिति।

भूखा जिउ मांगै अघान उधार मांगै : विडम्बना एवं विसंगति पूर्ण स्थिति। एक ओर भूखा व्यक्ति बैठा है जो अपने प्राणों की रक्षा के लिए स्वल्प भोज्य पदार्थ की याचना कर रहा है वहीं दूसरी तरफ ऐसा व्यक्ति है उसका पेटा भरा पूर्णतया परितृप्त है फिर भी वह अपने भविष्य के लिए संग्रह करना चाहता है।

भेड़िया धसान : (जनाधिक्य) भीड़-भाड़ वाली जगह पर अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसे स्थलों पर केवल एक ही कानून, नियम तथा दिशा निर्देश होता है जिसे भीड़ चाहती है।

भूखा बंगाली भातै-भातः इच्छित वस्तु प्राप्ति की तीव्र अभिलाषा। बंगाली लोग चावल अधिक खाते हैं, चावल उनका मुख्य एवं प्रिय भोज्य पदार्थ है। भूख लगने पर उसकी यही इच्छा होती है कि उसे कितना भात (चावल) खाने को मिल जाये।

भरि लेहना पाइन : (किए हुए दुष्कर्मों का परिणाम) यदि दैव वश कोई अपने कुकृत्यों का परिणाम उसी कृत्य के अनुकूल पाता है तब समाज में उसे इसी उक्ति से सम्बोधित किया जाता है।

भुलनवा खर खाये हैं : (भूलने की आदत) भुलनवा खर का तात्पर्य है भूलने वाली घास। ऐसी कोई भी घास नहीं जिसके खाने पर भूलने की बीमारी होती है लेकिन समाज में यदि कोई व्यक्ति बार-बार भूलने की प्रवृत्ति दोहराता है तब उसे यही कहा जाता है।

भंडा फूटिगा : (भेद खुल जाना) भंडा शब्द बर्तन के संदर्भ में है। कोई ऐसा बर्तन रखा है जो ऊपर से ढका हो और बताया जाय कि इसमें बड़ी मूल्यवान वस्तु रखी है। किन्तु उस बर्तन में कुछ भी न हो। दैव्योग से वह बर्तन फूट जाय तब उसकी वास्तविकता का सबको ज्ञान हो जाता है। ठीक इसी प्रकार समाज के किसी बनावटी या छद्मवेशधारी व्यक्ति की असलियत जब समाज के समक्ष आ जाती है तब यही मुहावरा प्रयुक्त होता है। कलई खुलिगै मुहावरा भी लगभग इसी अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

भरी टठिया मा लात मारि दिहिन - उपलब्ध संसाधन का अनुपलब्ध हो जाना। यदि किसी के समक्ष कोई उपयुक्त अवसर आ जाय और वह जान-बूझ कर या क्रोधवश उसे पाने का अवसर खो दे तब यह उक्ति गतार्थ होती है।

भरी टठिया आगे से हटि गै - इस मुहावरे में भी उपलब्ध संसाधान का अनुपलब्ध हो जाने की बात है किन्तु यहां पर दुर्भाग्य वश या दैवीय प्रकोप से अनुपलब्धता की स्थिति होती है जान बूझकर कोई प्रयास नहीं किया जाता।

भरमना भरमत है - परेशान होना। किसी काम के सम्पन्न होने में आने वाली विविध बाधायें ही भरमना कहलाती है।

भरी गंगा मा : भरी गंगा भारतीय समाज में एक पवित्र भाव है इसके प्रति सबकी आस्था समान रूप से है।

भरी बाजार मा : बाजार एक ऐसा स्थान है जहां पर सर्व समाज के लोग उपस्थित रहते हैं। वह एक ऐसा सामाजिक स्थल है जहां पर एक जैसे सामाजिक नियम सब पर लागू होते हैं।

भात देव : अवधांचल में भात देना जातीय पंचायतों के संदर्भ में प्रचलित है। यदि कोई व्यक्ति

अपनी जातीय नियमों तथा कानूनों का उल्लंघन करता है तो उसे दंड स्वरूप भात देना पड़ता है। भात देने का तात्पर्य है अपनी जाति बिरादरी के समूह को आमंत्रित करे और उन्हें भात खिलाये।

भूजी भांग नहीं (निर्धनता और दरिद्रता की स्थिति) ऐसा घर या परिवार जिसमें खाने के लिए अनाज का एक दाना भी न हो।

भूसा मा लाठी खोसत है : अनावश्यक विवाद पैदा करना। समाज में ऐसे तमाम लोग हैं जो एक दूसरे को लड़ाने का काम करते रहते हैं। उनकी प्रवृत्ति ही ऐसी होती है और उन्हें एक दूसरे को लड़ाने में आनन्द आता है ऐसे लोगों के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

भूसा भरि दिहिन : (अनावश्यक रूप से परेशान करना) उपरोक्त मुहावरे में वर्णित लोगों की प्रकृति को यह मुहावरा प्रदर्शित करता है।

मांगा बैल उजेरिया रात दूसरे व्यक्ति की वस्तु का भरपूर उपयोग करना - भले ही उस व्यक्ति का नुकसान हो जाय। यह मुहावरा स्वार्थी प्रकृति के लोगों के लिए सर्वथा उपयुक्त है। शब्दार्थ यह है कि खेत की जुताई के लिए यदि किसी का बैल मांगने पर मिल गया हो और उजाली रात हो तब व्यक्ति को अपने खेत की जुताई के आगे उस बैल के स्वास्थ्य की परवाह नहीं होती।

मरन सेज पर : (मृत्यु शय्या) ऐसा लोक विश्वास है कि व्यक्ति मृत्यु शय्या पर झूठ नहीं बोलता।

मुँह देखि के चटूठा : पक्षपात पूर्ण व्यवहार को व्यक्त करने के लिए इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

मुह से फल झरत हैं : यह मुहावरा दो अर्थों में प्रयुक्त होता है सकारात्मक तथा नकारात्मक। सकारात्मक स्थिति तब होती है जब अभिधापरक कथन होता है। मुंह से फूल झरने की स्थिति तब होती है जब कोई मधुर, प्रिय एवं हितकारी वाणी का प्रयोग करता है। किन्तु इसके विपरीत जब कोई व्यक्ति कटु और कर्कश वचन बोलता है तब व्यंजना परक नकारात्मक स्थिति होती है।

मड़ये कै बिहान : पूर्ण रूपेण निश्चिन्तता। शादी विवाह या अन्य मांगलिक कार्यों के क्रियान्वयन और सम्पादन में महीनों लग जाते हैं। इसमें घर के समस्त प्राणी कार्य संपादित होने पर काफी थक चुके होते हैं। सब कुछ सम्पन्न होने के बाद वे निश्चित होकर पड़ जाते हैं यहां तक किसी को भोजन की भी चिन्ता नहीं रहती।

मुंह मा खपरी लागि : (अपमान जनक स्थिति उत्पन्न होना) समाज में कोई ऐसा दुष्कृत्य किसी व्यक्ति से हो जाय जो सर्वथा निन्दनीय हो। ऐसा कार्य चाहे जाने में हो या अनजाने लेकिन वह व्यक्ति मुंह दिखाने लायक नहीं रहता। ऐसे ही व्यक्ति के लिए मुंह मा खपरी लागि गै का प्रयोग किया जाता है।

मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त : जिस व्यक्ति का कार्य है वह शिथिल हो तथा जो उसकी सहायता कर रहा है वह अधिक सक्रिय हो ऐसी स्थिति को व्यक्त करने के लिए यह मुहावरा गतार्थ होता है।

मुह मा राम राम, पेट मा कसाई कै काम : (पाखण्डी, धूर्त और कपटी व्यक्ति) कपटपूर्ण व्यवहार करने वाले व्यक्तियों का चरित्र ऊपर से आदर्शपूर्ण लेकिन अंदर से बड़ा घिनौना होता है।

मिया बीबी राजी तौ का करै काजी : पारस्परिक सहमति की महत्ता। यदि दो व्यक्ति आपस में एक दूसरे के प्रति विश्वास करके सम्बन्ध स्थापित करते हैं तो सम्बन्ध बहुत ही प्रगाढ़ होता है कोई लाख चाहे, उन्हें तोड़ नहीं सकता।

माई मरै पूत का पूत मरैं धना का : मां तो पुत्र के लिए जान देने तक को तैयार रहती है किन्तु पुत्र मां की अपेक्षा अपनी धना (पत्नी) को अधिक महत्व देता है कभी-कभी तो वह मां की उपेक्षा और अनादर तक कर देता है। यह लोक व्यवहार सांसारिक माया की प्रबलता का द्योतक है।

मरी बछिया बभने का : भारतीय लोक जीवन में दान का बड़ा महत्व है। अन्नदान, वस्त्रदान, धनदान, स्वर्ण दान आदि इनमें गोदान का बड़ा महत्व है। मृत्यु का क्षण समीप जानकर हिन्दू मतावलम्बी गोदान करवाते हैं। जीवन में अन्य धार्मिक कृत्यों के अवसर पर तीर्थस्थलों आदि में भी गोदान किया जाता है। गोदान का तात्पर्य गाय का दान। गाय न मिलने पर उसका बच्चा बछिया दान की जाती है। बछिया जीवित हो तो तब तो ठीक किन्तु यदि मरने के बाद उसका दान दिया जाय तो वह मात्र औपचारिकता ही होगी ऐसा दान निरर्थक ही होगा।

मतौनी कोदई खाये हैं : आलस्य और प्रमाद की स्थिति। कोदौ एक खाद्य पदार्थ है कभी-कभी यह मतौना हो जाता है। मतौना कोदो का चावल खाने से एक प्रकार से शरीर आलसी प्रमादी और अकर्मण्य हो जाता है। जो लोग आलस और प्रमाद में निश्चेष्ट पड़े रहते हैं उनके लिए यह उक्ति गतार्थ होती है।

मातन कै छड़ी : धार्मिक विश्वास एवं धार्मिक आस्था की औपचारिकता पूरी करने को मातन कै छड़ी कहा जाता है।

मूड़ काटि के बार कै रच्छा : मूल की उपेक्षा गौण की महत्ता। यदि कोई सिर काटकर यह कहे कि मैने तो सिर ही काटा है बालों को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया या यह कहे कि मैं सिर तो जरूर काटूंगा लेकिन बालों की रक्षा करूंगा तो यह विसंगति पूर्ण स्थिति होगी।

महाबभने कै पसेरी : यह एक लोक विश्वास पर आधारित मुहावरा है। माहबाभन (महापात्र) मृतक संस्कार में दान स्वरूप भोजन, वस्त्र मिष्ठान आदि पाता है। वह प्रायः पसेरी लुढ़काया करता है। जिस दिन उसकी पसेरी शकुन के मुताबिक लुढ़कती है वह दिन उसके लिए लाभदायी होता है।

मन मोर महुवा चित्त भुसैले : (अस्थिर चित्त) अस्थिर चित्त वाला व्यक्ति कहीं का नहीं रहता। उहापोह की स्थिति में वह एक भी कार्य नहीं कर पाता है। वह चाहता तो बहुत कुछ कर लेना लेकिन इसे भी कर लूं, उसे भी कर लूं की स्थिति में कुछ भी नहीं कर पाता।

मारे न मरै बिराये मरै : व्यक्ति मारने पर तो बच जाता है लेकिन किसी के व्यंग्य बाणों से मर जाता है। तात्पर्य यह कि व्यंग्य बाण, आयुध बाणों से अधिक घातक होते हैं।

मांगैं गयी पूत मरिगा भतार : किसी वांछित वस्तु की कामना के चक्कर में अपने पास उपलब्ध वस्तु का नष्ट हो जाना।

माई न जानैं नइहर लरिकै पूछैं ननियाउर : (अर्थहीन कार्य) मां को मायका मालूम नहीं और उसके बच्चे ननिहाल का पता पूछते हैं।

मिया कै दाढ़ी चुम्मै भर का : कौतूहल और जिज्ञासा की होड़ में किसी अत्यल्प वस्तु का सफाया होना।

मोमफली के बोरा : आकार प्रकार से भारी किन्तु उसके अनुरूप भार में कमी।

मोछ के बारः सम्मानित वस्तु, व्यक्ति। शरीर में कई प्रकार के बाल होते हैं किन्तु मूछों का सर्वाधिक महत्व होता है। ये प्रतिष्ठा सूचक भी होते हैं।

माहिल के औतार : पक्का चुगुलखोर, लड़ाई, झगड़ा लगाने वाला। समाज में हर प्रकार के लोग होते हैं किन्तु चुगुल खोर लोग सामाजिक सद्भाव और एकता के दुश्मन होते है।

मीठौ होय भर कठौतौ होयः मूल्यवान वस्तु अल्पमात्र में भी उपयुक्त होती है किन्तु कुछ स्वार्थी और लालची लोग अपेक्षा करते हैं कि अच्छी चीज भी मिल जाय और भारी मात्र में भी मिले।

मरे-मरायेः अत्यधिक बैर होने की स्थिति में लोग अपने विपक्षी के घर नहीं जाते यहाँ तक कि कुछ लोग तो किसी के मर जाने के बाद भी विरोधी के घर नहीं जाते।

मुँह पर माटी परिगैः किसी वस्तु अथवा व्यक्ति का अस्तित्व समाप्त हो जाना। मुँह पर माटी का शब्दिक अर्थ है आदमी जब मर जाता है तब उसे कब्र में दफनाया जाता है। दफनायें जाने पर उसके मुह पर मिट्टी स्वाभाविक रूप से पड़ती है।

मुँह से फेचकुर निकरि आवाः श्रमाधिक्य। शारीरिक सामर्थ्य की क्षमता से अधिक कार्य करने से मुँह से फेचकुर निकलने की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

मंगू के घर खंग- मंगू का तात्पर्य होता है मांगने वाला तथा खंगू का अर्थ होता है खाली हाथ वालाा व्यक्ति। किसी व्यक्ति के पास सर्वथा अभाव है और वह ऐसे व्यक्ति के पास जाता है जो स्वयं मांग-मांग अपना काम चलाता हो ऐसी विषम स्थिति को दर्शाने के लिए यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

मैजिल मारि के आये हैंः मैजिल का तात्पर्य मंजिल से है। यह मुहावरा व्यंग्यार्थ में प्रयुक्त होता है। यदि कोई व्यक्ति निठल्ला बैठा हो काम-धाम बिल्कुल न करता हैं परिश्रम से जी चुराता है। उसे ताना मारने के रूप में यह उक्ति कही जाती है।

मौत फरफरानि है - मृत्यु का सिर पर मंडराना। कभी-कभी कुछ लोग जान बूझ कर संकट मोल लेते फिरते हैं। जानते हुए भी कि यह कार्य करने अथवा अमुक व्यक्ति से उलझने से जान का खतरा है फिर भी वे बार-बार वहाँ जाते हैं। इसी स्थिति को प्रकट करने के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

मिया कै जूती मिया कै सिर- किसी व्यक्ति की वस्तु को उसी के विरूद्ध हथियार बनाना।

मंतर मारि दिहिन- जादू टोना करना। मंत्र मारना वशीभूत करने के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। मंत्रमुग्ध करना। स्वंय में एक मुहावरा है। मंत्रे का मनोवैज्ञानिक प्रयोग वशीभूत करने के लिए किया जाता है। लोकजीवन में जब कोई व्यक्ति किसी के वशीभूत हो जाता है या उसका अंधानुकरण करने लगता है तब यही कहा जाता है कि 'जान परत है मंतर मारि दिहिन'।

मौजे मारत हैं- मौजमस्ती करना। बिना किसी उद्यम या उपक्रम के आराम से मौजमस्ती करना।

मजा मारैं गाजी मिया धक्का सहैं ढफाली- कर्म कोई करे और उसका लाभ दूसरा भोगे। कोई व्यक्ति कष्ट उठाकर अपने परिश्रम के बल पर कोई कार्य सम्पादित करता है लेकिन लाभ लेने का समय आये तो दूसरा व्यक्ति उस पर अधिकार कर ले। इस संदर्भ को रेखांकित करने के लिए बहुत से मुहावरे प्रचलित है। यथा बहि-बहि मरैं बैलवा बांधे खायं तुरंग, अंधरी पीसैं कुकुरी खायं खरी चलौना चांदा खायं, हर जोतै का बंड़ऊ जायं आदि।

मति मारि गै-(बुद्धि भ्रम) कभी-कभी बहुत बुद्धिमान व्यक्ति भी छोटी-छोटी बातों में आकर फंस जाता है। उसकी मति भ्रमित हो जाती है इसी स्थिति को दर्शाता है यह मुहावरा।

मति कै ठेकाना नहीं- अस्थिर बुद्धि। अस्थिर बुद्धि वाले कब क्या कर बैठे कुछ ठिकाना नहीं।

मतलब गांठत हैं- स्वार्थपूर्ति करना।

मन कच्चा है- अपरिपक्व बुद्धि वाला व्यक्ति। जिसका मन कच्चा होता है वह किसी के भरोसे नही होता कब और किधर को वह मुड़ जाय कुछ कहा नहीं जा सकता ।

मन कै मन मा रहिगै- कोरी कल्पना और योजना बनाने वाला। किसी भी कार्य को ठोस रूप देने के लिए उसी के अनुरूप श्रम और संसाधन की आवश्यकता होती है। यदि आवश्यक श्रम और प्रयास नही किया गया तो वह केवल कल्पना की उड़ान भर रह जायेगा।

मन के लड्डू खात हैं- यह मुहावरा उर्दू के खयाली पुलाव पकावत हैं का समानार्थी है। बड़ी-बड़ी योजनायें बनाना किन्तु उस पर अमल करने की इच्छाशक्ति का अभाव होना। अकर्मण्य लोग

अपने मन को बहलाने के लिए प्रायः मन के लड्डू खाते फिरते हैं।

मन खट्टा होंइ गवा- मन खट्टा हो जाना। यह मुहावरा चित्त फाटि गवा का समानार्थी है। किसी व्यक्ति या सम्बन्ध के प्रति जब खटास पैदा हो जाती है तब यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

मन मरि गवा - मन का मर जाना। अपेक्षा और आशा के अनुरूप यदि सफलता नहीं मिलती तब मन मरने की स्थिति आ जाती है।

मन छोट होइ गवा- मन का छोटा हो जाना। मनोबल का कमजोर होना ही मन छोट होइ गवा कहा जाता है। मन मरि गवा की स्थिति में मन की निष्क्रियता का भाव होता है जब कि मन छोट होइ गवा की स्थिति में मनोबल कमजोर हो जाता है।

मन बढ़ा है- अनावश्यक रूप से मनोबल का ऊंचा होना। मनोबल का ऊंचा होना एक अच्छी बात है किन्तु जब नकारात्मक सोच के चलते मनोबल बढ़े तब यह स्थिति घातक होती है, किसी कमजारे व्यक्ति को पीड़ित करने पर, कोई अनाचार करने पर किसी को अनावश्यक रूप से सताने पर यदि प्रतिवाद न हो और ऐसी स्थिति में किसी का मनोबल बढ़ता है तो यह स्थिति घातक होती है। इसी स्थिति को यह मुहावरा प्रकट करता हैं।

मति नहीं मिलत- किसी के मन की इच्छा को न जान पाना।हर व्यक्ति अपने मन का मालिक होता है अपने मन को वश में रखना भी व्यक्ति का कार्य है। किसी दूसरे व्यक्ति को अपने मन की बात बताना भी आम बात है किन्तु कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनके मन की बात जान पाना अत्यंत दुरूह कार्य होता है ऐसे ही लोगों को यह मुहावरा सम्बोधित है।

मन राखि लिहिन- बात मान लेना। किसी व्यक्ति की प्रत्याशा के अनुरूप यदि व्यक्ति कार्य कर देता है तब वह सहज ही कह उठता है अमुक व्यक्ति बहुत ही भला और अच्छा आदमी है हमार मन राखि लिहिन।

मन मानी घर जानी- स्वच्छन्दता पूर्वक आचरण करना। कुछ सामाजिक नियम, शिष्टाचार और मर्यादायें होती है जिनका पालन करना हर सामाजिक व्यक्ति का दायित्व होता है किन्तु समाज में कुछ ऐसे लोग भी होते है जो स्वेच्छाचारी होते है उनके लिए ही मनमानी घर जानी मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

मरे का मारत हैं- अति निन्दित कार्य करनाः यदि कोई मर गया हो और उसे मारा जाय तो यही कहा जायेगा कि मरे का मारत हैं। व्यावहारिक रूप में इस मुहावरे का प्रयोग उस परिस्थिति में होता है जब कोई व्यक्ति असहाय, निराश्रित ओर सर्वथा पराजित व्यक्ति के साथ अत्याचार करता है।

महाभर्थ मचाये हैं- संघर्ष और विवाद का वातावरण बनाना। महाभर्थ शब्द महाभारत के संदर्भ में है। जब कोई व्यक्ति सदा लड़ाई-झगड़े पर उतारू रहता है, वाद-विवाद में गहरी रूचि लेता है तथा व्यर्थ का झगड़ा झंझट पैदा करता है उसके लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

माथापच्ची करत हैं- दिमागी कसरत। यह मुहावरा सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही संदर्भो में प्रयुक्त होता है सकारात्मक स्थिति में मानसिक ऊर्जा सदकार्य में खर्च होती जबकि नकारात्मक स्थिति मे मानसिक ऊर्जा का अपव्यय होता है।

मगजमारी- अनावश्यक मानसिक श्रम। बहुधा ऐसे अवसर आते है जब किसी व्यक्ति की इच्छा न होने पर भी कोई परिणाम नहीं निकलता तब यही कहा जाता बिना मतलब मगजमारी न करौ। मगज को मारने का मतलब ही मगजमारी है।

माई के लाल- (माँ का लाडला। यह मुहावरा या उक्ति किसी व्यक्ति के पुरूषार्थ को चुनौती देने

के संदर्भ में प्रयुक्त होता है।

माथा गरम होइ गवा- आक्रोशित होना। जब अकारण ही किसी व्यक्ति पर कोई दोषारोपण अथवा अवांछित तथ्य थोपा जाता है तब माथा गरम होने की स्थिति आ जाती है।

महनामंथ मची है - (गहमा गहमी) किसी परिवार या समुदाय अथवा समाज में किसी गम्भीर समस्या के चिंतन अथवा निराकरण को व्यक्त करने के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

मल्हरा गावत हैं- (आनन्दातिरेक) मल्हार एक राग है जो वर्षा ऋतु में गाया जाता है। वर्षा ऋतु के सुहावने मौसम में मल्हार का गायन परमानन्द का परिचायक है। जब कोई व्यक्ति अतिप्रशन्न अवस्था में रहता है तब स्वाभाविक रूप से वह गुनगुनाने लगता है। मौज मस्ती के आलम में वह आनन्द विभोर हो उठता है। यही स्थिति दर्शाने के लिए इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है।

माया मिली न राम- द्विविधाजनक स्थिति का परिणाम। व्यक्ति को एकाग्रचिन्तन होकर एक समय में एक ही काम पर ध्यान देना चाहिए। यदि मन कई तरफ बंट जायेगा तो किसी भी कार्य में आशातीत सफलता नहीं मिलेगी। द्विविधात्मक स्थिति में एक भी परिणाम प्रतिकूल नहीं होगा।

माया म परान परा- (लोभ और मोह की पराकाष्ठा)मृत्यु जीवन का अंतिम सत्य है। यदि कोई व्यक्ति मृत्यु शय्या पर पड़ा हो और यह भी जानता हो कि उसके जीवन का अंतिम समय है फिर भी घर परिवार धन सम्पत्ति और माया मोह के प्रति आसक्ति हो तो यही कहा जाता है कि इनकी मृत्यु इसलिए नहीं हो रही क्योंकि इनके प्राण तो माया में फंसे पड़े है।

मुँह चोरावत हैं- शर्मिन्दगी। कोई ऐसा दुष्कृत्य हो जाय जो सामाजिक मर्यादा तथा मान सम्मान के विपरीत हो तब व्यक्ति किसी के सामने जाने का साहस नहीं करता वह अपना मुँह दिखाने में शर्म ३महसूस करता है।

मारे-मारे फिरत हैं- (निष्प्रयोज्य एवं उपेक्षित व्यक्ति) समाज में ऐसे लोग जो अकमर्ण्य होते है तथा उनके जीवन का कोई उद्देश्य नहीं होता वे समाज में सर्वथा उपेक्षित होते हैं और मारे-मारे फिरते रहते हैं।

मिजाजै नहीं मिलत- अस्थिर स्वभाव वाला व्यक्ति जिसका चित्त स्थिर नहीं होता और उसकी मनः स्थिति का भी अंदाजा नहीं लगाया जा सकता ।

माटी मा मिलिगें- अस्तित्व हीन हो जाना, धूल धूसरित हो जाना। किसी व्यक्ति की धन सम्पत्ति, मान-सम्मान, पद प्रतिष्ठा यदि नष्ट हो जाय तो उस व्यक्ति के संदर्भ में यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

मिली भगत है - दो लोगों का आपसी षडयंत्र। यदि दों समान विचार धारा के लोग किसी एक व्यक्ति के प्रति आपसी तालमेल से कोई षड़यंत्र रचते है तो उनकी मिली भगत कहा जाता है।

मीन-मीख निकारत हैं- अनावश्यक टीका टिप्पणी। समाज में कुछ लोग ऐसे भी होते है जो अनावश्यक रूप से प्रत्येक कार्य में कुछ न कुछ कमियाँ निकालते हैं वे अनावश्यक रूप से किसी अच्छे कार्य को बाधित करने का भी प्रयास करते है।

मुँह उँजेर होइ गवा : किसी कलंक से मुक्ति पाना, शुभ सूचना, शुभ कार्य की सम्पन्नता। इस मुहावरे का लोक जीवन में विशेष संदर्भ यह है कि यदि किसी निर्दोष व्यक्ति पर समाज या व्यक्ति द्वारा दोषारोपण किया गया है और समय पर सच्चाई उजागर हो जाय तो दोषरोपित व्यक्ति के संदर्भ में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है

मुह खुलिगा- धैर्यपात होना। व्यक्ति के सहन करने की एक सीमा होती है यदि सीमा का अतिक्रमण होने लगता है तब उसका धैर्य जवाब दे देता है और वह मुखरित हो उठता है।

मुहामुही होत है- कानाफूसी होना। किसी गोपनीय बात अथवा किसी अप्रत्याशित घटना के संदर्भ में प्रायः खुलकर बात नहीं होती लोग चोरी-छिपे ही बात करते हैं। चोरी -छिपे बात करना ही मुहामुही कहा जाता है।

मुह मीठ करौ- सुखद एवं शुभकर सूचना। किसी भी सुखद एवं शुभ सूचना पर लोग प्रशन्नता की अभिव्यक्ति कि लिए अपने इष्ट मित्रें और पड़ोसियों को मिष्ठान खिलाते है।

मुह झरसत हैं- पश्चाताप करना। अनावश्यक रूप से किसी पर दोषारोपण करने या किसी का अपकार करने की नीयत से असफल व्यक्ति की मनोदशा को यह मुहावरा दर्शाता है।

मुह ताकै लाग- बिस्मित होना। किसी व्यक्ति से अपनी उम्मीद के विपरीत उत्तर पाने पर यह स्थिति होती है।

मुहदेखी करत हैं- पक्षपात पूर्ण व्यवहार एवं आचरण। स्वार्थ, भय अथवा अपने स्वजनों के प्रति उदार होना भले ही वह गलत कार्य कर रहा हो उसका पक्ष लेना, मुहदेखी करना है। इस मुहावरे का साम्य ' आंधर परसै घरै घरान' है।

मुहे पर कहि दिहिन- निर्भीकता। यह एक मानवीय सद्गुण हैं कुछ लोग समाज में ऐसे होते हैं जिन्हें सच बोलने से कोई रोक नहीं सकता।

मुहे मा ताला लागिगा- प्रतिबन्ध लग जाना।

मुहौ पेटौ चलत है- किसी भयंकर बीमारी का होना। मुह पेट चलने का शाब्दिक तात्पर्य है दस्त और उल्टी। यह कालरा की सूचक है।

मुँह फूलि गवा- (अप्रशन्न होना नाराज होना) किसी व्यक्ति से यदि अपेक्षा पूरी नहीं हो तो तब प्रायः लोग नाराज हो जाते हैं और उनका मुह फूल जाता है। कभी-कभी अप्रिय या कटु वाणी के कारण भी मुंह फूलने की स्थिति आ जाती है।

मुँह मा खून लागि गवा- क्रूर व्यवहार का आदी होना।

मुँह मा पानी आय गवा- लालायित होना। किसी दुर्लभ, उपयुक्त वस्तु को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा। लोक व्यवहार में वैसे तो किसी सुस्वाद एवं स्वादिष्ट पदार्थ को देखने पर ही मुंह में पानी आता है किन्तु व्यापक संदर्भों में हर दुर्लभ वस्तु को देखने पर उसे पाने की इच्छा करना मुह में पानी आने को सूचित करता है।

मुह लाल होइ गवा- क्रोधवेग के कारण विशिष्ट मुख मुद्रा। मुह लाल होना आक्रोश की तीव्रता का सूचक है।

मूठी मा है- वशीभूत होना। जब कोई व्यक्ति किसी के वशीभूत होकर उसके आदेश का अक्षरशः पालन करता है तब यही कहा जाता है कि अमुक व्यक्ति उसकी मूठी में है।

मिया कै दौड़ महजिद तक- संकीर्ण मानसिकता एवं विचार वाला व्यक्ति। समाज मे संकीर्ण मानसिकता वाले व्यक्तियों की सोच भी अधिक सीमित होती है। वे बात-बात में एक ही प्रसंग का उल्लेख करते है। कूप-मंडूक (कुएं के मेढक) मुहावरा भी इसी संदर्भ को रेखांकित करता है।

मोछै उखारि लेब- प्रतिष्ठा मिटाने का संकल्प। मूँछे मान-सम्मान की प्रतीक होती है। मूछ उखाड़ने का तात्पर्य है मान-प्रतिष्ठा को धूल धूसरित कर देना मिटा देना।

मोछन पर ताव- (गर्वोन्मत्त व्यक्ति) मूंछों पर ताव देने का तात्पर्य है किसी के समक्ष अपने पौरूष का प्रदर्शन करना। अहंकार का प्रदर्शन भी इसका सूचक है।

मोछ मुड़वाय देब- चुनौती पूर्ण कथन। कोई व्यक्ति जब किसी कार्य को सम्पादित करने का वचन लेता है उस समय यदि कोई अन्य व्यक्ति शंका पैदा करता है तब वह कहता है कि यदि मैं यह

काम नहीं कर पाऊँगा तो मूछें मुड़वा दूंगा।

मूर मिलै बियाज से भरि पावा- (आत्म संतोष की स्थिति) ब्याज पर दूसरों को धन देकर कमाने वाला व्यक्ति कभी-कभी ऐसे लोगों के चक्कर में फंस जाता है जो ब्याज तो दूर उसका मूलधन भी मिलने में बाधा पड़ती है ऐसे में वह यही कहता है मूर मिलै बियाज से भरि पावा। यह उक्ति अन्य विविध संदर्भों में भी प्रयुक्त होती है।

मेल न खाये- तालमेल न बैठना। विपरीत मानसिकता एवं प्रकृति के लोगों का आपसी तालमेल बैठ पाना असंभव होता है।

मुरचा रोपे हैं- विवाद के लिए तत्पर। झगड़ालू प्रवृत्ति के लोग अपनी जिद और हठधार्मिता के चलते अकारण ही वाद विवाद को बढ़ावा देते रहते हैं। झगड़ा करने पर आमादा रहते है ऐसे ही लोगों के संदर्भ मे यह मुहावरा प्रयोग किया जाता है।

मौजे करत है- विलासिता पूर्ण जीवन। कुछ लोग भाग्य के चलते बिना कोई विशेष परिश्रम या प्रयत्न किए भी मौज मारते हैं।

मौत के दिन पूरा करत हैं- कष्टप्रद बीमारी जो मृत्यु के साथ ही जाती है। भारतीय दर्शन में यह मान्यता है कि हर आदमी की सांसे निश्चित है जितने दिन में वे सासें समाप्त होगी उतने ही दिन व्यक्ति जीवन जियेगा न उसके पहले न बाद में कभी-कभी कोई प्राणी शारीरिक रूप से इतना रूग्ण और असक्त हो जाता है कि लगता है कि वह अगले ही क्षण मर जायेगा लेकिन वह मृत्यु शय्या पर पड़ा-पड़ा तड़प रहा होता है मृत्यु की इच्छा होने पर भी उसकी मृत्यु नहीं होती ऐसी स्थिति में यही कहा जाता है कि फला व्यक्ति मौत के दिन पूरा कर रहा है।

मौत के घाट उतरिगें- मृत्यु को प्राप्त होना।

म्याऊँ के ठौर मा को जाय- चुनौती पूर्ण एवं जोखिम भरा कार्य। यह मुहावरा बिल्ली के गलें में कौन घंटी बांधे का द्योतक है। जोखिम भरा कार्य वह भी व्यक्तिगत अपना न होकर सामूहिक हो तो उसमें बिरले लोग ही अपना हाथ डालेंगे।

मन कै मन मा रहिगै- योजनाओं का क्रियान्वयन न हो पाना। कभी-कभी लोग बहुत सारी योजनायें बनाते है इन योजनाओं के सहारे अपने स्वर्णिम भविष्य की कल्पना करते है किन्तु सामर्थ्य विहीन अथवा दृढ़ निश्चयी न होने के कारण उनकी योजनायें मन में रह जाती है।

मरगी परिगै- अवसाद, हताशा और शोकपूर्ण वातावरण । किसी की मृत्यु होने को मरगी कहते हैं। मरगी परिगै अभिधात्मक रूप में यह दर्शाता है कि किसी की मृत्यु होने के कारण उस घर मुहल्ले या बस्ती में शोकाकुल वातावरण हो जाता है। इसके विपरीत किसी घोर विपत्ति के आने, गंभीर हानि हो जाने या असफलता की स्थिति में जो हताशा एवं निराश का वातावरण होता है उसे ही मरगी परिगै कहा जाता है।

यहै मुह पुदीना के चटनी- वड़ बोले व्यक्ति पर व्यंग्य किए जाने के संदर्भ में यह मुहावरा प्रयुक्त किया जाता। जब कोई व्यक्ति अपनी क्षमता, योग्यता और सामर्थ्य से ऊपर उठकर लम्बी लम्बी बातें करता है तब उसके लिए यही उक्ति प्रयुक्त होती है।

या अल्ला पाड़े मा पाड़े-अल्पज्ञानता के कारण संकट की स्थिति। यह मुहावरा अन्तर्कथात्मक है। घटना इस प्रकार है किसी व्रहम भोज में सभी व्राहमण भोजन कर रहे थे। उसी पंक्ति में एक मुसलमान भी बैठ गया। भोजन के दौरान ही सबसे जाति उपजाति पूछी जाने लगी जब मुसलिम का नम्बर आया तो उसने कहा कि वह जाति से पांड़े (पाण्डेय) है उससे अगला प्रश्न किया गया कौन पांड़े हो? इस प्रश्न पर वह अचकचा गया और उसके मुह से निकल गया या अल्लाह पांडे

में भी पांड़े अर्थात क्या पाण्डेय ब्राहमणों की भी कई कोटियां होती है।

यही जवानी मांझा ढील- प्रमादी तथा अकमर्ण्य युवक युवतियों के संदर्भ में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है। जब नव जवान किसी काम को करने में हीला हवाली या असमर्थता जताते हैं तब उन्हें यही कहा जाता है 'यही जवानी मांझा ढील'।

यहिं से चली तौ वहिं पै अटकी- बाधाओं पर बाधाओं का आना। यह मुहावरा सरग से गिरा खजूर म अटका का समानार्थी है। कोई कार्य सम्पादित हो रहा हो और कोई बाधा जा जाय, बाधा हट जाय लेकिन फिर नयी मुसीबत आ जाय तब यह उक्ति प्रयुक्त होती है।

राजा का पता नही बन मानुस जंगल बांटे बैठ- शासक और शासित की संवाद हीनता। किसी वस्तु सम्पत्ति अथवा स्थान के मालिक की अनुमति के बिना ही नौकरों चाकरों अथवा कार्यकर्ताओं द्वारा आपस मे बंटवारा कर लेना। मुख्य वस्तु व्यक्ति अथवा तत्व की उपेक्षा तथा गौण की प्रधानता होने की स्थिति को यह मुहावरा दर्शाता है।

राड़े रोवैं सेर सेर अहिबाती रोवै दस-दस सेर- अभाव ग्रस्त लोगों की व्यथा तो जायज होती है किन्तु जो लोग सर्वथा समृद्ध और सम्पन्न तथा सर्वसुविधा से युक्त है वे व्यर्थ ही आलाप करते रहते है। उनका आलाप हास्यास्पद ही कहा जायेगा।

राह बतावै तौ आगे चलै- परमार्थ करने मे आने वाली कठिनाई। प्रायः लोक जीवन में यह देखा गया है कि जब कोई किसी की सहायता करने की इच्छा करता है तब पीड़ित व्यक्ति उसी पर आश्रित हो जाता है और वह यही चाहता है उसकी सहायता करने वाला उसकी सारी समस्याओं का निदान भी कर दे।

रकत के आंस। आंसुओं का गिरना एक स्वाभाविक प्रकिया है। सुख और दुख दोनों ही स्थितियों में आंसू गिरते है। आंसू गिरने की एक और स्थिति है वह है वियोग की अवस्था। लेकिन तीनों ही स्थिति में आंसुओं का गिरना एक स्वाभाविक प्रक्रिया ही होती है। इसके विपरीत जब व्यक्ति पर बज्रपात हो जाय या किसी अपने कुटुम्बी के कारण रोना पड़े तब रक्त के आंस बहाने की स्थिति होती है।

रंग मा भंग- शुभ कार्य में अप्रत्याशित बाधा। किसी मांगलिक उत्सव अथवा किसी अन्य उत्सव में अकस्मात कोई घटना घटित हो जाय। जिससे उल्लास पूर्ण वातावरण मातम में बदल जाय। ऐसी स्थिति को रंग में भंग होना कहते हैं।

रसरी बरिगै ऐंठन न गै- अस्तित्व समाप्त होने के बाद भी झूटी शान और अकड़ दिखाना। जमीदारों की जमीदारी समाप्त हुए पाँच दशक से ऊपर व्यतीत हो गया कुछ लोग तो कंगाल हो गये है यहाँ तक कि रोटी, कपड़ा,मकान जैसी मूलभूत आवश्यकता को तरसते है लेकिन उनकी मानसिकता अभी नहीं बदली अपने को जमीदार अब भी समझने का भ्रम पाले है।

राजा दैव के वाद- राजा ईश्वर के तुल्य होता है। राजा के आदेश की अवहेलना नहीं की जा सकती तथा ईश्वर के आदेश की भी अवहेलना नहीं की जा सकती। ईश्वर के यहाँ से जिसका बुलावा (मृत्यु) आ गया उसे जाना ही पड़ेगा इसी प्रकार शासक का शासनादेश के सभी नागरिकों को मानना ही पड़ेगा इसलिए किसी से कोई वायदा करते समय ये दो बातें याद रखनी चाहिए।

रैंचा रोपत हैं- झगड़े को रोपित करना। ऐसे अर्थहीन विवाद को जन्म देना जो दीर्घ कालीन हो जिसके भविष्य में सुधारने के आसार न हो।

राजा होइहौ खइहौ काव - राजा एक विलक्षण व्यक्ति होता है। वह सामान्य जन तथा प्रजा से सर्वथा भिन्न होता है, उसका खान-पान रहन-सहन, वेश-भूषा आदि सब कुछ दिव्य और अद्वितीय

होते हैं। इसी भाषादशा का सूचक है यह मुहावरा।

रक्ता रैन मचिगै- रक्तपात होना। किसी दुर्घटनावश या मारपीट के कारण खून की धारा का बहना। शरीर से अत्यधिक रक्त का बह जाना।

रंग जमाये हैं- प्रभुत्व स्थापित होना। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व अथवा उसकी सूझ-बूझ से धाक जमी हो ऐसी स्थिति को दर्शाता है यह मुहावरा।

रंग फीक परिगा- प्रभावहीन होना। किसी प्रभावशाली व्यक्ति के कृतित्व एवं व्यक्तित्व का ह्रास होना।

रंग वाजी करत है- अनावश्यक प्रदर्शन करना, व्यर्थ का दिखावा। दूसरों को प्रभावित करने के लिए हास्यास्पद दिखावें को ही रंगबाजी कहा जाता है।

रंगे सियार- छद्म वेशधारी, झूठा प्रदर्शन करने वाला। रंगे सियार मुहावरा एक अन्तर्कथात्मक मुहावरा है जो एक सियार द्वारा अपना शरीर रंगकर शेर बनने की घटना पर आधारित है।

रंगे हाथ पकरिगै- भेद का सार्वजनीकरण। कोई व्यक्ति जब लुक-छिपकर समाज को बेवकूफ बनाता हो उसका भेद खुल जाने पर यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

रग-रग मा बेईमानी- पक्का बेईमान। बेईमान तो बहुत होते है लेकिन कुछ अवसरों पर उनमें ईमानदारी की झलक देखने को मिलती है लेकिन जो पक्के बेईमान होते हैं उनकी नस-नस में बेईमानी बसी होती है।

रमता जोगी- यायावर प्रवृत्ति वाला। यती संन्यासी और योगी किसी स्थल को अपना स्थायी निवास नहीं बनाते। वसुधैव कुटुम्बकम् की अवधारणा वाले ये लोग यायावरी प्रवृत्ति के होते है तथा यत्र-तत्र सर्वत्र देशाटन और तीर्थाटन करते रहते है। जहाँ पर रात हुई रूक गये प्रातः फिर चल पड़े। ऐसी ही प्रवृत्ति वालों के लिये यह उक्ति कही जाती है।

रसातल मा धंसिगे- घोर पराभव होना, अर्श से फर्श पर आ जाना। जब कोई सफल व्यक्ति, अपने कार्य क्षेत्र में सफलता के सर्वोच्य शिखर पर हो और अकस्मात किसी कारण वश पूर्णतया विफल हो जाय तब इस स्थिति को 'धरातल मा धंसिगे' से व्यक्त किया जायेगा।

राई नोन उतारत हैं- टोना टोटका झाड़ना। ग्रामीण अंचलों मे एक लोक विश्वास है कि जब बच्चे को टोना लग जाय तब उसके सिर पर से राई (सरसों) तथा नमक की डली उतारकर आग में डाल देने से बच्चे का टोना समाप्त हो जाता है। बच्चे की बीमारी में भी यह प्रयोग किया जाता है।

राई कै परबत कइ दिहिन- तिल का ताड़ बनाना। किसी बात या वस्तु को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बताना। समाज में कुछ लोग वाचाल प्रवृत्ति के होते हैं वे हर बात को अतिशयोक्ति पूर्ण ढंग से व्यक्त करते हैं। ऐसे ही लोग छोटी सी राई को पहाड़ का रूप दे देते हैं।

रस्ता देखौ- किसी व्यक्ति को हटने के लिए आदेश देना।व्यक्ति जब किसी की अनावश्यक बकवास से आजिज आ जाता है तब उसे अपने पास से खदेड़ने के लिए जिस मुहावरे का प्रयोग करता है वह 'अपन रस्ता देखौ' के रूप में प्रयुक्त होता है।

रूपयन म काई लागि गै- धन का सदुपयोग न होने के कारण संचित होना। रूपयन माा काई का तात्पर्य चांदी के रूपयों के संदर्भ में था। जब चांदी के रूपये और सिक्के चलते थे और बैंक सर्वसुलभ नहीं थे तब लोग अपना धन जमीन अथवा घर की दीवालों में गाड़कर रखते थे। यह कार्य सुरक्षा की दृष्टि से होता है। जब पैसों की जरूरत पड़ती भी तब उन्हें खोद लिया जाता था। कभी-कभी ऐसी स्थिति भी आती थी कि आदमी को जरूरत न पड़ने के कारण रूपये गड़े ही रहते थे उनमें कोई लग जाती थी। आज भले ही चांदी के रूपये प्रचलन में नहीं है लेकिन यह मुहावरा

अपने विशिष्ट संदर्भो के चलते लोकमानस में आज भी प्रचलित है।
रूपया पानी मा परिगा- धन का बिना किसी उद्देश्य के नष्ट होना। यदि कोई व्यक्ति किसी कार्य में पैसा लगाये और उसमें उसे हानि सहनी पड़े या परिणाम शून्य आये तब यही कहा जाता है कि रूपया पानी मां चला गवा अर्थात व्यर्थ ही चला गया किसी काम नहीं आया।
रोंवा खड़े होइगें- रोमांचित होना। भय मिश्रित कौतूहल। आदमी अप्रत्याशित रूप से किसी ऐसी घटना या व्यक्ति के आचरण से जब उद्वेलित होता है जिसकी उसे अपेक्षा नहीं थी तब यह उक्ति गतार्थ होती है।
रोजी पै लात मारत हैं-रोजगार व्यापार अथवा नौकरी को हानि पहुंचाना ही रोजी पर लात मारना है।
रोउना पिटना परिगा- मृत्यु का होना। प्रायः जब किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तब लोग दहाड़ मार-मार रोने लगते है इसी स्थिति को यह मुहावरा व्यंजित करता है।
रूआब गांठत हैं-रोब जमाना अपना प्रभुत्व जमाना। आदमी एकाधिकार की प्रवृत्ति के चलते कभी-कभी सबके ऊपर अपने को दिखाने की चेष्टा करता है इसी को रूआब गांठना कहते है।
लरिका कै लरिका गा उठइया डांड़- हानि पर हानि का होना।
लीला बैराग करत है- दिखावा करना। अपने परिचितों के बीच अनावश्यक रूप से व्यर्थ का ढकोसला करने वाले को इस उक्ति से नवाजा जाता है।
लुगरा कै फलान- उपेक्षित वस्तु या व्यक्ति।
लोय लागि गै- सुअवसर मिल जाना। मन चाही मुराद पूरी होना। किसी व्यक्ति को अपने मनमुताबिक अवसर या उपलब्धि मिलने को लोय लागि गै कहा जाता है।
लोथ डारि देब- (जान से मार देने को लोथ डाल देना कहा जाता है। अवधी में लोथ शब्द का तात्पर्य हे लाश।
लखनउवा सिट्टचार- लखनबी संस्कृति ।लखनऊ की तहजीब पूरे विश्व में विख्यात है इसे नवाबों का शहर भी कहा जाता है। शिष्टाचार के मामले में आज भी लखनऊ की अपनी विशेष पहचान है। यही शिष्टाचार जब औपचारिकता में बदल जाता है तब यह मुहावरा प्रयुक्त होता है। केवल फर्ज अदायगी के तौर पर बात और व्यवहार करने को लखनउवा शिष्टाचार कहा जाता है।
लोटिया उठिगै- जातीय और सामाजिक बहिष्कार। अवधांचल की जातीय पंचायतों की अपनी अलग ही पहचान है। यह बात अलग है कि अब इनका अस्तित्व धीरे-धीरे समाप्त होता जा रहा है। छोटी जातियों में अब भी उसकी अनिवार्यता और महत्ता है। जब कोई व्यक्ति सामाजिक मर्यादा के विपरीत अथवा जातीय नियमों का उल्लंघन करता है तब उसका जातीय बहिष्कार कर दिया जाता है प्रायश्चित और दण्ड पूरा करने पर ही उसे दोषमुक्त किया जाता है।
लिबरी पहिती चिपरा भात- फूहड़ व्यक्ति द्वारा लापरवाही पूर्वक बनाये गये भोज्य पदार्थ के संदर्भ में यह उक्ति गतार्थ होती है। पहिती का तात्पर्य दाल से है और भात चावल को कहा जाता है।
लकड़ियां डोलाव करत हैं- इधर का उधर, उधर का इधर करने की प्रवृत्ति। समाज में कुछ लोग खुराफाती तथा शरारती प्रतृत्ति के होते है। वे एक दूसरे को उलझाने के लिए कुछ न कुछ खुराफात करते रहते हैं। इसी संदर्भ को यह मुहावरा व्यंजित करता है।
लाखिया बनत हैं- लखपति बनते हैं। कुछ लोग चार लोगो के बीच अपनी बात को ऊंचा करने अथवा अपने को सर्वश्रेष्ठ साबित करने के लिए झूंठ मूठ ही लाखिया बनते है।
लासा लगाये बैठ हैं- अपनी चाल में फंसाने का उपक्रम। पक्षियों को पकड़ने के लिए शिकारी

द्वारा लासा का प्रयोग किया जाता है। लासा गोंद की भांति वह चिपचिपा पदार्थ होता है जो चिड़ियो के पंजें में लगाने पर उससे चिपक जाता है। एक विशेष प्रकार के कांपे में इसे लगाकर दाना डाला जाता है जब चिड़िया चुनने आती है और कांपे पर बैठती है तब उसका पैर कांपे से चिपक जाता है और वह उड़ नहीं पाती। शिकारी उसे पकड़ लेते हैं। यह मुहावरा सामाजिक जीवन में भी घटित होता है। कुछ लोग सीधे-सादे लोगों को फंसाते रहते है। इस मुहावरे का समानार्थी कांपा लगाये बैठ हैं भी है।

लबर धइ धई करत है- बेईमानी करना।

लुबुर लुबुर जिउ करत है-लालच की प्रवृत्ति।

लग्गा से पानी पियावत हैं- आवश्यकता के अनुरूप प्रयास न करना। यह मुहावरा बीरबल की खिचड़ी का समानार्थी है। किसी की सहायता करते समय यदि व्यक्ति मात्र औपचारिकता निभाने के लिए काम करे तथा पीड़ित व्यक्ति को कोई लाभ या परिणाम न मिल रहा हो तब यही कहा जाता है-लग्गा से पानी पियावत है।

लोप होइगा- लुप्त हो जाना। अनर्थ हो जाना। यह मुहावरा लोक जीवन में दो अर्थों मे प्रयुक्त होता है किसी वस्तु या व्यक्ति के गायब हो जाने तथा कोई अनिष्ट या अप्रत्याशित घटना घटित हो जाने पर।

लंगोट के कच्चे- व्यभिचारी पुरूष। ऐसा व्यक्ति जो परस्त्री गमन का अवसर मिलने पर चूकता न हो।

लंगोटिया यार- बचपन का साथी। आज लंगोट का प्रचलन बिल्कुल ही बंद हो गया है। आने वाले समय में लोग लंगोट का सिर्फ नाम सुनेगे। गांव गेरॉंव में आज भी लंगोट को लेकर तमाम मुहावरे प्रचलित है-लंगोटिया यार, लंगोट के कच्चे, लंगोट के पक्के लंगोटिया बंद, लंगोट बंद आदि।

लम्बी चौड़ी हाँकत है -बढ़ चढ़ कर बोलना। वाचालता। अपनी सामर्थ्य, क्षमता और सम्पत्ति को कई गुना-बढ़-चढ़कार बताना। झूठी शेखी बधारने का समानार्थी है यह मुहावरा।

लकीर के फकीर-सकीर्ण विचारों वाला व्यक्ति। रूढ़िवादी व्यक्ति। अशिक्षा एवं अज्ञान के चलते हमारे समाज में बहुत सारे लोग रूढ़िवादी है। वे अपने को अज्ञानी नहीं समझते, अपने ज्ञान को सर्वोपरि समझते है।

लकीर पीटत है- रूढ़िवादी विचारों का पोषण। प्राचीन परम्पराओं तथा मान्यताओं का अपना अलग महत्व है। ये हमें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक विरासत के रूप में मिलती आयी है। परम्पराओं और मान्यताओं में हमारी हजारों वर्षों की संस्कृति एवं सभ्यता समाहित है, किन्तु मूल्यहीन तथा अप्रासंगिक परम्पराओं का पोषण लकीर पीटना होगा।

लाजन मरिगें- शर्म और लज्जा के कारण अपमानित होना। किसी व्यक्ति का सार्वजनिक रूप से अपमान हो जाय तब एक प्रकार से उसकी मृत्यु हो जाती है। उसके चरित्र की मृत्यु उसके सदाचरण संस्कार आदि के प्रति लोगों में संदेह पैदा हो जाता है। ऐसा व्यक्ति अपने सामाजिक परिवेश से कट जाता है।

लाज राखि लिहिन- प्रतिष्ठा बच जाना। किसी अवसर विशेष पर यदि कोई व्यक्ति किसी की सहायता कर देता है तब उसके लिए यही कहा जाता है कि लाज राखि लिहिन।

लाठी चलिगै- भयावह लड़ाई का होना।

लाल पियर होत है-लाल पीला होना। किसी पर क्रोध प्रकट करना। किसी व्यक्ति विशेष के कारण

जब किसी को कष्ट पहुंचता है तब उसे देखकर व्यक्ति की जो मुखाकृति बनती है वह लाल पीला होने जैसी होती है।

लीक बनिगै- किसी परम्परा या प्रथा का बनना। 'गतानुगतको लोकः' उक्ति के अनुसार लोक की यह प्रवृत्ति है कि वह अपने से पहले का अनुकरण करता है। यदि कोई व्यक्ति किसी परम्परा या प्रथा का निर्माण कर देता है और वह सामाजिक दृष्टि से हितकारी होती है तब उसे अनुगमन करने वालें की फौज तैयार हो जाती है। परम्पराओं के संवाहक उसके अनुगामी ही होते हैं।

लीपा पोती होइगै- किसी तथ्य को छिपाना अथवा नष्ट करना। किसी दुर्घटना अथवा दुष्कृत्य पर पर्दा डालने को लीपा-पोती कहा जाता है। ऐसा प्रायः दो स्थितियों मे होता है एक स्थिति है उत्कोच की। सरकारी कर्मचारी उत्कोच लेकर बड़े-बड़े दुष्कर्मो की लीपा पोती कर देते है। दूसरी स्थिति स्वजनों की होती हैं जो अपने प्रिय व्यक्ति के दुष्कर्मों पर लीपा पोती करते हैं।

लोहन चना चबाय का परा- लोहे के चने चबाना पड़ा। किसी दुर्लभ कार्य को सम्पादित करने में क्षमता से अधिक परिश्रम और मेघा शक्ति लगानी पड़ती है। इसी भाव को प्रदर्शित करता है यह मुहावरा। यद्यपि लोहे के चने चबाना असंभव कार्य है।

वहै ओढ़ना वहै बिछौना- विपन्नता की स्थिति। एक ही वस्तु का कई संदर्भों में प्रयोग। इस मुहावरे का सामान्य अर्थ विपन्नता के संदर्भ में है। यदि किसी व्यक्ति के पास ओढ़ने तथा बिछाने के लिए एक ही वस्त्र हो तब यह विपन्नता की स्थिति होगी। विशिष्ट अर्थ में यदि किसी वस्तु या व्यक्ति को हर जगह पर प्रयोग किया जाय इस मुहावरे के दो प्रयोग है एक अधेयार्थ को द्योतित करता है तो दूसरा लक्ष्यार्थ को।

वढ़रियाय-वढ़रियाय- किसी बहाने से किसी पर आक्षेप करना।

वाह-वाही लूटै मा परे हैं- चाटुकारिता करने वाला व्यक्ति अपने स्वार्थवश हर किसी की प्रशंसा करता रहता है। जिस किसी में भी उसका स्वार्थ निहित होता है उसी के प्रति वह चाटुकार हो जाता है।

बारे कै विधवा- बाल विधवा। ऐसी नारी जो बाल्यावस्था में ही विधवा हो जाय। बाल विवाह ऐसी कुप्रथा थी जिसमें हिन्दू बचपन में ही विवाह कर देते थे। पाँच वर्ष की आयु से लेकर तेरह व तक में लगभग सभी लड़कियों की शादी हो जाया करती थी। शादी के नौ साल, सात साल, पाँच साल, तीन साल बाद वह अपने ससुराल जाती थी। प्रकारान्तर से एक अनुबन्ध था। ऐसी स्थिति में यदि किसी विवाहिता का पति मर जाय तो उसे आजीवन विधवा के रूप में जीवन व्यतीत करना पड़ता था। तात्पर्य यह कि वह कौमार्य विधवा का जीवन व्यतीत करती थी।

वहै बरा जौन बूधनि पोवैं- फूहड़ तथा असभ्य स्त्री द्वारा बनाया गया भोज्य पदार्थ।

बिधि बनिगै- विधान का बन जाना। किसी संकलित कार्य का सकुशल सम्पन्न हो जाना ही विधि बन जाना है।

बिपदा परिगै- विपत्ति पड़ जाना।

विष से भरे हैं- दुष्प्रवृत्तियों से युक्त व्यक्ति। ऐसा व्यक्ति जो समाज और व्यक्ति का हितैषी न होकर सबके प्रति विद्वेष की भावना रखता हो। उसका चिन्तन कभी भी सकारात्मक नहीं होता कब किसका अहित कर देगा, कोई ठिकाना नहीं।

विष बोवत हैं- कलह और विद्वेष का वातावरण बनाना। दुष्टनिंदा प्रकरण में गोस्वामी जी ने ऐसे लोगों का बड़ा सजीव चित्रण किया है परहित घृत जिनके मन माखी तथा जे बिनु काज दाहिनेहु बायें। ऐसी प्रवृत्ति के लोग समाज में विष बपन करते फिरते हैं।

वहे आऊ वहे जाव- अनावश्यक पुनरावृत्ति। किसी कार्य में बार-बार एक ही प्रक्रिया का अपनाया जाना जो अनावश्यक एवं अर्थ हीन हो।

वही पतरी मा खाँय वही मा छेद करैं- स्वार्थी और कृतघ्न व्यक्ति। कृतघ्न व्यक्ति किए हुए उपकार के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के बजाय उस परमार्थी व्यक्ति की ही आलोचना और अपकार करता है।

बर मरै चहै कन्या पंडित का दच्छिना से मतलव- स्वार्थी और लोभी व्यक्ति। स्वार्थी लोगों को किसी के हानि-लाभ में रूचि न होकर अपनी स्वार्थ साधना की चिंता होती है। किसी की हानि हो, वह संकटग्रस्त हो या भारी मुसीबत में हो स्वार्थी लोगों पर इसका कोई प्रभाव नही। उनकी स्वार्थ सिद्धि हो बस उनका एक मात्र यही लक्ष्य रहता है।

सास से बैर पतोह से नाता- अनपेक्षित व्यवहार। यह कैसे हो सकता है कि सास से दुश्मनी ठानी जाय तथा उसकी बहू से अच्छे सम्बंध बने। यदि सास से बैर होगा तब पतोहू से मैत्री होने का प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन समाज में कुछ लोग ऐसे भी होते है जो ऐसा करने का प्रयास करते हैं।

सात दई सतुल्ला भतार के आगे कुल्ला- छद्म प्रदर्शन। इस मुहावरे का शाब्दिक अर्थ यह कि कोई पत्नी अपने पति के समक्ष अपने को पतिव्रता साबित करने का छद्म प्रयास करती है। पति प्रातः ही जीविकोपार्जन के लिए बाहर चला जाता है पत्नी घर में सात बार भोजन जलपान करती है और जब उसका पति वापस आता है तो यह साबित करने के लिए कि उसने पति की अनुपस्थिति में अन्न नहीं ग्रहण किया और वह दातौन करने लगती है, दॉत साफ करने लगती है। बिना दातौन और कुल्ला किए कोई भोजन अथवा जलपान नहीं करता। बेचारा पति पत्नी के इस कुकृत्य से सर्वथा अपरिचित है।

संकर जी के बाराती- असभ्य, अस्त-व्यस्त तथा उलूल-जुलूल लोगों का समूह।

सरग म जोंधइया भइया के मुहे गुटुक- अलभ्य वस्तु को प्राप्त कराने का प्रलोभन देना। यह मुहावरा बाल क्रीड़ा से सम्बंधित है। मातायें शिशुओं को बहलाने के लिए उन्हें चंदामामा को दिखाती है छोटा बच्चा आसमान में चन्द्रमा को बड़े कौतूहल से देखता है। अवधांचल में शिशुओं का एक प्रचलित बालगीत है-जोंधा माई धाय आव धपाय आव, भइया के मुह मा दूध कटोरा ------। जोधा या जोंधैया चन्द्रमा को कहते है। इस मुहावरे का शाब्दिक अर्थ है कि सरग (स्वर्ग) में जोघइया है और बच्चे के मुह में दूध भात खिलायेगा। एक बिल्कुल असंभव सा कार्य है किन्तु माता बड़े सहज भाव से बच्चे को बहलाने के लिए चन्द्रमा को लाने की संभावना प्रकट करती है। लोकजीवन में जब कोई व्यक्ति इसी प्रकार से किसी को बहलाता, फुसलाता है तब यह उक्ति गतार्थ होती है।

सोनरऊ कै ठुकठुक लोहरऊ कै घप्प- यह मुहावरा हिन्दी के "सौ सुनार की एक लोहार की" का रूपान्तर है। सुनार ठुक ठुक करके कई कई बार में जितनी चोट पहुंचाता है लोहार उतनी ही चोट एक ही बार में (प्रहार) से करता है इसका तात्पर्य है कि सामान्य व्यक्ति बहुत प्रयास से जो लाभ पाता है बुद्धिमान थोड़े ही प्रयत्न से वह लाभ पा लेता है।

सीता कै सराप- जनश्रुति को प्रदर्शित करता है यह मुहावरा। सरयू नदी (घाघरा) तथा शृंगीनारी नदी के बीच का जो भूभाग है उसमें चने की खेती नहीं की जाती। ऐसा कहा जाता है कि सीता के श्राप देने के कारण यहाँ चने की फसल उगाने वाले को घोर विपत्ति का सामना करना पड़ता है। इसी लोक विश्वास के चलते वहाँ चना नहीं बोया जाता। अवधांचल में ऐसे ही तमाम लोक

विश्वास विविध क्षेत्रें में प्रचलित हैं।

सरग मा सीढ़ी लगावत हैं- असंभव कार्य करना। स्वर्ग में सीढ़ी लगाना असंभव ही नहीं कल्पना से परे है। यदि जीवन में कोई व्यक्ति ऐसे असम्भव कार्य की परिकल्पना या उपक्रम करता है तब यही मुहावरा उसके लिए प्रयुक्त होता है।

सगरा गांव बरिगा फूहरि कहिन कपड़ा बसात है- सारा गांव जल गया किसी फूहड़ स्त्री ने कहा-कपड़ा जलने की गंध आ रही है। कोई ऐसी घटना जो गांव जेंवार में एक-एक आदमी को मालूम हो गई हो किन्तु जिसके घर पड़ोस में घटना हुई उसे भान न हो ।

संख अस पुपुवात हैं- व्यर्थ का प्रलाप।

सामत आय गै- बुरा समय आ जाना।

सिकार मिलिगा- सुअवसर की प्राप्ति। कोई व्यक्ति किसी कार्य के लिए अधिक समय से प्रतीक्षारत हो यदि सौभाग्य वश उसे कार्य सुसम्पादित करने का सुअवसर मिल जाय तब यही मुहावरा प्रयुक्त होता है।

सीनकाफ दुरूस्त है- चुस्त दुरूस्त आदमी। अपने व्यक्तित्व के प्रति सर्वथा सजग व्यक्ति के लिए यह उक्ति कही जाती है।

सेख चिल्ली होइगे- कोरी कल्पनाओं वाला व्यक्ति।

सेखी वघारत हैं- शान दिखाना। आत्मप्रदर्शन की प्रवृत्ति हर व्यक्ति में होती है किन्तु कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अतिशयोक्ति पूर्ण वक्तव्य के कारण हास्यास्पद हो जाते हैं। ऐसे ही लोगों को सेखी बगघारत है कहा जाता है।

सौख चर्रानि है-कुछ नया करने अथवा सीखने के लिए लालायित होना।

सरा मुंह सोंध करौ- किसी दुर्जन व्यक्ति को उसके द्वारा कहे गये अपशब्दों की प्रतिक्रिया में यह मुहावरा बोला जाता है।

सिखई बुद्धि परायी माया- अपनी बुद्धि और अपनी सम्पत्ति चिर स्थायी होती है। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति किसी के कहने पर अथवा योजना को क्रिगयान्वित करता है तब वह असफल हो जाता है इसी प्रकार दूसरे की सम्पत्ति के सहारे कार्य व्यापार करने वाला या दूसरे की सम्पत्ति को अपना समझने वाला धोखा खाता है।

सावन से भादौं दूबर नहीं- दो व्यक्तियों अथवा वस्तुओं की तुलना करते समय जब दोनों समान गुण धर्मी होते हैं ऐसी स्थिति में किसी एक का गुणगान करने पर यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

सिन्नी बंटत है- बिना गुण दोष की परख किए सब को समान रूप से मिलने वाली वस्तु के संदर्भ में यह उक्ति गतार्थ होती है।

सउरी कै लरिका- अत्यंत सुकुमार। सर्वथा सुरक्षणीय। सौर (प्रसूता) का शिशु बड़ा ही सुकुमार होता है साथ ही उसकी सुरक्षा और देखभाल में भी बड़ी सतर्कता की आवश्यकता होती है।

सूती से पानी पियावत हैं- अपेक्षा और आवश्यकता के अनुकूल सहायता न करके अत्यल्प सहायता करना। आदमी को एक लोटा पानी की प्यास लगी है और उसे चम्मच से पानी पिलाया जायेगा तब यह उपक्रम निरर्थक ही होगा।

समुन्दुर मा सेतुवा घोरि दिहिन- विवाद को बढ़ावा देना। अनावश्यक दखल देना। दो व्यक्तियों में कोई पारस्परिक विवाद चल रहा हो कोई व्यक्ति आकर ऐसी बात कर दे जिससे कि झगड़ा भयंकर स्वरूप धारण कर ले ऐसी स्थिति ही इस उक्ति को संदर्भित करती है।

सुअरी कै बारा- संकीर्ण और गंदा आवास। ऐसा घर जो छोटा तो हो ही गंदगी से भरा हो उसे

सुअरी के बारा की संज्ञा दी जाती है। सुअर के बाड़े (रहने के स्थान) को ही सुअरी के बारा कहा जाता है।

सुअरी के लेंड़- निरर्थक पदार्थ। सुअर का विष्टा गाय, भैंस बैल आदि के गोबर की तुलना में बिल्कुल बेकार होता है। समाज इसी प्रकृति और प्रवृत्ति के लागों के संदर्भ में यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

सौती कै लरिका- ईर्ष्या और उपेक्षा का पात्र। सौतेले बच्चे के प्रति सौतेली माँ का ईर्ष्या भाव सर्वविदित है।

सौतिया डाह- सौत से ईर्ष्या का भाव। अपने पति की दूसरी स्त्री के प्रति ईर्ष्या इतनी प्रबल होती है कि उसका वश चले तो घर से निकाल दें।

सेतुवा पिसान बांधि के- किसी कार्य के सम्पादन में दृढ़ संकल्पता का भाव। कोई व्यक्ति जब किसी कार्य को सम्पन्न करने के लिए अपनी सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ तत्पर होता है तब यह उक्ति गतार्थ होती है।

सब दाढ़ी बाज चूल्हा को फूंकै- कामचोर व्यक्तियों का समूह। किसी सामूहिक कार्य को संपादित करने के लिए यदि लोग एकत्र हों और उनमें सबके सब कामचोर हो तब काम का होना असंभव ही है इसी स्थिति को यह कथन व्यंजित करता है।

सानत गयें बेलत आयें- अकमर्ण्य एवं विवेकहीन व्यक्ति का क्रिया कलाप।

सरग से गिरा खजूर मा अटका - किसी कार्य में बाधा ही बाधा पड़ना। किसी काम में आ रही बाधा को हटाने के बाद दूसरी बाधा (समस्या) खड़ी हो जाय तब यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

सोय सोय जागत हैं- किसी काम के बारे में सोच-सोच कर एक-एक बात को बताना।

सिरिहिरी नहीं आई- संवेदनहीनता। कोई रोमांचक घटना या दुर्घटना हो जाने पर कोई प्रभाव न पड़ना। यह स्थिति उदासीनता और संवेदन हीनता को दर्शाता है। इसका प्रयोग विशेष रूप अकर्मण्य तथा बेशर्म व्यक्ति के लिए किया जाता है।

संकरे मा समधियान : संकीर्ण स्थल।

सिकहर टूट बिलारिन के भाग- भाग्यवादी अवधारणा। बिना किसी परिश्रम या प्रयत्न के ही कोई उपलब्धि मिल जाय। सिकहर दूध, घी की सुरक्षा कि लिए छत में टांगा रहता है। यह सब उक्त पदार्थ को बिल्लियों से बचाने के लिए किया जाता है। यदि किसी कारण वश सिकहर टूट जाय, दूध दही जमीन पर गिर जाय तब इसे बिल्ली का भाग्य ही कहा जायेगा। अचानक किसी इच्छित वस्तु की प्राप्ति को जाना ही इस मुहावरे का अभिधेय है।

सेवाती के बूंद- दुर्लभ वस्तु। स्वाती नक्षत्र की बूंद मोती बनाने का कार्य करती है साथ ही स्वाती नक्षत्र की वर्षा किसानों के लिए बड़ी ही लाभप्रद होती है। लोक व्यवहार में जब कोई वस्तु दुर्लभता के कारण नहीं मिल पाती तो यही कहा जाता है कि वह तौ सेवाती (स्वाती) कै बूंद होइगै।

सनक सवार होइगै- किसी कार्य के प्रति बिना सोचे समझे कार्य करने की जिज्ञासा होना।

सनीचर चढ़े हैं- बुरा समय अथवा बुरे ग्रहों का प्रभाव होना। जब व्यक्ति को सद्प्रयास करने के बाद भी बार-बार असफलता मिलती है तब यही कहा जाता है कि इनके ऊपर सनीचर चढ़े हैं।

सपन देखत है- कुछ लोग स्वप्न द्रष्टा होते है लेकिन उस स्वप्न को साकार करने का प्रयास न करने वाले को 'सपन देखत हैं ' कहा जाता है।

सबका यक्कै लाठी से हांकत हैं- सब के साथ एक ही व्यवहार करना। समाज में विभिन्न योग्यता और मानसिकता के लोग होते है हर व्यक्ति का सम्मान उसकी योग्यता और प्रतिष्ठा के अनुरूप

होता है लेकिन जो लोग पारखी नहीं होते उनकी दृष्टि में सब लोग बराबर होते हैं। ऐसा व्यक्ति सबको एक ही डंडे से हांकने का प्रयास करता है।

सब धान सत्ताइस पसेरी- यह मुहावरा उपरोक्त मुहावरे का पर्यायवाची है। यह भी उपरोक्त संदर्भ में प्रयुक्त होता है।

सब गुर गोबर होइगा- बना बनाया काम बिगड़ जाना। यह एक अन्तर्कथात्मक मुहावरा हैं। एक वेश्यागामी सज्जन(ठाकुर साहब) वेश्या के घर गये अपने साथ उसे प्रशन्न करने के लिए राब (गुड़) से भरे दो घड़े भी ले गये। घड़ों में अंदर गोबर भरा था ऊपर से थोड़ी थोड़ी राब भर दी। घड़े लेकर जब उनके नौकर चाकर वेश्या के घर पहुंचे तो वेश्या बहुत ही प्रशन्न हुई। ठाकुर साहब का बड़ा आदर सत्कार हुआ। सेज बिछायी गयी। ठाकुर साहब एक कमरे में वेश्या के साथ संसर्ग सुख का भोग करने लगे। इधर वेश्या के घर वालों ने राब को घड़े से निकालना प्रारम्भ किया लेकिन यह क्या? घड़े में तो नीचे गोबर भरा मिला। वेश्या की माँ ने कमरे के पास जाकर कुंढी खटखटायी और कहा ''ठकुरौ उठौ सब गुर गोबर होइगा।'' यह घटना होने के बाद से ही यह मुहावरा प्रचलन में आ गया और विविध संदर्भो में प्रयुक्त होने लगा।

सलाम मारि आयें- शिष्टाचार की औपचारिकता। अपने से उच्च पदस्थ अधिकारी, सामंत, जमीदार, तालुकेदारों आदि को प्रशन्न करने के लिए सलाम मारने की प्रथा है। कभी-कभी अपने स्वार्थवश भी आदमी सलाम मारता है।

सब कुकुरी जगन्नाथन चली जइहैं तौ पतरी को चाटे- सर्वोच्च शिखर पर सभी लोग नही पहुंच सकते । अपनी योग्यता चरित्र और आचरण के बल पर ही व्यक्ति को उत्कृष्ट स्थान मिलता है। निष्कृष्ट, निकम्मे और अकर्मण्य लोग वहाँ नहीं पहुंच सकते।

सांड़ हस घूमत हैं- स्वेच्छाचारी व्यक्ति। कुछ लोग समाज में ऐसे भी होते है जिनके लिए कहा जाता है काम के न काज के दुश्मन अनाज के' ऐसे लोग सांड़ो की भांति निर्द्वन्द्व घूमते हैं और यत्र तत्र सर्वत्र मुह मारते फिरते है।

सांपे के बिल मा हाथ डारत हैं- जान बूझकर खतरा मोल लेना। जान बूझकर जब व्यक्ति कोई खतरनाक काम करता है तब उसे बुद्धिमान नहीं कहा जायेगा।

सांप चला गा लकीर पीटौ- निरर्थक एवं उद्देश्य हीन प्रयास। जो व्यक्ति उपयुक्त अवसर पाकर काम नहीं करते और बाद मे अथक परिश्रम करते हैं उनका प्रयास बेकार ही जायेगा।

सांपौ मरि जाय लाठी न टूटै- बिना किसी हानि के कार्य की सिद्धि हो जाना। किसी व्यक्ति को कर्जा देकर वसूलने के लिए झगड़ा करने से अच्छा है कि प्रेम पूर्वक उससे दिया गया धन वसूला जाय।

सांप सूंघि गवा- (भयाक्रांत होना) सांप सूंघने की स्थिति बड़ी भयावह होती है। सांप को देखकर ही आदमी कांप जाता है कहीं किसी को सूंघ कर निकल जाय तो वह व्यक्ति तो मरणसन्न ही हो जायेगा। सांप के विषय में जो अवधारणा है वह मरणान्तक ही होती है।

सांस न लेव- गोपनीयता बनाये रखने की हिदायत। यह निषेधात्मक वाक्यांश है। कोई ऐसी बात जो गोपनीय हो अथवा जिसके सार्वजनिक होने पर किसी विवाद या किसी के अहित की आशंका हो तब उस बात के संदर्भ में कहा जाता है- 'सांस न लेव'।

सांस लियै कइ फुरसत नहीं- कार्य का बोझ। अति व्यस्तता। जब कोई अति व्यस्त होता है और किसी काम को यथासमय अथवा शीघ्र निपटाने को उद्यत होता है तब वह एक क्षण भी विश्राम नहीं करता । उसे सांस लेने तक की फुर्सत नहीं होती।

सांस फूलत है- ऊबना। किसी व्यक्ति अथवा कार्य से विरत होने की आतुरता।
साढ़े साती चढ़े हैं- ज्योतिष शास्त्र के अनुसार शनि की ढैया सबसे प्रतिकूल ग्रंह दशा है ऐसी स्थिति में व्यक्ति के बने हुए काम बिगड़ जाते हैं परिस्थिति सदा प्रतिकूल रहती है, व्यापार मे घाटा ही घाटा बना रहता है, व्यर्थ का विवाद होता रहता है गृहकलह भी उत्पन्न हो जाती है। तात्पर्य यह कि व्यक्ति का चैन छिन जाता है वह परेशानियों के व्यूह में फंस जाता है लोक जीवन में यदि किसी व्यक्ति को असफलता ही असफलता मिलती रहती है तब यही कहा जाता है कि अमुक व्यक्ति पर ''साढ़े साती चढ़े हैं''।
सात परदा के भीतर- अत्यधिक गोपनीय वस्तु या व्यक्ति। यह मुहावरा व्यक्ति और वस्तु दोनों ही संदर्भो में प्रयुक्त होता है।
साता ताला के भीतर - अत्यंत गहन सुरक्ष व्यवस्था। कोई दुर्लभ वस्तु जिसकी सुरक्षा का बहुत अधिक ध्यान रखा जाय।
सात समुन्दुर पार- दुर्गम दूरी। ऐसा स्थल जो बहुत दूर हो और वहाँ जाने के लिए बाधायें ही बाधायें हो।
सान देखावत हैं- अकड़बाजी, कोरा प्रदर्शन, अशिष्ट व्यवहार।
सिर नीचा होइगा- अपमानित होना। कोई ऐसा दुष्कृत्य जिसके कारण व्यक्ति समाज में निन्दा का भागी बन जाय।
सुर्ज का दिया देखावत हैं- ओछी हरकत। किसी प्रतिष्ठित और सामर्थ्यवान व्यक्ति की तुलना सामान्य जन से करना।
सूरत न देखाऊ- कुकर्मी व्यक्ति के कुकृत्यों को जानने के बाद उसका परम हितैषी भी कह उठता है कि तुमने इतना निन्दित कार्य किया है कि तुम्हारी शक्ल देखने लायक नहीं।
सोवत बाघ जगाय दिहिन- जान बूझकर संकट पैदा करना। सोते हुए शेर को जगा देने वाला अपने लिए संकट मोल ले लेता है।
सोने कै चीज माटी- श्रेष्ठता की हानि । अकर्मण्यता और प्रमाद वश व्यक्ति या वस्तु अपनी मौलिकता को खो देते हैं और मूल्यहीन हो जाते है।
सोने मा सुहागा- श्रेष्ठता का संयोग।
सोने मोल बिकात हैं- मूल्यवान वस्तु। सोने के मोल वहीं वस्तु बिकेगी जो मूल्यवान हो अथवा सर्वसुलभ न हो।
सोलह आना सही- सम्पूर्णता, परिपक्वता। यदि किसी कथ्य अथवा तथ्य में शत प्रतिशत सत्यता हो तब उसे अभिव्यंजित करने के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।
सरगै चलेगे- (स्वर्ग को चले गये) कोई व्यक्ति जब अर्थहीन हो जाता है और सगे सम्बंधियों के किसी काम नहीं आता और इधर उधर रहता है तब उसका रहना या न रहना दोनों बराबर है। यदि कोई उस व्यक्ति के बारे में घरवालों से पूछता है तब घर वाले क्रोधवश यही उत्तर देते है 'सरगै गये'।
सत्यानाश होइगा- सर्वनाश हो जाना।
स्वाहा कइ दिहिन- अपनी सामर्थ्य और सम्पत्ति दांव पर लगाने के बाद यदि अपेक्षित परिणाम नहीं मिलता है तब यही कहा जाता है ' आपन सब कुछ स्वाहा कइ दीन'।
सुवांग न भरौ- (अभिनय करना) स्वांग एक अभिनय होता है जो लोकनृत्य के नाम से जाना जाता है। जब कोई व्यक्ति एक स्वांगी की भांति अर्थहीन अभिनय करता है तब यही उक्ति गतार्थ होती

है।

सरगै सरग करत है- ऐसे कुकृत्य और ओछी हरकते जो मृत्यु का कारण बनें।

सरगौ मा दूध भात खायं- यह एक आशीर्वाद है। किसी सज्जन व्यक्ति द्वारा किए गये सद्कार्य और परमार्थ के संदर्भ में कृतज्ञता ज्ञापित करने का भाव इस मुहावरें में निहित है।

सपठा साधे हैं- मौन साधना। किसी कार्य, व्यक्ति अथवा वस्तु के बारे में जानते हुए भी यदि व्यक्ति अनभिज्ञता जाहिर करे तब कहा जाता है कि 'सपठा साधे हैं'।

हाथ धरे हैं- संरक्षण प्रदान करना। कोई सामर्थ्यवान व्यक्ति यदि किसी व्यक्ति का संरक्षण करता है तब यही कहा जाता है कि ऊ काहे निधरक न होय जब फलाने उनके ऊपर हाथ धरे हैं।

हाथे प हाथ धइके - अकर्मण्य और निष्क्रिय व्यक्ति। जिस व्यक्ति को किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होती और अकर्मण्य तथा निष्क्रिय होकर बैठा रहता है उसके लिए मुहावरा प्रयुक्त होता है।

हाथ गोड़ न डोलै- (अकर्मण्य और कोरी कल्पनाओं वाला।) कुछ लोग समाज में ऐसे भी होते है जो परिश्रम तो करते नही लेकिन अपेक्षा करते है कि उनके पास सब कुछ सुलभ हो जाय।

होली के बल्ला- अकारण संकट में फंसना। जब कोई व्यक्ति अकस्मात किसी आपत्ति में फंस जाता है यह स्थिति इस मुहावरे का द्योतन करती है। यथा कोई व्यक्ति मेला देखने गया हो, वहाँ पर दंगा हो जाय और उस दंगे की चपेट में वह भी आ जाय तब उसकी जो स्थिति होगी वही भाव इस मुहावरे में व्यंजित हैं।

हलवाई कै पठिया- हलवाई की बेटी। हलवाई जिसके यहाँ पकवान मिष्ठान स्वादिष्ट और मलाईदार खाद्य पदार्थ बनते है उसके घर वालों की चांदी रहती है। पौष्टिक और मलाईदार चीजे खाकर उसके बच्चे तंदुरूस्त ही नहीं गोल मटोल हो जाते है।

हींसा लियैं बरोबर गटई वरमें टेढ़- लोभी और असंतुष्ट व्यक्ति। यदि हिस्सेदारी में सबको बराबर-बराबर सामान बांट दिया जाय तब असंतोष किस बात का? लेकिन यदि किसी को असंतोष है तब तो उसे लोभी और स्वार्थी ही समझा जायेगा।

हुक्का बंद- जातीय बहिष्कार। छोटी जातियों (पिछड़ी और अनुसूचित) में किसी को जातीय बहिष्कार का दंड देने के लिए उसका हुक्का बंद कर दिया जाता है। हुक्का बंद करने का तात्पर्य कि वह समाज में सामूहिक रूप से हुक्का नहीं पी सकता।

हांड़ डारि कूकुर लड़ावत हैं- झगड़ा-विवाद में रूचि लेने वाला व्यक्ति। समाज में कुछ लोग ऐसे भी होते है जो दो लोगों को आपस में लड़ाने में रूचि रखते है। उन्हें इसी कार्य में आनन्द मिलता है। वे इस कार्य के लिए दो लोगों के बीच कोई एक मुद्दा डाल देते है और दोनों पक्ष उसी के लिए लड़ पड़ते है।

हाथ कै मैल- तुच्छ चीज। ऐसी वस्तु जो किसी व्यक्ति के पास हो किन्तु उसका मूल्य उस व्यक्ति के लिए न के बराबर हो। यदि कहीं वह खो गयी तब उसे कोई दुःख नहीं होता।

हुवै भिनसार नवा बिल खोदी- यह घटना मूलक तथा प्रवृत्ति मूलक मुहावरा है। कहा जाता है कि लोमड़ी अपने रहने के लिए सबेरे रोज बिल खोदती है किन्तु इधर उधर भटकने के बाद जब वह देर रात उसमें निवास करने आती है तब उस पर किसी दूसरे जानवर का कब्जा देख कह उठती है कोई बात नहीं सबेरा होने दो दूसरा बिल खोदूँगी। ऐसी प्रवृत्ति के लोग समाज में भी होते है उन्ही को लक्ष्य में रखकर यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

हिरासे परिगें- निराश हो जाना। जब कोई व्यक्ति बार-बार प्रयत्न के बावजूद सफल नहीं होता तब उसकी जो मनोवृत्ति होती है उसी का परिचायक है यह मुहावरा।

होब-जाब होइगा- दुर्दशा हो जाना। कुछ यात्रयें तथा कार्य इतने ऊट पटांग होते हैं कि इन्हें सम्पन्न करने वाले की दुर्दशा हो जाती है।

हौहाय धरत है- कर्कश और असभ्य व्यवहार। हौहाय शब्द ध्वनि मूलक है जो कुत्ते की आवाज से सम्बंधित है। जैसे कुत्ता हर किसी व्यक्ति को देखकर भौंकने लगता है ठीक इसी प्रकार कोई व्यक्ति हर आदमी को देखकर कर्कश और असभ्य वाणी का प्रयोग करता है तब यह उक्ति प्रयोग में आती है।

हमरे घर से आग लाई नाव धराइन बसंदर-उधार या मांगी हुई वस्तु के ऊपर घमंड करना।

हरदी माठा पियत हैं- हल्दी और मट्ठा चोट की देशी दवा है। जब कोई चोटहिल व्यक्ति बिस्तर पर पड़ जाता है भले ही वह कोई अन्य दवा कर रहा हो तब उसे यही कहा जाता है कि हरदी माठा पियत है।

हांथ के बैर खाय वाली नहीं- मैला कुचैला तथा गंदा आदमी। स्वच्छता स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी है यदि कोई व्यक्ति गंदगी से भरपूर होता है तब उसके हाथ से पानी पीने की इच्छा भी नहीं होती। इसी भाव को यह मुहावरा दर्शाता है।

हुक्का अस मुह लिहे- कुरूप एवं अनगढ़ व्यक्ति।

हांथी मारै दाँत उखारै- दुरूह एवं कठिन कार्य। यदि किसी व्यक्ति को हाथी के दांत की जरूरत है और कोई उससे कहे कि हाथी को मारकर दांत उखाड़ लो तब यह लगभग असंभव कार्य ही होगा। समाज में इस प्रकार के कार्यों के संदर्भ में ही यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

हाथ मींजि के रहिगें- पछतावा होना। कोई उपलब्धि मिलते मिलते हाथ से निकल जाय तब यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

हाय लूटत हैं- पाप कर्म, निन्दित कर्म। यह मुहावरा किसी असहाय व्यक्ति को सताने से सम्बंधित है। परेशान असहाय और निर्बल प्राणी को सताने वाले के लिए हाय लूटत हैं शब्द प्रयुक्त होता है।

हिम्मति हारि गै- हताशा। अपनी पूरी सामर्थ्य लगा देने के बाद भी जब सफलता नहीं मिलती तब यही उक्ति गतार्थ होती है।

होलिया बिगड़िगै- पहचान का बिगड़ना। कोई ऐसा कार्य जिसमें व्यक्ति सब कुछ दांव पर लगाने के बाद कोई उपलब्धि हासिंल न कर पावै तब यह कथन कहा जाता है।

हीला हवाला करत है- आना कानी करना। किसी कार्य के लिए बहाने बनाना। करना है या नहीं करना है इस बारे में साफ-साफ न बताना।

होस गुम होइ गयें- अपनी औकात का पता चल जाना।

हैहाय दिहिन- फटकार देना। कोई व्यक्ति जब अकारण ही बार-बार किसी को परेशान करे। परेशान होने वाला एक बार हिम्मत करके उसे फटकार दे तब वह दुबारा उसके पास नहीं जायेगा।

हकरा-तुकरी- वाद-विवाद। दो लोगों का आपसी वाद-विवाद हकरा-तुकरी मुहावरे को व्यंजित करता है।

हहारौ मची है- उल्लास पूर्ण वातावरण। उन्मुक्त हंसी और अट्टहास की महफिल। ऐसा वातावरण जिसमें उन्मुक्त हंसी का माहौल और कोई एक भी व्यक्ति दुःखित न हो।

हंसी के हंसारौ- शर्मनाक कृत्य। किसी व्यक्ति द्वारा कोई ऐसा निन्दित या घृणित कार्य हो जाय जिससे चारों ओर शर्मिन्दगी झेलनी पड़े।

हंसी उड़ावत हैं- किसी व्यक्ति का उपहास करना।

हंऔआ कै फुरौझा- हंसी-हंसी में झगड़े की नौबत आ जाना। हंसी और खेल दोनों में ही हास-परिहास उठा-पटक, हार-जीत का क्रम चलता है लेकिन यदि कोई व्यक्ति हंसी मजाक के चलते झगड़ा करने पर उतारू हो जाय तब यही कहा जायेगा-हंसौआ कै फुरौझा होइगा।

हजम कइ गएं- किसी अहं घटना या तथ्य को छिपा लेना।

हद्द कइ दिहिन- सीमा का अतिक्रमण। किसी बुराई की अधिकता। किसी अनाचार की सीमाओं का अतिक्रमण

हरदी न लाग- विवाह न होना। हल्दी का वैवाहिक संस्कार से बड़ा गहन सम्बंध है। लड़कियों के विवाह के संदर्भ में हाथ (हल्दी से) पियर होइगे तथा हरदी लागि गै। यह मुहावरा एक विशिष्ट संदर्भ में ही प्रयुक्त होता है।

हड्डी पसुढ़ी डोलिगै- हड्डी पसली टूट जाना। भयंकर चोट लगाने या किसी के द्वारा मारे पीटे जाने पर शरीर को जो दुर्दशा होती है उसी का द्योतक है यह मुहावरा।

हवाई फैर- भय का वातावरण पैदा करना। भय दिखाने के लिए शस्त्रें का प्रदर्शन करना। विशेष रूप से हवा में गोलियाँ चलाने को हवाई फैर कहा जाता है।

हवा खाव- किसी व्यक्ति के प्रति आक्रोश व्यक्त करने के लिए यह मुहावरा प्रयुक्त होता है।

हवा खाय के रहत हैं- अन्न जल का परित्याग करना। यह स्थिति दो ही स्थितियों में होती है। या तो योगी हवा खाकर जीवित रहते हैं या फिर असाध्य रोगी।

हवा खसकि गै- हिम्मत टूट जाना। भय व्याप्त हो जाना। किसी बड़बोले व्यक्ति का जब वास्तविकता से पाला पड़ता तब उसकी हवा खिसक जाती है।

हवा मा बात करत हैं- निराधार वक्तव्य, बड़बोलापन। जब कोई व्यक्ति बेसिर पैर की बातें करता है तब यही कहा जाता है कि फला आदमी हवा मा बात करत है।

हवाई किला बांधत हैं- कोरी कल्पना। किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऐसे कार्य की योजना बनाना जो सामर्थ्य के बाहर हो और न ही संसाधन हो ऐसे व्यक्ति के पास इच्छा शक्ति भी नहीं होती।

हाँ म हाँ मिलावत है - स्वार्थवश या भयवश या चाटुकारिता करने के उद्देश्य से किसी व्यक्ति के कार्यों से पूर्णतया सहमति जताना। नयी पंक्तियों - प्रभुत्व होना। जब कोई व्यक्ति किसी परिवार या समुदाय में अपनी मर्जी का मालिक हो तब यही कहा जाता है कि उसका हाँका रथ चलता है।

हाथ पसारे सूझ नहीं परत- रात का गहनतम अंधकार जिसके कारण आदमी की कुछ भी दिखायी न पड़े। काली अंधिकारी रात।

हाथ उठाय लिहिन- सहायता देना बंद कर देना। जब कोई व्यक्ति किसी को सहायता कर रहा हो और अचानक सहायता देना बंद कर दे तब यही कहा जायेगा।

हाथ उठाय दिहिन- अपने से बड़े को मारने के लिए उद्यत होना। अशिष्ट व्यक्ति जब अपने से बड़े पिता, भाई, माता अथवा किसी परिवारजन से मारपीट करने पर उतारू हो जाय तो उसकी धृष्टता को हाथ उठाय दिहिन कहा जाता है।

हाथ खाली है- धनाभाव। जब किसी के पास रूपये पैसे का अभाव हो जाता है तब वह यही कहता है कि इस समय हाथ खाली है।

हाथ धोय के पाछे परे हैं- किसी व्यक्ति से द्वेष अथवा बैर होने के कारण सदैव उसके अहित के लिए उद्यत रहने वाला व्यक्ति।

हाथ बाँधे खड़े हैं- निष्क्रिय और उदासीन। कोई घटना घटित हो तो स्वाभाविक रूप से लोग सक्रिय

हो उठते है लेकिन कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जो हाथ बाँधे खड़े रहते है जैसे कुछ हुआ ही न हो।

हाथौ हाथ लै लिहिन- सामूहिक सहयोग की भावना। घर-परिवार और समाज में यदि सब लोग हर व्यक्ति के काम कि लिए तत्पर हो तो हर काम बिलकुल आसान हो जायेगा।

हाथ लागि गे - पकड़ में आ जाना।

हाथे से निकरिगै- हाथ से निकल जाना। किसी व्यक्ति या वस्तु का पहुंच से दूर हो जाना।

हाय-हाय मची है- किसी अप्रिय अथवा अशुभ घटना के घटित हो जाने पर जो कोहराम मचाता है उसे ही यह मुहावरा व्यंजित करता है।

हंसिया भर टेढ़- कुछ लोगों का जन्मजात स्वभाव ऐसा होता है कि वे चाहे जितना सीधे हो जायं कुछ न कुछ अकड़पन रह जायेगा जैसे हंसिया नामक औजार।

लोकोक्तियाँ

स्वास्थ्य एवं खान-पान सम्बन्धी

1.आँत भारी तौ माथ भारी।
2.खाय के मूतै बायें सूतै वैद के पूतै मारै जूतै।
3.क्वार करेला, चैत गुड़ सावन साग न खाय।
कौड़ी खर्चे न गाँठ की, रोग विसाहन जाय।
4.गवा मर्द जौ खाय खटाई, गई नारि जौ खाय मिठाई।
5.गुर्च, चिरैता, पाढ़ी, बोखार की जारै दाढ़ी।
6.प्रात काल खटिया से उठिके पियै तुरन्तै पानी,
वहिके घर वैद न जाय यह बात घाघ कै जानी।
7.बासी भात, तेवासी माठा, औ ककरी कै बतिया,
आधी रात जुड़ावनि आवै भुइँ लेहौ या खटिया।
8.सावन हर्रे भादौं चीत, क्वार मास गुड़ खायउ मीत।
9.कातिक मूरी अगहन तेल, पूस मा करै दूध से मेल।
10.माघ मास घिउ खिचरि खाय, फागुन उठि के प्रात नहाय।
11.चैत मास मा नीम बेसहती, बैशाखै मा खाय जड़हती।
12.जेठ मास जौ दिन मा सोवै, ताकै जर असाढ़ मा रोवै।
13. सोठ, सुहागा, सोचर गाँधी, सहिजन के रस गोली बाँधी।
असी सूल चौरासी बाई, तुरतै ऐसे जाय नसाई।
14.चइतै गुड़ बैसाखै तेल, जेठहि पंथ असाढ़ै बेल।
सावन मर्सा, भादौं दही, क्वार करेला, कातिक मही।
15.त्रिकुटा त्रिफला तूतिया पाँचों नमक पतंग।
दाँत बज्र ह्वै जात है माजू फल के संग।।

ज्योतिष तथा शकुनापशकुन-सम्बन्धी

1.एक पाख दुइ गहना राजा मरै कि सैना।
2.चलत समय नेउरा मिलि जाय, बाम भाग चारा चखु खाय।
काग दाहिने खेत सुहाय, सफल मनोरथ समझौ भाय।
3.छींकत सोवै छीकत खाय, छींकत पराये घर न जाय।
4.नारि सुहागिन जल-घट लावै, दधि मछरी जौ सन्मुख आवै।
सनमुख धेनु पियावत बाछा, मंगलकरन सगुन है आछा।।

5.मंगरवारी होय दिवारी, हँसै किसान रोवै बैयापारी।
रात मा बोलै कागला, दिन मा बोलै स्यार।
तौ मैं भाखौ भड्डउरी, निश्चै परे अकाल।।
सर सर साँप गाँव कै तेली विधवा नारि जौ मिलै अकेली।
गाँव कै विप्र मिलै यदि काना, बड़े भाग से उबरै प्राना।
सनमुख छींक लड़ाई भाखै, पीठ पाछिली सुख अभिलाषै।
छींक दाहिने धन को नासै, बायें छींक महा भयकारी।
ऊँची छींक महा शुभकारी, नीची छींक महा भयकारी।
आपन छींक महा दुखदाई, कह भड्डर जोसी समझाई।
आपन छींक राम बन गऊऊ, सीता हरन तासु फल भयऊ।
सिर पर गिरै राज सुख पावै, औ ललाट पै वैभव पावै।
जुगुल कान औ जुगुल भुजाहू गोधा गिरै होय धन लाहू।
हाथन ऊपर जौ कहुँ गिरई, सम्पति सकल गेह को धरई।
निहिचै पीठ परे सुख पावै, परै काँध प्रिय बन्धु मिलावै।
कटि के परे वस्त्र बहुरगा, गुदा परे मिल मित्र अभंगा।
जुगुल कांध पर आन जो परई, धन गन सकल मनोरथ परई।
परे जांघ पर होय निरोगी, चरण परे तन जीव वियोगी।
दो बिधि पल्ली सरट बिचारा, कह्यौ भड्डरी ज्योतिष सारा।
सोम शनीचर पुरुब न चालू, मंगर बुध उतर दिसि कालू।
रवि सूक जौ पच्छिम जावै, हानि होय सुख नाहि पावैं।
बीफै का जो दक्खिन जाय, बिना गुनाहन पनही खाय।

नीति-सम्बन्धी लोकोक्तियाँ

1. ऊँच के बैठे नीचे के खाये, ई दूनौ जायँ गाल बजाये।
2.आपन माल खोट परखैया कौन दोस।
3.ओछी बैठक ओछे काम, ओछी बातें आठों याम।
घाघ बतावै-तीन निकाम, भूल न लीजो इनका नाम।
4.ज्वान जोगी बैद रोगी, सूर पीठी घाव।
कीमिया घर भीखे माँगे, इन्हें जनि पतियाव।।
5.जेहिका ऊँचा बैठका, जहि का खेत निचान।
वह कै बेरी का करै जेहि कै मीत दिवान।।
6.आँधी आवै बैठि गवावैं मेह आवै भागि बचावैं।
7.छज्जा कै बैठक बुरी, परछाहीं की छाँह,
नियरे कै रसिया बुरा, नित उठि पकरै बांह।
8.अगसर खेती अगसर मार, घाघ कहैं इनसे न हार।
घर घोड़ी पैदर चलै, तीर चलावै बीन।
थाथी धरै दमाद घर जग मा भकुहा तीन।
9. दरबार, परिवार तरवार एक साथे ना सधे।

10. भोजन, भजन, खजाना, नारी
चारिउ पर्दा के अधिकारी।
11. भूख भली की पतोहू कै जूठ।
12.आमद कम औ खर्चा जादा ई लच्छन मिट जाने के।
ताकत कम औ गुस्सा जादा ई लच्छन उठ जाने के।।
13. चोर, जुवारी गठ कटा, जार औ नारि छिनार,
सौ-सौ कसमें खाय जो घाघ न कर एतबार।
14. जेहि घर साला सारथी औ तिरिया की सीख।
सावन मा बिन हर रहै, तीनौ माँगै भीख।।
15. विप्र टहलुआ छेरि धन औ बिटियन कै बार।
इनसे जौ धन ना घटै तौ करै बड़ेन से रार।।

लोक-सिद्धान्त पर आधारित लोकोक्तियाँ

1. ओठे से निकरी कीठे पै पहुँची।
2. आधी छोड़ सारी का धावै, आधी मिले न सारी पावै।
3. ओरौनी कै पानी बड़ेरे ने चढ़े।
4. रहुवा महुआ ताल तराई, इनके माथे कर्ज न खाई।।
5. अकिल न मिलै उधार, प्रेम न बिकै बाजार।
6. कीन करावा जस न पावा, नोन चोरौनी नाव धरावा।
7. कतनौ चिरई उड़ै अकास। चारा है धरती के पास।।
8. काल्हि कै लीपा गवा बिलाय।
आज कै लीपा देखौ भाय।।
9. अकेले कै चोरी, सोनारे कै जोरी।
10. ओस कै घमंड कब तक, घाम न होय तब तक।
11. अकेले न गाय जाय, न अकेले रोय जाय।।
12. करै पटेइती सुख से सोवै, मारा जाय तौ काहे रोवै।।
13. ककरी कै चोर कटारी से नहीं मारा जात।
14. गदहा कतनौ मारा जाय घोड़ा न होये।
15. जब तक पंड़िया होये ओसर।
तब तक भैंस बियाये दूसर।।
16. जस जिहकै महतारी बाप तस तिहकै लरिका।
जस जिहकै घर दुवार तस तिहकै फरका।
17. धौलै भले हैं कापड़े, धौले भले न बार।
आछी काली कामली, काली भली न नार।।
18. ज्ञानी से ज्ञानी मिलै होय ज्ञान कै बात।
गदहा से गदहा मिलै तौ परै भड़ाभड़ लात।।
19. ससुरारी बड़ी पियारी, जब रहै दिना दुइ चारी।
जब रहै एक पखवारा, बहारै द्वार लै खरहरा।।

लोकरीति से सम्बन्धित लोकोक्तियाँ

बिन भेस के भिच्छा नहीं मिलत।
रोवैं पराई धेरिया हँसै बटोही लोग।

1. आपन घानी निकरि जाय।
चहे तेलिया कै बैल मरि जाय।।

2. खाय अपने मन कै, पहिरै सबके मन कै।

3. गँजेड़ी यार किसके, दम लगाइ खिसके।

4. भूखा कब पतियाय, चार कौर भीतर का जाय।

5. जियत न दियै कौरा, मरे पै बाँधै चौरा।
जियें न पाइन मांड, मरे पै पावै खाँड़।

6. बैठे गोइयाँ का झाबरि बहुत नीक लागत है।

7. डइनिउ कै दमाद पियार होत है।

8. धोबियवा से न जीतै गदहवा कै कान ऐंठें।

9. मूरख का सारी रात छैल का एक घरी।

10. मुँह मूंदे कुँवरि मुँह खोलै सुवरि।

11. रानी कै बानी चेरिया कै सुभाव।
लादै पादै औ औंघाय।

12. साँच न कहै भले जिउ जाय।।

13. बनिया मारै जाने का, चोर मारै अनजाने का।

14. मूड़न, गवन, उजेरे पाख, कातिक, अगहन औ बैशाख।

15. बड़ी बड़ी रनिया बेनिया डोलावैं।
सुवरी के सिरे भवानी आवैं।।

16. लियै घुँघटाही लागै चिरकुटाही।

17. साँझै देय सकारे पावै, पूत भतार के आगे आवै।

18.अपने बछवा के दाँत सबै जानत है।

19. मल्लाह से मल्लाह उतराई नहीं लेत।

लोक-विश्वास पर आधारित लोकोक्तियाँ

1. अनजाने मा सब माफ होत है।
2. उढ़री कबौ न सुधरी।
3. राम-राम कहिहौ तो दूध भात पइहौ
राम का बिसारिहौ तौ मकुनी ना पइहौ।
4. सात-पाँच मिलि कीजै काजा, हारै जीतै नैकु न लाजा।
5. खड़ा तिलक और मधुरी बानी, दगाबाज की यही निशानी।
6. खेत औ बिटिया कोहू कै नहीं परी रहत।
7. गोड़ बड़ा चंडाल कै, मूड़ बड़ा भुआल कै।
8. जिहकी छाती मा बार नहीं, वहिकै एतबार नहीं।

9. जौन बात बियही मा वह उढ़री मा नाहीं।
जौन बात घर मा वह बेड़िनी मा नाहीं।।
10. दौरत चलै तौ करकट आय।
धीरे चलै तो फूहरि आय।।
11. गभुवार लरिका डइनी कै परोस।
12. चोर छिनार जुवारी, इनसे गंगा मैया हारी।
13. चोरी करै तौ खोलै घोड़, नहीं तौ रहै राम की ओर।
14. जाकौ राखै साँइयां मार सकै न कोय।
बाल न बाँका करि सकै जो जग बैरी होय।।
15. जहाँ पासी, हुवाँ बात खासी।
जहाँ चार चारि कोरी, हुवाँ बात बोरी।।
16. तेतरा बेटवा भीख मँगावै।
तेतरी बिटिया राज करावै।।
17. नीलकण्ठ के दर्सन पावा, मानौ भदई गंग नहावा।
18. पक्षै खेती पक्ष नियाव, बिना पक्ष न होय बियाहु।
19. पाप बड़ेरी पर से चिल्लात है।

चर्म रोग सम्बन्धी

1. कुटकी वकुची, औ निम काठा, गांव का ठाकुर भैंस का माठा।
नारि सुहागिल हंसि-हंसि कहै, दाद खाज, खुजली न रहै।।
2. नीला थोथा, फिटकरी, गंधक, मुर्दाशंख।
और सुहागा चौकिया, पांचो एक एक टंक।।
तासो दूना गोधृत, फूल कटोरा माहि।
लकड़ी लावे नीम की कज्जलि करैं वनाय।
नास लेय पीनस, मिटै, दाद अकौता जाय
खोदि बहावै खाज को, तीनै दिना लगाय।।
3. सरसों तेल पकाइये दूध आक का डाल।
मर्दन करिए छानि के धुरखज का है काल।
4. सरसो तेल मिलाइये, दूध आक का लाय।
एक बार लेपन करौ, दाद मूल से जाय।
4. चना चूर्ण हरताल लै, नेंबुआ रसैं मिलाय
तीन दिना मरदन करै सेहुआ जाय बिलाय।।

पेट विकास सम्बन्धी

1. चीत कोरैय्या पाढ़ी।
जारै वैद की दाढ़ी।
2. पैर गरम, पेट नरम, और सर को राखों ठण्डा।
घर में आवै वैद तो मारो वहिका डण्डा।।

3. खाय, उठै और परै उतान, आठ श्वास लीजै परमान।
सोलह दायें, वत्तीस बायें, तों कल परैं अन्न के खायें।।
4. जौ काहूं मारा चहौ विन लाठी विन धाव।
तासों यही बताइये, घुइयां पूरी खाव।।
5. ऊचे चढ़ि कै बोला मंढुवा
सब नाजो का मैं हूं भंढुवा
तीन दिन जो मो को खाए
बड़े मजे से, उठा न जाये।
6. खाय के मूतै सूतै बाऊं।
काहे वैद बसावे गांऊ।।
7. एक पहर नित करै अहारू।
न तन घटै, न पाकै बारू।।
8. बिना माघ घिउ खिचरी खाय
बिन बोले ससुरारी जाय
बिन अवसर के पहिरै पाउवा
घाघ कहै ई तीनिउ कौवां
इसके जबाब में भी एक लोकोक्ति प्रचलित है -
कबौ कबौ घी खिचरी खाय
काम परे ससुरारी जाय
समयपाय कै पहिरैं पाउवा
घाघ दहिजरा खुद हैं कौंवा।।

अन्य

1. विशुवा, वन्दर अगिनि, जल, कूटी, कटक कलार।
ई दसहूं आपनि नहीं, सूजी, सुवा, सोनार।।
2. दन्त धवन और लट्ठिका कुच कपोल औ पान,
ई सबहि मोटे भले, राजा पास देवान।।
3. रहुआ महुआ ताल तराई,
इनके माथे कर्ज न खाई।।
4. खेती करै वनिज का धावैं
दुइ मा एकौ हाथ न आवैं।।
5. क्वांरी हवैं कै पान चबाय, दूरि कै खेत रखावन जाय,
संग होय भाई कै साला, तब जान्यो कुछ दाल मा काला।
6. जेहि घर हींग न हरदा।
तेहि घर जेवैं वरधा।।
7. फूहरि बैठि रसोइया।
तब भोजन देई गोसईया।।
8. तीतर पंखी वादर विधवा काजर देय।

ई वरसैं उई घर करैं या में नहि संदेह।।

9. ढीली बेंट कुदारी, औ झनक कै बोलै नारी।
हंसि कै मांगिसि दम्मा, ई तीनिउ काम निकम्मा।।

10.पंडित कुत्ता हाथी।
नहीं जाति के साथी।।

11. सत्तर पंडित सत्तर राह।
सत्तर बढ़ई एकै राह।।

12. धर्म के बाधक चार
पंडित, कांटा, कुत्ता नार।।

लोकगीत

संस्कार-गीत

सोहर

गंगा जमुनवाँ के बिचवाँ तेवइया एक तपु करइ हो।
गंगा! अपनी लहर हमैं देतिउ मैं मँझधार डूबित हो।।
की तोहिं सासु-ससुर दुख कि नैहर दूरि बसै।
तेवई! की तोरे हरि परदेस कवन दुख डूबउ हो।।
ना मोरे सासु-ससुर दुख नाहीं नैहर दूरि बसै।
गंगा! ना मोरे हरि परदेस कोखि दुख डूबउ हो।।
जाहु तेवइया घर अपने हम न लहर देबइ हो।
तेवई! आजु के नवएँ महिनवाँ होरिल तोरे होइहैं हो।।
गंगा! गहबरि पिअरी चढ़उबै होरिल जब होइहैं हो।
मैया! देहु भगीरथ पूत जगत जस गावइ हो।

सासू मोरी कहइ बँझिनियाँ

सासू मोरी कहँइ बँझिनियाँ ननद ब्रजबासिनि हो।
रामा जिनकी मैं बारी से बियाही उइ घर से निकारिनि हो।।
घरवाँ से निकरि बँझनियाँ जंगल बिच ठाढ़ी हो।
रामा बन से निकरी बघिनियाँ तो दुखु-सुखु पूँछइ हो।।
तिरिया! कौनी बिपतिया क मारी जंगल बिच ठाढ़ी हो।।
सासु मोरी कहइं बँझिनियाँ ननद ब्रजवासिनी हो।।
रामा जिहका मैं बारी - बियही उइ घर से निकारिनि हो।।
बाघिन! हमका जो तुम खाइ लेतिउ बिपतिया से छूटित हो।।
जहवाँ से तुम आइउ लउटि हुवाँ जाओ तुमहिं नाहीं खइबइ हो।
बाँझिनि! तुमका जो हम खाइ लेबइ हमहुँ बाँझिन होबइ हो।।

सोने के खड़उवाँ राजा दसरथ

सोने के खड़उवाँ राजा दसरथ बेइली तर ठाढ़ भये।
बेइली! पतवा कँचन अस तोर तो फल कैसे निरफल हो।।
भल बउरानेउ राजा दसरथ किन बउरावा हो।
राजा ! तोहरे घर रनिया कौसिल्ला त उनहीं से पूँछउ हो।।

सोने के खड़उवाँ राजा दसरथ बेदिया पे ठाढ़ भये।
मोरी रानी काहे तोहरा बदन मलीन कँवल नाहीं हुलसइ हो।।
भल बउराने राजा दसरथ किन बउरावा हो।
राजा बिनु रे सन्तति कुलहीन कँवल कैसे हुलसइ हो।।
सोनवा तौ हमरे गिनती नाहीं चँदिया के ढेर लागइ रे।
मोरी रानी! बरहा भवन कै अजोधिया दुनौं जने भेलसब हो।।
सोनवाँ तो मोरे लेखे राखी भा चँदिया तो माटी भा है।
राजा ! बरहा भवन कै अजोधिया तौ मोरे लेखे जरि गैहै हो।।
तू राजा होउ तपसिया तौ हम धना तपसिन हो।
मोरे राजा! बिन्दरावन कै कुटियवा दूनो जने तप करबइ हो।।
बन से निकरे एक जोगिया तौ का तुम पूँछउ रे।
राजा कवन संकट तोहरे जियरा तो मधुबन तप करउ हो।।
का रे कहउँ मोरे जोगिया तौ का तुम पूँछउ रे।
जोगिया बिन रे सन्तति कुलहीन तो मधुबन तप करउँ हो।
झोलिया से काढ़िनि भभुतिया तो राजा का दीहिनि रे।
राजा आठ रे महीना नौ लागत राम जनम लेहइँ,
अजोधिया राजा खेइहइँ हो।।
आठ महीना नौ लगतै श्रीरामजी जनम लीन्हे हो।
ए हो बाजै लागी अनन्द बधैय्या उठन लागे सोहर हो।।
सभवै बइठे हैं राजा दसरथ सुनहु कौसिल्ला रानी हो।
रानी उहइ बेइलिया कटइबइ त जिन मोका बोली बोला हो।।
मचियै बइठी कौसिल्ला रानी सुनो राजा दसरथ हो।
मोरे राजा ! दुधवन बेइली सिंचइबइ त जिन मोका बुद्धि दिये हो।।

भोर भये भिनुसार चिरइया एक बोलइ

भोर भये भिनुसार चिरइया एक बोलइ।
राजा झपटि के खोलइँ केवरिया होलिनि डीठि परिगै।
परि गइ हेलिनिया क डीठि राजै के मुख ऊपर।।
हेलिनि बिनवै हेलवा संग अपने पुरुख सँग।
हेलवा आजु देखेउँ निरबंसी गुसइयाँ कैसे पुरवैं।।
चुप रहु हेलिनी छिनारि तैं जतिया क पातरि।
तीन भुअन कर राजा कहेउ निरबंसी।।
चुप रह हेलवा दहिजरा तैं जतिया का पातर।
हेलवा तीनि उन्हा करि रानी तीनों जनि बाँझिनि।।
यतना सुनेउ राजा दसरथ जियरा दुखित भये।
राजा गोड़े-मूड़े तानेनि दुपटवा सुतैं धौराहर।।
घरिया-घरिया दिन दुपहर पहर न बीतै।
मोरा सिझलै जेवनवा जुड़ाय रजै नाहीं आये।।

अरे रे राजा जी कै चेरिया त हमरी लउँड़िया।
चेरिया सिझले जेवनवा जुड़ाय रजै नाहीं आये।।
चेरिया जे चढ़ि गइ अटरिया रजै क जगावइ।
राजा जे आये हैं महलिया बेदिया चढ़ि बइठें।
राजा कौन बिरोग तुमरे जियरा त हमसे बतावहु।।
पाँच पदारथ मोरे घर छठयें नरायन।
रानी जतिया क पातर हेलिनियाँ कहइ निरबंसी।।
बाउर हो राजा बाउर किन बउरावा।
राजा जो विधि लिखा है लिलार तहैं भरि पाउब।।
बाउर हो रानी कौसिल्ला किन बउराई।
रानी देहु न हमरा अयनवा देखहुँ मुख आपन।।
ऐनहु लइ मुख देखिन जियरा दुखित भयें।
रानी करर-बरर होइगे बार गोसइयाँ कैसे पुरवैं।।
बाउर हो राजा बाउर किन बउरावा।
राजा जो विधि लिखा है लिलार तहैं भरि जाबइ।।
एक बन डाकैं दुसर बन तीसरे बिन्द्राबन।
बिन्द्रैबन के बिचवाँ त राजा ध्यान लायनि।।
बन से निकरेनि एक तपसी पुछैं राजा दसरथ।
कौन बिरोग तुमरे जियरा जो अतनी दूरि आये।।
पाँच पदारथ मोरे घर छठयें नरायन।
तपसी जतिया क पतरी हेलिनिया कहइ निरबंसी।।
जाहु रजै घर अपने पूत तोरे होइहइँ।
राजा सुनि लिहें तोहरी पुकार जगत कै मालिक।।
होत बिहान लोहि फाटत होरिल जनम लिहें,
राम जनम लिहें।
बाजै लागी अनन बधइया गावैं सखि सोहर।।
घर-घर फिरैं राजा दसरथ पंडित बोलवाइँ।
पंडित खोलहु न पोथिया पुरान तो सुघरी बिचारहु।।
बहुतै सुघरी रामा जनमैं तो रोहनी नखत मा।
राजा बारह बरस के होइहइँ त बन के सिधरिहइँ।।
बभना के पूत जौ न होतेउ त जियरा मरवउतेंउ।
मोरि अतनी तपस्या के राम त बन के सुनायेउ।।
मन कै दुखित राजा दसरथ सुतें धवराहर।
मन क उछाहिल कौसिल्ला रानी पटना लुटावइँ।।
बाउर हो रानी कौसिल्ला किन बउराई।
रानी धीरे-धीरे पटना लुटावउ राम बन जइहइँ।।
बाउर हो राजा दसरथ किन बौरावा।
राजा छुटल बँझिनिया क नाम भले बन जइहैं।।

मचियहि बैठी हैं सासू त बहुआ

मचियहि बैठी हैं सासू त बहुआ से पूछइँ रे।
बहुआ काहें तोर मुँहा पियरान गोड़ घहरावहि रे।।
लाज-सरम कइ बतिया मैं सासूजी से कइसे कहउँ रे।
सासू तोरा पूत छयल छबिलवा अँचरवा पिच डारइँ रे।।
ये अलबेली बहुरिया लछन न लगावहु रे।
दुलहिनि आज के नवयें महिनवाँ होरिल तोहरे होइहैं रे।।

पहिल सपन एक देखेउँ अपने मंदिर में

पहिल सपन एक देखेउँ अपने मंदिर में रे।
सासु सपने क करहु बिचार सपन सुभ पावउँ।।
सपने ससुर राजा दसरथ बगिया लगावइँ हो।
सासु बगिया म फुलइ गुलाब भँवर रस बिलसइ हो।
सपने कौसल्ला ऐसी सास तो हमरे महल आई।
सासु सोने कै दहेंड़िया लिये ठाढ़ि पुछैं बहुवा कहाँ धरउँ रे।
सपने लखन अस देवर रुमालिया पीठि झारैं,
बिहँसि बतिया बोलइँ हो।
भौजी जौ तोरे होइहैं होरिलवा बछेड़वा हम लेबइ रे।।
सपने सुभद्रा ऐसी ननदी तौ हमरे महल आई,
बिहँसि बतिया बोलइँ हो।
भौजी जौ तोरे होइहैं होरिलवा कँगन हम लेबइ हो।।
सपने पुरुष राजा राम अस हमरे महल आयें।
सामी हँसत कमल दूनौ नैन सेजरिया पगु धारइँ हो।।

छोट-मोट पेड़वा ढेकुलिया त पतवा रे

छोट-मोट पेड़वा ढेकुलिया त पतवा रे लहालही हो।
रामा ताही तरे ठाढ़ि रे हरिनिया हरिन बाट जोहइ हो।।
बन से निकरी लेला हरिन त हरिनी से पूछइ हो।
हरिनी काहें तोर बदन मलीन काहें मुँह पीअर हो।।
गइउँ मैं राजा के दुअरिया त बतिया सुनि आइउँ हो।
प्यारे आजु छोटे राजा क बरहिया हरिन मरवइहइँ हो।
दशरथ बगिया लगावइँ लखन आये ढूँढ़ने हो।
प्यारे रघुबर धनिया गरभ से हरिन मरवावइँ हो।
कर जोरी हरिनी अरज करइ सुनु कौसिल्ला रानी हो।
रानी सीता के होइहैं नन्दलाल हमही कुछ दीहब हो।
सोनवा मढ़इबों दुहू सिंगवा भोजनवा तिल चाउर हो।
हरिनी भुगतहु अयोधिया क राज अभै बन बिचरहु।।

जउ मैं जनतेउँ ये लवँगरि एतनी मँहकबिउ

जउ मैं जनतेउँ ये लवँगरि एतनी मँहकबिउ।
लवँगरि रँगतेउँ छयलवा क पाग सहरवा में गमकत।।
अरे-अरे कारी बदरिया तुहइँ मोरि बादरि।
बादरि! जाइ बरसहु वहि देस जहाँ पिय छाये।।
बाउ बहइ पुरवइआ त पछुवाँ झकोरइ।
बहिनी दिहेउ केवड़िया ओढगाय सोवउँ सुख नीदरि।।
कि तुहूँ कुकुरा बिलरिआ सहर सब सोवइ।
कि तुहूँ ससुर पहरिआ किवरिआ भुड़कावहु।।
ना हम कुकुर बिलरिया न ससुरु पहरिआ।
धना हम अही तोहरा नयकवा बदरिया बुलायसि।।
आधि राति बीति गई बतियाँ नियाई राति चितियाँ।
बारह बरस का सनेहिया जोरत मुर्गा मरोरबउँ।
मुर्गा काहे किहेउ भिनुसार त पियहि बतायउ।।
काहे क ये रानी तोरबिउ मोर गटइया मरोरबउ।
रानी होइ गइ धरमवाँ क जूनि भोर होत बोलइ।।

मोरे आँगन चन्दन रुखवा त लहर-लहर करै

मोरे आँगन चन्दन रुखवा त लहर-लहर करै हो।
ललना, तेही पर बोलै काग त बोल सुहावन।।
की काग नैहर से आवा की हरिजी पठावा।
काग कौन सन्देस तुम लायो त बोलिया सुहावन।।
नहीं हम नैहर से आवा ना हरिजी पठावा।
आज के नवयें महीना होरिल तोरे होइहैं।।
चुप रहौ काग तू चुप रहौ बैरिनि ना सुनै।
एक तो बिटियही मोरी कोख दुसरे हरि दारुन।।
आठै नौ मास लागत होरिल जनम भए।
बाजै लागे आनँद बधैया उठन लागे सोहर हो।।
रान्ह परोसिन माया मोरी और बहिन मोरी।
कगवा क हेरी मँगाओ मैं सोनवा मिढ़ाबौं।।
सोनवाँ मिढ़ौबे वोकै ठोर रूपे दोनौ डखना।
सोने के कटोरिया में दूध भात कगवा क भोजन।।

छापक पेड़ छिउलिया

छापक पेड़ छिउलिया तौ पतवन घन बन।
एक हो ओहि तरे ठाढ़ी सीतल देई मनहीं बिसोइ करैं हो।।
को मोरे दुइ खर तुरिहैं त मड़ई बनइहँइ।
ऐ हो, को मोर दियना जरइहैं, त मड़ई रखइहँइ।।

बन से जो निकरे बन तपसी। त सीतै समुझावहिं हो।
सीता! हम तोरा दुइ खर तुरब त मढ़ई छवाइब।
सोता! हम तोरा दियना जराइब त मढ़ई रखाइब हो।।
को मोरा लीन्हें मुट्ठी भर सोने का छुरवा त को मोरे धगरीन।
ऐ हो, को मोरे पँजरा बइठइहैं त बिपती गवाँइब हो।।
बन से जो निकरी बन तपसिन। सीतै समुझावहिं।
सीता! हम देबों मुट्ठी भर सोने का छुरवा त हम तोर धगरीन।।
सीता ! हम तोरे पंजरा बइठाइब त बिपति गवाँइब हो।।
भोर भये पहु फाटल लउहर जनम ले ले जंगल सोहावन हो।
ऐ हो, हँकरि बोलावहु नग्र के नउआ त हँरि बोलावहु हो।
नउवा चारि सोपारी लेइ लेहु रोचन लेइ जावहु हो।।
पहिला रोचन राजा दशरथ दुसरा कौसिल्ला रानी।
एक हो, तिसरा रोचन देवर लछिमन, पिअइ न बतायउ हो।।
छोटे कदम के रे डाल त राम दतुइन तोरैं।
लछुमन किनके रोचन तुम पाया त भहर-भहर करै झहर-झहर करै।।
भाभी जो हमरी सीतलदेई बड़ी गुन आगरि।
भइया, उनहीं के भये नँदलाल रोचन हम पायों।
मोरे सिर भहर-भहर करै, झहर-झहर करै।
जनम तो लेले पूता बड़ी रे विपति में हो, बड़ी रे सँसति में हो।
पूता जनम जो लेतेउ अजोधिया हमहुँ मुँह देखित।।
राजा दसरथ पटना लुटउतें कौसिल्ला रानी अभरन।
रामा तरर-तरर चुवै आँसु पटुकवन पोंछइँ।

चैतहि कै तिथि नवमी

चैतहि कै तिथि नवमी तौ नौबति बाजइ हो।
बाजइ दसरथ राजदुवार कौसिल्ला रानी मंदिर हो।।
मिलहु न सखिया सहेलरि मिलिजुलि चालित हो।
जहाँ राजा के जनमें हैं राम करिय नेवछावरि हो।।
केउ नावैं बाजू बन्द केउ कजरावट हो।
केउ नावैं दखिनवाँ क चीर करहिं नेवछावरि हो।।
भितराँ से निकरीं कौसिल्ला अँगनवहिं ठाड़ी भई हो।
रानी धई-धई हिरदै लगावैं करैं नेवछावरि हो।
राम नयन रतनारे कजर भल सोहैं हो।
दीन्हों रचि-रचि फुआ सुभद्रा तउ पतरी अँगुरियन हो।।
राम के मथवा लुचुरिया बहुत निक लागइ हो।
जैसे फूलन के बिचवा कलिया बहुत निक लागइ।।
राम के गोड़वा घुघुरुवा बहुत निक लागइ हो।
नान्हें गोड़वन चलत बकैयाँ देखत राजा दसरथ।।

जौ यह मंगल गावइँ गाय सुनवाइँ हो।
सौ तौ तुलसी जगत तरि जाय अमर पद पावइ हो।।

सोने के खड़उवाँ

सोने के खड़उवाँ राम खुटुर-खुटुर करइँ हो।
उठहु ससुर राम धेरिया सेजरिया हमरी डासहु हो।
सोनवहि क मोरा नैहर रुपवा केवाड़ी लागे हो।
रामा सात भैया क बहनी सेजरिया कैसे डासउँ हो।
अतना बचनु सुनि रजवा तौ मनहिं दुखित भये हो।
अरे हो, हनि लिहिन बजर केवाँड़ उघारे नहीं उघरइ।
खोलाये नाहीं खोलइँ बोलाये नाहीं बोलइँ हो।।
मचियै बैठी सासू तौ बहुवरि अरज करइ हो।
सासू कवन गुनहिं हम कीन्ह केवड़िया हानि लीन्हे हो।।
बेटा तू मेरा बेटा तुमहिं सिर साहिब हो।
बेटा कवन गुनहियाँ बहुवर कीन्ह केवड़िया हानि लीन्हे हो।
मैया तू मोरी मैया तुहहिं मेरी मैया हौ हो।
मैया सोनवहि कै वोकै नैहर रुपवै केवाड़ी लागे हो।
मैया सात भैया कै बहिनिया सेजरिया कैसे डासइँ हो।
मटियहिं कै मोरा नैहर सुपवा केवाँड़ी लागे हो।
सासू सातो भैया किंगरी बजावइँ बहिन मोरी नाचइ हो।

केकर ऊँच मंदिरवा

केकर ऊँच मंदिलवा त पुरुब दुअरिया हो।
रामा कौन राम परम सुनरिया त बार न बाँधइ
सिर न सँवारइ, भुइयाँ प लोटइ हो।।
ससुर क ऊँच मँदिरवा त पुरुब दुअरिया हो।
कवन राम परम सुनरिया त बार न बाँधइ,
सिर न सँवाँरइ, भुइयाँ प लोटइ हो।।
अँगना बटोरत चेरिया औरौ लउँड़ियाउ हो।
चेरिया राजा के खबरि जनाउ बेदन मोर कहियो हो।
पसवा जे खेलत कवन राम रजवा कवन राम हो।
राजा तोरी धन बेदना बेआकुल तुहँके बोलावइ हो।
पसवा जे फेकैं राजा बेल तर औरौ बबुर तर हो।
राजा झपटि पईठैं गजओबरि कहै रे धन बेदन हो।।
मुड़ मोर बहुत धमाकै अरे कड़िहर सालइ हो।
राजा मुअलिउँ कमरिया की पीर तो दाई बोलावहु हो।
तुम राजा बइठौ गोड़रवरियाँ हम गुड़वरियाँ हो।
राजा पहर-पहर पीर आवै दुनौं जन अँगइब हो।

छानी जो होत त छवतेतिउँ मरद बोलउतेउँ हो।
रानी बेदन का बाँधल मोटरिया कले कल छूटहिं
ते छोरहिं नरायन हो।
आवहु रान्ह परोसिनि तुहूँ मोर गोतिन हो।
गोतिन यहि बौरहिया समझावो बेदन कइसे बाँटी हो।

कुसुम अस सुन्दरि

जिरवै अस धन पातरि कुसुम अस सुन्दरि।
रामा चढ़ि गईं पिआ की अटारी सोईं सुख नींदिया।।
गेडुवा त धरिन उससवाँ चुनरी पयन तरे।
धना चढ़ि गई पिया की अँटरिया सोईं सुख नींदिया,
खबरि कुछ नाहीं।।
सोइ-साइ जब जागीं चौंकि उठि बइठीं।
ये मोरे राजा छोड़ो न मोर अँचरवा तौ हम भुइँ बइठीं।
कै तोरी सासु तुम्हैं टेरै की ननद बुलावइ।
ये री रानी की तोरे रौवैं बारे लाल जिन्हैं लै बइठौ।
ना मोरे राजा ! राम भजन की है बैर मैं जिअरा लइके बइठब।।
कोठे से उतरीं जच्चा रानी त आँगन ठाढ़ी भईं।
द्वारे से आये उनके देवर काहे भाभी अनमनि।।
देवरा हो मोरे देवरा अरे तुम मोरे देवरा।
ये मोरे देवरा तोरे भाई बोलैं विष-बोल करेजे मोरे सालइ।।
भाभी हो मोरी भाभी तुमहीं मोरी भाभी।
ये मोरी भाभी! अँचरे में लै तिल चौरा त सुरुज मनावउ।।
न्हाइ धोइ जब ठाढ़ी भइँ सुरुज मनावइँ।
ये मोरे सूरुज हम पर होउ दयाल सजन बोली बोलइँ।।
सुरुज मनावइ न पायउँ होरिल भुइँ लोटइँ।
बाजै लागी अनँद बधाई गावैं सखि सोहर।।
टेरो न गाँव के बढ़ई हाली चलि आवइ बेगि चलि आवइ।
मोरे राजा चन्दन बिरिछ कटावइँ औ पलँग बिनावइँ।।
ईंगुर बरनि पलँगिया रेसम वरदावन।
मोरी रानी ! आइ सोवउ सुख नींद मैं बेनिया डोलावउँ।।
अब तौ बेनिया डुलौबेउ बहुत निक लगबइ।
मोरे राजा ! एक होरिल के कारन तुँ बोली हनि मारेउ
करेजे मोरे सालइ।।

छापक पेड़ छिउल कर पतवन

छापक पेड़ छिउल कर पतबन घनबनि हो।
जिहिं तर ठाढ़ी सीता देई बहुत विपति म हो।।

कहाँ पाउब सोने क छुरउना कहाँ पाउब धगरिन।
को मोरी जागइ रइनिया कवन दुख बाँटइ।।
बन से निकरीं बन तपसिनि सीतहिं समुझावइँ।
चुप रहु बहिनी तु चुप रहु हम देबइ सोने क छुरउना।
हम तोरी जागब रइनिया हमहि होबै धगरिन।
विपति महिं बाँटब।।
होत भोर लोही लागत कुस के जनम भये।
बाजै लागी अनँद बधाई गावइँ सखि सोहर।।
जौ पूता होत अजोधिया राजा दसरथ घर हो।
राजा सगरिउ अजोधिया लुटउते कौसल्या देई अभरन।।
अब तो पूता जनमेउ बन में बनफूल तोरउ हो।
बेटा ! कुस रे ओढ़न कुस डासन बनफल भोजन हो।।
हँकरिन बन केर नउवा बेगहि चलि आयउ।
नउवा जल्दी अजोधिया क जाओ रोचन पहुँचाओ।।
पहिला रोचन राजा दसरथ दुसर कौसिल्ला रानी।
तीसरा दिन्ह्यो देवर लछिमन पियहिं न बतायउ।।
राजा दसरथ दिहेन घोड़वा कौसिल्ला रानी अभरन।
लछिमन देवरा दिहेन पाँचौ जोड़वा त नउवा विदा कर।।
सोनेन केर गेंड़वना तो राम दातुन करें।
लछिमन भहर-भहर होय माथ रोचन कहँ पायउ।।
भौजी तो हमरी सीता देई दोऊ कुल राखनि।
भइया उनके भये नन्दलाल रोचन हम पावा।।
हाँथे क गेंडुवा हाथ रहा मुख की दँतिउन मुखै रहि।
ढुरै लागे मोतियन आँसु पटुकवन पोंछइँ ।।
आगे के घोड़वा वशिष्ठ मुनि पाछे कै लछिमन।
बीचे के घोड़वा रामचन्दर सीता के मनावन चलें।
तुम्हरा कहा गुरु करबइ परग दस चलवइ।
फाटइ धरती समाबइ अजोधिया न जाबइ।।

देहरी के ओट धन ठुनकइँ

देहरी के ओट धन ठुनकइँ उनुन-ठुनुन करइँ रे।
राजा हमरे तिलरिआ कै साध तिलरिआ हम लेबइ।।
एक तो कारी कोइलिया औ दुसरे छछुन्दरि।
रानी तोहरेउ तिलरिआ क साध तिलरिआ काउ करबिउ।।
एतनी बचन रानी सुनिन मन म बिरोग भवा,
जियरा दुखति भवा।
रानी कोइँछा में लिहीं तिल चउरा त देवता मनावइँ,
सुरजा मनावइँ।।

आठ महीना नौ लगतइ, होरिल जनम लिहीं, बबुआ जनम लिहीं रे।
बहिनी बाजइ लागी अनँद बधइया उठन लागे सोहर।।
अँगनइ बजत बधइया भितर मोरे सोहर हो।
बहिनी सतरँग बाजइ सहनइया ससुर द्वारे नौबति रे।।
हँकड़हु नगर के सोनरा हाली बेगि आवइ, आरे जल्दी आवइ रे।
सोनरा गढ़ि लाओ सोने कै तिलरिया मैं रानी क मनावऊँ।।
हँकरहु नगर के बरई हाली बेगि आवइ जल्दी से आवइ।
बरई मोहर क बिरवा लगावउ मैं लछिमी मनावउँ।
दहिने हाथे लिहिन तिलरिआ बायें हाथे बिरवाउ रे।
राजा झमकि के चढ़ि गै अटरिया तो रनियाँ मनावइँ।।
सूतल नरिआ मनावइँ जाँघ बैठावइँ।
रानी छोड़ि देव मन कै बिरोग पहिरो रानी तिलरी।।
राजा हम तौ कारी कोइलिआ तिलरिया नाहीं सोहइ।
राजा हमरे पलँग मति बैठौ साँवर होइ जाबेउ रे।।
राजा होरिल दिहिन भगवान त तुम्हरे धरम से हो।
राजा पाये रतन अनमोल तिलरिआ काउ करबइ हो।।

नौमी राम जग्गि रोपेन

माघे कै तिथि नौमी राम जग्गि रोपेन।
रामा ! बिना रे सिता जग्गि सूनि सितै लइ आवउ ।।
अरे रे गुरू वसिष्ठ मुनि पइयाँ तोरि लागौं।
गुरु तुमरे मनाये सीता अइहैं मनाय लै आवहु।।
अगवाँ के घोड़वा बसिष्ठ मुनि पाछे लछिमन देवर।
हेरैं लागें रिषि की मेढ़ुलिया जहाँ सीता तप करैं।
अँगनेहिं ठाढ़ी सीतल रानी रहिया निहारत ।
रामा आवत हैं गुरू हमार त पाछे लछिमन देवर।
पतवा के दोनवा बनाइन गंगाजल पानी।
सीता धोवै लागीं गुरुजी के चरन औ मथवाँ चढ़ावैं।
येतनी अकिलि सीता तोहरे तु बुधि कै आगरि।
सीता किन तोरा हरा है गेयान राम बिसरायउ।।
सब कै हाल गुरु जानौ अजान बनि पूछौ।
गुरु अस कै राम मोहिं डाहेनि कि कैसे चित मिलिहै।।
अगिया में राम मोहिं डारेनि लाइ भूँजि काढ़ेनि।
गुरु गरुहे गरभ से निकारेनि त कैसे चित मिलिहै।।
तुमरा कहा गुरु करबै परग पाँच चलबइ।
गुरु अब न अजोधियै क जाब औ विधि न मिलावैं।।
हँकरहु नगरा के कँहरा बेगि चलि आवउ हो।
कँहरा चनन क डँड़िया फनावउ सितहि लइ आउब।।

एक बन गइलें दुसर बन तिसरे बिन्द्राबन।
गुल्ली डँडा खेलत दुइ बलकवा देखि राम मोहेन।।
केकर तू पुतवा नतियवा केकर हौ भतिजवा हो।
हम राजा जनक के नतिया सीता कै दुलरुवा हो।।
इतना बचन राम सुनलेन सुनहू न पउलेनि हो।
रामा तरर-तरर चुवइ आँसु पटुकवन पोंछइँ हो।।
अगवैं ऋषि क मँढुलिया राम नियरानेनि।
रामा छापक पेड़ कदम कर लगत सुहावन।।
पछवाँ पलटि जब चितवइँ रामजी ठाढ़े।।
रानी छोड़ि देहु जिअरा बिरोग अजोधिया बसावउ।
सीता तोरे बिन जग अँधियार त जिवन अकारथ।।
सीता अँखिया में भर लीं बिरोग एकटक देखिनि।
सीता धरती में गईं समाइ कुछौ नाहीं बोलिन।।

चैतइ की तिथि नउमी कि नौबति बाजइ

चैतइ की तिथि नउमी कि नौबति बाजइ।
राजा राम लिहिन अउतार अयोधिया के ठाकुर।।
दसरथ पटना लुटावैं कौसिल्ला रानी अभरन।
रानी कैकइ वस्त्र लुटावैं सुमित्र रानी सुबरन।।
राम के मथवा झलरिया बहुत निक लागै अधिक छबि लागइ।
मानौ कमल कर फूल भँवर सिर लून करैं।।
राम के पाँय पैंजनियाँ बहुत निक लागै अधिक छबि लगाइ।
ये हो चलत मधुरियन चाल त रुनि-झुनि बाजइ।।
राम के कमर करधनियाँ बहुत निक लागै अधिक छबि लागइ।
सँवरे बदन पे झँगुलिया दमिन चित चोरइ।।
राम के नयन कजरवा अधिक निक लागै बहुत छबि लागइ।
अब दीन्ही है फूफू सहोद्रा अँगुरिया नाहीं डोलइ।।
ऐसी मूरत जौ पउतिउँ हृदय मा बसउतिउँ।
पीत पितम्बर ओढ़उतिउँ ललन कहि बोलउतिउँ।।

मुण्डन गीत

सभवहिं बैठे सिर साहब

सभवहिं बैठे सिर साहब, बोलैं उच्चारानी रे।
साहेब मोरे नैहर रोचना पठावो,
पियरिया भैया भेजैं, होरिलवा के मूड़न।।
तोहर नैहरवा धन दूरि बसै, कोसवन को गनै हो।
रानी, घर ही म रंगहु पियरिया, चौक पर बैठहु,
होरिलवा के मूँड़न रे।।
तोहर पियरिया राजा नित के, निति उठि पहिरब हो।
राजा, हमरे भैया कै पियरिया सगुन के,
चउक पर बैठब, होरिलवाँ के मूँड़न हो।।
हँकरहु नगर के नौवा बेगहिं चलि आवहु रे।
नौवा रँगि-रँगि पीसहु हरदिया, रोचन पहुँचावहु,
होरिलवा के मूँड़न रे।।
सभवहिं बैठे हैं बीरन भैया, नौवा से पूछइँ रे।
नौवा केकरे भयन नन्दलाल, रोचन कहाँ पायौ हो।।
बड़हर कै हम नौवा, सजन घरवाँ आये हो।
तोहरी बहिनी के भये नन्दलाल,
रोचन लैके आये हो।।
हरखि के उठेनि बीरन भैया, धन जी से पूँछै हो।
रानी, बहिनी के भये नन्दलाल, रोचन हमै आवा,
पियरिया लैके जाबै रे।।
येहि पेटरवा के कुंजिया ना जानों कहाँ गिरि गई हो।
राजा नाहीं रे बजजवा यहि गाँव,
पियरिया कहाँ पउबो रे।।
बेंचबै मैं ढाल तरुवरिया, अरे फाँड़े कै कटरिया रे।
रानी, सौ साठि पियरी, रंगौबे, चौक पर पहुँचब हो।।

हाथी चढ़ो बाबा हाथी

हाथी चढ़ो बाबा हाथी चढ़ो, बाबा कवन रामा हो।
तुमरे नतिया कै लगन समीप, तौ लफरी मुँड़ाओ हो।।
हाथी चढ़ो दादा हो हाथी चढ़ो, दादा कवन रामा हो।
तुमरे दुलरू कै लगन समीप, तौ लफरी मुँड़ाओ हो।।
नौआ गा हइ कासी, तौ बाँभनु बनारस हो।
मोरी धिया गइ हैं ससुरारि, तौ कैसे मुँड़ावउँ हो।।
असी कोस कै ननदिया बधौवा लैकै आई हो।
मोरी भौजी ने हना है केवड़िया, इहाँ कहाँ आइउ हो।

की भौजी होब जोगिनि, की होब भाँटिनि हो।
की होब जंगल पतुरिया, दुवारे तोरे नाचौं हो।।
नाहीं ननदी मोर जोगिनि, नाहीं होउ भाँटिनि हो।
ननदा, बड़े रे छयल कै बहिनियाँ, आदर बिन आइउ हो।।

जनेऊ के गीत

सतुवा औ गुड़

देहु न माता मोहिं सतुवा औ गुड़ गेंड़वा।
जैहों मैं कासी बनारस बेद पढ़ि अइहौं।।
नाहीं मोरे सतुवा नाहीं गुड़ गेंड़वा।।
तोरा दादा हैं विद्वान घर हीं बेद पढ़िल्यो।।
देहु न काकी मोहिं सतुवा औ गुड़ गेंडुवा।
जैहों मैं कासी बनारस बेद पढ़ि आइहों।।
नाहीं मोरे सतुवा औ गुड़ गेंडुवा।
तोरा काका हैं विद्वान घरहीं बेद पढ़िल्यो।।
देहु न बुवा मोहि सतुबा औ गुड़ गेंडुवा।
जैहों मैं कासी बनारस वेद पढ़ि अइहों।।
नाहीं मोरे सतुवा नाहीं गुड़ गेडुवा।
तोरा फूफा हैं विद्वान घरहीं वेद पढ़िल्यो।।

द्वारेन द्वारे बरुवा

द्वारेन द्वारे बरुवा फिरैं पूछैं बाबा की हो।
द्वारेन उनके हैं कुइँया भीती चित्र उरेही हो।।
आँगन तुलसी क बिरवा बेदवन झनकारी है हो।
सभवन बैठे बाबा तुम्हरे बैठे पुरवें जनेउवा हो।।

सोने के खड़ाऊँ

सोने के खड़ाऊँ राजा दशरथ ठाड़े पंडित पुकारइँ हो।
अरे-अरे पंडित वशिष्ठ जी मोरी अरज ओनाव।।
आठ बरिस के रमइया उन्हें देतेउ जनेउना।।
अतना सुनिन हैं वशिष्ठ जी मलिआ बुलावइँ।
माली पानेन मड़वा छवावउ कलसा धरावउ।।
आठ बरिस कै दुलरुवा मड़ये तर ठाढ़े।
सिर वाके घाम लागै पाँव भूँभुरि लागै हो।।
अरे-अरे माय कौसिल्ला रानी उठि भीख सँभारउ।
आठ बरिस के रमइया चन्द्र मँड़ये तर ठाड़े।।

नदिया के ईरे तीरे बरुवा

नदिया के ईरे तीरे बरुवा से बरुवा पुकारैं।
आजा पठय देव नाव नेवरिया बरुवा चला आवइ।।
ना हमरे नाव नेवरिया नाहीं घर खेवट।
जेकर जनेउवा के साध पउँरि नदिया आवइ।।

भीजै मोर आगे की अँगिवाँ सिर कै पगिया।
भीजै मोर सोरहौ सिंगार जनेउवा के साध।।
देब्यौं मैं आगे के अँगिवाँ सिर कै पगिया।
देब्यौं मैं सोरहौ सिंगार जनेउवा के कारन।।

गयाजी में बरुआ पुकारेइ

गयाजी में बरुआ पुकारेइ हथवाँ जनेउवा ले ले।
है कोई गयाजी क ठाकुर हमके जनेउवा दिहे।।
गयाजी के ठाकुर गजाधर उहे उठि बोललें।
हम अही नग्र क ठाकुर हमही जनेउवा देबों।
काशी में बरुआ पुकारेलें हथवाँ जनेउवा लेले।
है कोई कासी के ठाकुर हमके जनेउवा दिहे।।
काशी में ठाकुर विश्वनाथ बाबा उहे उठी बोललें।
हम अही काशी क ठाकुर हमहीं जनेउवा देबों।
विन्ध्याचल में बरुवा पुकारेलं हथवाँ जनेउवा ले ले।
है कोई विन्ध्याचल क ठाकुर हमके जनेउवा दिहे।।
विन्ध्याचल क ठाकुर भवानी त उहे उठि बोलेलीं।
हम अही विन्ध्याचल क ठाकुर हमहीं जनेउवा देबों।।

राजा दसरथ अँगना मूँजि कौसिल्ला रानी

राजा दसरथ अँगना मूँजि कौसिल्ला रानी भल चीरैं।
लपकि-झपकि चीरैं दूनौ हाथे चीरैं।
रामचन्द्र बरुवा भुइयाँ लोटि जायँ जनेउवा के कारन।।
राजा दसरथ झारिन-झूरिनि जाँघ बैठाइनि।
देबै बेटा सोने कै जनेउ जनेउवा बड़ा उत्तिम।।
राजा दसरथ अँगना मूँजि सुमित्र रानी भल चीरैं।
लपकि-झपकि चीरैं दूनौ हाथे चीरैं।
रामचन्द्र बरुआ भुइवाँ लोटि जायँ जनेउवा बड़ा उत्तिम।
राजा दसरथ अँगना मूँजि केकई रानी भल चीरैं।
देबै बेटा सोने कै जनेउ जनेउवा बड़ा उत्तिम।
रामचन्द्र बरुवा भुइयाँ लोटि जायँ जनेउवा के कारन।।
वशिष्ठ मुनि झारिनि झूरिनि जाँघ बैठाइनि।
देबै बेटा सोने कै जनेउ जनेउवा बड़ा उत्तिम ।।

गंगा किनारे

गंगा किनारे बरुआ फिरैं केऊ पार उतारइ हो।
पठइ दे आजा नवरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो।।
ना मोरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।

जेकरे जनेऊ के साध पँवरि दह आवइ हो।
गंगा किनारे बरुआ फिरैं केऊ पार उतारहु हो।
पठइ देव पिताजी नवरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो।।
ना मेरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेउआ के साध पँवरि दह आवइ हो।
गंगा किनारे बरुआ फिरैं केऊ पार उतारहु हो।
पठइ दे भइया राम नवरिया बरुआ चढ़ि आवइ हो।।
ना मोरे नाव न नवरिया नाहीं घर केवट हो।
जेकरे जनेउवा के साध पँवरि दह आवइ हो।।

मलिया मौर नाहीं गाँछै

मलिया मौर नाहीं गाँछै बेइलिया के फूल बिना।
मोरे लाल जनेउवा नाहीं पहिरैं तो अपने आजा बिना।।
मलिया मौर अब गाँछै बेइलिया के फूल पाये।
मोरे लाल जनेउवा अब पहिरैं तौ आजा अब आये।।
मलिया मौर नहिं गाँछै बेइलिया के फूल बिना।
मोरे लाल जनेउवा नाहीं पहिरैं तौ अपने दादा बिना।।
मलिया मौर अब गाँछै बेइलिया के फूल पाये।
मोरे लाल जनेउवा अब पहिरैं तौ दादा अब आये।।
मलिया मौर नाहीं गाँछै बेइलिया के फूल बिना।
मोरे लाल जनेउवा नाहीं पहिरैं तौ अपने काका बिना।।
मलिया मौर अब गाँछै बेइलिया के फूल पाये।
मोरे लाल जनेउवा अब पहिरैं तौ अपने फूफा बिना।
मलिया मौर अब गाँछै बेइलिया के फूल पाये।
मोरे लाल जनेउवा अब पहिरैं तौ फूफा अब आये।।

कवन रामा आले

ऊँच ओसरवा कवन रामा आले बाँस छाई।
खँभिया ओठँघली दुलहिन सुनो पिया पण्डित।
बरहा बरिसवा कै भये ब्राभन कै देतेउ।।
चाही तो ये धन चाही दस धोती अँगौछा।
चाही तौ ये धन चाही दस ब्राभन भोजन।।
चाही तो ये धन चाही अमृत-फल नरियल।
ऊँच ओसरवा कवन रामा आले बाँस छाई।
खँभिया औठँघली दीदी कवनि देई सुनो पिया पंडित।
बरहा बरिसवा के लाल भये ब्राभन कै देतेउ।।
चाही तौ ये धन चाही दस धोती अँगोछा।
चाही तौ ये धन चाही दस ब्राभन भोजन।

चाहौ तौ ये धन चाहौ अमृत-फल नरियल
ऊँच बखरिया काका राम .... आले चौत ड्राइ
खँभिया ओठँघलो चाचो कवनि देइ सुनौ पिया परीछा
बरहा बरिसवा के लाल भये ब्राम्हन कै देतेउ
चाहौ तौ ये धन चाहौ दस धोती अँगौछा।
चाही तो ये धन चाहो दस ब्राम्हन भोजन।
चाही तो ये धन चाहो अमृत-फल नरियल।

गलिया कै गलिया पंडित

गलिया कै गलिया पंडित घूमैं हथवा पोथिया लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ।।
बाँसन धोतिया सुखत होइहैं बरुवा, जेंवत होइहैं,
पंडित बेद पढ़ैं रे।

आँगन ढोल धमाकै, दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ, तौ रामा कै जनेउ।।
गलिया कै गलिया नाऊ घूमैं हथवा कितबतिया लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ।।
बाँसन धोतिया सुखत होइहैं, बरुवा जेंवत होइहैं,
पंडित बेद पढ़ैं रे।

आँगन ढोल धमाकै, दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा क जनेउ।।
गलिया के गलिया बढ़ैया घूमैं हथवा पटुलिया लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा क जनेउ।।
बाँसन धोतिया सुखत होइहैं, बरुवा जेंवत होइहैं,
पंडित बेद पढ़ैं रे।

आँगन ढोल धमाकै दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा क जनेउ।।
गलिया के गलिया कुम्हरवा घूमैं हथवा बरौवा लिहे।
कवन बखरिया राजा दसरथ तौ रामा क जनेउ।
बाँसन धोतिया सुखत होइहैं बरुवा जेंवत होइहैं,
पंडित बेद पढ़ैं रे।

आँगन ढोल धमाकै दइव अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा क जनेउ।।
गलिया के गलिया फूफा घूमैं हथवा जनेउवा लिहे।
कवनि बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ।।
बाँसन धोतिया सुखत होइहैं, बरुवा जेंवत होइ हैं,
पंडित बेद पढ़ैं रे।

आँगन ढोल धमाकै दवइ अस गरजै।
उहै बखरिया राजा दसरथ तौ रामा कै जनेउ।।

विवाह-गीत

सावन सुगना मैं गुर

सावन सुगना मैं गुर घिउ पालेउँ चैत चना कै दालि।
अब सुगना तू भयउ सजुगवा बेटी क बर हेरइ जाव।।
उड़त-उड़त तू जायो रे सुगना बैठेउ डरिया ओनाय।
डरिया ओनाय बैठा पखना फुलायउ चितया नजरिया घुमाय।।
जे बर सुगना तु देखेउ सुन्दर जेकरि चाल गम्हीर।
जेहि घरा सुगना तु सम्पत्ति देखेउ वहि घर रचेउ बिआह।।
हेरेउँ बर मैं सजुग सुलच्छन भहर-भहर मुँह जोति।
साठि बरद मैं चन्नि में देखउँ वोही घर रचहु बिआह।।

बाबा जे चलेन मोर

बाबा जे चलेन मोर बर हेरेन पाट पितम्बर डारि।
छोट देखि बाबा करबै न करिहैं बड़ा नाहीं नजरि समाय।।
अरे-अरे बाबा सुघर बर हेरेउ हम बेटी तोहरी दुलारि।
तीनि लोक मा हम बड़ि सुन्दरि हँसी न करायउ मोरि।।
उसरा मा गोड़ि-गोड़ि ककरी बोवायउँ ना जानौं तीत कि मीठि।
देसवा निकरि बेटी तोर बर हेरौं ना जानौं करम तोहार।।
पूरब हेरेउँ पछुवाँ मैं हेरेउँ हेरेउँ मैं दिल्ली गुजरात।
तुमहीं जोग बर कतहुँ न पावा अब बेटी रहहुँ कुँवारि।।
पूरब हेरेउ पछुवाँ में हेरेउँ, हेरेउँ दिल्ली गुजरात।
चारि परग भुइयाँ नगर अयोधिया दुइ बर अहैं कुँवार।।
वै बर माँगैं बेटी घोड़ा औ हाथी माँगैं मोहर पचास।
वै बर माँगैं बेटी नौ लख दायज मोरे बूते देइ न जाइ।।
जेकरे न होय बाबा औ घोड़ा नाहिं होय मोहर पचास।
जेकरे न होय बाबा नौ लख रूपैया ते बर हेरै हरवाह।।
हर जोति आवै कुदार गोड़ि आवै बइठइ मुँह लटकाय।
उनही क तिलक चढ़ाया मोरे बाबा दयजा न लेयँ।।
आसन देखि बाबा डासन दिहौ, मुख देखि दिहौ बीरा पान।
अपनी सँपति देखि दाइज दिहौ, बर देखि दिहौ कन्यादान।।

कौन गरहनवाँ बाबा साँझे

कौन गरहनवाँ बाबा साँझे जे लागै कौन गरहन भिनुसार।
कौन गरहनवाँ बाबा औघट लागै कब धौं उगरह होइ।।
चन्द्र गरहनवा बेटी साँझे जे लागै सुरुज गरहनवा भिनुसार।
धेरिया गरहनवा बेटी औघट लागै कब धौं उगरह होइ।।
काँपइ हाथी रे काँपइ घोड़ा काँपइ नगरा के लोग।

हाथ में कुस लिहे काँपइँ बाबा कब धौं उगरह होइ।।
रहँसइँ हाथी रे रहँसइँ घोड़ा रहँसइँ सकल बरात।
मड़ये मुदित मन समधी रे बिहँसइँ भले घर भयहु बिआह।।
गंगा पैठि बाबा सुरुज से बिनवइँ मोरे बूते धेरिया जिनि होइ।
धेरिया जनम तब दिहा बिधाता जब घर सम्पति होइ।।

पुरुव पछिम मोरे बाबा क सगरवा

पुरुब पछिम मोरे बाबा क सगरवा पुरइनि हालर देइ।
तेहि घाटे दुलहे धोतिया पखारैं पूछैं दुलहिन देई बात।।
केकर अहे तुँ नतिया रे पुतवा कौने बहिनिया क भाय।
कौने बनिजिया चले बर सुन्दर केकरे सगरे नहाउ।।
अजवा कौन सिंह क नतिया रे पुतवा कौन कुँवरि कर भाई।
सेन्दुर बनिजिया चले हम सुन्दरि ससुर के सगरे नहाउँ।।
येतनी बचन सुनि दुलही कौन कुँवरि धाय माया लगे जायँ।
जे बर मोरे माया नगरा ढुँढ़ाये से बर सगरे नहायँ।।
राम रसोइयाँ भौजी कौन कुँवरि धाय भौज लग जाय।
जे बर भौजी नगरा ढुँढ़ाये से बर सगरे नहायँ।।
आवहु ननदोइया पलँग चढ़ि बैठहु कूँचहु महोबे क पान।
अपने कमिनिया क डँड़िया फँदावदु लै जाउ बैरिनि हमारि।।
की भौजी तोर नोनवा चुरायउँ की तेल दिहौं ढरकाय।
की भौजी तोर भइया गरिआयउँ कौने गुन बैरिनि तोहारि।।
ना ननदी मोर नोनवा चुरायउँ न तेलवा दिहया ढरकाय।
ना ननदी मोर भइया गरिआयउ बोली गुन बैरिनि हमारि।।

घोड़े चढ़ दुलहा

घोड़े चढ़ दुलहा तू घोड़े चढ्ढु यहि रन बन मा।
दुलहा बाँधि लेहु ढाल तरुवारि त यहि रन बन मा।।
पहिरौ पियरी पीतामर यहि रन बन मा।
दुलहा बाँधि लेहु लटपट पाग त यहि रन बन मा।।
कैसे के बाँधौ पाग त यहि रन बन मा।
दुलहिनि मरम न जान्यों तोहार त यहि रन बन मा।।
जतिया तो हमरी पंडित कै यहि रन बन मा।
दुलहा मुगुल के डरिया लुकानि त यहि रन बन मा।।
मारि डारेन भाई औ बाप त यहि रन बन मा।
दुलहा मुगुल के डरिया लुकानि त यहि रन बन मा।।
यतनी बचनिया के सुनतइ यहि रन बन मा।
दुलहा घोड़े पीठि लिहेनि बैठाय त यहि रन बन मा।।
यक बन गैलैं दुसर बन यहि रन बन मा।

दुल़हा तिसरे में लागी पियासी त यहि रन बन मा।।
अरे-अरे जनम सँघाती त यहि रन बन मा।
दुलहा बुँद यक पनिया पियाव त यहि रन बन मा।।
ताल औ कुँइयाँ सुखानी त यहि रन बन मा।
पनिया रकत के भाव बिकाय त यहि रन बन मा।।
उँचवै चढ़ि के निहारेनित ·यहि रन बन मा।
दुलहिनि झरना बहै जुड़ पानि त यहि रन बन मा।।
दुलहिनि ठाढ़े हैं मुगुल पचास त यहि रन बन मा।।
अरे-अरे जनम सँघाती त यहि रन बन मा।
दुलहा बुँद एक पनिया पियाउ त यहि रन बन मा।
दुलहा मोरी तोरी छूटै सनेहिया त यहि रन बन मा।
यतना बचन सुनि पायेन त यहि रन बन मा।
दुलहा खींचि लिहेन तरवरिया त यहि रन बन मा।
ठाढ़े एक ओर मुगुल अकेल त यहि रन बन मा।
दुलहा एक ओर ठाढ़े अकेल त यहि रन बन मा।
रामा जूझे हैं मुगुल पचास त यहि रन बन मा।
राजा जीति के ठाढ़ अकेल त यहि रन बन मा।
पतवा के दोनवा लगायनित यह रन बन मा।
दुलहिनि पनिया पियहु डभकोरि त यहि रन बन मा।
पनिया पियै दुलहिन वैठीं त यहि रन बन मा।
दुलहा पटुकन करैं बयारि त यहि रन बन मा।
दुलहा हम तोहरे हाथ बिकानि त यहि रन बन मा।
यतनी बचनिया के साथ त यहि रन बन मा।
दुलहिन मलवा दिहिन गरे डारि त यहि रन बन मा।।

उँच-उँच कोठवाँ उठइहा

उँच-उँच कोठवाँ उठइहा मोर बाबा हो बिच-बिच झँझरी लगाइ।
बिंयहन अइहैं बाबा तिन लोक राजा हो रहिहैं झँझरिया लोभाइ हो।।
सब कोइ देखेल इ बाग बगइचा देखेलइ फूल फुलवारि हो।
राम चन्द्र देखेले इ बाबा के झँझरी के अइसन झँझरी उरेह हो।।
दान दहेज सासु कुछ नाहीं लेबों हो ना देवों चढ़ने क घोड़ हो।
जउन तिवइया यहि झँझरी उरेहले तिन्हकाँ मैं सँग लइ जाब हो।।
दान-दहेज बाबू सब कुछ देबों हों देबों मैं चढ़न क घोड़ हो।
बेटी सीता देई झँझरी उरेहली तिन्हहूँ क सँग लइ जाहु हो।।

उत्तर हेरयों दक्खिन

उत्तर हेरेउँ दक्खिन ढूँढ़ेउँ, ढूँढ़ेउँ मैं कोसवा पचास रे।
बेटी के बर नहिं पायों मालिनि मरि गयों भुखिया पियास।।

बैठो न बाबूजी चनन चौकिया पियौ न गेडुअवा जुड़ पानि रे।
कइसन घर रौरा चौकिया बाबू कइसन चाही दमाद।।
सभवा बैठ हम समधी जे चाहित जैसे तरैया मैं चाँद रे।
मचिया बैठति हम समधिन चाहित खोलि-खोलि बिरवा चबाति।।
सातहिं पाँच हम देवर चाहित, ननद जे चाही अकेल।
दमदा जे चाहित सब कर नायक सभा बिच पंडित होय रे।।

काहे बिनु सून अँगनवाँ

काहे बिनु सून अँगनवाँ ये बाबा, काहे बिनु सून लखराउँ।
काहे बिनु सून दुअरवा ये बाबा, काहे बिनु पोखरा तोहार।।
धिया बिनु सून अँगनवा ये बेटी, कोइलरि बिनु लखराउँ।
पूत बिनु सून दुअरवा ये बेटी, हंस बिनु पोखरा हमार।।
कैसे के सोहे अँगनवा ये बाबा, कैसे सोहै लखराउँ।
कैसे के सोहै दुअरवा ये बाबा, कैसे सोहै पोखरा तोहार।।
धरम से बेटी उपजिहैं ये बेटी, सेवा से आम तैयार रे।
तप सेनी पुतवा जनमिहैं ये बेटी, दान से हंसा मँझधार।।
का देइ बोधब्यो ये बेटी बाबा, का देइ अमवा के गाछ।
का देइ पुतवा समोधब्या ये बाबा, का देइ हंसा मँझधार।।
धन देइ बिटिया समोधबै ये बेटी, जल देइ समोधौं लखराउँ रे।
भुइँ देइ पुतवा समोधबै ये बेटी, अन देइ हंसा मँझधार।
का देखि मोहै जनवसवा ये बाबा, का देखि रसना तोहार।
का देखि हियरा जुड़ैहै ये बाबा, का देखि नैना जुड़ाय।।
धिया देखि मोहै जनवसवा ये बेटी, अमवा से रसना हमार।
पुतवा से हियरा जुड़ैहैं ये बेटी, हंसा देखि नैना जुड़ाय।।

थवई जिन्ह महल उठाये

कहँवहिं के गढ़ थवई जिन्ह महल उठाये।
कहँवहिं के पतिसहवा गढ़ देखन आये।।
बाहर होइ गढ़ देखलों जैसे चित्र उरेहल।
भीतर होइ गढ़ देखलों जैसे कुन्दन कुँदावल।।
ताही पैठि सुतले कवन बाबा रानी बेनियाँ डोलावे।
केवरहीं बोलइँ कवन बेटी बाबा नींद भलि आवे।
कुछ रे सुतहू कुछ जगइ बेटी नींद कैसे आवे।।
जाहि घरे कन्या कुँवारि बेटी नींद कैसे आवे।
लेहु ना कवन बाबा धोतिया हाथे पान क बीड़ा।
करु ना समधिया से मिलनी सिर माथ नवाय।।
गिरि नवे पर्वत नवे हम तौर ना नइयो।
बेटी ! तोहरे कारन हम जग में माथ नवाय।।

बाबा-बाबा गोहरावौं

बाबा-बाबा गोहरावौं बाबा नाहीं जागैं।
देत सुनर एक सेंदुर भइउँ पराई।।
भैया-भैया गोहरावौं भैया नाहीं बोलैं।
देत सुघर एक सेंदुर भइउँ पराई।।
बन माँ फूली बेइलिया अतिहि रूप आगरि।
मलियै हाथ पसारा तौ होबौ हमारि।।
जनि छुवो ये माली जनि छुवो अबहीं कुँवारि।
आधी राति फुलबै बेइलिया तौ होब तुम्हारि।
जनि छुवो ये दुलहा जनि छुवो अबहीं कुँवारि।
जब मोर बाबा संकलपैं तौ होब तुम्हारि।।

दुलहे रामा अमवा

की हो दुलहे रामा अमवा लुभाने, की गये बटिया भुलाइ।
कब से रसोइया लिहे हम बैठी, जोवउँ मैं एकटक राह।।
दुलहिन रानी न अमवा लुभाने ना गये बटिया भुलाइ।
बाबा के बगिया कोइलि एक बोलै कोइलि सबद सुनौं ठाढ़।।
चिठिया एक लिखि पठइन दुलहिन, दिहौ कोइलरि देइ के हाथ।
तनि एक बोलिया नेवरतिउ कोइलरि परभु मोर जेवने न ठाढ़।
चिठिया एक लिख पठइन कोइलरि दिहौ दुलहिन देइ के हाथ।
ऐसइ बोलिया तुँ बोलि क दुलहिन दुलहे न लेतिउ बिलमाय।।

बाबा कै बखरिया

पुरुब पछौहाँ मोरे बाबा कै बखरिया
परिगै इमलिया कै छाँह।
तेही तर मोरे बाबा सोनवाँ सँकलपैं,
गढ़ै लागै सुघर सोनार।।
गढ़ौ सोनरा अंगन, गढ़ौ सोनरा कंगन,
टीका गढ़ौ भरि माथ रे।।
अतना पहिरि बेटी चौक जो बैठीं बेटी कै मन दिलगीर।
की तोरो बेटी रे दान दहेज थोर,
की रे सुघर वर छोट।
की तोरी बेटी रे सोना खराब भये,
काहे तोरो मन दिलगीर।।
नाहीं मोर बाबा रे दान दहेज थोर,
नाहीं सुघर वर छोट।
सुनत हौं मोर बाबा सास दरुनिया,
एही से मन दिलगीर।।

चारि दिना बेटी राजा कै रजई, चारि दिना फौजदारि।
चारि दिना बेटी सास है दारुनि, आखिर राज तुम्हारि।।

मोरे पिछवरवाँ लवँगिया

मोरे पिछवरवाँ लवँगिया क बगिया लवँग फुले आधी राति रे।
वहि लवँगा कै सीतल बयरिया महँकै बड़े भिनुसार।।
तेहि तर उतरा है सोनरा बेटौना गहना गढ़ै अनमोल रे।
सभवा बैठ बाबा गहना गढ़ावैं बिछुआ में घुँघरू लगाय।।
गढु सोनरा कंगन गढु तुहु बेसर तिलरी म हीरा जड़ाय रे।
मानिक मोती से बेंदिया सँवारहु चमकै बेटी केर माँग।।
यतना पहिरि बेटी चौके जे बैठें बेटी के मन दलगीर रे।
गोर बदन बेटी साँवर होइगा मुँहवा गयल कुम्हिलाय।।
की तोरे बेटी रे दायज थोरा की रे भैया बोलैं रिसियाय रे।
की तोरे बेटी रे सेवा से चुकल्यूं काहें तोरा मुँहवा उदास।।
ना मोरे बाबा रे दायज थोरा नाहीं भैया बोलैं रिसियाय रे।
ना मोरे बाबा हो सेवा में चुकल्यो यहि गुन मुँहवा उदास।।
तब तौ कहयो बाबा नियरे बिअहवै बिअहयो देसवा के ओर रे।
नैहर लोग दुलम होइहैं, बाबा रहबै बिसूरि-बिसूरि।
बोलिया तौ यह तुहूँ बोल्यू बेटी मरल्यू करेजवा मा बान।
अगिले के घोड़वा बीरन तोर जैहैं पीछे लागे चारि कहार।।

बाबा झँझरा मड़उना जिन छाय

बेरिया क बेर मैं बरजेउँ रे बाबा झँझरा मड़उना जिन छाय।
झँझरे मड़उना सुरज दह लगिहैं गोरा बदन कुम्हिलाय।।
कहहु त मोरी बेटी छत्र तनावउँ कहहु त अँचरा ओढ़ाय।
कहहु त मोरी बेटी मँडिल छवावउँ काहे के लागै घाम।।
काहे के बाबा मंडिल छवौबा आजे के रतिया बसेर।।
होत बिहान पह फाटत बाबा जावै परदेसिया के साथ।
काहे के मोरे बाबा छत्र तनौबा काहे के मंडिल छवाव।
टाटक नयनूँ खवायहु रे बेटी दुधवा पियायउँ सढ़ियार।
एकहू न गुन मानेउ मोरी बेटी चलिउ परदेसिया के साथ।

चुँदरी भये अनमोल

हटियैं सेंदुरा महँग भये बाबा चुँदरी भये अनमोल।
यहि सेंदुरा के कारन रे बाबा छोड़ेउँ मैं देस तुम्हार।
बाबा कहैं बेटी दस कोस बियैहों भैया कहैं कोस पाँच।
माया कहैं बेटी नगर अजोधिया नित उठि प्रात नहाँउँ।
बाबा दिहिनि अन-धन-सोनवाँ, मइया दिहिनि लहर पटोर।

भैया दिहिनि चढ़न कै हाँ घोड़वा भौजी ते अपना सोहाग।।
बाबा कै सोनवाँ नवै दिन खाबै, फटि जैहैं लहर पटोर।
भैया कै घोड़वा नगर खोदैबों, भौजी कै बाढ़ै अहिबात।।
बाबा कहैं बेटी नित उठि आयेउ मइया कहै छठे मास।
भैया कहैं बहिनी काज बियाहे भौजी कहैं कस बात।।

मैं मैया के कोरवाँ

सोवत रहलिउँ मैं मैया के कोरवाँ मैया के कोरवाँ हो।
मोरी भौजी जे तेल लगावैं तौ मुड़वा गुँथन करैं हो।।
आई हैं नाउनि ठकुराइनि तौ बेदिया चढ़ि बैठी हो।
वे तौ ललित मेहावरि देय तौ चलन चलन करै हो।।
एक कोस गई दुसर कोस तिसरे मा बिन्द्राबन हो।
धना झालरि उघारि जब चितवैं मोरे बाबा के कोई नाहीं हो।।
लिल्ले घोड़े चितकाबर दुलहा जे बोले हो।
उनके हथवा सबज कमान अपान हम होई हो।।
भूँख मा भोजन खियैहौं मैं पियासे मा पानी दैहौं हो।
धनिया रखबो मैं हियरा लगाय बबैया बिसरि जैहैं हो।।

लौंग चुअै आधी रात

मोरे पिछवारे लौंग का बिरवा लौंग चुअै आधी रात।
लौंग बिनि-बिनि ढेर लगावों लादत है बनिजार।।
लादि चले बनिजार के बेटा की लादि चले पिया मोर।
हमहूँ का पलकी सजावो रे पिआरे मोरा तोरा जुरा है सनेह।।
भूखेन मरिहौ पिआसेन मरिहौ, पान बिना होंठ कुम्हिलाय।
कुसकी साथरी डासन पैहो अंग छुलिय छुल जायँ।
भूख मैं सहिहौं पिआस मैं सहिहौं, पान डारौं बिसराय।
तुम्हरे साथ पिआ जोगिनि होइहौं ना सँग माई न बाप।।

कहवाँ ते रूपा आये हो

कहवाँ ते सोना आये कहवाँ ते रूपा आये हो।
एहो कहवाँ ते लाली पलँगिया-पलँगिया जगमोहन हो।।
कासी ते सोना आये-गयाजी ते रूपा आये हो।
एहो सैयाँ सँग लाली पलँगिया-पलँगिया जगमोहन हो।।
भितरे ते माया जो रोवइँ अँचरे माँ आँस पोंछइँ हो।
एहो मोरी बिटिया चली परदेस कोखिया मोरी सूनी भई ना।।
बैठक से बाबू जी रोवइँ पटुके माँ आँसू पोंछैं हो।
मोरी धेरिया चली परदेस भवन मोरा सून भये ना।।
भितरे ते भैया जो रोवइँ पगड़िया माँ आँसू पोंछइँ हो।

ओबरी ते भौजी जो रोवइँ चुनरिया माँ आँसू पोंछइँ हो।
हो मोर ननदी चली परदेस रसोइयाँ मोरी सूनी भई न।।

निंदिया उचटि गई मोरि

सोवत रहिउँ मैं मैया के कोरवाँ निंदिया उचटि गई मोरि।
केकरे दुआरे मैया बाजन बाजै केकर रचा है बियाह।।
तुहीं बेटी आउरि तुहीं बेटी बाउरि तुहीं बेटी चतुर सयानि।
तुमरे दुआरे बेटी बाजन बाजै तुमरइ रचा है बियाह।।
नाहीं सिखेन मैया गुन-अवगुनवाँ नाहीं सिखेन राम-रसोइँ।
सासु ननद मोरी मैया गरियावैं मोरे बूते सहि नहिं जाइ।।
सिखि लेउ बेटी गुन-अवगुनवाँ सिखि लेउ राम-रसोइँ।
सासु ननद तोरी मैया गरियावैं लै लिहौ अँचरा पसारि।।

कारे भवँरवा

अरे-अरे कारे भवँरवा आँगन मोरे आवो।
भवँरा आजु मोरे काज बियाह नेवत दै आवो।।
नेवत्यों मैं अरगन परगन औ ननिआउर।
एक नहिं नेवत्यों बिरन भैया जिनसे मैं रूठिउँ।।
सासु भेंटैं आपन भइया, ननद आपन बीरन।
भौंरा छतिया उठी घहराय मैं केहि उठि भेंटौं।।
अरे-अरे कारे भवँरवा आँगन मोरे आवो।
भँवरा फिरि से नेवत दै आवो बीरन मोर आवैं।
अरे-अरे जागिनि भाँटिनि जिनि कोई गावो।
आजु मोरा जियरा बिरोग बीरन नहिं आये।।
अरे-अरे चेरिया लौंउँड़िया दुवार झाँकि आवो।
केहकर घोड़ा ठहनाय दुवारे मोरे भीर भये।।
अरे-अरे रानी कौसिल्ला बीरन तुमरे भये।।
आगे आगे चौरा चँगेरवा पियरी गहागह।
लिल्ले घोड़े भैया असवार तो डँड़िया भवुज मोरी।।
अरे-अरे जागिनि भाँटिनि सभै कोई गावो।
मोरे जिअरा भये हैं हुलास बिरन मोर आये।।
अरे-अरे सासु गोसाई करहिया चढ़ावो।
आजु मोरा जियरा हिलोरै बीरन मोर आये।।
अस जिन जानौ बहिनौ त भैया दुखित अहैं।
बहिनी बेंचबौं मैं फाँड़े क कटरिया चौक लइ अइबेउँ।
अस जिन जानौ ननदी, की भौजी दुखित अहैं।
ननदी बेंचबौं मैं नाके क बेसरिया पिअरिया लइके अइबै।।
कहवाँ उतारौं चौरा चँगेरवा पियरी गहागह।

कहवाँ भेंटी बीरन भैया तौ कहवाँ भवुज मोर।।
ओबरा उतारौ चौरा चँगेरवा पियरी गहागह।
डेवढ़ी भेंटौ बीरन भैया तौ अँगना भवुज मोर।।
लहँगा लै आये बीरन भैया पिअरी कुसुम कै।
अँगिया लै आई मोरि भौजी चौक पर कै चूँदरि।।
हँसि-हँसि पँहिरिनि ओढ़िन सुरुज मनाइन।
बढ़इ बबैया तोर बेल मान मोर राखेउ।।

आधे तलवा माँ हंस चुनै

आधे तलवा माँ हंस चुनै आधे माँ हंसिनि।
तबहुँ न तलवा सोहावन एक रे कमल बिन रे।।
आधे बगिया माँ आम बौरे आधे माँ इमली बौरे हो।
तबहूँ न बगिया सोहावनि एक रे कोइलि बिन रे।।
आधी फुलवरिया गुलबवा आधी म केवड़ा गमकइ।
तबहूँ न फुलवा सोहावन एक रे भँवर बिन।।
सोने क सुपवा पछोरैं मोतिया हलौरैं।
तबहूँ न पुरुष सोहावन एक रे सुनरि बिन।।
आधे माड़ौ माँ गोत बैठैं आधे माँ गोतिन बैठैं हो।
तबहूँ न माड़ौ सोहावन एक रे ननद बिन रे।।
बेदिया ठाड़ पण्डितवा कलस-कलस करै हो।
बेदिया ठाड़ कन्हैया बहिनि गोहरावैं हो।।
कहाँ गइउ बहिनी हमारि कलस मोर गोंठौ हो।
निचवा से भैया भीतर गये भौजी से मत करैं हो।
धनिया आवति हैं बहिनि हमारि गरब ।
जिनि बोलेउ निहुरि पैयाँ लागेउ हो।।
आवौ ननदी गोसाँइनि पैयाँ तोरे लागी हो।
बैठो माँझ मड़ौवा कलस मोर गोंठौ हो।
भौजी तीनिउ बरन मोर नेग तीनिउ हम लेबै हो।
लेबै भौजी सोरहौ सिंगार रहँसि घर जाबै हो।।
देबिउँ मैं तीनिउ नेग औ सोरहो सिंगारउ।
हमरे हरी जी क परम पियारि तोहार मन राखब।।

कोइलि तोर जतिया भिहावन

अरी अरी कारी कोइलि तोर जतिया भिहावन रे।
कोइलरि बोलिया बोलउ अनमोल त सब जग मोहै रे।।
अरी-अरी कारी कोयलिया आँगन मोरे आवहु रे।
आजु मोरे पहिला बियाहु नेवत दै आवहु रे।।
नेउतेउँ मैं अरगन परगन अरे ननिआउर रे।

कोइलरि एकु न नेउतेउँ बीरन भइया जिनसे मैं रूठिउँ रे।।
अरी-अरी सखिया सहेलरि मंगल जनि गावहु रे।
सखिया आजु मोरा जियरा उदास बीरन नाहीं आए रे।।
आगे के घोड़वा भइया मोरे डोलिया भउज रानी रे।
एहो बीच में सोहैं भतिजवा तौ भरिगा हैं माड़उ रे।।
कहवाँ उतारौं बीरन भइया कहवाँ भउज रानी रे।
रामा कहवाँ उतारौं भतिजवा तौ भरिगा है आँगनु रे।।
द्वारे उतारौ बीरन भइया महले भउज रानी रे।
रामा अँगने मा खेलैं भतिजवा तौ भरिगा है माड़उ रे।।
अरी-अरी सखिया सहेलरि मंगलु अब गावहु रे।
आजु मोरा जियरा हुलास बीरन भइया आये हैं रे।
अरी-अरी नाउनि बारिनि नेगु अब माँगहु रे।
आजु मोरा जियरा हुलास बीरन भइया आये हैं रे।।

हाथी मैं साजौं घोड़ा

हाथी मैं साजौं घोड़ा मैं साजौं साजेउँ मुलुक पचास हो।
एक मैं साजिले राजा दुलह बाबू जैसे दुजी के चाँद हो।।
बाट मिली मालिनि बिटिया कहु मालिन साँची बात हो।
कौन हईं सासू कवन हईं सरहज कौन हईं कामिनी हमार हो।।
सोने के मुसरा जिनहीं घुमावेली उहे हईं सासु तोहार हो।
पान के बीड़ा जिनहीं सिखावेली सेहि हईं सरहज तोहार हो।।
हाथ मेहदी पाँव में मेहँदी दाँत बतीसो लाल हो।
सिर पर ओढ़े कुमुम रंग चादर सेहि हईं कामिनी तोहार हो।।

सोने के पिढ़वाँ रे राम

सोने के पिढ़वाँ रे राम नहइलेनी झटकीला लम्बी हीं केस रे।
निकरी न आवहु माई कवसिल्ला देई राम क अरती उतारु रे।।
का मैं राम क अरती उतारउँ मन मोर बहुत उदास रे।
आजु क रतियाँ मैं कैसे बितइबइ राम चलेन ससुरार रे।।
जिन माई ऊ मिल जिन माई धूमिल, जिन मन करहु उदास रे।
आजु की रतियाँ जनक के दुअरवाँ, काल होबै दास तोहार रे।।
जब राजा राम बिआहन चललेन माता सुरुज माथ नाव रे।
राम बिअही जब घर के लवटिहैं तोहैं देबै दुधवा क धार रे।।
भइल बिआह परल सिर सेन्दुर हाथ जोड़ी सीता ठाढ़ रे।
अइसन आसीष दीहेउ मोरे बाबा, भेलसों अजोधिया क राज रे।।
दुधवा नहायो बेटी पुतवन फरेऊ, कोखियन झालर लागु रे।
बारह बरिस राम बन के सिधरिहैं तोहके रवन हर लेइ रे।।
बाउर भइलू तू बेटी रे सीता, देई केन तोर हरला गेयान रे।

जो कुछ लिखल बेटी तोहरे लिलरवाँ से, कैसे मेटल जाइ रे।।
जब बरिअतिया अवधपुर में आई माता सुरज माथ नाव रे।
पुतवा पतोहिया नयन भर देखेउँ धन धन भाग हमार रे।।
मिलहु न सखिया रे मिलहु सहेलरि मिलहु सकल रनवास रे।
जस-जस मोरे माता अरती उतारइँ राम नयन ढुरै आँसु रे।
किया तोहैं राम जनक गरियाइन कि तोर दायज थोर रे।
की तोर राम सीता नाहीं सुन्दर काहे नयन ढुरै आँसु रे।।
नाहीं मोरी माता सीता नाहीं सुन्दर समुझि नयन ढुरै आंसु रे।।
सोने के सिंधोरवा माई सीता बिअहलीं दायज मिलल तीन लोक रे।
लछमी सीता रानी मोर घर आइनि हमके लिखा बनवास रे।।

आज सोहाग कै रात

आज सोहाग कै रात चंदा तुम उइहौ।
चंदा तुम उइहो सुरुज मति उइहौ।।
मोर हिरदा बिरस जनि किहेउ मुरुग जनि बोलेउ।
मोर छतिया बिहरि जनि जाइ तु पउ जिनि फाटेउ।।
आजु करहु बड़ी राति चंदा तुम उइहौ।
धिरे-धिरे चलि मोरा सुरुज बिलम करि अइहौ।।

बाँस बसेरी कोइली लीन्ह बसेर

मोरे पिछवरवाँ बाँस बसेरी कोइली लीन्ह बसेर।
छोड़उ न कोइली मोरा पिछवरवा जाव नँदन बन लेउ।।
मँड़वन-मँड़वन घूमै दूलहे राम बाप कोइलि हम लेब।
कोइली बेटे न माटी की मिलिहैं ना चढ़ि हाटा बिकायँ।।
कोइली तौ होइ हैं समधी जी के मँड़यें जिन घर कन्या कुवाँरि
गलियन-गलियन घूमै दुलहै राम कौन है ससुर दुवार।
सोने के कलम पर दियना जरत है वह देखो ससुर दुवार ।।
मँड़वे की थूनी लागे ठाढ़ि दुलहिन देई, दुलहे जो पूछत बात।
तुम्हरे दादुलिजी के सोने धौराहर हमहँ का देव बसेर।।

अन्न प्राशन का गीत

आजु मोरे लीपन पोतन, औ अन्नप्रासन हो।।1।।
सासु अरगन नेवतहु परगन नैहर सासुर,
औ अजियाउर और ननियाउर रे।।2।।
अरगन आयनि परगन, और ननिआउर और अजियाउर हो
सासू एक नहिं आये बिरन भैया, कैसे जियरा बोधउँ रे।।3।।
सासु भेंटहिं आपन भैया, ननद आपन देवर हो।
सासू छतिया जे मोरी घहरानी, मैं केहि उठि भेंटउँ रे।।4।।

झमकि के चढ़ल्यूँ अँटरिया, खिरिकियन झाँक्यों हो।
ननदी जनु भैया आवें पहुनैया, पगड़िया फहरावै रे।।5।।
दअरइ घोड़ा हिहियाने, पथर घहराने हो।
बहुआ मिलि लेहु भैया वेदनैता,
सोहर अब सूनौ सगुन पर बैठो रे।।6।।

नहछू

घर घर घुमहि नउनिया तौर गोतिनी बुलावै।
राम लछन कै नहछु सभै कोई आयो।।1।।
पाँच पाट कै जाजिम झारि बिछाओ।
जेकरे जहाँ मनु होय तहाँ ते बैठो।।2।।
केई दीना चुटकी मुँदरिया केई दीना रूप।
केई दीना रतन जड़ाऊ त भरिगा ह सूप।।3।।
केकई ने चुटकी मुँदरिया कौसिल्ला रानी रूप।
सुमित्र रानी रतन जड़ाऊ तौ भरिगा ह सूप।।4।।
पातर पातर अँगुली तौर नाउनि गोरी।
करत राम जीव कै नहछू तौर घूँघुट खोली।।5।।
नौआ जे झगरै नउनिया से यह सब थोर।
राम लछन जी कै नहछू लेबौं मैं घोड़।।6।।
जनि झगरौ नौआ रे जनि झगरौ यह सब थोर।
राम ब्याहि घर लौटैं तौ देब्यों मैं घोड़।।7।।

ऋतु-गीत

बारहमासा

लागे मसवा अषाढ़

लागे मसवा अषाढ़, भरिगे नदिया औ नार,
कइगे रातिव दिन गाढ़, उद ननद के बिरना।
साँवा कोदौ के बोवइया, घर ना हर के नधवइया,
बिना ननदी के भइया, बैठी सोंचै अंगना।
आयी सावन कै बहार, गोरी करत हैं सिंगार,
मोती गुहैं बारम्बार, वे पहिरि के गहना।
गावैं कजरी के गीत, हमका लागै अनरीति,
घर मा नाहीं मोरा मीत, को झुलावै झुलना।
भादौं गगना गंभीर, उठै बिरहा कै पीर,
घर मा नाहीं दावनगीर, के हरै रे बेदना।
दइवा बरसै घनघोर, बिजुली चमकै चारिउ ओर।
बन मा बोले दादुर मोर, घर मा नाहीं सजना।
लागे मसवा कुवार, भावै घर ना औ दुवार
गोरी मीजैं दूनौ हाथ, वै बजावैं कंगना।
लागे दसमी कै मेला, पैसा नाहीं है अधेला।
बालम चलेंगें अकेला, मेला होइगा सपना।
कातिक आयी है देवारी, पूजा करैं नर नारी,
हमरे महला मा अँधियारी के जलावै दियना।
लागे मसवा अगहन घर घर फैली बा लगन,
आये ननदी के सुदिनवा नाहीं मानै कहना।
कइसे कइ दियउँ बिदाई, अबहीं उमिर है लरिकाई,
बिना ननदी के भाई के पठावै अनना।
पूस चलै अब फुहारा, तड़पै सिंह औ सियारा।
जाड़ा आवै जियरा मारा के ओढ़ावे ओढ़ना।
धरौं जोगिनी कै भेस, कटै हमरौ कलेस,
जरै अइसी कमायी, ससुरे कइ रहना।
माघ मौजी महीना, बालम बहुतै दुख दीना,

जोर करैं दुइनौ सीना, मोर उठत है जोबना।
रितु आई है बसंत, घर मा नाहीं मोरा कंत,
कतौ होइगें साधू संत, वै करैं का भजना।
बहै फगुनी बयार, बिरछा होइगे पतझार,
लागे फगुनी धमार घर घर बाजै बजना।
गुण्डा बोलत हैं कबीर उठै बिरहा कै पीर,
घर मा नाहीं मोरा बीर, केहि पै छोड़ी रंग ना।
चैत फूली है चमेली, फूल फूलैं अलबेली
अपने सइयाँ कै अकेली, कइसे जाबै लोरना।
यक दिन बालम का जौ पाई, सेज फूलन कै लगाई।
अपनि हरि बेल्हमाई, जेहि दिन आवैं सजना।
आगे मसवा बैसाख, रही मिलिबै कै आस,
भूले सवती के साथ मोर बिसारिगें कहना।
दिल मा सोचैं दिलवर जानी, अइसा मिला है परानी,
बिरथा होइगै जिन्दगानी का लिखे है बिधना।
जेठ जुलमी महीना चुवै तन से पसीना,
भीजै चोलिया नगीना मोर, टुटत बा सिंअना।
बेनिया कतनौ डोलाई जियरा नाहीं मोर जुड़ाई,
बिना ननदी के भाई के बुझावै तपना।

ऊधौ कब अइहैं

ऊधौ कब अइहैं बनवारी।
चइत मास कइसे जिउ लागै, बिमल चंद उजियारी।
यक-यक छन जुग-जुग सम बीतै का तकदीर हमारी।
बैसाख बिपति सो दारुन सजनी, कैसे बिरह सँभारी।
सीतल मंद सुगंध बयारी फूल रही फुलवारी। ऊधौ0।
जेठहिं जोग बतावत हमका भूसन बसन उतारी।
अंग भभूत गले मा सेली, कानन कुंडल डारी,
चढ़त अषाढ़ मेघ चहुँ धाये लइ दामिनी तरवारी
अस कठोर काहे नहिं आवैं ढूँढ़त हम अस नारी। ऊधौ0।
सावन घर-घर गड़े हिंडोला, पहिरि कुसुम रंग सारी
कइ सिंगार सोरह सब कामिनी, झूलत नीम की डारी।
भादौं रैन भयानक सजनी, रात भई अति कारी।
क्वार मास लगै सब सजनी, बारैं दिया देवारी। ऊधौ0।
अगहन मास स्याम घर नाहीं, जिउ मा बरैं अँगारी
माघ मास मा उमगे जोबना, चकित भइँ सब नारी
रितु बसंत आगमन जनायें, सूनी सेज हमारी
फागुन फीक पिया बिन लागै देह भई सब कारी।
ऊधौ कब अइहैं बनवारी।

हमरी सुधि भूलै बनवारी

हमरी सुधि भूलै बनवारी।
असाढ़ मास मोरी सुधि न लीन्ही कँह छाये गिरधारी।
सावन मास बिना हरि सजनी फुलवन सेज सँवारी।
भादौं मास गगन घन गरजत घेरे घटा अँधियारी।
क्वार मास निसि आयी चाँदनी छिटिक रही उंजियारी।
कातिक मास शरद् रितु आयी बिरह दियौ तन जारी।
अगहन मास बिना माधव के देह उठै चिनगारी।
पूस मास पाला निसि बरसै प्रीतम सुधिया बिसारी।
माघ मास मोहि नींद न आवै पिय बिन सून अटारी।
फागुन मास कौन देस बालम कहँवा जाय सिधारी।
चैत मास मा बनिकै जोगिया ढूँढ़त जग मा सारी।
बैसाख मास जौ पाऊँ कंत को तन, मन, धन सब वारी।
जेठ मास रस बेनिया डोलाऊँ बालम की बलिहारी।
हमरी सुधि भूले बनवारी।

सुनिये प्रभु दीनदयाला

सुनिये प्रभु दीनदयाला,
कहाँ जाय लुकानेउ नंदलाला,
कहत ब्रज बाला।
भादौं मास रैनि अँधियारी,
श्याम बिना भावै न भोजन बारी,
तन मा उठै अति ज्वाला।
क्वार मास बरिखा भइ थोरी,
कुबजा से प्रीति किहौ मोरी चोरी
का मति होइगै भोरी।
कातिक मास देवारी जौ आई
स्याम बिना हमैं कुछ न सोहाई
सुनौ सखी स्याम कै हवाला, सखियन मन रहत मलाला। कहत0...।
अगहन मा मन रहत मलीना
स्याम बेदरदी खबरियौ न लीना
जाय के फँसेउ कौनेउ न जाना
पूस मास कै रितु जब आई,
कुछ-कुछ जाड़ा जोर जनाई
ओढ़बै हम कइसे दुसाला, मोरे करम लिखा मृगछाला। कहत0 ...।
माघ बसंत आय नियराई अजहूँ न आये छैल जदुराई।

भूलि गये बंसी वाला।
लाखन सिंह जाय समझावहु।
मास फगुनवा स्याम लै आवहु
हँसि खेलब रंग गुलाला, भरि-भरि पिचकारी नंदलाला, कहत0 ...।

ऊधौ अबके गये

ऊधौ अबके गये कब अइहो। टेक।
सावन सखिया सेज लगायौ भादौं भूलि न जइहौ।
क्वार मास जब अइहौ मोहन, कपटी मीत कहइहौ, ऊधौ अबके 0।
कातिक मास रच्यो मनमोहन अगहन अगर कहइहौ,
पूस मास तन जाड़ सतावत केहिके गले लपटइहौ, ऊधौ अबके 0।
माघ मास बसंत जनावत फागुन भूलि न जइहौ
चैत मास बन फूली चमेली केहि बिधि हार गुँथइहौ, ऊधौ अबके 0।
बैसाख मास बैसाख जनावत जेठै तपनि बुझइहौ।
असाढ़ मास माघ गरजन लागे केहि बिधि बँगला छवइहौ।
ऊधौ अबके गये कब अइहौ।

सखी परदेसी बिन जियब कइसे

हे सखी परदेसी बिन जियब कइसे। टेक।
पहिला मास असाढ़ जौ होय
छपरा-छानी छावै सब कोय
मैं केहि से छवावौं पिया परदेस, सो अब न जियब हो।
दूसर मास सावन जब होय
घर-घर झलुवा झूलैं सब लोग
मैं केहि संग झूलौं पिया परदेस, सो अब न जियब हो।
भादौं मास घटा घन घोर,
बिजुरी चमकत होय उँजेर,
मैं का जानौ आये पिया मो, सो अब न जियब हो।
क्वार मास नवरातम होय
घर-घर कुँवारी खवावैं सब जोय
मैं का रे खवावौं पिया परदेस, सो अब न जियब हो।
पूस मास पर पूसी बयार,
अबहूँ न आये मोर प्रान अधार,
थर-थर काँपे मोर करेज, सो अब न जियब हो।
माघ मास सब चले हैं नहाय,
गोरी खड़ी अपने घर पछिताय
मैं का रे खेलउँ पिया परदेस, सो अब न जियब।
गरमी परै रितु बैसाख मास

तेहि पर पिया के आवन कै आस
तरे धरती ऊपर आसमान, सो अब न जियब हो।
जेठमास बरसाइत होय,
घर-घर पूजन चली सब कोय
मैं तो न पूजब पिया परदेस, सो अब ना जियब हो।
बरहें से जब तेरहों लाग
उपने महल चढ़ि कुँचबै पान
लहुरे देवरवा कै रखबै हो मान, सो अब ना जियब हो।

रतनारे होरिलवा

हे रतनारे होरिलवा फगुन नहिं जनमेउ,
ये हो सब सखी खेलिहैं फगुनवा, खेलन कइसे जाबै हो।
हे रतनारे होरिलवा चैत नहि जनमेउ हो,
ये हो सब सखी चुनिहैं कुसुमिया, चुनन कइसे जाबै हो।
हे रतनारे होरिलवा बइसाख नहिं जनमेउ हो,
ये हो घरे-घरे मंगलचार, देखन कइसे जाबै हो।
हे रतनारे होरिलवा जेठ नहिं जनमेउ हो,
ये हो जेठ तपइ दुपहरिया तपनि मोरे लागइ हो।
हे रतनारे होरिलवा अषाढ़ नहिं जनमेउ हो,
ये हो घरी-घरी मेघवा गरजिहैं, गोतिन नहिं आवै हो।
हे रतनारे होरिलवा सवन नहिं जनमेउ हो,
ये हो सब सखी झुलिहै झुलनवा, झुलन कइसे जाबइ हो।
हे रतनारे होरिलवा भादौं नहिं जनमेउ हो,
ये हो बिजुरी चमाचम चमकै, गोतिन नहिं आवइ हो।
हे रतनारे होरिलवा क्वार नहिं जनमेउ हो,
ये हो घर-घर अइहैं पीतर, दुखित होइ जइहैं हो।
हे रतनारे होरिलवा कातिक नहिं जनमेउ हो,
ये हो सब सखी पुजिहैं तुलसिया पुजन कइसे जाबइ हो।
हे रतनारे होरिलवा पूस नहिं जनमेउ हो,
ये हो पूस तौ हनै तुषार, जाड़ मोरे लागइ हो।
हे रतनारे होरिलवा माघ तुम जनमेउ हो,
ये हो माघइ मास सुहाय महल बिच रहबइ हो।

छतवा तानि दे बलम परदेसिया

छतवा तानि दे बलम परदेसिया
छायी आवै कारी बदरिया ना।
असाढ़ मास मोहि गरम सतावै,
कातिक जाबै भवनवा ना।

अगहन मास पिया घर नाहीं,
सब सखी चली भवनवा ना।
पूस मास मोहि जाड़ा सतावै,
माघ मा काँपैं करेजवा ना।
फागुन मास पिया नहिं आये,
केहि सँग खेलौं रँगनवाँ ना।
चइत मास बन टेसू फुलाने,
बइसखवै लिखे अवनवा ना।
जेठ मास बहै धुन्धकारी,
सिर से चुवै पसिनवा ना। छतवा0।

सखी परदेसी बालम बिन

सखी परदेसी बालम बिन कल न परै।
पहिल मास लागा कातिक आन, बिरह बिथा तन लागत बान,
जियरा मोर तलफत निकसत प्रान, केहि बिधि राखौं पापी प्रान।
सखी आवा है अगहन मास, केहि पर राखौं जीवन आस।
बिन बालम सब सूना धाम, बिन पिय नीक न एकौ काम।
पूस मास मा परत तुषार, पिया बिन जाड़ा न जाय हमार।
छपटि कसि सावौं हे बेपीर! हनि-हनि मारै करेजवा म तीर।
माघ मास रितु लाग बसन्त, अजहूँ न पाये पिया तोरा कन्त।
फागुन मा सब घोरैं अबीर, मैं कस घोरौं बिना रघुबीर।
जरौं जस होरी उठत जइसे लूक, बिरह अगिनि तन दीना फूँक।।
चइत मास बन फूले फूल, हमरा बलम हमका गये भूल।
खड़ी सरजू मा मींजत हाथ, ऐसे पिया छोड़ेउ साथ।
बैसाख मास गवने की बहार, दिन बीत्यौ ठाढ़ दुआर।
कब उइ अइहैं धरै न मन धीर, रहि-रहि उठत करेजवा मा पीर।
जेठ मास बरसाइत होय, बर पूजन निकरी सब कोय।
सखी सब कइके सोरहौ सिंगार, मथवा कै बिंदिया अजब बहार।
असाढ़ मास बहु बरसत मेह, परेउ फफोला सारी देह।
बिरह तन जरिगै लागी है लूक, बरिखा फुहार दियै तन फूँकि।
सावन मास मा हरियर रुख, हमरा कवल गये पिया बिन सूख।
झूलौं झूला कइसे बिना रघुबीर, तलफत प्रान न निकरत तीर।
भादौं मास गरुअ गंभीर हमरे नयन बहै झर नीर,
जियरा डूबै औ उतराय, हमरा खेवइया परदेस मा छाय।
क्वार मास बन बोलइ मोर उठ-उठ गोरिया बलम आये तोर।
आऔ पिया पूरेउ है आस, याही से गायौं बारहमास।

अजोध्या मा जनमे राम

चइत अजोध्या मा जनमे राम, चंदन से लिपवायउँ धाम
सुबरन कलसा धरे भरवाय, धरे घट मण्डल, पठाये बैरिन कैकेई
बैसाखे रित भीषम घाम, पवन चलत जस बरसत आग
जइसे जल बिन तलफत मीन, पियासे होइहैं लक्षिमन राम। पठाये0
जेठ मा लू लागत अंग, राम लखन औ सीता संग
हरि के चरन जस कमल समान, धधकै धरती और असमान। पठाये0
असाढ़ मास घन गरजै घोर, चिंहुकत पंछी कूकत मोर
कलपैं कौसिल्या अवधपुर धाम, बन भीजैं मोरे लक्षिमन राम। पठाये0
सावन मा सर साधे तीर, भँवरन गूँजत फिरत भुजंग
ठाढ़ी कौसिल्या अवधपुर धाम, बन भीजै मोर लक्षिमन राम। पठाये0
भादौं मेघा झरै अपार, घर बैठा सगरौ संसार,
बड़ी-बड़ी बुदियाँ बरसत नीर, भीजत होइहैं श्री रघुबीर। पठाये0
आवा सखी है मास कुवार, धरम करै सगरा संसार,
अजोध्या मा होती जौ लक्षिमन राम, नेवतित बाँभन देइत दान। पठाये0
कातिक मास सखी आयी देवारी, घर दिवला लेसहिं नर-नारी,
मोरी अजोध्या परी अंधियारी, सब सखियाँ मिलि गंग नहाय। पठाये0
अगहन कुवारी करत सिंगार, सियावत बस्तर सोने के तार,
पाट पटम्बर कुलही के मान, माथे चीरा जड़े कालीदार। पठाये0
पूस मास घन चलै तुषार, रैनि चलै जस खड्ग की धार,
बिनु ओढ़ना मोरे लछिमन राम, कलपैं कौसिल्या अवध के धाम। पठाये0
माघ मास रितु होत बसंत, सुत बिदेस तन तजि गये कंत,
बइठे भरत जी ढोरे चँवर, आज जौ होत मोरे लछिमन राम। पठाये0
फागुन रंग चलै सब कोई, ऐसी रितु मैं गवावौं रोई,
बैठे भरत जी घोरैं अबीर, केहिं पर छिरकौं बिना रघुबीर।
पठाये बैरिन केकई।

परदेसिया न आये नयन तरसै

परदेसिया न आये नयन तरसै।
अषाढ़ न आये, सावन नहिं आये,
भदउवाँ न आये जल बरसे। परदेसिया न आये नयन तरसै।
क्वार न आये, कातिक न आये,
आये अगहनवाँ लगन बनिके, परदेसिया न आये।
पूस न आये, माघ नहिं आये,
आये फगुनवाँ न रंग बरसै, परदेसिया न आये।
चइत न आये, बइसखवा न आये,
आये हैं जेठवा अगिनि बरसै, परदेसिया न आये नयन तरसै।

भरिगे नदिया अउ नार

लागे मसवा अषाढ़ भरिगे नदिया अउ नार
कइगे रातिव दिना गाढ़ उइ ननद के बिरना।
लागे मसवा सावन, हरवा किहसे नधवाई
बिना ननदी के बिरना भौजी सोंचै अँगना।
लागे मसवा भदउना पिया छाये कवने गवना
राखब कब तक तोरा नवना मोरे बालमवा।
क्वार दशमी का मेला, बालम कइ गे अकेला,
घर मा नाही बा धेला, मेला होइगें सपना।
आयी कातिक मा देवारी, सब के महल मा उजियारी,
हमरे महल मा अँधियारी को जलावै दियना।
लागे मसवा अगहन, बनिगे गोरियन के गवन,
जियरा नहीं धरे धीर मोंरे साजनवा।
लागे मसवा हैं पूस, गोरी अँगना गई सूत,
दून्हौं चोली लइगे मूस खाली रहिगे जोबना।
माघ पुरत फुहार, तड़पै सिंह औ सियार,
जाड़ा होइगा जियरा मार, को ओढ़ावै ओढ़ना।
फागुन गड़िगे बसंत, उइ तौ होइगे साधू संत,
उनकै मिलै नहीं अन्त, करत होइहैं, भजना।
चैत फूली है चमेली, बन फूली बन बेली,
चम्पा नारि है अकेली, को बुझावै बुझना।
लागे मसवा बैसाख रही मिलने की आस,
गोरिया होइ गई उदास, नहीं आये बलमा।
जेठ जुलमी महीना, तन से चुवत है पसीना,
चोली भीजत हवै मोरि टूटत हवै सियना।

भोर मा कातिक

भोर मा कातिक परै तुषार,
मोहि छोड़ि कंत भये बनजार।
अगहन मास लगनि खुब होय,
सासुर अपने जायँ सब जोय।
पूस मास पिया परत तुषार
मैं बरती पाँचौ अवतार।
माघ मास घन परै तुषार,
काँपइ हाथ औ काँपइ गात।
फागुन मास बहै फगुनी बयार,
तरुवर पात सबै झरि जायँ।

चइत मास बन फूले टेसू,
सजनी पठयौ पिया का सँदेश।
बइसाख मास अति मंगलचार,
मूडन गवन बियाहे कइ बहार।
जेठ मास बरसाइत होय,
बट पूजन निकरी सब जोय।
असाढ़ मास असाढ़ी जोग,
घर-घर मन्दिर सजै सब लोग।
सावन मास मा अधिक सनेह,
पिया बिन भूलेउ देह अउ गेह।
भादौं मास है गहिर गँभीर,
दामिनी दमकै धरै न धीर।
क्वार मास बन बोलइ मोर,
दौरि धना आये बालम तोर।

लागे मसवा अषाढ़ भरिगे नदिया

लागे मसवा अषाढ़ भरिगे नदिया औ नार
जिहिके घर मा सुन्दर नारि करैं सोलह सिंगार हे ननद के बिरना।
आई सांवा कोदौ कै बहार नाहीं हर के नधवार,
बिना ननदी के भइयाँ के जोताई जोतना।
लागा सावन कइ महीना गोरी करत हैं सिंगार
मोती गुहैं बारम्बार उइ पहिरि के गहना।
गावैं कजरी के गीत हमैं लागै अनरीत,
नाहीं अहैं दावनगीर के झुलावै झुलना।
दयवा गरजै घन घोर बिजुरी चमकै चारिउ ओर
बन मा बोलैं दादुर मोर घर मा नाहीं सजना।
गरजै गगना गंभीर भादों उठै बिरहा के पीर
नाहीं धरै हिया धीर के हरै रे बेदना।
लागा क्वार कइ महीना, विजया दशमी कइ मेला,
मोरे पइसा न अधेला, मेला होइगा सपना।
अब तौ बीति गई बरसात, आयी पूनम निरमल रात,
गोरी कर मीजैं पछितायँ फिर बजावैं कँगना।
आई कातिक कै देवारी पूजा करै नर-नारी,
हमरे महल मा अँधियारी, के जलावै दियना।
लागा अगहन कइ महीना आवा ननदी के गवना।
बुढ्ढी बाटें लरिकइयाँ, नाहीं मानै कहना।
हम करबै न बिदाई, अबहीं उमिरि बा लरिकाई,
नाहीं ननदी के भाई हम लगबै चरना।

पिया अउब्या हो कउने

पिया अउब्या हो कउने महिनवा मा। टेक।
आये अषाढ़ दइव लागे टपकइ,
टप-टप चुवति बँगलवा मा। पिया अउब्या 0
सावन मस्त मगन भइ गोरी
झूला झूलाथीं हिंडोलवा मा। पिया अउब्या 0
भादौं बिजुरी चमाचम चमकइ,
चोली मोर चमकइ अँगनवा मा। पिया अउब्या 0
क्वार मास किहौ कौल करारा,
जब सोयौ है सेजिया गवनवा मा। पिया अउब्या 0
कातिक मास देवारी के दिनवा,
लागइ अँधियार भवनवा मा। पिया अउब्या 0
अगहन मा गोरी जाँथी गवनवा,
मजा लूटाथीं पिया के गोहनवा मा। पिया अउब्या 0
पूस मास जाड़ा अति लागइ
पिया सोई केकरे गोहनवा मा। पिया अउब्या 0
माघ मास दयवा दुख दीना,
जोबना कइ रस गा अँचरवा मा। पिया अउब्या 0
फागुन मास होली के दिनवा
मारइ पिचकारी जोबनवा मा। पिया अउब्या 0
चइत मास टेसुर बन फूले,
रस चढ़ि आये जोबनवा मा। पिया अउब्या 0
बइसाख मास मिलन के दिनवा,
पिया फँसि गये परनारि गोहनवा मा। पिया अउब्या 0
जेठ मास गर्मी अति लागइ,
चोली भीजइ पसिनवा मा। पिया अउब्या 0
बारह महीना बरस गये बीती,
रस चढ़ि आये बदनवा मा। पिया अउब्या 0
कहँइ सीताराम धरा मन धीरा,
रस लइ लियबइ यसों के सवनवा मा।
पिया अउब्या हो कउने महिनवा मा।

हिंडोले के गीत

बिरना नान्हीं नान्हीं पतिया
अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।1।।
बिरना पतरी जोरै बरिया पूत, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।2।।
बिरना पतरी जेवैं बीरन मोर, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।3।।
बिरना मुंगिया दरिया दरि दालि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।4।।
बिरना मोतीसारी चउरे क भात, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।5।।
बिरना उपरा घिअन कइ धार, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।6।।
बिरना तेहि पै निबुल रसगार, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।7।।
बिरना माया जे हाँकैं बयारि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।8।।
बिरना भौजी डेहरि धरे ठाढ़ि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।9।।
बिरना बहिनी खड़ी बतलाय, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।10।।
बिरना देसवा भये हैं, तुरकान, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।11।।
बिरना घाटे बाटे मोगल पठान, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।12।।
बिरना धरम बचावै भगवान, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।13।।
बिरना पँडित दुआरे एक नीम, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।14।।
बिरना तेहि तर उतरे हैं साठि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।15।।
बिरना छोरि लेइहैं बिटिया कुँवारि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।16।।
बिरना धरम बचावैं भगवान, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।17।।
बिरना सुनतै रकत भइ आँखि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।18।।
भइया थरिया दिहेनि सरकाय, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।19।।
बिरना लै लिहें ढाल तरुवारि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।20।।
मोर भइया अकेलवइ ठाढ़, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।21।।
बिरना मुगुल की ओरी सब साठि, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।22।।
ननदा हमकाँ किहिउ अँधियार, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।23।।
बिरना जूझि मरे मुगुल पठान, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।24।।
मोर भइया समर जीति ठाढ़, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।25।।
बिरना मइया के बहैं दूधा-धार, अमिलि कइ बलैया लेउँ बीरन।।26।।
बिरना भउजी के हिरदा हुलास, बलैया लेउँ बीरन।।28।।
बिरना कोखिया बखानउँ मयरि कै, बलैया लेउँ बीरन।।29।।
जेकर पुतवा समर जीति ठाढ़, बलैया लेउँ बीरन।।30।।
बिरना मँगिया बखानउँ भउजि कै, बलैया लेउँ बीरन।।31।।
जेकर समिया समर जीत ठाढ़, बलैया लेउँ बीरन।।32।।
बिरना भगिया बखानउँ बहिनि कै, बलैया लेउँ बीरन।।33।।
जेकर भइया समर जीति ठाढ़, बलैया लेउँ बीरन।।34।।

बारी का लड़का उनसे पत्तल बना

इमली की नन्हीं-नन्हीं पत्तियाँ हैं।।1।।
बारी का लड़का उनसे पत्तल बना रहा है।।2।।
उस पत्तल पर मेरा भाई जीम रहा है।।3।।
मूँग दलकर बनाई है।।4।।
मोती-सरीखे चावलों का भात है।।5।।
उस पर घी की धार पड़ी है।।6।।
उस पर नीबूं निचोड़ दिया गया है।।7।।
माँ पंखा हाँक है।।8।।
भावज देहली पर खड़ी है।।9।।
बहन बात कर रही है।।10।।
हे भाई ! सारा देश तुर्कों से भर गया है।।11।।
रास्ते और घाट सब मुगलों और पठानों ने घेर लिये हैं।।12।।
भगवान ही अब धर्म की रक्षा करें।।13।।
पंडित के दरवाजे पर नीम का पेड़ हैं।।14।।
उसके नीचे साठ मुगल और पठान उतरे हैं।।15।।
वे पंडित की क्वारी लड़की को छीन ले जायँगे।।16।।
हे भाई! भगवान् ही उसका धर्म बचावें।।17।।
यह सुनते ही माई की आँखें रक्त के समान लाल हो गई।।18।।
भाई ने थाली सरका दी।।19।।
दौड़कर उसने ढाल-तलवार ली।।20।।
मुगलों की ओर सब साठ हैं।।21।।
मेरा भाई अकेला ही खड़ा है।।22।।
भावउ जहर ऐसी बात बोल रही है।।23।।
हे ननद! तुमने मेरे जीवन को अन्धकारमय कर दिया।।24।।
मुगल और पठान लड़े और मारे गये।।25।।
मेरा भाई युद्ध जीतकर खड़ा है।।26।।
माँ की छाती से दूध की धारा बह रही है।।27।।
भावज के हृदय में हर्ष उमड़ आया है।।28।।
माँ की कोख को धन्य है।।29।।
जिसका पुत्र युद्ध जीतकर खड़ा है।।30।।
भावज के सुहाग को धन्य है।।31।।
जिसका स्वामी युद्ध जीतकर खड़ा है।।32।।
बहन के भाग्य को धन्य है।।33।।
जिसका भाई युद्ध जीतकर खड़ा है।।34।।

मेंहदी चली वर मेंहदी

टांड़े में मेंहदी चली वर मेंहदी के लम्बे लम्बे पात;
मेंहदी भीजत है।।1।।
लहुरा देवर मेरो लड़िया वारी, ले आयो बैल लदाय;
मेंहदी भीजत है।।2।।
लाबहु सील सिलावटी वारी, वारी भाउज भरि दूनूँ हाथ,
मेंहदी भीजत है।।3।।
देवरा लगावै कानी आँगुरी वारी भाउज भरि दूनूँ हाथ,
मेंहदी भीजत है।।4।।
झमकि अँटरिया चढ़ि गई वारी, केहि देखलाऊँ दूनूँ हाथ,
मेंहदी भीजत है।।5।।
लट छटका मेरे पाटिया वारी है कोउ लसकर जात,
मेंहदी भीजत है।।6।।
वही लसकरिया में यों कहया तेरी मइया मरी घर जाहु,
मेंहदी भीजत है।।7।।
मइया मरी हैं मरी जान दे वारी गयो है घर का बलाय,
मेंहदी भीजत है।।8।।
वही लसकरिया में यों कह्यो वारी बहिनी मरी घर जाहु,
मेंहदी भीजत है।।9।।
बहिनी मरी मरि जान दे वारी बँचि गया दान दहेज,
मेंहदी भीजत है।।10।।
वोहि लसकरिया में यों कह्यो तेरी धनियाँ मरी घर जाहु,
मेंहदी भीजत है।।11।।
धनियाँ मरी है घरा खोय गया वारी लड़िकै गए हैं खराब,
मेंहदी भीजत है।।12।।
कागद फैंकै चउतरा मसिहानी दिहिनि ढरकाय,
मेंहदी भीजत है।।13।।
लेहु राजा आपनि चाकरी वारी धनियां मरी घरा खोय,
मेंहदी भीजत है।।14।।
घरा खोय गया वारी लड़िके गए हैं खराब,
मेंहदी भीजत है।।15।।
मइया के देखै तलाब पर वारी बहिन चले के खेत,
मेंहदी भीजत है।।16।।
लड़िके झूलैं लै पालना वारी वोई घना सीझई रसोई,
मेंहदी भीजत है।।17।।
झमकि अटरिया चढ़ि गई वारी खोलि देखलावैं दोउ हाथ,
मेंहदी भीजत है।।18।।

कवन छलहारिन छल किया वारी छल से लिया है बोलाय,
मेंहदी भीजत है।।19।।
अइसा काम न कीजिए वारी आई रोजी फिरि जाय,
मेंहदी भीजत है।।20।।

तनिक पिया चूनरी रँगउता

मोरे पिछवरवाँ लिलहिया कै बखरिया,
तनिक पिया चूनरी राँगउता।।1।।
चुनरी रँगत मोरे छुटाला पसिनवाँ
तनिक धना बेनिया डोलवतू।।2।।
बेनिया डोलत मोरी मुरकी कलइया,
तनिक धना बायेदा बोलवता।।3।।
बयदा तो अइलैं पलँग चढ़ि बइठें,
से माँगै लाग साठी हो रूपयवा।।4।।
कहाँ पावों बयदा हो साठी रुपइया,
मेहरिया भइलीं जीव कै जावलवा।।5।।
जौ तोरे पियवा हो जीव कै जवलवा,
तौ हम चली जाबै हो नइहरवा।।6।।
जौं तुहूँ जाब धना अपने नैहरवा,
हमहुँ चला अउबै हो ससुररिया।।7।।
जौ तुहूँ पीया मोरें जाबा ससुररिया,
हमहुँ होबै ताले ताले कै माछरिया।।8।।
जौ तुँ धना होबिउ ताले कै मछरिया,
से हम होबै ताले कै बाकुलवा।।9।।
जौ तुँ होबेउ पिया ताले कै बकुलवा,
से हम हौबै बन कै रे चीरइया।।10।।
हमहुँ हौबै बन कै रे बाहेलिया।।11।।
जीतल ए राजा! तुहई लड़इया,
के हम धना हारी हो साजनवा।।12।।

मोरे नयनों से बरसे बादरिया

करूँ कौन जतन अरी ए री सखी
मोरे नयनों से बरसे बादरिया।।1।।
उठी काली घटा बादल गरजै,
चली ठंडी पवन मेरा जिया लर,
थी पिया मिलन की आस सभी,
परदेस गये मोरे साँवरिया।।2।।
सब सखियाँ हिंडोले झूल रहीं,

खड़ी भीजूँ पिया तोरे आँगन में,
भर दे रे रँगीले मनमोहन,
मेरी खाली पड़ी है गागरिया।।3।।

तनिक पिया चूनरी राँगउता

मोरे पिछवरवाँ लिलहिया कै बखरिया,
तनिक पिया चूनरी राँगउता।।1।।
चुनरी रँगत मोरे छुटाला पसिनवाँ
तनिक धना बेनिया डोलवतू।।2।।
बेनिया डोलत मोरी मुरकी कलइया,
तनिक धना बायेदा बोलवता।।3।।
बयदा तो अइलैं पलँग चढ़ि बइठें,
से माँगै लागे साठी हो रुपयवा।।4।।
कहाँ पावों बयदा हो साठी रुपइया,
मेहरिया भइलीं जीव कै जावलवा।।5।।
जौ तोरे पियवा हो जीव कै जवलवा,
तौ हम चली जाबै हो नईहरवा।।6।।
जौं तुहूँ जाबू धना अपने नैहरवा,
हमहुँ चला अउबै हो ससुररिया।।7।।
जौ तूहूँ पीया मोरें जाबा ससुररिया,
से हम होबै ताले कै बाकुलवा।।8।।
जौ तुँ धना होबिउ ताले कै मछरिया,
से हम होबै ताले कै बाकुलवा।।9।।
जौ तुँ होबेउ पिया ताले कै बकुलवा,
से हम हौबै बन कै रे चीरइया।।10।।
जौ तुँ होबिउ धना बन कै चिरइया,
हमहुँ हौबै बन कै रे बाहेलिया।।11।।
जीतल ए राजा! तुहई लड़इया,
के हम धना हारीं हो साजनवा।।12।।

मोरा पिया उतरइ

धीरे बहु नदिया तैं धीरे बहु,
मोरा पिया उतरइ दे पार।।1।।
काहेन की तोरी नइया रे, काहे की करुवारि।
कहाँ तोरा नइया खेवइया रे, के धन उतरइँ पार।।2।।
धरमैं कइ मोरी नइया रे, सत कइ लगी करुवारि।
सैयाँ मोरा नइया खेवइयारे, हम धन उतरब पार।।3।।

ओहिरे मयरिया कैसन

ठाढ़ी झरोखवा मैं चितवउँ,
नैहरे से केउ नाहीं आइ।।1।।
ओहिरे मयरिया कैसन बपई रे
जिन मोरी सुधियौ न लीन।।2।।
ओहिरे बहिनिया कैसन बीरन,
ससुरे में सावन होई।।3।।
अगिले के घोड़वा बबैया मोरा,
पिछवाँ के बिरना हमार।।4।।
भला रे मयरिया भल बपई रे,
अब मोरी सुधिया जे लीन।।5।।
कँवरी ले आवइँ बबैया मोरा,
जेकरि बिटिया दुलारि।।6।।
चुनरी ले आवइँ बिरन मोरा,
जेकरि बहिनी दुलारि।।7।।

बिच पुरइनि हाले

ताल किनारे महल मोर सुन्दर,
तेहि बिच पुरइनि हाले रे।।1।।
तेहि चढ़ि जोहौं नैहरवा की बेटिया,
मोरा नैहरवा नियरे की दूरि रे।।2।।
आवत देखेउँ सासु दुइ अवसरवा,
एक रे साँवर एक गोर हो।।3।।
हमरे तो आये सासु भैया रे पहुनुवाँ,
का रे भोजन कैहाँ देउँ रे।।4।।
भोजना देउ बहू अकड़ी कोदैया,
और मुनमुनिया कै दाल रे।।5।।
बजर परै सासु अकड़ी कोदैया,
और मुनमुनिया कै दाल रे।।6।।
देहुरी निकारि सासु मेहिया के चउरा,
और राज मुंगिया कै दाल रे।।7।।
हमरे तो आये सासु भैया पहुनवाँ,
का रे घुँटन कैहाँ देउँ रे।।8।।
घुँटने का देउ बहुआ फुटही मेलियवा,
औरौ गड़हिया कै पानी रे।।9।।
अगिया लगाओं सासु फुटही मेलियवा,
बजर परे गड़ही क पानि रे।।10।।

घुँटने का देबै सासु झँझरा गेंडुवावा,
औरौ गंगाजल पानी रे।।11।।
हमरे तो आये सासु भैया रे पहुनवाँ,
का रे कूँचन कैहाँ देउँ रे।।12।।
कुँचने क देउ बहुवा पिपरे की पतिया,
औरौ चिरैया क लेंड़ रे।।13।।
अगिया लगावों सासु पिपरे की पतिया,
बजर परै चिरई क लेड़ रे।।14।।
कूँचै को देबै सासु मघई के पनवा,
औरौं लवाँग इलायची।।15।।
हमरे तो आये सासु भैया रे पहुनवाँ,
कारे सोवन कैहाँ देउँ रे।।16।।
सोवने को देउ बहुआ टुटली झिलँगवा,
और चुवनी चौपारि रे।।17।।
अगिया लगाओं सासु टुटहे झिलँगवा,
बजर परे चुवनी चौपारि रे।।18।।
सूतने को देबै सासु रतली पलँगिया,
और चनन छिरकि चौपारि रे।।19।।
बैठो न ए भैया रतनी पलँगिया,
कहो नैहरवा कै हाल रे।।20।।
तोहरे नैहर बहिनी छेम कुसलिया,
तोहरे कुसल कैहाँ आयों रे।।21।।
सासु तो ये भैया बुढ़िया डोकरिया
आजु मरै की काल्हि रे।।22।।
ननदी तो ए भैया बन की कोइलिया,
आज उड़ै की तो काल्हि रे।।23।।
जेठानी तो ए भैया कारी बदरिया,
छिन बरसै छिन घाम रे।।24।।
देवरानी तो ए भैया कोने कै बिलरिया,
छिन निकरै छिन पैठे रे।।25।।
मूड़े देखो ए भैया मूड़ देखो भैया,
जैसे कुकुरिया कै पूंछि रे।।26।।
पीठि देखो भैंय तो पीठि देखो भैया,
जैसे है धोबिया क पाट रे।।27।।
कपड़ा देखो भैया कपड़ा देखो भैया,
जैसे सवनवा कै बादरी रे।।28।।
नौ मन कुटना रे नौ मन पिसना,
नौ मन सेंकौं रोसोईं रे।।29।।

पिछली टिकरिया भैया हमरा भोजनवाँ,
ओहूमाँ कुकरू बिलारि रे।।30।।
ई दुख मति कहो माई के अगवाँ,
सभवा बैठ मुरझाइँ रे ।।31।।
ई दुख मति कहो बाबा के अगवाँ
छतिया फारि मरि जाइ रे।।32।।
ई दुख जनि कहेउ भौजी के अगवाँ,
ओबरी बैठि ठट्टा मारै रे।।33।।
ई दुख बाँधेउ भैया गरुई गठरिया,
भैया जहवाँ खोलेउ तहाँ रोएउ रे।।34।।

रानी राजा सारी पासा

कनक अटारी दियना बरै, दियना बरा है अकास।
अरे हो रानी राजा सारी पासा खेलहीं।।1।।
हाथ से सारी पासा गिर परा, मुखहूँ से गिरा है तमोल।
अरे हो रानी राजा भये अनबोलना।।2।।
काढ़ि पेटारे से चोलना, सो लेई बेड़िनी के देइँ।
अरे हो रानी राजा भये अनबोलना।।3।।
आज के दिहो राजा चोलना, काल्हि के दीहो मेरो राज।
राजा जनम भये अनबोलना।।4।।
कनक अटारी धना ऊतरी, हानि दीनो बजर केवाड़ा।
अरे हो रानी राजा भये अनबोलना।।5।।
सासु मनावन वै चलीं, दस पांच बेटवा बटोरि।
दुलहिनि बेटाजी से काहें अनबोलना।।6।।
सोने कै मचिया गढ़ावती, लट छाड़ि मैं लगिहौं पाँय।
अम्मा करिहौं मैं जनम अनबोलना।।7।।
ससुर मनावन वै चले, पलकित छुटा है कहाँर।
दुलहिनि बेटाजी से काहें अनबोलना।।8।।
अच्छे अच्छे हौदा गढ़उतिउँ, हाथिन हौदा लगावउँ।
बाबा करिहौं मैं जनम अनबोलना।।9।।
जेठ मनावन वै चले, दस पांच बेटवा बटोरि।
दुलहिनि भैयाजी से काहें अनबोलना।।10।।
अच्छे अच्छे घोड़वा सजावती, भाँति भाँति करौ पकवान।
जेठजी करिहौं मैं जनम अनबोलना।।11।।
जेठानी मनावन वै चलीं, दस पाँच चेलिका बटोरि।
दुलहिनि बाबूजी से काहें अनबोलना।।12।।
अच्छी अच्छी चुनरी रँगवाती, लट छोड़ि के लागिहौं पायँ।
जीजी करिहौं मैं जनम अनबोलना।।13।।

देवर मनावन वै चले, दस पाँच संगी बटोरि।
भाभीजी भैयाजी से काहें अनबोलना।।14।।
सोने कै लटुवा गढ़वतिउँ, खेलत खुनत घर जाहु।
बाबू करिहौं मैं जनम अनबोलना।।15।।
ननद मनावन वै चलीं, दस पांच सखिया बटोरि।
भाभी भैयाजी से काहें अनबोलना।।16।।
अच्छी-अच्छी गुड़िरया गढ़वतिउँ, खेलत खुनत घर जाहु।
बीबी करिहौं मैं जनम अनबोलना।।17।।
बेड़िनी मनावन वै चलीं, खिरकी बाहर होइ ठाढ़ि।
रानी राजा जी से काहें अनबोलना।।18।।
जाहु बेड़िनि घर आपने, मरिहौं पिढ़वा कै मार।
बेड़िनि तोरे कारन भये अनबोलना।।19।।
राजा मनावन वै चले, हाथे बिराव लिहे अनमोल।
रानी काहे कारन किहौ अनबोलना।।20।।
विष की कियारी राजा तुम बोयो, अब कैसे फिरि पछिताहु।
राजा करिहौं मैं जनम अनबोलना।।21।।
मनक बिरोग रानी छोड़ि दो, बेड़िनी क दीन्हयो मैं निकारि।
रानी करौ न जनम अनबोलना।।22।।

फाग-गीत

होरी

बिना होली तापे न जावै

गड़िगे बसंत के ढाह, बिना होली तापे न जावै।
पहिली अनउनी ससुर मोरा आये,
ससुरू लौटि घर जाव, बिना होली तापे न जावै।
दुसरी अनउनी जेठ मोरे आये,
जेठा लौटि घर जाव, बिना होली तापे न जावै।
तिसरी अनउनी देवर मोरा आये,
देवरा लौटि घर जाव, बिना होली तापे न जावै।
चउथी अनउनी स्वामी मोरे आये,
स्वामी लौटि घर जाव, बिना होरी तापे न जावै।
गड़िगे बसंत के ढाह बिना होली तापे न जावै।

कौने छयलवा कै नारी

कौने छयलवा के नारी झमाझम पानी का निकरी।
की रे वही तुम सँचवा म ढारी
की रे गढ़ा है सोनार, झमाझम पानी का निकरी।
नाही रे राजा हम सँचवा की ढारी
नाही रे गढ़ा है सोनार, झमाझम पानी का निकरी।
माई बाप मोरा जनम दिहिन हैं,
सुरतिउ दिहिन भगवान, झमाझम पानी का निकरी।
कौने छयलवा के नारी झमाझम पानी का निकरी।

फागुन कंत बिदेस

फागुन कंत बिदेस हमें कुछ नीक न लागै।
हमरे ससुर जी के टीने कै बँगला
बूंद परे ठहनाय हमैं कुछ नीक न लागै। फागुन कंत ....
हमरे जेठ जी के कगदे कैं बँगला
पानी परे गलि जाय हमैं कुछ नीक न लागै। फागुन कंत ..
हमरे देवर जी के पाने कैं बँगला

घामौ लगे कुम्हिलाय, हमैं कुछ नीक न लागै। फागुन कंत..
फागुत कंत बिदेस हमैं कुछ नीक न लागै।

निकरिउँ स्याम जी की चोरी

निकरिउँ स्याम जी की चोरी अरे देवरा रंग न मारेउ
काहने के तोरा रंगा बिरंगा, काहेन की पिचकारी,
अरे देवरा रंग न मारेउ।।
अतर गुलाबी भौजी रंग बिरंगा
सोनेन की पिचकारी अरे देवरा रंग न मारेउ। निकरिउँ ...
पहली पीच मोरी सारी पे मारी,
सारी भई है सराबोर, अरे देवरा रंग न मारेउ।।
सारी के बदले सारी हम देबै
पाँच रुपइया गुनागारी अरे देवरा ...
दुसरी पीच मोरी अँगिया पै मारी
अंगिया भई है सराबोर अरे देवरा रंग ... ।
तिसरी पीच मोरी छतिया पै मारी,
काया भई है सराबोर अरे देवरा रंग ... ।
निकरिउँ स्याम जी की चोरी अरे देवरा रंग न मारेउ।।

माँग मोरी मोती जड़ी है

कैसेक पानी भरै जाऊँ माँग मोरी मोती जड़ी है।
अपने ससुर जी की बड़ी रे दुलारी
गलिया मा तँबुआ छवावै
पतुवा रानी पानी का अइहैं।
कैसेक पानी भरै जाऊँ माँग मोरी मोती जड़ी है।
अपने जेठ की बड़ी रे दुलारी
गलियन सिटकी बहारै, भयौ रानी पानी का अइहैं।।
अपने देवर की बड़ी रे दुलारी
द्वारे प कुवँना खोदावै, भउजी मोरी पानी का अइहैं।।
कैसेक पानी भरे जाऊँ, माँग मोरी मोती जड़ी हैं।

गोरी करिहौ तू कौन बहाना

गोरी करिहौ तू कौन बहाना गवन नगिचाना।
चारि जने मिलि आनन आयें,
गोरी डोली और डंडा मियाना, गवन नगिचाना।।
आँगन म गोरी की माँग सँवारौ,
द्वारे प सजा है मियाना, गवन नगिचाना।।
चारि सखी मिलि पूछन लागी
गोरी अबके गये कब आना, गवन नगिचाना।।

गंगा जुमना नदिया दुई धारा
गोइयाँ अब के गये नहिं आना, गवन नगिचाना।।

पिया परदेसवा मा छाये

आँगन बैरी लगायौं पिया परदेसवा मा छाये।
पहिला फूल जौ फूली बैरिया
आई ससुइया तूरि लइगै, पिया परदेसवा ... ।।
दुसरा फूल जौ फूली बैरिया,
आई जेठनिया तूरि लइगै, पिया परदेसवा ... ।।
तिसरा फूल जौ फूली बैरिया,
आई देउरनिया तूरि लइगै, पिया परदेसवा ... ।।
चौथि फूल जौ फूली बैरिया,
आई सवतिया तूरि लइगै, पिया परदेसवा ... ।।
पँचवा फूल जौ फूली बैरिया,
आई ननदिया तूरि लइगै, पिया परदेसवा ... ।।

जदुवा चलाये बलम

जाने को जदुवा चलाये बलम बेलमाये।
सोने के थारी म जेवना बनायौं
गोइयाँ जेवना मा जदुवा चलाये, बलम ... ।।
झंझा रे गेडुवाँ गंगाजल पानी
गोइयाँ गोडुवाँ अरे गोइयाँ गेडुवौ का जुदवा चलाये। बलम ...।।
पाँच पान पंच बिरिया लगायौं
गोइयाँ बिरियौ का जदुवा चलाये, बलम ...
फूला नेवारी के सेज लगायौं
गोइयाँ सेजियौ मा जदुवा चलाये। बलम ... ।
जाने को जदुवा चलाये, बलम बेलमाये।।

गोरी के बार रेसम

गोरी घूमै न जायौ दुपहरिया, नजर लगि जइहैं।।
गोरी के बार रेसम के लच्छा
गोरी अँतरन से झलकारे, खड़ी पिछुवारे।।
गोरी के दाँत अनार के दाना,
गोरी मिसियन से झलकारे, खड़ी पिछुवारे।।
गोरी की आँख आम की फाँकी हो
गोरी सुरमा से झलकारे, खड़ी पिछुवारे।।
गोरी कै नाक सुगन कै टोटिया
गोरी नथुनी से सँवारे खड़ी पिछुवारे।।

भउजी पुजवा चढ़ौती

पैयाँ मैं लागौं लहुरे देवरवा, पिया घर नाहीं।
काव तू देबू भउजी पुजवा चढ़ौती
हम तौ देबै देवरा सोने कै अँगूठी
देवरा दियबै गलै के हार, पिया घर नाहीं।।
अगिया न लागै भउजी तोहरी अँगूठी
भउजी बजर परै गले हार, पिया घर नाहीं।।
काव तू लेबू देवरा पुजवा चढ़ौती,
हम तौ लियब भउजी दूनौ, जोबनवा?
न लेबै गले कै हार, पिया घर नाहीं।।
माँगेउ तौ देवरा मोरे मँगइउ न जानेउ
देवरा माँगेउ प्रान हमार, पिया घर नाहीं।।

लालन मांगत है

लालन माँगत है सुरुज जोंधाई
जोंधाई कहाँ पाई।
मोरे पिछुवरवा लोहार, भइया मितवा,
भइया लोहेउ कै गढ़ितिउ जोंधाई, जोंधाई कहाँ पाई।
मोरे पिछुवरवा बढ़ई भइया मितवा,
भइया लकड़ी कै गढ़ितिउ जोंधाई, जोंधाई ... ।
मोरे पिछुवरवा सोनार भइया मितवा,
भइया सोने के गढ़तिउ जोंधाई, जोंधाई कहाँ पाई।
लालन माँगत है सुरुज जोंधाई, जोंधाई कहाँ पाई।।

गोरी चढ़ि आओ हमरी

गोरी चढ़ि आओ हमरी अँटारी नींद भल लागे।
कैसे क चढ़ौं स्वामी तुम्हरी अँटारी
घर जागैं सास ननदिया, सरम मोरे लागै।
कैसे क चढ़ौं स्वामी तुम्हारी अटारी हो
घर जागैं देवर देवरानी सरम मोरे लागै।
कैसेक चढ़ौं स्वामी तुम्हारी अँटारी
घर जागत हैं जेठ जेठानी, सरम मोरे लागै।
गोरी चढ़ि आओ हमरी अँटारी, नींद भल लागै।

ग्वालिनि पहिरे घुँघरू गुजराती

ग्वालिनि पहिरे घुँघरू गुजराती, दही बेचै जाती।
कइ लाख ग्वालिन दहिया तू बेचौ,
ग्वालिनि कइ लाख सुरत तुम्हारी, दही बेचै जाती।।

यक लाख राजा हम दहिया बेंचब
राजा नौ लाख सुरति हमारी, दही बेचै जाती।।
दहिया तौ धरौ ग्वालिन तँबुवा के भीतर,
ग्वालिन बैठौ न बगल हमारी, दही बेचै जाती।।
अगिया न लागै राजा तँबुवा के भीतर,
राजा बजर परै बगल तुम्हारी, दही बेचै जाती।।
ग्वालिनि पहिरे घुँघरू गुजराती, दही बेचै जाती।।

नइहरवा से कोऊ न आवा

फागुन हैं दिन चारि नइहरवा से कोऊ न आवा।
मैया मोरी होती सुधिया वइ लेंती,
बपई कै कौन सहारा, नइहरवा से ... ।
भैया मोरे होती सुधिया वै लेती,
भउजी कै कौन सहारा, नइहरवा से ...।
बहिनी मोरी होते सुधिया वै लेते,
जीजा के कौन सहारा, नइहरवा से ... ।
जौ सखी होती सुधिया वई लेती
नौवा के कौन सहारा नइहरवा से ... ।
फागुन हैं दिन चारि नइहरवा से कोऊ न आवा।।

निरमोहिया कै लाला

कंत सवति घर लावै अरे निरमोहिया कै लाला।
जाय कहेउँ मोरे ससुरा के अगवा
ऊँचो घुँघट भयौ भयौ नीच, अरे निरमोहिया ... ।
जाय कहेउँ उन जेठवा के अगवा
ऊँचो मुहार किहौ नीच अरे निरमोहिया कै लाला।
जाय कहेउँ उन देवरा के अगवा
खिरकी कटावै भल ऊँच अरे निरमोहिया ... ।
जाय कहेउँ वइ स्वमिया के अगवा
महला प सेजिया लगावै अरे निरमोहिया ... ।
कंत सवति घर लावै अरे निरमोहिया कै लाला।

देवर भौजाई पै राजी

छोटी अमिलिया कै पाती, देवर भौजाई पै राजी।
सोने के थारी मा जेवनवा बनायौं,
कैसेक जेवना जेवाऊँ बलम होटलवा पै राजी। छोटी ... ।
सोने सुराही मा जल भरि लायौं,
कैसेक गेडुवा घुटाऊँ बलम बोतलवा पै राजी। छोटी.... ।

लेउँगा इलैची कै बिरिया लगायौं,
कैसेक बिरिया कुचाऊँ बलम सिगरेटवा पै राजी। छोटी ... ।
फूल कै चुनि-चुनि सेजिया लगायौं,
कैसेक सेजिया सुताऊँ बलम तौ सवतिया पै राजी।
छोटी अमिलिया कै पाती, देवर भौजाई से राजी।।

मोरी बहियाँ अबै मोरे बारे

छोड़ो बलम मोरी बहियाँ अबै मोरे बारे कन्हैया।
जो सुनि पइहैं ससुर जी मोरे नाधैं न दियहैं डुडुहिया, अबै ... ।
छोड़ौ बलम मोरी बहियाँ अबै मोरे बारे कन्हैया।
जौ सुनि पइहैं सासु जी मोरे,
छुवै न दियहैं गगरिया, अबै मोरे... ।
जौ सुनि पइहैं जेठ जी मोरे
छुवै न दियहैं रसोइयाँ अबै मोरे बारे ...।
छोड़ौ बलम मोरी बहियाँ अबै मोरे बारे कन्हैया।

राजा नयी रे जवानी

फूल फूले असमानी अबहीं राजा नयी रे जवानी।
सोने के थारी मा जेवना बनायौं,
जेवना जेंवत अलसानी, अबहि राजा ... ।
सोने सुराही मा जल भरि लायौं,
गेडुवा घुटत अलसानी, अबहि राजा ... ।
पाँच पान पंच बिरिया लगायौं,
बिरिया रुचति अलसानी, अबहीं राजा ... ।
फूला नेवारी कै सेजिया लगायौं,
सेजिया सोवत अलसानी, अबही राजा ... ।
फूल फूले असमानी, अबहीं राजा नयी रे जवानी।

फागुन परी सिवराति चलौ

फागुन परी सिवराति चलौ सखि जल भरि लाई।
काहेन की तोरी आँवरि काँवरि,
काहेन की तोरी सीसी, चलौ सखी ... ।
बाँसन की मोरी आँवरि काँवरि
काँचन की मोरी सीसी, चलौ सखी ... ।
फागुन परी सिवराति चलौ सखी जल भरि लाई।
कहँवा से सखी जल भरि लाई।
गंगा से है सखि जल भरि लाई
लोधेसुरन मा चढ़ाई, चलौ सखि जल भरि लाई।
फागुन परी सिवराति चलौ सखी जल भरि लाई।

अरे देवरा रंग न मारेउ

निकरिउँ स्याम जी की चोरी, अरे देवरा रंग न मारेउ
भरि पिचकारी घुँघट बिच मारै,
निकरि गई मांग बेंदी अरे देवरा रंग न मारेउ।
भरि पिचकारी अँगिया बिच मारे
टूटी गये चोली बंद अरे देवरा रंग न मारेउ।
भरि पिचकारी सारी बिच मारै
निकरी कमर करधनिया, अरे देवरा रंग न मारेउ।
भरि पिचकारी पाँवन बीच मारे,
निकरि गये पायजेब अरे देवरा रंग न मारेउ।
निकरिउँ स्याम जी की चोरी अरे देवरा रंग न मारेउ।

यक सुन्दर नारि नगीना

यक सुन्दर नारि नगीना, बलम तजि दीना।
गंगा नहानिऊँ सुरुज पैयाँ लागिऊँ
भल चँदरमा अरध नहि दीना, बलम ... ।
कइके सिंगार पलँग चढ़ि बैठी
भल बलम कै आदर न कीन्हा, बलम ... ।
चोली के बंद तड़ातड़ टूटे
भल लहुरा देवरवा पोछै पसीना, बलम ... ।
यक सुन्दर नारि नगीना बलम तजि दीना।।

चौताल

चलु मज्जन कर संघाती

चलु मज्जन कर संघाती, आजु सिवराती।
अगर कपूर धूप दधि अच्छत, फूल बेल कै पाती। आजु ... ।
लै-लै लोग बजावत गावत, सिव पूजन हरसित छाती। आजु ... ।
होत उछाह हिमांचल के घर, जुरे महेस बराती। आजु ...।
हास विलास ब्याह कर कौतुक छवि सारद कहत लजाती। आजु ...।
जो उपवास करत यहि अवसर सुजस लहत बहु भाँती। आजु ...।
चारि पदारथ करतल पावत कवि कोविद भनत सुजाती। आजु... ।
द्विज छोटकुन जाचक गुन गावत पावत मन माहि सोहाती। आजु ... ।
चल मज्जन कर संघाती आजु सिवराती।

कुछ दिनवा मा होइगे सयाने,

कुछ दिनवा मा होइगे सयाने, धरे धनु बाने।
चढ़ि धनु साजि बाजि सब भूषण मृगया करन पयाने।
मारत कुटिल कुरंग काढ़ि सर यति दुर्लभ करत सुजाने।
चारि वेद छह सास्त्र अठारह पढ़े पुनीत पुराने।
विद्या, ब्रह्म ज्ञान आदिक सब अति अलप काल मँह आने।
जँह तँह लोग बिमल जस बरनत सुनत भूप दै काने।
सुर नर नारि हरसि हिय टेरत गुण साँझ बिहाने।
को कहि सकै भागि भूपति कै कवि कुल अगम लखाने।
द्विज छोटकुन केहि भाँति बखानहि एक बदन समुझि सकुचाने।
कुछ दिनवा मा होइगे सयाने धरे धनु बाने।

ससि बदन मदन छवि छोरे

ससि बदन मदन छवि छोरे, बसहु दिल मोरे।
घर-घर सोर भयौ मिथिला पुर उर आनन्द न थोरे।
सब नर नारि हरषि हिय हेरत दृग तरसत मनहुँ चकोरे।
क्रीट मुकुट मणि भाल गले बिच तिलक झलक चित चोरे।
काक पच्छ को लच्छन पावत काम मधुप पर जोरे।
ललित कपोल अधर मृदु मुसुकनि तिरछी चितवन दृग कोरे।
स्यामल अंग पीत पट सोहत संग अनुज तन गोरे।
द्विज छोटकुन लखि जनम बनावहु दसरथ जी के जुगल किसोरे।
ससि बदन मदन छवि धोरे बसहुँ दिल मोरे।

मोरे संग चलौ बनवारी

मोरे संग चलौ बनवारी, रैन अँधियारी।
सासु रिसाय दीन यह गागर नाजुक अंग हमारी।
तेहि पर कूल दूर जमुना को, मग चलत डरत हम नारी। रैन... ।
सुनिये आज गरज हमरी लखि हे पुत्र नवल बिहारी।
यहि पुर माँहि बसत बाउर सब दिनहि करत ठगहारी।
सुनतै नाथ चलै लै गागर चलत बाँह गले डारी।
कौतुक करत डगर के भीतर मोसे कहि न जाय गति सारी। रैन...।
जल भरि दीन सीस वनिता के मधुरी बैन उचारी।
द्विज छोटकुन आयहु फिरि सुन्दर जमुना तट आनन वारी।
मोरे संग चलौ बनवारी, रैन अँधियारी।।

अब लचकत कमर हमारी

अब लचकत कमर हमारी, जोबन दुनौ भारी।
पीपर पात लगाय जड़े हम फारै अमोलक सारी।
ताहू पर यह तनिक न मानत ऐसी बिनु लाज गँवारी।
बहुत उपाय कीन सजनी हम लागै न औषधि बारी।
चोली बंद तोरि सब डारत, दिन ही दिन होति तयारी।
रहत उतंग उमंग भरे मैं बहुत जतन करि डारी।
जब पिया संग जाऊँ सेजिया पर सोवन संग अँटारी।
द्विज छोटकुन तब बनत न आवत रतिया मा मरौ बिनु मारी।
अब लचकत कमर हमारी जोबन दुनौ भारी।।

तुम बिनु यह हाल हमारे

तुम बिनु यह हाल हमारे, प्रानपति प्यारे।
हेरत पंथ रहत निसि वासर घूँघत कर पट टारे।
तुम नहि देखि परत कहुँ औचक हम तरसति हृदय मँझारे।
मृदु मुसुकनि साँवलि सूरत कमल नयन रतनारे।
आठ पहर दिल से नहिं भूलत नहिं रहत बनत पुर द्वारे।
पलक एक छिन बिसरत नाहीं काह कहौं दुख सारे।
काहे न ख्याल करत तुम प्रीतिम मोहि केहि अपराध बिसारे।
हम अब लोक लाज सब त्यागब लागब संग तुम्हारे।
द्विज छोटकुन कहे होत सकल सुख चरन सरोज तिहारे। प्रान पति... ।
तुम बिनु यह हाल हमारे प्रानपति प्यारे।

प्रीतम मानत नहि

अब आधीरात नगिचानी, आंख अलसानी।
सोइ गये संसार सबै अब जागत कोई कोई प्रानी।

हमहूं तुमहू चली पलंग पर सोवहु सिर चादर तानी।
सेज बिछाय लगाय पान हम आनि देब पिचदानी।
अब जनि देर करौ तुम प्रीतम मानत नहि चढ़ी जवानी।
करैं बिहार संग बालम के जो तिय चतुर सयानी।
सो सुनि सुनि हमरो जिया तरसत पिया तनिक दरद नहि आनी।
मैं मद भरी नारि गवने की काम कला तुम जानी।
द्विज छोटकुन परि चरन मनावत नहकै अतना हठ ठानी।
अब आधी रात नगिचानी, आंख अलसानी।

गोरिया छतिया छुवन तनि देहु

गोरिया छतिया छुवन तनि देहु लेहु जस भारी।
नहि चुकि जाय तोहार अंग दिन दिन मा होय तयारी।
दइ देव दान मान तजिहे सखि तुम परम चतुर हुसियारी।
जब कुद लटकि परैं छतिया पर ना कोई रसिक निहारी। लेहु जस... ।
नहकै जोगै अउजस सिर राखहु तुमका सब कहैं गंवारी।
यह जोबन संग जाय न प्यारी, मानहु बैन हमारी। लेहु जस... ।
जिन तरसावों रसिक जन हे सखि हो मांगत हंथवा पसारी।
लगिहैं नजर होय दुख तन मा लागै न औषधि बारी।
द्विज छोटकुन बिनवत मन मोहन सुनि कै गोरी अंचरा उधारी। लेहु जस... ।
गोरी छतिया छुवन तनि देहु लेहु जस भारी।

रसिक दिलदारा

आवहिं कब भवन मँझारा, रसिक दिलदारा।
मैं सजि अंग अनंग रहौं करिके नव सात सिंगारा।
उमानाथ पद माथ नवावति करि जोरि कें उचारा। रसिक दिलदारा... ।
इत-उत चितै चकित चिन्ता बस धरि निज द्वार केंवरा।
रोज-रोज चित पंथ निहारत दोऊ नैना बहत जलधारा।
तेहि पर माघ बसंत उड़ावत लोग अबीर फुहारा। रसिक दिलदारा ... ।
सो निरखत हमरे उर भीतर सजनी होइ जात दरारा।
हे सखि स्याम सुन्दर कब देखब कहब कछुक उपकारा।
द्विज छोटकुन परि चरन मनावत, करौं फागुन सफल हमारा। रसिक ... ।
आवहिं कब भवन मँझारा, रसिक दिलदारा।।

खोलि चोलीबंद रति कौतुक

ऐसो यक सपन लखाने, भोर नगिचाने।
जब से कंत दुरंत गये तब से कछु हाल न जाने।
आजु की रात बहुत दिनवा पर आये जनौ रसिक सयाने।
मैं सुनि दौरि पाँव परि पूजत उर आनँद अधिकाने।

फिर धरि हाथ साथ घर आनति बैठत सेजिया सिरहाने।
जब पिया मोर खोलि चोलीबंद रति कौतुक अनुमाने।
तब तजि नींद गई अँखियन से दुख नहिं जात बखाने।
तब से गुनत धुनत सजनी मोहि नहिं गृह काज सुहाने।
द्विज छोटकनु दिल चैन न आवत फिरि हाथ मीजि पछिताने।
ऐसो यक सपन लखाने भोर नगिचाने।

फागुन दिन गिनत सिराने चइत नगिचाने

फागुन दिन गिनत सिराने चइत नगिचाने।
मैं करि सकल सिंगार सखी मग जोहत साँझ बिहाने।
रंग अनेक ठीक करि राखत नित सगुन करत सनमाने।
राग बसंत कंत के कारन सिखेऊ अनेकन ताने।
सो सब आस निरास भई अब बिन प्रीतम रसिक सयाने।
ना कुछ चूक कीन उनसे हम अपने मन रिसियाने।
कारन कवन भवन नहिं आवत, हम तौ कछु भेद न जाने।
घर-घर होत होलिका उत्सव पूरन चंद दिखाने।
द्विज छोटकुन हमैं तनिक न भावत दूनौ हथवा मींजि पछिताने।
फागुन दिन गिनत सिराने चइत नगिचाने।

अंटा पर सूनी सेज हमारी

पिया उठि चलौ हमरी अँटारी, जगावति प्यारी।
नित अलसात न जात अँटा पर सूनी सेज हमारी।
काम बिबस मोहे नींद न आवत हम के कै आस निहारी।
उठा न बालम चला अँटा पर हम सेवा करब तुम्हारी।
पान खवाय मुह अतर लगाइब अँचरा से करब बयारी।
अतना कहत उठे ज्वाला से फाटि गै तन कै सारी।
दुइनौ कलाई के ककना दरकि गये टूटि गये हार हजारी।
द्विज छोटकुन सेजिया के ऊपर मानत नहि निपट अनारी। जगावति .... ।
पिया उठि चला हमरी अँटारी जगावति प्यारी।

छतियन पर धनुहा बान चलाये

लिखि पठवौ पिया का सँदेस जोबन उठि आये।
ये दोऊ बधिक उठे छतियन पर धनुहा बान चलाये।
करकत अंग तीर सम लागत नित नित चोलिया मसकाये।
जब थे छोट खोट छतिया पै कुछ नहिं जोर जनाये।
जस जस बड़े होंय दुख दे सजनी विधना कलिकान मचाये।
एकौ दवा पीर न जइहैं काम बान तन छाये।
लच्छन देख परत नहिं हमका सखी, बिनु बालम हाथ चलाये।
अस कोउ चतुर जाय समुझावति जहँ हमरो हरि छाये। जोबन उठि...।
लिखि पठवौ पिया का सँदेस जोबन उठि आये।

मोरा होन देव भिनसारे तुम्हैं हनि डारे

मोरा होन देव भिनसारे तुम्हैं हनि डारे।
बारह मास पर मोर परदेसिया लौटि सेज पग धारे।
तब हम लागिन सेज रति साजन तब तुम बैन पुकारे।
ना जानी केउ देव कृपा से लौटे कंत हमारे।
तब मैं झझकि उठेउँ सेजिया पर होन चहत भिनसारे।
दुर्जन लाल तजे उन अन्तर यहिं से उठि जाय दुवारे।
तुम पापी पीर न जानत मूरखि पूरे बैरी हमारे। तुम्हैं हनि... ।
मोरा होन देव भिनसारे तुम्हैं हनि डारे।

सेजिया पर बालम आज जुलुम करि डारी

सेजिया पर बालम आज जुलुम करि डारी।
गोरी अलबेलि कमर कै पातरि पिया बाँह गले बिच डारी।
मोतिन कै हार टूटै न बालम नहिं देबै हजारन गारी।
अबहीं तौ नारि नई गवने की दुइनौ जोबन जैसे सुपारी।
जौ पिय चाह बहुत रस कै तुम दूसर नारि निहारी।
धीर धरौ रस होन दे बालम रस देइहौं अँचरा पसारी।
कतनी कहौं कहा नहि मानै सुनत न बैन हमारी।
द्विज छोटकुन सेजिया के ऊपर नहिं मानत निपट अनारी।
सेजिया पर बालम आजु जुलुम करि डारी।

गोरी सोवै ओसरवा अकेली जोबन दुइनौ खोली

गोरी सोवै ओसरवा अकेली जोबन दुइनौ खोली।
यक तौ दिन दुपहर कै बेरिया दुसरे केंवड़िया खोली।
तिसरे सून घरा कोऊ नाही चौथे गोरी अकेली। जोबन ... ।
अँचरा उड़ा परा मुँह ऊपर नाभी छबि अति गोरी।
पर उतानि सेज कै ऊपर गोरी खोले रेसमवा की चोली।
जोबन की छवि कँह लगि बरनौ मूरति हैं अनमोली।
देखत ज्वान चूर भये घायल सिर काटि लिहेउ अलबेली।
ननद तौ गई रहे अपने घर सासु कतौ रही डोली।
छोटकुन छैल गहे दुइनौ छतिया तब झझकि उठी अलबेली।
गोरी सोवै ओसरवा अकेली जोबन दुइनौ खोली।

हमरे उर ऊपर हाथ धरौ जिनि प्यारे

हमरे उर ऊपर हाथ धरौ जिनि प्यारे।
काल करार किहौ सेजिया पर झुलनी बनै सकारे।
सो बिसराय दिहौ तुम बालम अब नाहक हाथ पसारे।
कंठा हार बिजावठ आदिक भूषन धरौ लिलारे।

ई गहना हमका नहिं भावत इत से उठि जाव दुवारे।
ई जोबना हम बहुत जतन से पाला प्रान पियारे।
सो तुम्हैं मलत दरद नहिं आवै मोरे कमल अंग बिगारे।
फरकि रहौ गले बाँह न डारौ छुवौ न बदन हमारे।
द्विज छोटकुन झुलनी बालम मुख चूमहिं कौन प्रकारे।
हमरे उर ऊपर हाथ धरौ जिनि प्यारे।।

दिन रतिया रहत मतवारा जोबनवा तुम्हारा

दिन रतिया रहत मतवारा जोबनवा तुम्हारा।
साँझ समय हम रोज पुकारत आपन अंग सँभारा।
नाहि त मसकि देव छतिया पै अँचरा तर से निहारा।
निकसे फारि दोऊ छतिया पै सन्मुख बैठ निहारा।
देखत छैल चूर करि डारत हमका विहवल करि डारा।
ध्यान छूटि गै मुनि ध्यानी कर जप जोग भसम करि डारा।
खन ढाँकति खन खोलि देखावत केतने का मुरछित करि डारा।
जब गिरि जात दुइनौ छतिया पर जस मरजाद बिगारा।
तब हमरे कोई सरम न आवत छोटकुन पर जादू डारा।
दिन रतिया रहत मतवारा जोबनवा तुम्हारा।

भजु रामचन्द्र रघुनाथ बृथा जिनगानी

भजु रामचन्द्र रघुनाथ बृथा जिनगानी।
यह संसार असार सदा है खोलहु नैन गुमानी।
देखि लेहु अपने मन मूरख जिमि कमल पात कर पानी।
केतउ वीर रहे जग भीतर रहि गये नाम निसानी।
काह वृथा सब मृत्यु बिबस भये जाकी प्रगट कहानी।
जइहौ उहाँ इहाँ रहना नहि नाहक खोजत बानी।
यह तोरी देह काम केहि आवहि उपकार करहुँ सब प्रानी।
आस भरोस त्याग दृढ़ मन से मानु बचन सैलानी।
सत्यदेव द्विज राम नामु जपु निज सुफल करहुं जिनगानी।
भजु रामचन्द्र रघुनाथ वृथा जिनगानी।

लखि ईस्वर सृष्टि तुम्हारी अकिल थकि हारी

लखि ईस्वर सृष्टि तुम्हारी अकिल थकि हारी।
चाँद सुरुज दुइ दीपक बारे राति दिना उजियारी।
गृह नक्षत्र सब लोक परिधि पर निज चक्र रखै नित जारी।
जल थल नभ चर बीच बनाये काया की छबि न्यारी।
भाँति भाँति के खाद पदारथ उपजावत पर उपकारी।
जीव के जीवन हेतु रचे हैं, अगिनी, बारि, बयारी।

औषधि रोग निवारन खातिर जीवन जीव सँवारी।
सुख-दुख देत कर्म लखि सब कर आय बने अबिकारी।
ऐसो परम दयाल प्रभु को सुमिरत दिन रात बिहारी।

पिया कौन देस अरझाने, बसंत भुलान

पिया कौन देस अरझाने, बसंत भुलाने।
तरुवर सबै काम के रस बस बाग आम बौराने।
आइ गये रितुराज साजि दल बिरहिन पै मदन सरताने।
कोयल कीर कोकिला गाजत पपिहा अति हरसाने।
कंज कली पर बैठि अलीगन रस पीवत हैं लपटाने।
अपने कंत सँग सब कामिनि केलि करत मनमाने।
हमरो कंत दुरंत जाय बसे सवतिन हाथ बिकाने।
कोउ नहि देखि परत जग में हित जे हमरो दुख जाने।
जगन्नाथ कौन देस अरझाने, बसंत भुलाने। पिया कौन देस...।

मुनि लखन सहित रघुराई हो माँगन आई

मुनि लखन सहित रघुराई हो माँगन आई।
जाय सभा मा रघुबंसिन की मुनिवर बैन सुनाई।
हे नृप देहुँ लखन रघुबर का हमैं विपति है आई।
सुनत बचन उठे काँपि अवध पति ठाढ़ भये अकुलाई।
प्रान आधार लखन रघुबर मोरे कौने नैन ओट पठाई।
तुम्हरे जज्ञ विधंस करन हित है ताड़का धाई।
कठिन कठोर भयंकर निरजन कैसे लड़िहैं मोर रघुराई।
तब समझाय कहा नृप से रिसि देहु सोक बिसराई।
शिव प्रसाद बोलाय लग दोऊ दसरथ दिहो गोदिया मा नाई।
मुनि लखन सहित रघुराई हो, माँगन आई।।

माँगत जोबन कर दान श्याम सुनो नन्दरानी

माँगत जोबन कर दान श्याम सुनो नन्दरानी।
जब कहुँ भेट होत कानन में बोलत अटपट बानी।
बरबस बाँह गले बिच डारत छिन माही करत बिनु पानी। सुनो... ।
मग मँह करत अनेक अजगरी कँह लगि कहहुँ बखानी।
एक दिन तुम देखहु अपने दृग कुन्जन वन माहिं छिपानी। सुनो... ।
देखत चोट चपेट करत नहि जानति तोरि बिरानी। सुनो... ।
मैं सकुचाति डगर के भीतर उनके नहि लाज देखानी।
अब ते बिरजि देहु यह औगुन लावहि गे गुलकानी।
द्विज छोटकुन हम बहुत बचावत तुमरो मुख निरखि सयानी।

निरखत उर में नख घात सासु रिसियानी

निरखत उर में नख घात सासु रिसियानी।
कब से गई रही केकर घर साँझ समय नगचानी।
तजि गृह काज लाज गुरुजन डर अपने मनकी सब ठानी। सासु... ।
नहि तोरि उमिरि घूमन लायक सुनु मद मस्त गुमानी।
नयन छिपाय रहो घर भीतर यतनी मानहु मोरि बानी। सासु... ।
देखन गइउँ आजु उपबन में पवन लगे अलसानी।
मारहि कीर ठौर उर ऊपर मृदु दाड़िम के फल जानी। सासु... ।
जनि रिसिआव पाव हम छूअति नहि कछु करत नदानी।
द्विज छोटकनु छमिये यहि अवसर अब तो घर रहब छिपानी।

डेढ़ताल

शिव पूजन को चलि जाती

इत-उत से सखी आती, सिवपूजन को चलि जाती, आजु सिवराती।
कोई पीली, नीली, कोई काली, कोई सतरँगवा गुलाबी।
औ लाली पहिरे चीर बहुभाँती, आजु सिवराती।
चोली मा मोती लगा, अनमोली, मोतियन हार रहे उर डोली।
सिव-सिव मन मांहि मनाती, चलत मन्द-मन्द मुसकाती, आजु सिवराती।
रती खड़ी पछिताती, आजु सिवराती।
बेलपत्र फल-फूल चढ़ावै भोले का भाँग धतूरा खवावैं।
बर माँगै, खेलावै, का नाती, आज सिवराती।
कतनौ अधिक धन माँगे सयानी, कतनौ कहैं मोर जीवै परानी।
सदा रही अहिबाती, आजु सिवराती।
सिउप्रसाद रही जे कुँवारी, सुन्दर वर मन माँगै दुलारी।
संग झुण्ड-झुण्ड मिलि आती, सिव के फाग सुनाती आजु सिवराती।

अवधपुरी के राजा दशरथ

बिधि अंक लिखा जो लिलारे, कोऊ लाख जतन करि हारे, टरै नहिं टारे।
अवधपुरी के राजा दशरथ, मृगया, साजि बाजि रथ,
बन की ओर सिधारे, टरै नहिं टारे।
घोड़न को बहुत भाँति खदेरत, इत-उत बन बिच मिरगा हेरत,
जब हेरि चहुँ दिशि हारे, बैठि लता के किनारे, टरै नहि टारे।
वही समय सरवन वहि, कानन, तीरथ हेतु करत देशाटन।
कांवरि लिहे पधारें। टरैं नहिं टारे।
बेटा दुखत होइ कंधा, बोले अस आँधरि और अन्धा।
अब कांवरि धरहु उतारे, सुत प्यास लगी, मोहि भारे, टरै नहिं टारे।
सुनत बचन कर लीन्हे कमण्डल, दूरि गये खोजत-खोजत जल,
पहुँचे तलैया किनारे, टरै नहिं टारे।
लइके कमंडल जल मँह डावा, मुड़-मुड़, मुड़-मुड़, सबद सुनावा।
मृग जानि नृपति सर मारे, सरवन धंसि जाति कपारे, टरै नहि टारे।
तड़पि-तड़पि के प्राण निकारी, मात-पिता लखि आपन बारी।
माता-भीख बोल टुक छैया, रोवत सूर आँधर तोर मइया।
हम चलबै साथ तुम्हारे, दसरथ फल भोगैं हमारे। टरै नहिं टारे।

मन रहत मलोलि मलोली

मन रहत मलोलि मलोली, सुनि फाग बसंत औ होली, लगत जैसे गोली।
डारे अंग-अंग चीर बसंती, जब से सुनि रितुराज अवंती।
मोर पिया परदेसवा मा छाये, तीन बरस से घर नहिं आये।

लिखि पतिया करत हैं, ठिठौली, वै तौ अइहैं जरे पर होली, लगत जैसे गोली।
जबरन सब सखी, हमका हँसावैं, कहैं चलौं, मिलि फाग सुनावैं।
बैठि करौं का अकेली, वै तौ अइहैं जरे पर होली लागत जैसे गोली।
मन की पीर न जानत कोई, आपु मरे, जग, परलय होई।
कोऊ देखे हृदय पट खोली, बिरहा की अगिनि जरै होली, लगत जैसे गोली।
बार-बार लिखि यहै पठावत, माघ, असाढ़ फगुन मँह आवत।
हमसे गढ़त कठोली, लागत जैसे गोली।
जानित जौ हमका खिसियइहैं, गवन लेवाय, विदेश सिंधैहैं।
मारि के गप्प गपोली, लौटाइत छूँछइ डोली, लगत जैसे गोली।
काहे का रूठि गये दिल जनियाँ राम बनाये रहैं जिनगनियाँ
कर घरै मा होली, लगत जैसे गोली।
माता भीख धीर धरुँ प्यारी, करत अही, अबकी तैयारी।
तुहैं चीर बसंत अनमोली, लिहे अउबै रेसमवा कै चोली, लगत जैसे गोली।
मन रहत मलोलि, मलोली, सुनि फाग बसन्त औ होली, लगत जैसे गोली।

पत्थर के महल कंचन केंवारी

हेरैं बिकल सुदामा भुलाने मोरी निज कै मड़इया हेरानें, दइउ रिसियाने।
पत्थर के महल कंचन केंवारी, मर-मर की ऊँची बनी अँटारी।
कहँवा के भूप हियाँ चढ़ि आये, लैन से लैन तुरंग बँधायें।
गज झूमि रहे पिलखानें, द्वारे पहरा, देत दरवानें। दइउ रिसियानें।
लागै सोच करै बिप्र विचारे, नाहक गयेन हरी जी के द्वारे।
आनैं धन हमैं धनियां पठाई, पाये कछु न औरु बिलाई।
ओन कर हलिया रहे हम जाने, पी पी माठा किहे गुजराने दइउ रिसियाने।
खड़ी सुसीला, परैं पिया पइयाँ आवा घरा चलौ मोरे सइयाँ।
काहे जाते डेरानें, दइव रिसियानें।
ठुमकि-ठुमकि भितरा पग धारत अपनी प्यारी के जब पहिचाने।
गोदिया मा खुशी से लपटानें। मड़इया हेरानें।
हेरै बिकल सुदामा भुलाने। मोरी निज कै मड़इया हेराने, दइव रिसाने।

मति घूमहु हाट बजारे

गोरी सोरहौ सिंगार, सवाँरे, मति घूमहु हाट बजारे, हो हाट बजारे।
जोबन तोर देखि के जनिया, भरि आवत हमरे मुँह पनियाँ।
चितवन तौ जिया मारे हो हाट बजारे।
हमका जानि परत बा प्यारे, करबू हमहू पर तुम बारी।
चाल-चलत लचकत करिहैंया, बोलति हौं सुगना जस टोइयाँ।
बिहसिन प्रान पियारे हो हाट बजारे।
आसिक बहुत होइ गये तोरे, हम जस आसिक पौबू न हेयरे।
टुक देखहुँ नयन पसारे, हम मरत अही बिन मारे। हो हाट बजारे।

दूरिन से जौ अँगूठा देखइबू, परम हंस का बहुतै सतइबू
छोड़ि देव घर द्वारे, हो हाट बजारे।
उलटे पांव तपस्या करबै तोहरे, नाव धरन यह धरबै।
बिनु भेष यती कर धारै, धुनियाँ लागै तुम्हारी दुवारे, हो हाट बजारे।
नारद से बढ़ि कै हरजाई, अब तौ बहुत गुन परत लखाई।
चेला बनब तुम्हारे, हो हाट बजारे।
माता भीख बदलि के जाऊँ, कलजुग के मंजनूँ कहलाऊँ।
कोऊ लाख हमैं धिक्कारै, जुटि लेब समाधि करारे, हो हाट बजारे।
गोरी सोरहौं सिंगार सँवारे मति धूमहु हाट बजारे।

धनि भारत देश हमारा

धनि भारत देश हमारा, जहँ दानवीर, हरिश्चन्द्र लीन्ह अवतारा।
सुरपति सोच करैं मनमाँही नृप हरिश्चन्द्र भये सदाधारी, छौरे राज हमारा।
बिस्वामित्र कहैं मृदुबानी, जानति हौं जतने वै दानी,
प्रभु होन देव भिनुसारा, जाई भ्रष्ट करौं सारा, लीन्ह अवतारा।
खेलि सिकार महीपत आवत, देख विप्र ढिंग सीस नवावत।
द्विज जयकार उचारा, लीन्ह अवतारा।
धन्य-धन्य रघुकुल जस केतू, दया, दान, धर्म, तप, निकेतू
माँगहु विप्र जवन मन भावै, देव शक्ति भर झूँठ न आवै।
बृथा न बचन हमारा, लीन्ह अवतारा।
इहैं बिप्र कै पुरवहु इच्छा देहु लगाम कुन्जि का गुच्छा।
संकल्प हुई करि डारा, जस होय भुवन दस चारा, लीन्ह अवतारा।
दुइनौ चीज तुरत दइ दीन्हा, फिर अपने मन बिसमय कीन्हा।
माँगौ गुरू द्वारा दीजै आपन कतहुँ ठेकाना कीजै।
सब राज कोष घर द्वारा, कुल मोर रहे अधिकारा, लीन्ह अवतारा।
धनि भारत देश हमारा जहँ दानवीर हरिश्चन्द्र, लीन्ह अवतारा।

जब लौ दस ठीक बजै ना

जब लौ दस ठीक बजै ना, तब लगि छोड़ैं ना बिछैना, फूहरि कर धैना।
उठत-उठत जब उठिकै आई, नयन मीजि कै कीच छोड़ाई।
झाड़ू दहिजरा मिलै ना, फूहरि कर धैना।
भूख - भूख लरिका चिल्लावै, थप्पड़ मारि उन्हें समुझावै।
अति खीझि कै बोलै कुबैना, तुहैं देवी का भेंट चढ़ैना, फूहरि कर धैना।
हलबल, हलबल, बैठि नहानी, लुटिया एक खरच किहीं पानी।
कजरा, दिहिन भरि-भरि नैना, फूहरि कर धैना।
अदहन ढेर चाउर कम डारीं, दुइ करछुल अधपाक निकारी।
दस फांक चबाय चबैना, मुँह पोंछि दाँत किहीं पैना, फूहरि कर धैन।
खान-पान लरिकन पै ओई, सपनेउ उन कर अंग न धोई।

रोवैं परे दिन रैना, फूहरि करि धैना।
कौनों का पेट बड़ा जस हण्डी, कौनौ कुरूप महा जस चण्डी।
फिरि कैसे रोग धरै ना, बिनु मौत गदेला मरै ना, फूहरि करै धैना।
नारि कहावत घर के रानी, फूहरि हैं तो मिटि जइहैं निसानी।
माता भीख सुधार न होइहैं, जब तक सिच्छित नारी न होइहैं।
बल, विद्या और बुद्धि बढ़ैंना, चहै देसवा कै तरक्की करै ना, फूहरि कर धैना।
जब लौ दस ठीक बजै ना तब लगि छोड़ैं न बिछौना, फूहरि करि धैना।

देसवा मा बहुत उतरानी

देसवा मा बहुत उतरानी, कँकरे पथरे कै भवानी, मची, हलकानी।
पवन लाल को लाल लँगोटा, कौनिउ क नीर चढ़ैं, भरि लोटा।
कउनिउ सुमन से अघानी, मची हलकानी।
काली औ दुर्गा औ काल भैरवा, लोहू पियैं भरि-भरि के कमोरवा।
मनई कै बुद्धि बिलानी, बकरौ कै मिटावैं निसानी, मची हलकानी।
औरहु एक हँसी के बतिया, खुद चमार हैं इनके सेवकिया।
औघड़-ओझा बखानी, मची हलकानी।
जवन-जवन सत भतरी मेहरिया, उनहूँ के डील पै मइया सवरिया।
लट खोल बहुत कुदरानी, नहि तनिकौ मनै सरमानी, मची हलकानी।
धइकै रूप बतलानी, मची हलकानी।
कहत रहीं मनई की मोटाई, मोरे प्रताप को दीन्हा भुलाई।
खबर सुनत डरिगै सब जनता, करन लगी अपने मानता,
बनिगै हरिश्चन्द दानी, मची हलकानी।
माता भीख चेत नर ज्ञानी, दूध अलग कर काढ़िकै पानी।
जब से सत विद्या हेरानी, ठगहारौ कै खूब ठिकानी, मची हलकानी।
देसवा में बहुत उतरानी, कँकरे-पथरे कै भवानी, मची हलकानी।

अब खलिगै बहुत महँगाई

अब खलिगै बहुत महँगाई, अति घोर ओर चहुँ भाई मची है लड़ाई।
एक ओर अँगरेज बहादुर ता विपरीत बहुत से कूकुर,
भौं-भौं रहे मचाई, मची है लड़ाई।
टुकड़ खोर कुछ टुकड़ा दइके, सूरबीर बाजत हैं हिटलर,
तजि स्वामि भक्ति लगलाई, हमरिन पिंगली धै खाई, मची है लड़ाई।
सन् उनइस सौ यकतालिस, बयालिस, सन् तैंतालिस बीच चवालिस,
लागि पैंतालिस जाई, मची है लड़ाई।
भारत बम्ब दनादन गिरते, बहुतक जीव छिनै-छिनै करते,
बम बीर विमान उड़ाई, नहिं आगम अंत लखाई, मची है लड़ाई।
कतनैं जवान मरे यहि रन मा, सोचि सकै नाहीं कोउ मन मा।
महा समर यह गाई, मची है लड़ाई।

सृष्टि रचेउ विधिना ने जब से ऐसो, समर भयो नहिं तब से,
धन्य, धन्य, सब नारी जाई, मची है लड़ाई।
कोटिन जवान गये रन ऊपर, कहत कबीर मार बटु धर-धर,
खून की होली मचाई, मची है लड़ाई।
माता भीख सुचितकर बेटवा, छोरिकै रंग भरे जब मेटवा।
मन माँहि गये सरमाई, पिचकारी न जात चलाई, मची है लड़ाई।
अब खलिगै बहुत महँगाई, अति घोर ओर चहुँ छाई, मची है लड़ाई।

बकि-बकि राम किसन

बकि-बकि राम किसन, जय गंगे, उतरानें बहुत भिगमंगे, बसन तन रंगे।
राम नाम कर मंतर साधा, बकि-बकि माँगत घर-घर सीधा।
जुरि पाँच जने दस संगे, बसन तन रंगे।
आसिरबाद देत बन्ध्या को, तुम्हरे गरभ रहै सन्ध्या को,
हम ऐसे अही मन चंगे, बसन तन रंगे।
तपसी बनत तापि अंगारा, गाँजा, चरस औ भाँग अहारा।
राख लपेटिन अंगे बस तन रंगे।
बच्चा कहि-कहि सबहि पुकारे, कंठी तिलक जटा सिर धारे।
गुरु महंत बने बहुतेरे, संपति संचित करत घनेरे।
लै गज बाजि, साधु कर मेला, पहुँचे, जाय धँवरिया मेला।
तपसी साधु गुरू कहलावत, जग को लूटि-लूटि के खावत,
रूप धरे बेढंगे, बसन तन रंगे।
माता भीख इन्हैं दुतकारी, ज्ञानी अतिथि सोइ सतकारी,
ई सब हैं लुच्चे लफंगे, बसन तन रंगे।

कहै अकड़ि कै नारि सयानी

कहै अकड़ि कै नारि सयानी, सुन पुरुष जाति अभिमानी, छोड़ बेईमानी।
हमरेन पेट का अहिउ तू किरवा, हमहिन पालि कीन यह बिरवा,
पर अधिकारा हाथ जौ पाया, तब अबला मम नाम धराया,
तू तौ पढ़ि लिखि बन गया ज्ञानी, हमैं फूहरि राखेउ अज्ञानी, छोड़ बेईमानी।
तुम्हरी बिमारी मा लाख दवाई, हमरी दाँव खर्च नहि पाई।
लइ जाय हमका भवानी छोड़ बेईमानी।
रावण चाल चला तू कुनीता, चहब्या नारि लेन जस सीता।
बबुर जो बोया आम न पउब्या, सैंया यहीं से आगे रोउब्या।
कहेउ उपरा से रानी औ जानी, हिरदै से समझेउ बिरानी, छोड़ बेईमानी।
तू अब सुधरि जौ जात्या भाई, हम न बनित छिनरी हरजाई।
लगतै न कुल मा कानी, छोड़ बेईमानी।
हम घर नाव बराबर खेई, काहे का छोट भाई महदेई।
मोरी कदर करा सम मानी, नहि होये तोर बड़ि हानी, छोड़ बेईमानी।
कहै अकड़ि कै नारी सयानी, सुन पुरुष जाति अभिमानी, छोड़ बेईमानी।

पिया नहकै गवनवा तू लाया

पिया नहकै गवनवा तू लाया, गौने का मजा तनिकौ न पाया, रँगुनवा मा छाया।
जल छूटे मछली जवन गति पाती, उहै गति मोर भइल दिन राती।
भल सुख श्याम, देखाया, रँगुनवा मा छाया।
कवन कसूर भया पिया हमसे, जौ नहिं माफ किया गया तुमसे।
मोका पनिया के अगिया जलाया, देख्या बरत न बुताया।
जतनै दुख इहाँ रोज परत हमका, उहाँ भगवान भला राखै तोहका।
मैं करती यहै मनाया, रँगुनवा मा छाया।
आपकी भलाई, से भली हम बाटी, आपको कलेस तो करेज मोर फाटी।
मोर नहकै तू ब्याह कराया, बर जियत विधवा कराया, रँगुनवा मा छाया।
हमरी जवानी औ तोहरी रेखानी, दुइनौ कै जा दिन उतरि जइहैं पानी।
रोया और रोवाया, रमुनवा मा छाया।
सिउपरसाद कबौ जब आया, माला मृग छाला तुमड़ी न भुलाया।
कहौ धनब-वन कुटिया छवाया, हम जलबै तू राख लगाया। रँगुनवा मा छाया।
पिया नहकै गवनवा तू लाया, गौने का मजा तनकौ न पाया, रँगुनवा मा छाया।

मोहन धरि रूप जनाना

मोहन धरि रूप जनाना, चले बेचैं सहर बरसाना, हो चुरिया सहाना
सतरंग सारी, सबुज रँग चोली, चोली के भीतर धरे जोड़ा गोली।
ब्रज मा पुकारै लिहे सिर डाली, राधे कहें आवा हे चूड़ी वाली।
तनी चली चलौ हमरे मकाना, चुनि चुनि के हमहिं पहिराना, हो चुरिया सहाना।
बोलै कन्हैया सखिन तन ताकी, लाई, हूँ, चुरिया बड़ी बांकी-बांकी।
परजा हूँ तोहरा पुराना, हो चूरिया सहाना।
काली, लाली हरी पीली भरी है डेलरिया,
जौन जैकरे मन भावे पहिरै, गुजरिया।
आवा तनिक बोहनिया कराना, बिन दमवा के देबै सहाना, हो चुरिया सहाना।
जब दुइ चूरी कलइया मा नाये, धीरे-धीरे हाथ ऊपर चढ़ाये।
तुरतै गये पहिचाना, हो चुरिया सहाना।
सिउपरसाद मिला ठगहरवा, सहजै मा सजनी पकरि गा चोरवा।
करबै इन्हें आज उताना, मरदब मुहँ जैसे पिसाना, हो चुरिया सहाना।
मोहन धरि रूप जनाना, चले बेचैं सहर बरसाना, हो चुरिया सहाना।

मोरी गोदिया होरिल बिनु खाली

पिया पतिया लिखै घर वाली, मोरी गोदिया होरिल बिनु खाली, चला आवा हाली।
संग की सखियाँ खेलाय रही ललना, बैठ्या रंगुनवा पिया किहा भल ना,
फासीं गया गले मा डाली, चला आवा हाली।
रतिया भै पकरै रहौं मैं पाटी, होइहैं जवनिया जनों मोर माटी।
अब तक तौ उमिरि रही मोरी बाली अब चढ़िगै मोरे कपोलन प लाली।

लागे शरीफा स्याम अब फरने, कुछ दिन बाद मा लगिहैं ये झरने,
तूरे कौन बनमाली, चला आवा हाली।
चीज तोहार आय तू देखा नाही तो फिरि नहि मांगेहु लेखा।
इहाँ ननदी मोका देत गाली, गोरी देहिया भई जरि काली, चला आवा तू हाली।
जिनगी भै जोबना जोगै नहि धरवैं, अउबा न प्यारे लुटाय हम डरबै,
मुँह धइ रोइहौ रूमाली, चला तू आवा, हाली।
सिउपरसाद जिया अस होवै, देवरा का लैके भागि हम जावै,
जुल्मी जोबनवा कतिक दिन पाली।
सूनी सेजिया अकेली, डेराली, चला आवा हाली।
पिया पतिया लिखै घर वाली।
मोरी गोदिया होरिल बिनु खाली, चला आवा हाली।

मोरे पिया की खबरिया तू लावा

मोरे पिया की खबरिया तू लावौ,
बरै अगिया बदन पानी नावौ, सुगन उड़ि जावो।
हमरी बिपतिया कहेउ जाय भइया, सुधिया भुलाने, बलम निरदइया।
केहि बिधि रैना, बितावों, सुगन उड़ि जावो।
खाली पलँगिया जात नहिं सोवा, रतिया भै दूनौ, नयन करैं रोवा।
मैं खुदहूँ, जली न जलाओ, लैके पतिया, पपिनियाँ के जावो, सुगन... ।
अपुना तौ छाय रहे देसवा रँगुनवा, रोजै, मैं भोर उठावौं सगुनवा।
काली भवानी मनाओ, सुगन उड़ि जावौ।
अब मोरे रहनें का कौन ठेकाना, इहाँ सब लोग लगावैं निसाना।
हमका जनि दोष लगावो, मोरा रूठल कंत मनावों, सुगन ... ।
अगिया, लगावों, हरि तोरी रुपइया, उमड़ा जोबनवा कोउ न देखइया।
सिउ परसाद तुहैं बिनु हीरा, कौनिउ जतन धरे न जिया धीरा।
हमैं आयके सुरतिया देखावा, मोरी उजरी नगरिया बसाओ, सुगन उड़ि जावो।

दिन रतिया जिया घबड़ाते

दिन रतिया जिया घबड़ाते, सखि कारन कौन लखाते, स्याम नहिं आते।
की नहिं उड़त अबीर फुहारे, उहाँ नहिं नाद उचारे,
राग, फाग, नहिं गाते, स्याम नहिं आते।
की वहि देस कबीर न बोलत, की नहिं चीर रंग मा बोरत,
मानो साज न कोई चढ़ाते, नारंगी नहिं तीर चढ़ाते, स्याम नहिं आते।
की वहि देस बदर नहिं बरसै,
की नहिं घटा अँटा से गरजै, घेरि-घेरि घहराते, स्याम नहिं आते।
की नहिं दामिनि दमकि देखावत, की सजनी रजनी नहिं आवत,
उहाँ इन्द्र झारि नहीं लाते, मानो रतिपति जात लजाते, स्याम नहिं आते।
दिन रतिया, जिया घबड़ाते, सखि कारन कौन लखाते, स्याम नहिं आते।

बरछी अस जोबना

बरछी अस जोबना, नोकारे, उठतै मा मलै लागै प्यारे, नरम करि डारे।
जउनें जोबना का पालेउँ दुलारेउँ, सिउ बाबा यस लै-लै सँवारेऊ।
राखेऊँ अचरवाँ के आँड़े, नरम करि डारे।
घाम सीत लागै, नहिं पाये, रतिया दिना मैं रहित छिपाये।
तउनें से बयर किहे करारे, छिन-छिन पर मलैं सरकारे, नरम करि
जब-जब देखें धरै आय बहियाँ, जुगल जोबन सेतुआ अस सानैं।
नादानी हैं इनकै जवानी, मानें न बरजै स्याम सैलानी।
काम विबस मतवारे, नरम करि डारे
सिउपरसाद के दरद न आवे, उठत जोबनवा, मोर बिलवाये,
कच्चे कचरि दीन कचनारे, पाकै पाये न बिधि से अनारे, नरम करि डारे।
बरछी अस जोबनवा, नोकारे, उठतै, मा मलै, लागे, प्यारे, नरम करि डारे।

चंचल चित स्याम चलाय के

चंचल चित स्याम चलाय के, चित लइ गयो हमरा चोराय के, नयनवा के बाँके,
मैं पनघटवा भरत रहिऊँ पनिया, तहँ पर आयो मोहन सैलनिया, ताकेउ हमैं मुसकाय के।
अलक मा कच सोहैं, घुँघरारे, मानों भँवरा बैठ पर झारे,
कलँगी कै छबि अजब देखाय के, बावरि किहौ, नयन मिलाय के, नयनवा के बाँके।
साँवरि रंग जुलुम करि डारै, मोर मुकुट माथे पर डारै,
भला ढोटा है नन्द बाबा कै, कछनी काँछे पीताम्बर की,
मोहन मूरति स्याम सुन्दर की, तन मन लिहौ, मुरली बजाय के,
मधुरी सुर तान सुनाय के, नयनवा के बाँके।
गागर फोरि दिहौ बनवारी, नहिं पहिचानेउ है परनारी।
गारी दिहौ मटकाय के, नयनवा कै बाँके।
अतना निसंक सजनी बृज बसिया, लपकि कै पकरि लिहिन दून्हौ छतिया,
कुच ऊपर हाथ चलाय के, रस लूटेउ है अंग लपटाय कै, नयनवा के बाँके
यह कौतुक करिके हरि प्यारे, चले गयेउ जमुना के किनारे।
मानों वे जादू चलाय के, नयनवा के बाँके।
द्विज जगन्नाथ बतियाँ नहि बिसरत, मालुम होत दृगन आगे घुमरत।
सखी तुमसे कहौ समझाय के, प्रीतम का मिलावौ, लाय के नयनवा के बाँके।

धावो, आओ, पवन सुत प्यारे

धावो, आओ, पवन सुत प्यारे,
मोरी किश्ती लगा दो किनारे पड़ी है, मझधारे।
जप, तप जोग कछूँ नहिं जानौ, हौं मति मन्द कहाँ लौ बखानी।
सूझे न हाँथ पसारे, लगा दो किनारे।
नाम अनेक न जात बखाना, सारद सेष करत है नित गाना।

तुम भगतन के रखवारे, दुष्टन के संहारन हारे, लगा दो किनारे।
सामुन्द्र नाँघि गयो, वहि पारे, पहिले अक्षय कुमार का मारे,
लंका मची हाहाकारे, लगा दो किनारे।
सुत बध सुनि लंकेस रिसाना, पठयो है मेघनाथ बलवाना।
मारेउ मुष्टिक बज्र प्रहारे, उन्हें अस्त्र-सस्त्र से संहारे, लगा दो किनारे।
सोने के लंका दिहौ कोइला कराई, कछु मारेउ कछु दिहौ है जलाई।
कूदेऊ है सिन्धु मँझारे, लगा दो किनारे।
पूँछ बुझाइ बैठ तरु जाई, सिया जी के दुख लखि मुँदरी बहाई।
मधुरी सुर बचन उचारे लगा दो किनारे।
निसि दिन नाम जपै नित जोई, तापर संकट भूल्यो न होई।
भगतन के हितकारे, लगा दो किनारे।
राम उजागिर कै बोझी है नइया, हे हरि, बनि जाते आप खेवइया।
हम तुम्हरे चरन सिर डारे, हम त्रहि-त्रहि के पुकारे, लगा दो किनारे।

झूमै नकिया नक सरिया करारी

झूमै नकिया नकसरिया करारी, तोरी सँवली सुरति लागै प्यारी।
कतल करि डारी।
साटन कै लँहगा, बनारस की सारी, ढाके की चादर मा लागी किनारी।
पहिरौ हो प्राण पियारी, कतल करि डारी।
कासमीर से अँगिया मँगाय देबै, बूटी वाली सारी और जाकिट सियाय देबै,
जामे लागे हैं बन्द हजारी, कतल करि डारी।
पावन मिहावर, अजब छबि छाजै, छड़ा-छड़ा बिछुवा जब बाजै,
पायजेब छबि न्यारी, देखि-देखि मरै रसिक बिहारी, कतल करि डारी।
पतरी कमर करधनिया पहिराय देबै, गले मा हार हबेल झुलाय देबै,
मुँह निरखब बैठ दुवारी, मनौ चन्द्रकला अनुहारी, कतल करि डारी।
बाँका बजायट कंगन सँवारी, जोसन और पट्टी करै, मजेदारी।
झुलनी, झलकि जिया मारी, कतल करि डारी।
कानन मा बिजुली सोहैं, बिचकनियाँ मथवा पै तिलक लगाय लिहौ, जनियाँ
तुम्हरे प्रेम के बनि के पुजारी, लोक लाज छाँड़ा सब प्यारी।
छोड़ सकल घर बारी, कतल करि डारी।
राम उजागिर भइले दिवनवा, तुम्हरे कारन प्यारी, भयौ दुसमनवा।
सब लोग लगावत हैं गारी, तेहि पर तुम करत खेलारी, कतल करि डारी।

भये फाग जो बिबिध प्रकारा

भये फाग जो बिबिध प्रकारा, यह आसिरबाद हमारा।
आज यहि द्वारे।
सेस गनेश, महेश, भवानी, जब लौ गंगा जमुनवा मा पानी।
चारिउ बेद सँचारे,
भानु प्रकाश करै जुग चारे, सदा कुबेर बसै, आज यहि द्वारे।

नित-नित होंय मंगल, चारे, गौरा बैठि रहे भंडारे आज यहि द्वारे।
महि सागर, परबत रत नागर, जौ लौ बनै रहौ गुन आगर।
जब लौ गगन में तारे, आज यहि द्वारे।
जइसे कमल सरोवर पाये, बाढ़ै दूब सरद रितु आये,
वैसे बाढ़ें बंश तुम्हारे, निसि दिन लागै यासे बजारे, आज यहि द्वारे।
बनी रहे संग की सहेली, तुम्हरेन संग फाग नित खेली।
अब तौ भये भिनसारे, आज यहि द्वारे।
दे वर जाय घरा हम जाई, आसिरवाद लेत गठिलाई।
बाढ़ै कोखिया मांग कै पारा, गोदिया लइकै, नतिया दुवारा।
अइसन फाग रचेउ तुम प्यारे, सुर नर मुनि सब करै जयकारे।
करै बैठे जय जयकारे, आज यहि द्वारे।
रामराज छवि देखि मगन भये, सुमन बृष्टि करि देव चले गये।
कान्हा और चोर छिनारे, ई सब करै रच्छा तुम्हारे, आज यहि द्वारे।

लरिकइयाँ के यार सँघाती

लरिकइयाँ के यार सँघाती, जोबन पै लगावौं, न घाती,
पिया कै मोरे थाती।
बारी उमरिया खेल्यों तोहरे साथे, अब तौ बिक्यों पराये के हाँथे।
पर पतियों से डेराती।
अब जनि राखौं मिलै के मोसे आसा, निकरै पै घर से भउज करैं गाँसा,
मैं तौ सौ-सौ बार कसम, अब खाती, रखबै जोबनवा जोगय बहु भाँती, पिया ... ।
नाहक जुल्मी जवनियाँ तू आइव, साँसत जियरा कै हमरे कराइव।
अब लिखिबै ससुर घर पाती, लूटै आवै चोर दिन राती। पिया ...।
परै बजर नइहर कै रहनवाँ, आओ, लै कै भागौ, गवनवाँ,
चाहौ जो कुल कुसलाती पिया।
सिवप्रसाद चलै इहाँ भाला, टूटि गये साधुन कर माला।
दरख्वास रोज दस आती।
हम कब तक फिरबै लुकाती, पिया कै मोरे थाती।

गावो डेढ़ताल मस्ताना

लोक गीतों में फाग पुराना, गावो डेढ़ताल मस्ताना, बसंत नेराना।
बीता माघ बहै फगुनी बयारी, पछुवा हवा झकझोरै डारी,
घर-घर मा होय धँवारी।
ढोल मजीरा झाँझ करताला, साँझ समय गावै चौताला।
घूमि-घूमि के फाग सुनाना, इनका फगुहार बताना, बसंत नेराना।
यक अगुवा चौताल उठावै, फिरि पीछे टोली दोहरावै, राग मा राग मिलावै।
रोकौ साँस फाग के गायक, टोली तौ बनी है केवल सहायक,
समय होली के आय नगिचाना, फाग उत्सव मा धूम मचाना, बसंत नेराना।

होली धँवारि उलारा चहाका, डेढ़ताल ढाईताल है बाँका, सब शृंगार प्रधाना।
रौद्र, करुण, ओज, हास्य शांतिरस, भरे चौताल मा पूरे रस,
खोजो साहित्यकार खजाना, सरकारौ कै ध्यान दिलाना, बसंत नेराना।
पुरुष धँवार गावै गोरी होरी, भरे है गुलाल जगनायक झोरी,
बरसै रंग दुनौ ओरी।
सरा ररर गावौ जोगीरा, अरा ररर मिलि कहै कबीरा।
होली दहनौ मा बैर जलाना, सीखे मानव से प्रेम बढ़ाना, बसंत नेराना।

धमार

राम तुम रूप अनेक देखायौ

राम तुम रूप अनेक देखायौ। राम तुम... ।
प्रथम भयों सनकादिक नारद, बेद विदित जस गायो।
प्रथम हवे होइ पृथ्वी सर कीन्हों तीनि लोक यश गायो। राम तुम ... ।
धन्वतरि मुनि कपिल भयें दत्तात्रय कहलायो।
मक्ष-कक्ष-बाराह भयो धरनी धर दन्त कहायो। राम तुम ... ।
छलि बलि को बावन बनि बैठे धरा दान करवायो।
नापेव पीठि भूमि भूपति कै हृदय दरद नहिं आयो। राम तुम ... ।
जज्ञ रूप होय मोरि भयो भल रूप मोहिनी पायो।
सुधा पियाय दिहौ देवन को असुरन सुरा पिआयो। राम तुम ... ।
खम्भ फारि नरसिंह भयो, प्रहलादहि हृदय लगायो।
गिरवर नख पर धारि लियो बृज बूँद परन नहिं पायो। राम तुम ...।
नर नारायण होय बदी बनि जप तप के तन हारेव।
रिषि देव पुरुषोत्म होय जग पाप पयादे मचायो।
सकल देव तब अस्तुति कीन्ही सखियन मंगल गायो। राम तुम ... ।
बोध रूप होय मौन भयो ब्रम्हादिक ध्यान लगायो।
ई चौबीस औतार राम के सो सिवराम गनायो। राम तुम ... ।

मुनि संग आये है दोऊ बीरा

मुनि संग आये है दोऊ बीरा।
भए अहार चाप मोतियन के कटि कट केस तुनीरा।
रूप सरूप भूप दोऊ आये, स्यामल गौर सरीरा। मुनि ... ।
राजा जनक ने रचा स्वयंबर जुरी समाज गँभीरा।
बल-पौरुष सब कर-कर थाके, उठे न चाप गँभीरा। मुनि ... ।
भट-सुभट महा भट हारे, जोर सबै मिल कीन्हा।
को अस बीर भयो पृथ्वी में तोरे बिन रघुबीरा। मुनि ... ।
गुरु अनुशासन पाय कृपानिधि गयो सरासन तोरा।
एक टक हेरि रहे नर नारी, जिया धरै न धीरा। मुनि ... ।
धनुष टूट सुनि भृगुपति आये चितै परस की ओरा।
संकर दास बधाई बाजै जय-जय सिया रघुवीरा। मुनि ... ।

बन का निकरि गये दोनों भाई

बन का निकरि गये दोनों भाई।
अबै तों दोनों रास खेलत रहे, रमि रहे जोगिया की नाई।
मातु कौशिला ढूँढ़न निकरी अंत खोज न पाई। बन ... ।
नन्हीं-नन्हीं बुदिंयन मेह बरषि गयो, पवन चले पुरवाई।
कौन वृक्ष तर भीजत होइहैं राम लखन दोउ भाई। बन ... ।

आगे-आगे राम चलत हैं, पीछे लछिमन भाई।
ताके पीछे मातु जानकी झारखंड को जाई। बन ... ।
जेहि बन बाघ सिंह बहु लागै, वहि वन कोउ न जाई।
वहि वन जइहैं रामा लछिमन कुस के सेज बिछाई। बन ... ।
आँगन रोवे मातु कौशिला, द्वारे भारत भाई।
राजा दशरथ प्राण तजत हैं, कैकेई मन पछिताई। बन ... ।
राम बिना मोरी सूनी अयोध्या लछिमन बिन चौपारी।
सीता बिन मोरी सूनी रसोइयाँ भोजन कौन बनाई। बन ...।
लंका जीत राम घर आये, घर-घर बाजत बधाई।
तुलसी दास भजो भगवानें, राज विभीषण पाई।
बन को निकरि गये दोनों भाई।

रथ का निरखत जात जटाई

रथ का निरखत जात जटाई।
प्रथमै एक मृगा बन आयो, बैठि रहेव फुलवाई।
धनुष बान ले उठे राम जी, मृगा लीन अगुवाई। रथ ... ।
विप्र रूप धारि आये निसाचर देवदत्त गोहराई।
लै भिच्छा जब निकरी जानकी, रथ पर लेत चढ़ाई। रथ ... ।
रथ पर व्याकुल भईं जानकी, सरण-सरण गोहराई।
है कोई याद्धा रामादल मा हमका लेत छोड़ाई। रथ ... ।
अतना सुनि खगपति उठ धाये, हाँक देत गोहराई।
केहि के त्रिया काह नाम है, कौन हरे लिये जाई। रथ ... ।
सूर्य वंश राजा नृप दसरथ उनके सुत रघुराई।
राम की त्रिया नाम जानकी हरे निसाचर जाई। रथ ... ।
क्रोधवन्त होय खगपति धायो, हांक देत नगचाई।
जाय न पइहै, महा जड़ मूरख जो सिव होत सहाई। रथ ... ।
चंगुल चोंच महा युद्ध कीन्हों, रथ राखेंव बेलमाई।
अग्नि बाण जब छोड़े निसाचर गिरे धरन हहराई। रथ ... ।
भुइँ मा गिरे गिद्धपति लोटे सुनो जानकी माई।
जो पर हमरे भुई मा परे है, वो पर देव जमाई। रथ ... ।
देत असीस जानकी माता प्राण राखु घटमाही।
तुलसी दास रघुवर जब आवै, कथा कहेव समुझाई।
रथ का निरखत जात जटाई।

अवध मा होरी राम मचाई

अवध मा होरी राम मचाई।
महाराज सिर ताज भूपमनि दसरथ सुत रघुराई।
राम लछिमन भरत शत्रुहन जोड़ी अतुल बनाई। अवध ... ।

डारत रंग राम पर लछिमन रोरी भरत लगाई।
रिपुसूदन हाथन पिचकारी भर-भर रंग चलाई। अवध ...।
मारुतनंदन बीन बजावत, झाँझ लिये कपिराई।
ढोलक लिए बजावत सुनि मन हरषै लोग लुगाई। अवध ... ।
कपि दल का सब साज मनोहर गावत अबीर उड़ाई।
विश्वनाथ रघुनाथ सखा सब आनन्द न मन में समाई।
अवध मा होरी राम मचाई।

दर्शन जगन्नाथ से अटके

दर्शन जगन्नाथ से अटके।
बृन्दावन मथुरा के वासी रविनन्दन के तट के।
नन्दलाल होय धेनु चरावत बिहरत बन्शी तट के। दर्शन ... ।
बेर्रा गेहूँ, ज्वार, बाजरा, यह देखत ब्रज सटके।
पुरी जाय ओड़ीसा बिराजे, दाल-भात मा अटके। दर्शन ... ।
पांडव की पंचायत में हरि दुर्योधन से चटके।
बाके अंग-अंग करि डारे, कंस केस धरि पटके। दर्शन ...।
लाला दास मो काम बसत है नौकर नागर नटके।
जो अँटके सो अँटका पावै, छूटि जात यम खटके। दर्शन ... ।

संतौ नदी बहै एक धारा

संतौ नदी बहै एक धारा।
जैसे पुरइन जल मा उपजै, जलै का करै पसारा।
वाके पान पत्र नहिं डोले, ढरकि परै जस पारा। संतौ ... ।
जैसे सती चिता चढ़ि बैठे, पिया बचन नहिं टारा।
आप तरै औरों को तारै, तारै कुल परिवारा। संतौ... ।
जैसे सूर चढ़े लड़ने को पग पाछे नहिं धारा।
उनकी सुरति रही लड़ने का प्रेम मगन ललकारा। संतौ ... ।
कागज की एक नाव बनावै, छोड़ देइ मझधारा।
धर्मी-धर्मी पार उतरि गे पापी डूब मझधारा। संतौ ... ।
भव सागर एक अगम पंथ है लख चौरासी धारा।
कहें कबीर सुनौ भाई साधौ बिरला उतरे पारा। संतौ... ।

मन बसा मोर बृन्दावन में

मन बसा मोर बृन्दावन में।
बृन्दावन बेली, चम्पा, चमेली, गुलदावदी गुलाबों में।
गेंदा, गुलमेंहदी, गुलाबास, गुलखैरा फूल हजारों में। मन ... ।
कदली, कदम्ब, अमरूद तूत, बौरे रिसाल सब लाखन में।
भौंरा गुलजार बिहार करें रस लेत फूल फल पातन में। मन ...।

बृन्दावन की बट बागन में लटके झटके बहुडाली में।
देखि छोहारन की फफकी लौंग सुपारी व्यापारी, व्यापारन में। मन ... ।
मालिन के लड़के तोड़े तड़के बेचे हाट बजारन में।
नीबू नौरंगी रंग रँगीली पिस्ता धरी दुकानन में। मन ... ।
सौदा कर ले प्रेम सुन्दरी लियो जौन जाके मन में।
कबहुँ मन रंग तुरंग चढ़ें जमुना तट कूल कगारन में। मन ... ।
तपसी जहं जंगम ध्यान धरे पदमासन में।
बोलत बिहंग सब रंग, किलकै करील की डारन में। मन ...।
बहै पवन मंद शीतल सुगन्ध सुख देत सदासीव के मन में।
खेलत फाग मदन मोहन सुगन्ध सुख देत सदासीव के मन में।
जहँ झाँझ मँजीरन को अमके, गमके भरि उतर सुगन्धन में।
छबि देख चुके सिवराम स्याम होरी खेले गोपी गन में। मन ...।

माधौ गति तुम्हारि न जानी

माधौ गति तुम्हारि न जानी।
सतयुग में हरिस्चन्द्र भयो राजा साँची सत्य बखानी।
नित उठ दान लेत मरघट में भरत डोम घर पानी। माधौ ... ।
द्वापर में दुर्योधन राजा, चक्र चलै असमानी।
उड़ि-उड़ि जूझैं कुरूक्षेत्र में रही न बँश निसानी। माधौ ... ।
त्रेता में रावन भयो राजा सोने की लंक बखानी।
एक लख पूत सवा लख नाती लकड़ी कोउ न आनी। माधौ ... ।
कलयुग में विक्रम भयो राजा नीति धर्म पहिचानी।
हाथ कटाय परे तेली घर पेरैं तेल के घानी। माधौ ... ।
राजा बलि बैकुण्ठ के कारण यज्ञ रचेव राजधानी।
ताको बाँधि पताल पठायो आप भयो बरदानी। माधौ ... ।
कोटि गऊ की भूल परी है, हो गये नर्क निशानी। माधौ ... ।
यह लीला रघुनाथ कुँवर की तुलसी दास बखानी।
गावै सुने परम पद पावें यह है मुक्ति निसानी।
माधौ गति तुम्हारि न जानी।

राधा चन्द्रबदन उजियारी

राधा चन्द्रबदन उजियारी।
चन्द्र सरूप बनो राधा, का नैन बनो रतनारी।
मुख ऊपर चम्पा फूलि रहे हैं भँवर करैं गुजारी। राधा ... ।
अँगुरि के पोर-पोर छल्ला सोहे, बाजूबन्द टिहुनारी।
गले हार मोतिन की माला, बिच-बिच जाल हजारी। राधा... ।

बारा मुहर की नथ बनवावै, तामै चन्दक भारी।
चन्दक बीच किहरकी सोहै, लटकन की छबि न्यारी। राधा...।
तर सोहै अतलस को लहँगा, ऊपर झुन्ना सारी।
ताके बीच कुसुम रँग अंगिया, बिच-बिच लागि किनारा। राधा ।
बारि के दीपक चढ़ी अटारी, हनि के बज्र केंवारी।
सूरदास बलि आस चरन की खेलैं पंसासारी। राधा... ।

अवध में राना भयो मरदाना

अवध में राना भयो मरदाना।
पहिल लड़ाई भै बक्सर मा सेमरी के मैदाना।
वहाँ से उठित के पुरवा मैहे फौज देखि घबड़ाना। अवध ... ।
नक्की मिले मान सिंह मिलिगे, मिले सुदर्सन काना।
राना साहब कबौ न मिलिहैं, चहै सीस उड़ि जाना। अवध ... ।
रना बहादुर संकर गढ़ का घोड़ा चले मनमाना।
हाथ सिरोही बगल में तेगा उत्तर जाय समाना। अवध ... ।
भाई बन्धु सबको बुलवायो, सबसे कियो सलामा।
तुम तो जाय अंजरेजन मिलि गयो, हमका है भगवाना।
अवध में राना भयो मरदाना।

अवधपुर जनम लियो रघुराई

अवधपुर जनम लियो रघुराई।
नौमी तिथि मधुमास लगन गृह जोग वार सुखदाई।
आये दिवस जनम हरि लीन्हो, दसरथ के घर जाई। अवधपुर ... ।
जूथ-जूथ मिल आई, भामिन, मंगल साज सजाई।
कौशिल्या आदि मातु सब हरषी, महलन बजत बधाई। अवधपुर ... ।
सुन दसरथ घर जनम राम को चले देव हरसाई।
सिव सनकादि, विष्णु मुनि नारद ब्रह्म पहुँचे आई। अवधपुर ... ।
करत दान सम्मान अधिक नृप आनँद रहो समाई।
तुलसीदास फूल अति बरसे, सुख बरनि न जाई।
अवधपुर जन्म लियो रघुराई।

होरी खेलैं राम जनकपुर मा

होरी खेलैं राम जनकपुर मा।

मिथलेस भूप की सखी सयानी सीख देय सबके घर मा।
अब लौटि न राम जनक पुर अइहैं ना हम जाब अवधपुर मा।
अब दुर्लभ दशरथ राम के होइहैं पीछे के सोच करो मन मा।
तब तोरि धनुष टंकार किहौं सिया बियाहो आय पल मा। होरी.. ।
जब लाल रंग है लछिमन बरन मिलाय लेव सखियन में।

बने तो ब्याह करो लछिमन का बना लगन है फागुन मा।
ससुरारि की नारि सबै मिलि आई कोई चतुर निपटि इन मा।
लै सिय साज समाज चली लाखों पिचकारी जनक जी के घर माँ। होरी.
..   ।
मुख चूम लियो मुख भोर लियो तुम बैठो राज सिंहासन मा।
हम खेलन फाग जनकपुर जइहैं नहि चैन परै राति दिन मा।
जब सिन्धु काढ़ि के नदी बहावो घोरो रंग प्रभु ऊपर मा।
इत मिथिला उत नगर अयोध्या दोनों धाम अजाबेन मा।
जो कोई फाग सुनै औ गावै ध्यान धरे दो अच्छर मा।
तुलसीदास भजो भगवाने होवै सुख बहुत मन मा। होरी ...।

रहना नहीं देस बिराना है

रहना नहीं देस बिराना है।
ठग विद्या से पैसा होना औ भर दिया खजाना है।
धरी धरोहर रही यहीं पर हाथ पसारे जाना है। रहना... ।
माता पिता भ्राता सुत दारा मतलब का याराना है।
अन्त समय कोई काम न आवे ढोंग एक दिखलाना है। रहना... ।
बालापन तो गया खेल में ज्वानी गई तिरिया के खेल में।
थकित अंग जब भये बुढ़ापा सोचि-सोचि पछिताना है। रहना ... ।
घर के कहैं मरे न बुढ़वा खाट पै माँगे खाना है।
जोरि जो पैसा धरा तिजोरी तुमसे छीन उड़ाना है। रहना ... ।
आई मौत बाँध के ठठरा गंगा घाट बहाना है।
राम के नाम सत्य है भाई उसको नहीं भुलाना है। रहना ... ।
काया का यह बना पींजरा साँस का पंछी बोल रहा है।
जब लौ साँस तब लौ आसा दम का कौन ठिकाना है। रहना ... ।
अमोल सिंह बज रही है घंटी क्यों न भजे भगवाना है। रहना ... ।

सेजिया फूलन से लहरानी

सेजिया फूलन से लहरानी।
पूरब दिसा जनि जायो रे बालम हुँवा कै लागन पानी।
पानी लागी तुम मर जइहौ हम धन हुइहौ बिरानी। सेजिया ... ।
दखिन दिसा जनि जइयो रे स्वामी दखिन की नार सयानी।
रात सुतइहैं अपने पलंग पर दिन में भरावें पानी। सेजिया ... ।
उत्तर दिसा जनि जइहो रे मोरे स्वामी उत्तर जंगल की खानी।
बाघ सिंह तुम का तहाँ खइहैं हम धना होब बिरानी। सेजिया.. ।
पस्चिम दिसा तुम जइयो मोरे स्वामी पस्चिम का कुच्छा पानी।
दिल्ली शहर की चुरिया मगइहौ चोलिया लेहो मुल्तानी। सेजिया . ।

पिया बिन बैरन होली आई

पिया बिन बैरन होली आई।
सावन माँहि सहेलरि सखियाँ झूलै हिंडोला।
जब सुधि आवे बारे बलम की मोरे जिया उठै किलोला। पिया ..।
भादौ मास अगम भये बरषा सूझे ओर न छोर।
बाढ़ी नदी नयन भरि आये ढहि-ढहि गिरे कगार। पिया ... ।
क्वार मास जल सूखन पतिया लिखेव बनाय।
स्याम बिना मोरी यह गति हुइगै लाल लोहार। पिया...।
कातिक पाख उजियारा सजनी चन्दा उये अकास।
तुलसी दियना बारि के मोरी भक्ति नरायन पास। पिया ... ।
अगहन अगर सनुहुआ सजनी ढूँढ़ौ पिया की आस।
अपने पिया को ढूँढ़न जइबे अंग भभूत रमाय। पिया ...।
पूस पटोर मैलि भई सजनी ढूँढ़ौ पिया की आस।
ये बिधना मोरे पंख जमा दे हंसिन होय उड़ि जाऊँ। पिया ... ।
माघ मास के सेये जोबना नेक धरैं न धीर।
सगरी रात मोहि तड़फत बीते उठे करेजे पीर। पिया ... ।
फागुन फगुआ होय हो सजनी सब सखि खेलै फाग।
अपने पिया सँग होरी खेलत पहिर दच्छिणी साल। पिया ... ।
चैत मास बन टेसू फूले सेंदुरी गई उड़ाई।
उठे भभक़ अगिन की ज्वाला मोरे तन सही न जाय। पिया ... ।
बैसाख मास रितु जुड़हरि डोले गोरी झरोखे लागि।
अपने पिया की सेज सवरतिउँ सोवतिउ गोड़ पसार। पिया ... ।
जेठवा तपे मिरगिसरा सजनी कड़ा नखत का घाम।
ऊब लागि तन चुवै पसीना भीजै चोली चीर। पिया ... ।
अषाढ़ मास बन बोलै कोयलिया मिले विदेसी मोर।
साजि आरती सनमुख होतिउ जोबन देतिउ दान। पिया ... ।

लंका पैज किया हनुमाना

लंका पैज किया हनुमाना।
जाय पवन सुत लंका-बंका घर-घर पता लगाना।
बिप्र रूप धरि मिलेव विभीसन राम का नाम बखाना। लंका ... ।
वहाँ से चलि फुलबगिया आये मन माने फल खाना।
वृच्छ उखार समुद्र मा फेकैं तब लंकेसुर जाना। लंका ... ।
मेघनाद रावन का बेटा ब्रह्म फाँस लपटाना।
बाँधि लेत हनुमान वीर को सभा मध्य ले जाना। लंका ... ।
रोधि पताल तोरि यमकातर मढ़िया जाय समाना।
अहिरावन के भुजा उखारे फेंकि दियो असमाना। लंका ... ।

कहैं मँदोदरि सुन पिय रावन निसचर कुल बौराना।
तुलसी दास राम पद ध्यावै खुशी रहे भगवाना। लंका ... ।

हम देखा राम जनकपुर मा

हम देखा राम जनकपुर मा।
जनक पुरी के साला में जयमाल लिये सिया करमा।
रतन जटित सिंहासन ऊपर बैठे राम जनक पुरमा। हम... ।
देखि रूप सब भूप छकित भये मकराकत कुण्डल कानन मा।
सखियां सब रंग बिरंग भई मुसकाय रही अपने घरमा। हम...।
कंचन की पिचकारी चले जहँ ठाढ़ गुलाब चुवै जन मा।
तिहूं लोक की शोभा क्या बरनो जब नारद झुकी तिहूं दरमा। हम .. ।
धनुहा की टंकार शब्द मुनि डोल उठे धरती के नाग।
परसुराम चलि आय वहाँ लखन लाल से वाद पड़ा। हम...।
जानकी लौ लाय सँदेश कहयो सखियाँ ब्याकुल है गढ़ मा।
राजा जनक ने यज्ञ रची है राम लछमण तिहूँ दल मा। हम ... ।
सोरहु सिंगार आभूषण के गज मुक्ता हार सिया गल मा।
इत भारत उत जनक सुता मंत्री आप खड़ा छिन मा। हम ... ।
प्रहलाद हेतु हिरनाकुस मारा रूप अनेक धरेउ छिनमा।
कासी में जाय कल्यान करो बैकुण्ठ में जाय तरो छिनमा।
तुलसीदास भजो भगवान राम बसो मोरे मन मा। हम ... ।

श्रम-गीत

जँतसार

घमना घमाने गोहुँआ उठाय लाई

घमना घमाने गोहुँआ उठाय लाई, चलौ चली मुसरा डोलाई हो राम।
मुसरा के कूटे पै गेहूँ चमकि गा, चलौ चली जँतवा चलाई हो राम।
जँतवा के चलतै पिसना दरकि आवा, आवौ गीत जँतवा के गाई हो राम।
पीसि कै पिसना कठउती मा धरबै, भरि जाय कुँड़वा गगरिया हो राम।
हथवड़ भारी डोलाये न डोलै, जँतवा मा भा गरुवाई हो राम।
जँतवा चलाये से ढरकै पसिनवा देंहिया कै छूटै अँगराई हो राम।
कोखी कै लरिका अँगनवा मा खेलिहैं दउरिकै दुधवा पी जइहैं हो राम।
लहुरा ललनवा गोड़े पै झुलिहै, तो हम जँतवा चलउबै हो राम।
पीसि पिसानु दुई ठोकरा बनउबै, ललन-पिया का खवउबै हो राम।
झारि पोंछि यहु जंतवा संवरबै, यहै चाकी काँड़ी बेसहै हो राम।

हाली चुकौ चलनी के गेहुँआ हो

हाली चुकौ चलनी के गेहुँआ हो।
अपने बिरना भेंटन हम जइबै हो ना।
हम तौ चुकबै रानी अपनि जुनिया पे,
रानी भेंटि आवउ आपन बिरन भइया हो ना।
तुहूँ भइया बइठौ मालिनि दुअरवा हो।
भइया पूछि लेव हमरा बिरोगवा हो ना।
बीरन भेंटि खड़ी भई हो बहना।
सासु कहाँ है झील चउरवा हो ना।
कोठिला पे है दुलहिन कोदई का चाउर
वहि साथे उरदे कै दलिया हो ना।
जेवन बइठे हैं सार-बहनोइया,
सारे कै दुखय लागे अँसुआ हो ना।
की सुधि आई भइया माई का कलेवा हो।
की सुधि किहौ भउजी के सेजरिया हो ना।
ना सुधि बहिनी माई का कलेवा हो

नाहीं सुधि भउजी के सेजरिया हो ना।
सुधि आई बहिनी तोहरी सुरतिया हो।
बहिनी जरि-जरि भइउ कोइलिया हो ना।
एक मन पीस्यों, एक मन कूटयों,
भइया ओतने मा बनायें रसोंइया हो ना।
भइया पिछली भवरिया मोरा भोजन हो ना।
भइया ओहू मा ननदी कलेवा हो ना।
भइया ओहू मा गोरू चरवाहा हो ना।
भइया ओहू मा कुकरा बिलरिया होना
ई दुःख बाँधेउ भइया गरुई गठरिया।
भइया रहिया बाट जिनि खोल्या हो ना।

रहिया चलत बटोहिया मोर हितू भइया

रहिया चलत बटोहिया मोर हितू भइया
भइया हमरा सँदेसवा लिहे जायो हो ना।
हमरा सदेसवा पिया जी से कहियो।
भेजि देहैं सात रंग बेनिया हो ना।
तोहरे बलम का चीन्ही ना जानी।
कइसे कहब सँदेसवा हो ना।
हमरे बलम जी कै काली जुलुफिया
सिर पै दीन्हे टेढ़ी टोपिया हो ना।
बँसवा कटावत हँसत दुपहरिया
बेनिया बिनत छठ मसवा हो ना।
रहिया चलत बटोहिया मोर-हितू भइया
हमरौ सँदेस लिहे जाये हो ना
सातौ रंग बेनिया लिहे जायो हो ना
तोहरी धना का चीन्ही न जानी।
अरे कइसे देबै सातौ रंग बेनिया हो ना।
मोरी धना अंग कै पातर, मुख कै खर भर
साँवरि रंग धनिया हमारि हो ना।

लै कै डलयिया जँतवा के गोहूँ बइठी

लै कै डलयिया जँतवा के गोहूँ बइठी,
गावै लागी जँतवा के गीत हो गुजरिया।
दुइनो सखी पीसँय जँतवा डोलावै
जँतवा चलत मजबूत हो गुजरिया।
खींचिके डलयिया पँजरिया पै धरिकै,
मूठी-मूठी छोड़य लागी झींक हो गुजरिया।

झरि-झरि पिसना मेड़ी से चिपकाय,
दाबि-दाबि लरिकन का पीसय गुजरिया।
बोली जेठानी सुनौ हो देवरानी
मैदा अस पीसहुँ पिसान गुजरिया।
सासु, ससुर लरिका भूखे होइहैं,
कब ले बनइहौ रसोइया हो गुजरिया।
ननदी, देवर, रोवै कनियाँ कै लरिकवा,
अब तौ झारहुँ पिसान हो गुजरिया।
ननदी भउजी मिलि जँतवा बइठी,
जँतवा कै गूँजय गीत हो गुजरिया।
अब कब चुकिहै डेलिया के गोहुँवा,
कब हम मिलबै बिरन भइया ते गुजरिया।

मोरे पिछवरवा घनी-घनी बगिया

मोरे पिछवरवा घनी-घनी बगिया
सीता भउजी लेहिं बयरिया हो ना।
भितरा से निकरी लहुरी ननदिया,
भउजी रवना रूप उरेहतिव हो ना।
ननदी मन दुइ कूटेव, मन दुइ पीसेव,
दुइ मन सींझेन रसोइया हो ना।
तोहरे भउजी मैं सिंझवव रसोइयाँ,
भउजी रवना रूप उरेहतिव ना।
हथवा उरेहिन भउजी, गोड़वा उरेहिन
उरेहि दिहिन बतीसों दँतवा हो ना।
सिर कै मुकुट भउजी उरेहि न पाइन
कि आय रे है रामा हो ना।
भितरा से निकरी है लहुरी ननदिया,
भइया चुगुलिया लगावैं हो ना।
जउने रावन भइया मारे दुसमनवा
भउजी उहै रवनवा उरेहैं हो ना।
यतनी बचन रामा सुनहु न पायें।
घोड़ा पीठी भये असवार हो ना।
तहँ पर बहावउ लछिमन बले बबुर तर
भउजी का घरा से निकरउ हो ना।
हथवा माँ लिहे सीता भूजैं सरसोइया,
काढ़ि लिहिन पतरा घुँघटा हो ना।
जिनि सरसौं फूलिंउ जिनि सरसौं फूलिंउ,
कउरि-कउरि उपजिहैं आँखिनि हो ना।

इहाँ है भइया लछिमन देउरा,
इहैं कउरि बचाये घरि जइहैं हो ना।

बहिनी कै डोलिया सजाओ हो राम

बहिनी कै डोलिया सजाओ हो राम।
मुँह मा पटुक दइकै रोवै मोरे राजा,
सतवंती धना नइहर जइहैं हो राम।
भले मोसे छल किहिव ओ मोरी बहिनी,
डसै लागि सेजिया उदासी हो राम।
खाई देबै बेटा दुधवा और भतवा,
कइ देबै दुसरा बियहवा हो राम।
अगिया लगावउँ मइया दुसरा बियहवा,
बजर परे सुररि हो राम।
बारा बरिस तक मोरी बाट जोहिन,
छूटि गई मोरी सतवंती हो राम।
चाँद सुरुज जस मोरी गोरी छुटिगै,
के घर बसैं उजारा हो राम।

बेरिया की बेरि हम बरजेउँ ननदिया

बेरिया की बेरि हम बरजेउँ ननदिया,
भजन सुनै जिनि जाइव हो।
चहइ भउजी मारौ, चहइ गरियावौ,
ढोलिया धमकि जियरा ललकइ हो।
बरहे बरिसवा सइयाँ ललकइ हो।
धना कहाँ गयी बहिनी हमारि हो।
चहइ सइयाँ मारौ चहइ गरियावौ,
वह तौ गयीं बेड़िया सिरिकिया हो।
देउ न मोरी धना सोने कै बँसुरिया,
बहिनी खबरि हम लाइब हो।
एक बन गयेन, दुसर बन गयेन,
तिसरे माँ बेड़िया सिरकिया हो।
जउनी सिरिकिया माँ होतिव बहिनी,
बाँवै हथवा कठउतिया हो।
बाँये हथवा बहिनी बेड़िया कै सिरकिया,
दहिने डोलावै रस बेनिया हो।
अइसिन बहिनी तुरुक घर देतिउ,
जनि मोर नाव धराइव हो।

झीनें-झीनें गोहुँवा बाँसे कै डेलरिया

झीनें-झीनें गोहुँवा बाँसे कै डेलरिया,
ननद भउजी गोहूँ पीसै हो।
रोज आवें देवरा दुइ रे सिपहिया,
आज कइसेन अकेलवा हो।
कइसे भीजी देउरा तोहरी पनहिया
कइसे तेगवा तोरी भीजा हो।
सितिया भीजी भउजी मोरी पनहिया,
हरिनी सिकारा तेगवा भीजा हो।
देहु बताइ मोर देवरा गोसइयाँ,
तोहका छोड़ि कतहूँ न जाबै हो।

घइलवा लइकै ना चलौ सागर डगरिया

घइलवा लइकै ना चलौ सागर डगरिया।
गगरी भरि साँवरि धरिन हैं कमरवा।
देखँय लागी परदेसिया का रहिया।
घोड़वा चढ़ा आवय राजा कै छोकरवा
केहकइ धनिया सिर धरे गगरिया
सासु-ससुर कइ भरउँ गगरिया
परदेसिया कइ हम देखउँ रहिया।
फेंकि देउ मेंडुरी बहाय देउ घइलवा
चली आउ साँवरि हमरे गोहनवा।
जौ हम चली राजा तोहरे गोहनवा।
डगरिया मा राजा का खबरिया।
राजा का खबरिया घेरे रहै हमका
डगर खवइबै रानी माघी ढोली पनवा
घरे पियउबै रानी बकेनवा का दुधवा।
चारि दिना पनवा खवैहैं पगड़िया।
चारि दिना दुधवा पिवैहै धोखेबजवा
उतारि देहैं जइसे गोड़े कै पनहिया।

बरसहु-बरसहु हे दइव आज के रतिया

बरसहु-बरसहु हे दइव आज के रतिया
पिया के जँतसखा बेल्हमावउ रे।
जउ तू मनतिव धनी, हे धनी मनतिव
छतवा बेसाहि के हम पथ जायब रे।
देउ डोमवा भइया डला भर सोनवा
आजु मैं रइनिया छतवा जनि बिनहूँ रे।

इहाँ है भइया लछिमन देउरा,
इहैं कउरि बचाये घरि जइहैं हो ना।

बहिनी कै डोलिया सजाओ हो राम

बहिनी कै डोलिया सजाओ हो राम।
मुँह मा पटुक दइकै रोवै मोरे राजा,
सतवंती धना नइहर जइहैं हो राम।
भले मोसे छल किहिव ओ मोरी बहिनी,
डसै लागि सेजिया उदासी हो राम।
खाई देबै बेटा दुधवा और भतवा,
कइ देबै दुसरा बियहवा हो राम।
अगिया लगावउँ मइया दुसरा बियहवा,
बजर परे सुररि हो राम।
बारा बरिस तक मोरी बाट जोहिन,
छूटि गई मोरी सतवंती हो राम।
चाँद सुरुज जस मोरी गोरी छुटिगै,
के घर बसैं उजारा हो राम।

बेरिया की बेरि हम बरजेउँ ननदिया

बेरिया की बेरि हम बरजेउँ ननदिया,
भजन सुनै जिनि जाइव हो।
चहइ भउजी मारौ, चहइ गरियावौ,
ढोलिया धमकि जियरा ललकइ हो।
बरहे बरिसवा सइयाँ ललकइ हो।
धना कहाँ गयी बहिनी हमारि हो।
चहइ सइयाँ मारौ चहइ गरियावौ,
वह तौ गयीं बेड़िया सिरिकिया हो।
देउ न मोरी धना सोने कै बँसुरिया,
बहिनी खबरि हम लाइब हो।
एक बन गयेन, दुसर बन गयेन,
तिसरे माँ बेड़िया सिरकिया हो।
जउनी सिरिकिया माँ होतिव बहिनी,
बाँवै हथवा कठउतिया हो।
बाँये हथवा बहिनी बेड़िया कै सिरकिया,
दहिने डोलावै रस बेनिया हो।
अइसिन बहिनी तुरुक घर देतिउ,
जनि मोर नाव धराइव हो।

झीनें-झीनें गोहुँवा बाँसे कै डेलरिया

झीनें-झीनें गोहुँवा बाँसे कै डेलरिया,
ननद भउजी गोहूँ पीसै हो।
रोज आवें देवरा दुइ रे सिपहिया,
आज कइसेन अकेलवा हो।
कइसे भीजी देउरा तोहरी पनहिया
कइसे तेगवा तोरी भीजा हो।
सितिया भीजी भउजी मोरी पनहिया,
हरिनी सिकारा तेगवा भीजा हो।
देहु बताइ मोर देवरा गोसइयाँ,
तोहका छोड़ि कतहूँ न जाबै हो।

घइलवा लइकै ना चलौ सागर डगरिया

घइलवा लइकै ना चलौ सागर डगरिया।
गगरी भरि साँवरि धरिन हैं कमरवा।
देखँय लागी परदेसिया का रहिया।
घोड़वा चढ़ा आवय राजा कै छोकरवा
केहकइ धनिया सिर धरे गगरिया
सासु-ससुर कइ भरउँ गगरिया
परदेसिया कइ हम देखउँ रहिया।
फेंकि देउ मेंडुरी बहाय देउ घइलवा
चली आउ साँवरि हमरे गोहनवा।
जौ हम चली राजा तोहरे गोहनवा।
डगरिया मा राजा का खबरिया।
राजा का खबरिया घेरे रहै हमका
डगर खवइबै रानी माघी ढोली पनवा
घरे पियउबै रानी बकेनवा का दुधवा।
चारि दिना पनवा खवैहैं पगड़िया।
चारि दिना दुधवा पिवैहै धोखेबजवा
उतारि देहैं जइसे गोड़े कै पनहिया।

बरसहु-बरसहु हे दइव आज कै रतिया

बरसहु-बरसहु हे दइव आज कै रतिया
पिया के जँतसखा बेल्हमावउ रे।
जउ तू मनतिव धनी, हे धनी मनतिव
छतवा बेसाहि के हम पथ जायब रे।
देउ डोमवा भइया डला भर सोनवा
आजु मैं रइनिया छतवा जनि बिनहूँ रे।

पिया का जँतसखा तुहुँ बेल्हमावउ रे।
जब तू मनतिव धनी डोमवा मनतिव
कमरी बेसाहि के हम जायब रे।
देहुँ भउहरि भइया कान दुइ सोनवा
आज कै रइनिया कामरि जिनि बीनेउ रे।
पिया के जँतसखा तुहुँ बेल्हमावउ रे।
जब तुहुँ मनतिव भउहरि भइया मनतिव
नइया खेवय हम जायब रे।
देइ देतिव केंवरा का हाथ कै मुँदरिया।
अबकी भदउवाँ नइया खोलउँ रे
जब तुहुँ धनिया केंवटा मनउतिव
हिलत डोलत हम जाइब रे।

मोरे पिछवरवा फूले हो सरसोइयाँ

मोरे पिछवरवा फूले हो सरसोइया
उड़ि-उड़ि चुनयि चिरइया हो ना।
आवत देखा रे सासू दुइ तपसिया
एक साँवर एक गोरवा हो ना।
गोरवा तौ अहैं सासू भाई दुलरुवा,
सँवरा अहै ननदजी के भइया हो ना
सासू कवन-कवन भोजना उनकी रचावौं
कोठिला माँ है बहू सावाँ कोदइया हो
घुरवा चकवड़ि कर सागु।
बहू यहै भोजना उनका रचायो।
जेंवइ बइठे सार बहनोइया,
बहिनी के ढुरई अँसुवा हो ना।
की सुधि आयी भइया कै सेजरिया हो ना।
ना सुधि आयी माई कै कलेउना
ना सुधि आयी भउजी कै सेजरिया हो ना।
बहिनी तोहरी सुरतिया पर ढुरत है अँसुवा
बहिनी जरि-जरि भयू है कोइलवा हो ना।
नव मन कूटऊँ नव मन पीसऊँ
नव मन सीझँव रसोइयाँ हो ना।
पिछली टिकरिया मोर भोजनवा।
ओहू माँ ननदी कलेउना हो ना।
ओहू माँ देवरा सँझइया हो ना।
ई दुख जनि रोयो माई जी के अगवा
छतिया फारि मारि जइहै हो ना।

ई दुख जो कहा भउजी के अगवा
माई का देहैं बज्र तनवा हो ना।
ई दुखा कहा भइया बपवा के अगवा
जे मोरा कीनि बियहवा हो ना।

भितरा से निकरीं बड़सासू

भितरा से निकरीं बड़सासू
डसन लागी काली नगिनिया हो ना।
भितरा बाँटू बउहरि कि बहिरवा बहु अरि
लइ जातिव जल की मछरिया हो ना।
भितरा बाँटू कि बहिरे बहुअरि,
बहूँ चींख लेतिव जल कै मछरिया हो ना।
खात-पियत सासू बड़ा नीकि लागइ
सासू अँचवइ की मुड़वा धमाकइ बहुअरि
सोय जातिव ससुरू सेजरिया हो ना।
हर जोत आये कुदारि गोड़ि आवे,
नाहीं देखी सीता कोठरिया हो ना।
तोहरी बहुआ बेटा गरबै कै माती
सोई गयी ससुरू सेजरिया हो ना।

हँसि-हँसि तुरुक जौ हथिया बेसाहा

हँसि-हँसि तुरुक जौ हथियां बेसाहा
रोइ-रोइ मरयि कुसुमी हो ना।
जौ राजा तुरुक तू हम जीं लोभान्या
भइया जोगे घोड़वा बेसाहा हो ना।
हँसि-हँसि तुरुक घोड़वा बेसाहा
रोइ-रोइ मरयि कुसुमी हो ना।
जौ राजा तुरुक तू हमहीं लोभान्या
मइया जोगे लहरपटोरवा हो ना।
हँसि-हँसि तुरुक लावै लहर पटोरवा
रोय-रोय मरयि कुसुमी हो ना।
जौ राजा तुरुक जो चुनरी बेसाहा
रोइ-रोइ मरयि कुसुमी हो ना।
जौ राजा तुरुक तू हमही लोभान्या
बहिनी जोगे गुड़िया बेसाहा हो ना।
हँसि-हँसि तुरुक जौ गुड़िया बेसाहा,
रोई-रोई मरयि कुसुमी हो ना।
जौ राजा तुरुक तू हमहीं लोभान्या,

हमरे जोगे डंड़िया फँदावा हो ना।
हँसि-हँसि तुरुक जौ डँडिया फँदावा।
रोय-रोय मरयि कुसुमी हो ना।
एक बन गयी दुइज बन गयी
तिसरे माँ बाबा कै सगरवा हो ना।
तनी एक डँडिया नेवारा कहरा कइया
देखि आई बाबा कै सगरवा हो ना।
चली चलौ रानी कुसुमी चली चलौ
तोहैं जोगे सगरा खनउबै हो ना।
तोहरे सगरवा राजा निति उठि नहाबै,
बाबा कै सगरवा दुलभ होइहैं ना।
एक बुड़की मारी दुई बुड़की मारी।
तिसरे मा भई सराबोर हो ना।
मुहेन मुह दइकै रोवै राजा तुरुकवा
रानी दै गयीं हमका धोखवा हो ना।
मुँह मा अँगौछा दिहे रोवय बीरन भइया,
बहिनी राखिन हैं हमरी पगड़िया हो ना।
एक लाठी मारइ दूसर लाठी मारइ
माई नाहीं उठै सीता रनिया हो ना।
ऐसन भइया कै खलिया खिंचउबै
मोरी लागी बजरिया उजरिगे हो ना।
ऐसन माई तुरुक हाथ बेंचतिव
मोरी डासल सेजिया उड़ासेउ हो ना।

मचियै बइठि सासू बिरह बचन बोलइ

मचियै बइठि सासू बिरह बचन बोलइ
बहुअरि माई तोर भई है पथरवा बपई नाही लौटे हो।
बहुअरि भइया उलटि नाहीं ताकैं हो,
एतना बचन सुनि बहुअरि मन माँ दुखित भई।
एक बन गयीं दुसरे बन गयीं तिसरे म थरिया हो।
निकरि न आवइ मोरी मइया
बियाहि कै ढकेलिसि हो।
भइया भेंटि भउजी भेंटि भतिजवा भेंटै चलीं
बुआ होइग तिसरवा नात हियँाँ कहाँ आइब हो।
देखन आई बाबा कै बड़इया तौ भउजी का आदर हो।
तोहरे बाबा कै अमरइया तौ सींचै आयब हो।
माई कै रसोइयाँ तौ झरियाते आयवँ हो।
रोवति चली है ननदिया बन-बन भटकइ

निसरि न आवउ मोरी मइया बेहि परदेसवा हो।
भितरा से निकरी हैं पितियानी धिया समुझावै
बेटी जेकर माई न बाप तौ नइहर काहे आवै हो

बाट कै बटोहिया पूछैं, केहिकी जोहति हइ बाट

बाट कै बटोहिया पूछैं, केहिकी जोहति हइ बाट।
केहिकर बाट जोहति, नयना से नीर ढारि,
कवन बिपतिया तुहूँ रोइव।
दुहरे नौरंगी गाछ फूलइ बरहौ मास,
जेकरि बिछि बिटिया जोहिन बाट।
जोहि करि बिरिछि तले राम परदेस गये,
याही दुखा नयना ते आँसू ढरै।
डाल भर सोनवा लेउ मोतिया से माँग भरूँ,
छाँड़ि जँतवा मोरे संग लागु।
आगि लागै सोनवा बजर परय मोतिया,
सत छोड़े कहवाँ पति रहिहैं।

तुलवा कै अँगिया सिवावउ छतीस बंदा लावउ

तुलवा कै अँगिया सिवावउ छतीस बंदा लावउ,
उपरा औलाई बेलिया तौ निचवा सदाफल हो राम।
हरी जी कै लाई बेलिया, बेलिया कुम्हिलानी हो राम।
आवउ सखियाँ मिलि-जुलि सब आवउँ
परभू जी कै लाई बेलिया हम सींचब हो राम।
सींचि-सींचि बेलरि-बेलरि तर गढ़ भई,
रामा आय गई हरिजी कै सुरतिया,
ठाढ़ि मुरझाई गिरी हो राम।
बरहे बरिसि पर लउटे दुअरवा खटिया बइठे
आपनि मइया बोलाइ भेद अस पूछैं
धना अंगवा कै पातरि मुँहवा कै सुन्दर,
बड़े घर कै बिटियवा इनहु कुल राखिन हो राम।
कबहूँ न हँसिकै बइठी, बिहँसि कै बइठी।
महल दिया नाहीं बारिन, निंदरिया नाहीं सोइनि
अब धना हँसिकै बइठौ बिहँसि कै निकरौ हो
मोरी रानी महले माँ दियना लेसौ सोवहुँ सुख निंदिया हो राम।।

सेर भर गोंहुआ

सेर भर गोंहुआ बाँसे कै डेलरिया,
पींसइ चली जँतसरिया हो राम।

जंतवा न चलै रामा किलवा न डोलै
जुअना धरि सखि रोवइं हो राम।
झँझरे झरोखवा से रजवा निरखै,
केइकी तिरिया रोवै जँतसरिया हो राम।
तू का जानौ राजा के सिपहिया,
तोहरे तिरिया रोवै जँतसरिया हो राम।
जँतवा ते उठायन गोदिया बैठाइनि
अपनी रुमलिया नैना पोछैं हो राम।
गोड़े तोरे लागउँ ननदी के भइया,
रसे-रसे बेनिया डोलावहु हो राम।
बेनिया डोलावत आई सुख निंदिया,
परिगै सासु कै नजरिया हो राम।
बाबा खाऊँ भइया तोहरी बहुरिया,
कउन रसिक बेनिया भेजें हो राम।
काहे खाव सासू बाबा काहे भइया,
तोरे बेटा भेजे बेनिया हो राम।
हमरौ बेटउना भइया राजा कै चकरवा,
कब अइहैं कब जइहैं का जानी राम।
तोहरा बेटउना राजा कै चकरवा
दिनै जइहैं औ राति अइहैं हो राम।

ननदी भउजी मिलि पनिया का गयी

ननदी भउजी मिलि पनिया का गयी,
अँचरा उड़ि-उड़ि जाय हो राम।
मैं तुहसे पूँछव मैना ननदिया,
अँचरा कवन गुन उड़ै हो राम।
मैं तोहसे पूँछौं मैना ननदिया,
अँचरा कवन गुन धूमिल हो राम।
बटुली मजन गयों बाबा कै महलिया,
करिखवा अँचरा करिया हो राम।
मैं तोहसे पूछौ मैना ननदिया,
मुँहना कवन गुन पीयर हो राम।
हरदी पीसन गयों भइया की महलिया,
मुँहना है गुन पीयर हो राम।
सभवै बइठे हैं ससुरा हमारे,
ननदी गवन दइ डारौ हो राम।
ऐस कहिहै बहू मइके पहुँचौबै,
हमरी लरिकवा नदनवा हो राम।

मचियै बइठी है सासू बीरा चाबैं,
ननदी गवन दइ देतिव हो राम।
ऐस जो कहिहै बहू खाल खिंचइबै,
मोरि अपन लरिका नदनवा हो राम।
पाँसा खेलत बैठे जेठ हमारे,
बहिना गवन दई डारौ हो राम।
जो अस कहिहौ बहू जिभिया खिंचवइबै,
मोरी बहिनी लरिका नदनवा हो राम।
गेंदवा खेलत हैं देवरा हमारे,
ननदी गवन दई डारौ हो राम।
अस कहिहौ भउजी देसवा निकरिबै,
मोर बहिनी लरिका नदनवा हो राम।
जेंवना जेंवै पिया जी हमारे,
ननदी गवन दई डारौ हो राम।
मोरे पिछवरवा पंडित का बेटउना,
आजु एकादसिया बिहान दुआदसिया,
तेरसी का बना है गवनवा हो राम।
जब रे बरतिहा दुआरे पे आये,
ननदी कै कमर पिरानी हो राम।
जब रे बरतिहा अँगनवा माँ आये
ननदी का पेटवा पिराने हो राम।
जब मैना बइठीं चउकी की बेदी,
ननदी के भये ललनवा हो राम।
मुँह पटुका दइकै हँसैं बजनिहा,
बियाह बजाई कि बधइया हो राम।
मुँह पै हथवा दइकै हँसै कहरवा,
तीन मूड़ कइसे लइके जाई हो राम।
मुँह पे रुमलिया दइके रोवै उनके दुलहा,
भाई का देबै कस जबाब हो राम।
मुँह पै अँगौछा दइकै रोवैं उनके बाबा,
मोरे मुँह लागे करिखवा हो राम।
मुँह पै अँगौछा दइकै हँसैं पंडितवा,
बरहौं कराई कि बियाहु हो राम।
मुँह पै हाथ धरे सोंचै उनके भइया
दूनौ कुल बोरिव बहिनी हो राम।
मुँह पै अँचरवा धइकै रोवैं उनके भउजी,
हमरा कहनवा न मानिव हो राम।
एक गाँव गई, दूसर गाँव गई,

तिसरे मा आयी ससुरिया हो राम।
आरती करै निकरी मैना कै सासू,
कहिकी जाया होरिलवा हो राम।
दिन भर बीतैं भइया दरवाजे,
राति रह्यो ससुरिया हो राम।

मोरे पिछवरवा पसिया बेटउना

मोरे पिछवरवा पसिया बेटउना,
डार-डार मारै कोयलिया हो ना।
मचियै बइठी राजा कै बेटियवा,
हम चलबै तोहरे गोहनवा हो ना।
छोड़ि देउ मोरी रानी चटकी चुनरिया,
पहिरौ न मोरी लुगरिया हो ना।
रोय-रोय राजा धेरिया कँड़वा उतारै,
पहिरैं पासी कै पहिरनिया हो ना।
रोय-रोय राजा धेरिया पहिलै पहिरनिया,
थूकि देउ रानी मुख कै बीरा
हथवा माँ लेतिव बाँसे कै घोटनवा,
रानी चलौ सुअरी बटोरय हो ना।
रोय-रोय राजा धेरिया सुअर बहोरय
छुटिगा नइहर कै देसवा हो ना।
चार दिना तुम सुअरी बटोरव,
रानी तुहै लइ चलिबै बिदेसवा हो ना।

सबकी महलिया जोगिया गावय-बजावय

सबकी महलिया जोगिया गावय-बजावय
हमरी महलिया भउरी लावै हो ना।
सब तौ सुनैं गवनइया बजनइया,
रानी सुनै मधुरी बँसुरिया हो ना।
तोरे साथे चलबै जोगिया बेटउना,
छोड़ि देबै महला ओबरिया हो ना।
जौ तू रानी लोभानिव हमरे सथवा
छूटि जइहैं घर कै बियहुआ हो ना।
तोरे साथे चलबे जोगिया बेटउना,
छोड़ि देबै घर कै बियहुआ हो ना।
रानी हियैं छूटि जइहैं तोर सब गहनवा,
जोगिया हम छोड़ि देबै सब गहनवा हो ना।
जोगिया चली चलबै तोहरे गोहनवा हो ना।

जौ तू रानी हम पे लोभानिव,
छूटि जइहैं चटकी चुँदरिया हो ना।
जोगिया छोड़ि देबै चटकी चुँदरिया हो ना।
जोगिया चली चलबै तोहरे गोहनवा हो ना।
एक बन गयीं, दुसरे बन गयीं
तिसरे मा जोगिया महलिया हो ना।
छोड़ि देउ रानी चटकी चुँदरिया।
पहिर लेउ उजरी धोतिया हो ना।
रानी छोड़ि आव सुअरी का नदिया हो ना।
दायें हाथे खोलयि सुअरिक डँठिया,
रामा बायें हाथें पोंछयि अँसुवा हो ना।

कउनी उमरिया सासू निमिया लगायेन

कउनी उमरिया सासू निमिया लगायेन
कउनी उमिरिया गये बिदेसवा हो ना।
खेलत-कूदत बहुअरि निमिया लगाइन।
रेखिया उठत गये बिदेसवा हो ना।
फरिगै निमिया लहरि कै डरिया
तबहूँ न आये बिदेसवा हो ना।
बरहे बरिसवा पे मोरे पिय लउटे,
वहि तर डारे है गोनिया हो ना।
मइया लइकै दउरी जूड़ पनिया।
बहिनी लै आयी पिढ़वा हो ना।
धरि राखौ मइया पनिया और पिढ़वा,
नाहीं देखा पतरी तिरिया हो ना।
तोहरी तिरिया बेटा गरब गुमानी
जाइ सेवैं धौरहरा हो ना।
गोड़वा धोवावत बहिनी लागे चुँगुलिया,
भइया भउजी से लेहु किरिया हो ना।
मोरे पिछवरवा बढ़इया भइया मितवा,
घर मा चइलवा चीरि लावउ हो ना।
मोरे पिछवरवा लोहरा भइया मितवा,
घर मा कढ़इया गढ़ि लावउ हो ना।
मोरे पिछवरवा तेलिया भइया मितवा,
घर मा कै तेलि परे लावउ हो ना।
मोरे पिछवरवा कुम्हरा भइया मितवा,
घर मा के गगरिया गढ़ि लावउ हो ना।
मोरे पिछवरवा नउवा भइया मितवा,

नइहर खबरिया जनावउ हो ना।
जाइ कहूया मोरे बाबा के अगवा
तोरी धिया चढ़ी है किरिया हो ना।
आज एकादसिया बिहान दुआदसिया
तेरस का लेहैं किरिया हो ना

सात महल सासू जँतवा गड़ावै हो

सात महल सासू जँतवा गड़ावै हो
गेहुँआँ पिसत ताप लागी हो ना।
डगर चलत भइया तू ही मोरे मितवा हो
लिहे जाउ बेनिया सनेसवा हो ना।
तोरी धना माँगति सोने के बेनिया हो
भइया लिहे जाव सोने कै बेनिया हो ना।
कार बार ते छुट्टी जौं पावैं
हाँकै लागी सौने कै बेनिया हो ना
बेनिया डोलावति परिगै सासू कै नजरिया
बउहरि कहाँ पायो सोने कै बेनिया हो ना।
किरिया खइहौं सासू भइया भतिजवा हो
तोर पूता भेजे सोने कै बेनिया हो ना।
नौ मास पूता कोखी मा राख्यो
हमैं नाही भेजे सोने बेनिया हो ना।

चकिया पिसत मोहे गरमी लागत है

चकिया पिसत मोहे गरमी लागत है,
टप-टप चुअत पसीना हो राम।
खिरकी के ओरे पिया बेनिया डोलावै
परिगै सासू कै नजरिया हो राम।
मूड़-मूड़ कहिकै सासू जौ पहुड़ी
मोरे पूता सिर माँ दरदिया हो राम।
लेहु न मइया मोरी डेबिया इलाचिया
लइ आव धना कै करेजवा हो राम।
पहिरौ न रानी मोरे सोने रूप सारी
तुम्हरे नइहरे काम काज हो राम।
ना आवा नउवा ना आवा बरिया
कइसे का पायो सदेसवा हो राम।
हँसि-हँसि धना डोलिया पे बइठइ
रोय-रोय घोड़ा खींचै हो राम।
एक बन नाघि दुइज बन नाघिन,

तिसरे लवँग कै छहियाँ हो राम।
छिन यक डोलिया रोकौ हो कहरवा,
तनी यक धना का उतारौ हो राम।
पहली कटारी राजा रानी का मारेन
बहि चली रकत कै नदिया हो राम।
दुसरी कटारी राजा रानी का मारेन
निकरे है गोदी के ललनवा हो राम।
तिसरी कटारी राजा रानी का मारेन
निकसा है रानी का करेजवा हो राम।
एक हाथ लिहे राजा गोदी कै ललनवा
दुसरे मा धना कै करेजवा हो राम।
गलियन-गलियन राजा गोहरावै,
कोऊ लेय गोदी कै ललनवा हो राम।
कोठे चढ़ी उनकै बहिनी जौ देखे,
हम लेवै गोदी कै ललनवा हो राम।
एक वन नाघे दूसर बन नाघे।
तिसरे ऊपर घर आये हो राम।
लेहु न मइया मोरी धना कै करेजवा
सिर कै दरदिया मिटावउ हो राम।
धनिया तौ छोड़े पूता वहि के नइहरवा
कुकुर करेजवा लइ आयो हो राम।
लावो मइया मोरे पाँचौ कपड़वा
बनकै जोगिया होय जाबै हो राम।
काहे का पूता धरे जोगिया होय जइहौ
रचइहौ मैं दूसर बियहवा हो राम।
आग लागै मइया दुसरे बियहवा।
बजर परै ससुररिया हो राम।

हरिया कै गोहुँआ बजरिया के जँतवा हो

हरिया कै गोहुँआ बजरिया कै जँतवा हो
रामा बिरना आपन पहुनवा हो नाय।
कब तू चुकिहौ चलनी कै गोहुँआ,
कब हम भेंटब बीरन भइया हो नाय।
हम तौ चुकब रानी अपनी जुनिया।
झिंकिया निवारी बीरन भेंट हो नाय।
बहिनी कै रोवत भीजिगै चुनरिया,
झिंकिया निवारी बीरन भेंट हो नाय।
बहिनी कै रोवत रुमलिया हो नाय।

दुइ मन पीसौ, दुइ मना कूटौं।
दुइ मन सींझवयँ रसोइयाँ हो नाय।
जेंवन बइठे हैं सार और ससुरा,
बहिनी के गिरई लागे अँसुवा हो ना।
ओहू मा कुकरा बिलरिया हो नाय।
ओहू मा ननद कलेउना हो नाय।
ई दुख जनि कह्यो माई के अगवा
काकी मरिहैं माई पे तनवा हो नाय।
ई दुख जनि कह्या भउजी के अगवा।
सभवै बइठि हँसी उड़ावै हो नाय।
ई दुख जौ कह्यो बहिनी के अगवा
सुनिकै न जइहै ससुररिया हो नाय।
ई दुख जौ कहयो बाबा के अगवा,
जबन बाबा किहिन बियहवा हो नाय।
ऊसर गोड़ि-गोड़ि बहिनी ककरी बोवउ
नाहीं जानौ तीती और मीठी हो नाय।
नगर नगर बइठि बेटी तोर बर हेरेन
नाहीं जानेन तोरा करमवाँ हो नाय।

निरवही (निरौनी) सोहनी

आवत देखेउँ दुइ रे सिपहिया

आवत देखेउँ दुइ रे सिपहिया,
एक हो साँवर एक गोर हो ना।
गोरे तौ लिहैं बड़ गठरी,
सँवरे ढल तलवरिया हो ना।
गोरे हैं माई जी कै ललना,
सँवरे ननदी जी के भइया हो ना।
बइठौ भइया लाले दरवजवा,
तोहरे खातिर रची जेंवनरिया हो ना।
जेंवइ बइठे सार बहनोइया,
सरवा कै ढुरै लागे अँसुइया हो ना।
का समझेव भइया बासी कलेउना?
का बहुआ जी कै सेजिया हो ना।
ना समझेव बासी कलेउना,
ना समझेंव बउहर सेजिया हो ना।
चाँद सुरुज अस बहिनी सौंपेंउ,
जरि-जरि भयी हैं कोयलवा हो ना।
दुइ मन कुटना, दुइ मन पिसना,
दुइ मन सिंझवउ रसोइयाँ हो ना।
खात-पियत भइया खतम होइगे सब,
रहिगे परथन कै टिकरिया हो ना।
ओहि मा भइया हमार भोजनवा,
ओहिमा कुकरी बिलरिया हो ना।
ई दुःख बाँध्या भइया गरुही गठरिया,
खोलेव भइया कह्या बप्पा के अगवा
सभवै बइठि पछितइहैं के अगवा
ना जइहैं ससुररिया हो ना।
ई दुख जौ कहेव मइया के अगवा
नाही सहि पइहैं हो ना।

आवत देखा दुइ अरजनवा

आवत देखा दुइ अरजनवा,
देवरा कहाँ छोड़ि आयव मोरे सँइया हो ना।
उड़ति देखेउँ ननदी बना कै चिरइया,
भउजी! भइया गये बन कै अहेरवा हो ना।

कहाँ भीजी देवरा पाँव के पहिना?
देवरा! कहाँ भीजी तरवरिया हो ना।
ओसवै भीजा भउजी पाँव के पनहिया,
भउजी रकतन भीजी तरवरिया हो ना।
तुहैं छोड़ि देवरा आन कै न होबै,
हरिकेरि लसकरि देखउतिव हो ना।
एक बन ग़यन-दुसर बन गयन,
तिसरे मा लसकर झलकै हो ना।
जौ तुम होतिव हमरा बियहवा,
हमरे अँचरा से अगिया धधकै हो ना।
जौ मैं जनतिव भउजी यतना छल करिहौं,
काहे मरतेउ जेठ भयवा हो ना।

सात भइया केरि सातै बहिनिया

सात भइया केरि सातै बहिनिया,
सातौ भइया मिलि चले परदेसवा,
सातौ बहिनी लिहिन पछुवाई रे ना।
लउटि जाव सातौ बहिनी,
बहिनी तुहैं लाइब सुरुज हरवा रे ना।
बरहें बरिसवा लउटें सातौ भइया,
लइ आये सुरुज हरवा रे ना।
मोरे पिछवरवा रहैं पंडित भइया,
सातिव बहिनी कै साइत बिचारौ रे ना।
आजु एकादसिया बिहान दुवादसिया,
तेरसी का बनत है गवनवा रे ना।
ससुर जी माँगैं दतुइन पनिया,
पनिया दियत चमकै सुरुज हरवा रे ना।
बहुअरि! तोसे लेबे हम किरिया रे ना।
जेठा माँगे दतुइनि पनिया,
दतुइनि पनिया देत चमकै सुरुज हरवा रे ना।
भहेउ कहाँ पायों सुरुज हरवा,
दादा! भइया दिहिन सुरुज हरवा रे ना।
तुहार कहा हम किरिया रे ना।
राजा जी माँगिन दतुइन पनिया,
पनिया दियत चमके सुरुज हरवा रे ना।
धनिया कहाँ पायो सुरुज हरवा?
राजी जी भइया दिहिन सुरुज हरवा रे ना।
तुहार कहा हम एकौ न मनबै,

तुहसे लेबै हम किरिया रे ना।
मोरे पिछवरवा तेली भइया मितवा,
घर मैं तेल पेरि देतिव रे ना।
मोरे पिछवरवा बढ़ई भइया मितवा,
घर मैं चिर देतिउ चइलवा रे ना।
मोरे पिछवरवा लुहार भइया मितवा,
घर मैं गढ़ि देतिव करहिया रे ना।
गँवा के लोगन कै ची-ची पगिया,
सातौ भइया बइठे सिर नवाई रे ना।
तोहरी जो जीति होई डँड़िया फँदवइबै,
बहिनी हारे पे भुइँया गड़उबै रे ना।
खूब खौलै तेलवा का करहिया,
सतिना (बहिनी) तौ छोड़े दूनौ हथवा रे ना।
सबके लखे खौलै तेलवा करहिया,
भइया! हमरे लखें तो जूड़ि पनिया रे ना।

देउ सासू हमकै सुपवा बढ़निया

देउ सासू हमकै सुपवा बढ़निया,
सासू! झिनवा बहारे हम जाबै रे ना।
झिनवों बहारत टूटिगै बढ़निया,
सासू गरियावैं बीरन भइया रे ना।
खाहु चिरई मोरी दुधवा-भतवा,
चिरई! जाई नइहरवा माँ बोलउ रे ना।
जेंवन बैठे हैं मोरे बिरनवा,
जाइ का बोली है चिरइया रे ना।
सुनहु भइया हथवा खुरपा हँसियवा,
काटै लागे बढ़नी अँबरवा रे ना।
सँझइनि भइया मोरे घोड़वा संवारैं,
सकरवै पहुँचे हैं बहिनी के देसवा रे ना।
कहाँ बाँधौं बहिनी कलरसवा,
कहाँ डारौं बढ़नी अँबरवा रे ना।
घोड़वा बाँधौ भइया घोड़सरिया,
सभवै डारौ भइया बढ़नी अँबरवा रे ना।
जेंवन बइठे सार बहनोइया,
ढुरै लागे बहिनी के अँसुइया रे ना।
काहे रोवउ बहिनी काहे रोवउ,
तुहैं आनै हम आयन रे ना।
बहू लागैं ससुइया केरि पइयाँ,

जवन आसीस देउ मोरी सासू रे ना।
बहुअरि लउटि देस फिर आयो
एक बन गयन दुसरे बन गयेन,
तिसरे माँ बहैं काली रतिया रे ना।
केकरे दुआरे भइया गड़ा है हिंडोलवा,
भइया केकरे दुआरे होंय सावन रे ना।
बाबा दुआरे बहिनी गड़े हैं हिंडोलवा,
माई दुआरे होत हैं सावन रे ना।

गलिया-गलिया डोमवा पुकारै

गलिया-गलिया डोमवा पुकारै,
लै लेव सुपवा दउरिया।। कि लै लियौ ...
कोठवा चढ़ि रनिया पुकारै,
हियाँ लाउ सुपवा दउरिया।। कि हियाँ लाउ ...
एक बुंद पनिया पियावव हमका रनिया।
मोरे लागि है पियसिया। कि मोरे लागि ...
डोमवा पनिया पियावत लउकी बतिसिया,
लोभाय गयी रानी सुघरिया।। कि लोभाय...
हमहूँ चलब तोरे सथवा डोमवा,
तोहरी है बाँकी बतिसिया।। कि तोहरी है ....
तोहरे तौ है रानी महला दुमहला
मोरे घर टुटही कमरिया।। कि मोरे घर ...
तुहरे तो रानी सेजा सुफेदी,
हमरे है कुस गोंदरिया।। कि हमरे है ...
महला-दुमहला डोमवा मनही ना भावै,
मोरे मना बसिगा टुटही झोपड़िया।। कि मोरे मना ...
शाला-दुशाला मोरे मनही ना भावै,
मोरे मना बसिगा फटही झोपड़िया।। कि मोरे ...
सेजा-सुफेदी मोरे मनही न भावे,
मोरे मना बसिगा कुस गोंदरिया। कि मोरे ...
दूरै से डोमिनियाँ निहारैं,
छलि लाये कउनिव बाँकी तिरियवा।। कि छलि ...
सोना सारी छोरौ पहिरौ गुदरिया,
उगाहि लाव नगरी से रोटिया।। कि उगाहि लाव ...
थ्वारा उगाहै जादा खावैं,
नहकै लोभेंव डोमवा बतिसिया।। कि नहकै ...
डोमवा स्वावै डोमिनिया सँग,
रनिया सोवै झिलिंगवा।। कि रनिया सोवै ...

थ्वारा रानी सोवै बहुत जागैं,
नहक लोभेउँ डोमवा बतिसिया। कि नहक ...

लाले इँटिया कै लालै दरवजवा

लाले इंटिया कै लालै दरवजवा,
धना रामा कै चितरा उरेहै हो ना।
लहुरी पतोहिया पुतवा गुन केरि आगर,
वहीं तोहार चितरा उरेहैं हो ना।
एतनी बचन सुनि जेठवा,
गोड़वा मुड़वा तानिन चदरवा हो ना।
बइठि जगावैं उनकै मइया,
पुतवा होइ गई दतुइनिया कै जुनियाँ हो ना।
तोहरी दतुइनिया जब हम करिबैं,
लहुरिया पतोहिया हम पर बेहिहौ हो ना।
पूता! छुअतै भसम होइ जइहौ,
बइठि जगावै उनके भउजी
देवरा होइगै दतुइनिया कै जुनियाँ हो ना।
तोहरी दतुइनिया जब हम करिबै,
भउजी लहुरिया पतोहिया हमका बेहउ हो ना।
लहुरी पतोहिया देउरा तोहरी भहेउवा,
देउरा छूतै भसम होय जइहौ हो ना।
अपने ओसरिया से झाँकैं भहेउवा,
जेठवा! हमहूं चलब बन अहेरवा हो ना।
कहाँ मइया गाँव कै पनहिया?
कहाँ ढल तरवरिया हो ना।
भुँइयइ पूता पाँव कै पनहिया,
खुटिया पर तरवरिया हो ना।
यक बन गयेन दुसर बन गयेन,
तीसरे मा उड़त हैं गिधिया हो ना।
मचियइ बइठि पूँछैं सासू,
हथवा कै चुरिया काहे धूमिल हो ना।
मरैं बहुअरि तोरा भइया भतिजवा,
मोरा पुतवा तौ साधू सगुनवा हो ना।
रसोइया माँ मोरी बड़ जेठनिया,
माँगी कै सेंदुरवा काहे धूमिल हो ना।
मरैं न बहुअरि तोरा भइया भतिजवा,
मोर देवरा साधू सगुनवा हो ना।
सबकै तलवरिया आवै अलकत-झलकत,

जेठवा तरवरिया खुनवा बूड़ी हो ना।
कहाँ मारेव जेठवा कहाँ ढकेल्यो?
जेठ! कउने बिरिछवा लटकायो? हो ना।
चबै मारेन भहेउ चलवै ढकेल्यों,
चननवा बिरिछिया लटकायेन हो ना।
कोन भर जघवा देतिव जेठवा,
एकै बिसुवा लकड़ी बतउतिव हो ना।
भहेउ तुहै दिहेन बगिया बराई,
जरइ लागी लोथिया चटकै लागे बँसवा, हो ना।
रामा! जेठवा मीजैं दूनौ हथवा हो ना।

आज अकादसिया बेहानइ दुवादसिया

आज अकादसिया बेहानइ दुवादसिया,
परोहिन अइहैं परदेसिया हो ना।
जेवन बइठहैं बारे परदेसिया,
अँचरवा से हकबै बयरिया हो ना।
जेंई-जूठि पलँग पर बइठिहैं,
ढरन लगिहै मोतियन अँसुवा हो ना।
आउर सरकि चलउ परदेसिया,
मोरी अँगिया से ढुरत है पसिनवा हो ना।
अउसर-अउसर न करौ गोरिया,
नाहीं फिर सिधइबै दखिनवा हो ना।
अबकी जो तू जइबा बारे परदेसिया,
हमैं काहु-काहु लइबा परदेसिया हो ना।
तुहैं खातिर रनिया सवति लइबा
जो तू सामी हमैं सवति लइबा,
तोहरे धनिया कै अंग-अंग तोरिबै हो ना।
सवतिया खातिर हम बँगला छवइबा,
धनिया तमुआ तनाय हम रहिबै हो ना।
सामी! जौ तू तमुआ तनाय रहिबौ,
तौ सामी! हम डोरिया कटिबै हो ना।
जौ तू धनिया डोरिया कटिबौ
तौ धनिया तू जीतिव हम हारेन हो ना।

ऊँचै कुँअवा कै नीची जगतिया

ऊँचै कुँअवा कै नीची जगतिया,
रामा! पनिया भरै एक बभनिया रे ना।
घोड़ चढ़ा आवे राजा पुतवा,

बभनी एक बूँद पनिया पियवतिव रे ना।
कसकै पनिया पियायी राजा पुतवा,
राजा! मोरी जतिया जोलहिनिया रे ना।
नकवा सोहै नथिया कनवा कनफुलवा,
बाँभन जतिया छिपाये जोलहिनिया रे ना।
पनिया पियावत झलकी बतिसिया,
जोलहिन लागौं हमरे गोहनवा रे ना।
अपने महल से उनकै बियही निहारै,
सासू तोरा पूता उढ़री लिहै आवैं रे ना।
चुप रहु बियही तू चुप रहु बियही,
रामा उढ़री से गोबरा कढ़उवै रे ना।
गोरी-गोरी बहियाँ हरी-हरी चुरिया,
सासू कउने हाथे से गोबरा काढ़ौं रे ना।
कुसुम रंग सरिया छोर ओढ़री
पहिर लेव फटही लुगरिया रे ना।
लुगरी पहिर धन गोबरा काढ़ौ,
जीरवा अइसन फुफुनी दिउलिया जइसन मथिया रे ना।
सासू कउने मूड़े मैं गोबरा ढोउब रे ना।
गोहुँवा कै रोटिया अरहरिया दलिया,
रामा ! जेंवना बनावैं वहि रे बियहिया रे ना।
माई! आजु कै जेवना नाही नीक रे ना।
मकरा कै रोटिया बथुवा कै सगवा,
रामा! जेंवना बनावैं उढ़रिया रे ना।
जेंवन बइठे वहैं रजपुतवा,
माई आज कै जेंवना बड़ सुन्दर रे ना।
ओढ़री बियही करै झोंटी - झोंटा
रामा! रजपुतवा बइठि देहरी झंखँइ रे ना।
केहका मारौ माई केहका निकारौं,
बियही मारौ माई केहका निकारौं,
उढ़री का तिलरी पहिरावउं रे ना।
केकरी नइया मइया पार लगावउँ,
केहका बोरौं मझधरवा हो ना।
ओढ़री कै नइया पूता पार लगावउँ
बियही का बोरउ बिच धरवा रे ना।
सोने के टकवा मैं तोहका देबौ रे ना।
गोड़िया ओढ़री का परवा लगावौ रे ना।
बियही कै नइया प्रभु परवा लगावैं,
रामा! उढ़री के बूड़े बिचधरवा रे ना।

ओढ़री का छोड़ौ दहिजा का नाती,
रामा! बियही का घर मा मनाओ रे ना।

काँचिनि सिंकिया कै अइसन सिंकौली

कांचिनि सिंकिया कै अइसन सिंकौली
रामा केन मोर सिंकौली महुलाय हो ना।
मचियइँ बइठीं मोर बड़ सासू
सासू चउरा धोवत सिंकउलिया महुलाय हो ना।
यतना बचन सुनि सासू सुनय न पावें,
बोरसिन जीरा सुलगावय हो।
पाँसा खेलत हमरे राजा बढ़इते,
राजा तोरे महल धुइंहर हो।
एतना बचन राजा सुनय न पावै,
रामा धधकि बइठे गज ओबरि हो।
गोड़वा से टोवै लागे मुड़वा,
मइया नाहीं तोरे बोखरवा हो।
हमरे तौ नाहीं बेटा जाव बोखरवा
तोरी धना करेजवा की भूँखी हो।
राम रसोइया हमरी धना करेजवा की भूँखी हो।
राम रसोइया हमरी धना बढ़इतिन,
धना तोहरे नइहरे से न्योता आवै हो।
हमरे नइहरे से न्यौता जब अवतैं,
तुम तौ रहिव धना राम रसोइया हो।
धना नउवा नेवता दइके गये,
हँकरौ न कँहरा बेटउना हो।
कंहरा चनना कै डंड़िया फनाओं हो,
एक बन गयो दुसर बन रामा,
तिसरे डोलिया ठमकायो हो।
आवो मोरी धना अगवा हो,
धना तोहरे मूँड़े जुइयाँ हेरब हो।
जुँवा तु हेरव अपनी मइया बहिनिया के,
राजा हमरे करेजवा तुहुँ भूख हो।
एक गदा मारय दूसर गदा मारय हो,
रामा तिसरे मा लोढ़त होरिलवा हो।
एक बन आवैं दुसर बन आवैं हो,
रामा तिसरे मा पहुँचै दुअरवा हो।
बहिरे बइठू कि भितरे माई हो,
माई थाम लेतू धना कै करेजवा हो।

अपनी धना का तुम नइहरवा पठायो हो
बेटा हिरनी करेजवा मोहिं देखायो हो।
गलिया की गलिया घुमत है रजवा हो,
रामा को लेइहैं राम का होरिलवा हो।
अपने महल ते बोलै बुआ हो,
भइया हम लेबै बिना माई कै बलकवा हो।
भइया जी जोगी बेटा भयेन सपनवा हो,
पूछै लागे माई और बपवा हो।
तोरी महतरिया बेटा मुरि-मुरि गयी हो,
बपवा भये रावल जोगिया हो।
मचियइ बइठी मोर बुआ बढ़इतिन हो,
बुआ माई के चिआड़िया मोहि देखावौ हो।
एक गदा मारय, दूसर गदा मारय हो,
रामा तिसरे मां माई उठि बइठे हो।
एक बन आवय दुसर बन आवय हो,
रामा तिसरे मा पहुँचै दुवरवा हो।
बहिरे बाँटू कि भितरे आजी हो,
आजी, परिछ लेति नतिया पतोहिया हो।
जब हम जानी बेटा होइबा सपुतवा हो,
बेटा नन्हँवइ भरवा मा झोंकइतेव हो।

रामा बारह बरिस कै उमिरिया

रामा बारह बरिस कै उमिरिया,
तौर हरि मोरा परदेस गये हो राम।
बरहे बरीसवा आये,
बगिया मा गोनी डाइन हो राम।
नगर बोलाय भेद सब पूछै,
मोर धना कउने रंग हो राम।
बाबू! तोहरी धना हथवा कै साँकरि,
मुँहवा कै तेजवंती हो राम।
बड़े घरा कै बड़ी बिटियवा,
तीनहुँ कुल राखिन हो राम।
उहवाँ से गोनी उठाय,
अँगना मा गोनी डारिन हो ना।
मइया लै दउरी पिढ़वा,
बहिनी पनिया लै हो राम।
रामा मइया बोलाय भेद पूँछै,
धनिया कवन रँग हो राम।

बेटा तोरी धना निरोग,
नजरि नीची कइ चले हो राम।
बेटा देहियाँ गइन चोराई,
मुँहवा पे जोति बाढ़े हो राम।
बड़े सजनवा कै बिटिया,
तीनौ कुल तारिन हो राम।
सूतै धनिया से अलगेन,
जाँघे बइठाइन हो राम।
रामा बहिंया पकरि।
भेदा पूछौ हो राम।
परभू! तुमरे बिन पान न खाइन,
सुपरिया नाहीं तोरेव हो राम।
परभू! आँगन मोरे लखे बना,
दुआर सपन भये हो राम।
राती सेजिया पे लोटै कारी नगिनिया,
तुहरे दरस बिनु हो राम।
तुहरे सरन बिनु हो राम।

उतरत चइतै चढ़त बैसखवा गरमी

उतरत चइतै चढ़त बैसखवा गरमी,
महिनवा चूनर भीजै हो राम।
बाट कै बटोहिया तूही मोरा भइया,
जाय कहेव मोरे हरिजी के अगवा,
बाँसे कै बेनिया हमैं भेजैं हो राम।
जाय कहेव मोरे धना जी के अगवा,
बाँसे कै बेनिया लैके हाँकय हो राम।
जाय कहेव मोरे हरी जी के अगवा,
बेनिया बिनत लागै छः महिनवा हो राम।
जाय कहेवँ मोरे धना जी के अगवा,
रतिया हँकिहै दिना चारेइ हो राम।
बेनिया डोलावत आय गई निनरिया,
परिगै सासू कै नजरिया हो राम।
खाँवें न बहुअरि भोरा भैया-भतिजवा,
कौन बेनिया दीनने हो राम।
काहे खाब्या सासू भइया-भतिजवा,
हमरे परदेसी बेनिया भेजिन हो राम।
ना हम मानब ना हम विसवासब,
तोहसे पिछवरवा बढ़इया भइया मितवा,

भइया चनना लकड़िया चीर देतिव हो राम।
मोरे पिछवरवा तेलिया भइया मितवा,
भइया करुवै तेल पेरि देतिव हो राम।
बाट कै बटोहिया तुहीं मोरा भइया,
हमरा सँदेसा लिहे जात्यो हो राम।
जाइ कहेव मोरे सँइया के अगवा,
तोरी धना चढ़ी है किरियवा हो राम।
जब सासू डरिहैं करहिया माँ तेलवा,
आई परेन परदेसिया हो राम।
हमरी अहीं पूता धेरिया पतोहिया,
केकरी तिरियवा किरिया लेबू हो राम।
तोहरी तिरियवा किरियवा लेबै हो राम।
काहे का लेबू मइया धना कै किरियवा,
मइया हमहीं बेनियवा पठवा हो राम।

कटनी

चइतै महिनवा तें काटै फसलिया चतुर किसनवा

चइतै महिनवा तें काटै फसलिया चतुर किसनवा,
हथवा में हँसिया अउ कँधवा पै लठिया,
मुख पै बिखरत जाय मुसकनवा। चतुर किसनवा ...
गोरिया किसनवा कै शिशु लइकै कनियाँ,
चली दुलराय, खेलावै ललनवा। चतुर किसनवा ...
चन्द्रमुखी गजगामिनी थिरकत पग,
अउ नचावै नयनवा। चतुर किसनवा ...
खेतवा कटावै अउ मुठ्ठा बँधावै लइकै,
गट्ठरवा चलत खरिहनवा। चतुर किसनवा ...
फसल देवावैं गोहुँवा ओसावैं,
पछुवा बयरिया कै चलतै झोंकवा। चतुर किसनवा ...
खुनवा जुरावै पसिनवा बहावै,
सिरजत है तब पकु-पकु दनवा। चतुर किसनवा ...
दनवा सिरिज करि बखरी भरावै,
देसवा कै करै यहि बिधि कल्यनवा। चतुर किसनवा ...
कल्पित दिरिस विरोधी सराहै,
धन्य-धन्य भाग है तोर किसनवा। चतुर किसनवा ...

धन कै आई कटनिया हो राम

धन कै आई कटनिया हो राम,
अब दुःख भागे, कि आई अगहनवा।
लै कै हँसिया सखिन सब चली,
भउजी के मनवा मँगनवा हो राम। धनवा कै...
छूटि जइहैं बँधक गहनवा,
धनवा पिटि-पिटि अँगना ओसउबै
लागी है बाट परी दउनियाँ हो राम। धनवा कै ...
डेउढ़ी भरे ड्योढ़िया भरे (डेहरी भरिगे कोठिलवा भरिग)
अबकी ओसइहो किसनवा हो राम। धनवा कै ....

चढ़त फगुनवा चहकै किसनवा अधिमासे ना

चढ़त फगुनवा चहकै किसनवा अधिमासे ना,
देखि गोहुँआ कै बलिया उमगि नाचै ना।
उतरत फगुनवा हरिष उठै मनवा,
हँसिआ कै धरिया ठनकि बाजै ना।

पकि गये खेतवा जरन लागे रेतवा,
झनकि बाजै ना, धनि खेते-खेते चुरिया खनकि बाजै ना।
झुकि गये गोहुँआ लटकि गये जउना,
चटकि बाजैं ना, धनि मटरा के छिमिया चटकि बाजै ना।
भोरवै मां उठिकै जगावै कोइलिया,
कुहुंकि बोलैं ना चला खेतवा किसनवा कुहुंकि बोलैं ना।
फूटे किरनिया खेतवा मा धनिया,
हथवा मा मुठिया झनकि बाजै ना।
करत लउनिया बिसरि गये दिनवा,
सुघरि लागै ना, धनि खेतवा लेहनी सुघरि लागै ना।
खेतवा से बोझवा उठाय कै किसनवा चलइ खरिहनवा की ओर,
पुरवा हउवा करथि ओसवना गउना मा भवा है अँजोर,
धनि खेते-खेते चुरिया खनकि बाजै ना।

लइकै हँसिया सखिन सब चलीं

लइकै हँसिया सखिन सब चलीं,
धनवाँ कै आई कटनिया हो राम।
अब दुख भागै कि आई अगहनवा,
भउजी का मनवा होइगा मगनवा,
छूटि जइहैं बंधक गहनवा हो राम।
धनवा पीट-पीट अँगनवा लगइबै,
भरि-भरि डेलिया से रसिया ओसइबै,
भरि जइहै डेहरी कोठिलवा हो राम।

कोल्हू-गीत

मोर कौड़ी पे लोभी फिरौ घर का

मोर कौड़ी पे लोभी फिरौ घर का
बेरि-बेरि तुहैं बरजौं नयकवा कि हमका गहना लिआब
गँठिया जोरि-तोरि बरधी बदउबै कि डेरवा पे भोजना बनायी
उपरा से छोड़बै घियवा कै धरिया कि अँचरा से झलबै बयार
जौ धना होतिव बारी बयसवा कि हँसि-हँसि संघाती लोग।
बेरि-बेरि तुहैं बरजौं नयकवा कि उतरि बनी जिनि जाहु।
उतर कै पनिया जहर विष माहुर लागय करेजवा मां घाव
पानी पियत राजा तुम मरि जइहौ हम धना होबै अनाथ
दँतवा कटाय पिया कोठवा पटउबै छतिया का बार केवरिया
दूनौ नैन बिच हटिया लगउबै घरही करौं रोजगार।
अँवरि-अँवरि कै कोल्हुआ रे नयकवा बेल बबुर कै जांठि।
जठिया के पर ठेकुआ पिंहकै वइसै पिंहकै जिया मोर।
आधी रात पीतम ठोकिनि कँघोलिया कि छतिया कुँहुँकै मोर।
चुटकी काटि छोटकी ननदी जगावै,
तोरि बनिजरवा बनि का जाय।
जेहकर नीच नजरिया रे नयकवा अब कुलवंतिन जोय।
ते काहे जइहै बनिज बिदेसवा घरही सवाई होय।

अमवा महोवा घन पेड़ जेहि बिच राह परी

अमवा महोवा घन पेड़ जेहि बिच राह परी,
रामा! तेहि पर ठाढ़ एक तिरिया मनै माँ बिरोग भरी।
पूँछन लागे बाट कै बटोहिया अकेलि धन काहे रे खड़ी,
भइया चले जाव बाट के बटोहिया हमरी तुमका काहे परी।
का रे! तुहैं सासु-ससुर दुख नइहर दूरि बसइ,
भइया हमरे बलम परदेस, सो मनय माँ बिरोग भरी।
बहिनी तुहरे बलम परदेस तुहैं कुछ कहि न गये?
हमइ दइ गये आपनि कुपवन तेल हरपवन सेंदुर हो।
भइया दइ गये चनन चरखवा उठाय गजओबरि हो।
हमइ दइ गये आपन दुहइया धरम जिनि छोड़ेव हो।
भइया चुकन लागें तेल हरपवन सेंदुरा हो।
भइया! घुनन लागे चनन चरखवा ढहइ गजओबरि।
भइया! चुकै लागी मोरि उमिरिया हरि नाहीं आये हो।

केहका लै गाई गियानी केहका मनाई

केहका लै गाई गियानी केहका मनाई,
केहकै लेइ नाम हो राम।
भुइयाँ लै गाई गियानी ठुइयां लै मनाई,
लै लेई देवी दुर्गा के नाम हो राम।
एठइयाँ सुमिरि डिहवा हो राम।
तोहरे सरनिया माँ अपन हो राम।
जहि दिन सुनि लिहूयों सुपवा सिरिकिया ना
कहाँ भवा तोहार जलमवा हो राम।
तब तौ बोलत रहैं सुपवा सिरिकिया न,
हमरे सुनौ ना जोड़ीदरवा हो राम।
नदिया किनारे सरपतवा,
वही माँ लिहेन जनमवा हो राम।
जेहि दिन हमका निकारिन मल्लाहवा,
बेंच डारिन हेलवा के हथवा हो राम।
जेहि दिन रचि देव हमरौ पिंजड़वा,
लै जायकै बेंची बजरिया हो राम।
सुन्दरि लै जवन तेलिनिया,
वै तौ लेंय हमका मोलवा हो राम।
दिनाँ माँ पछोरेंव पियरवा बन,
रतिया बहाय हो पगरि हइँया हो राम।
कउनौ छयली कै जाथै गवनवा,
परे रहैं लाले ओहरवा हो राम।
जेहिं दिन लागे सोलहैं कहरवा,
वहि छइली कै हाँका जाय गवनवाँ हो राम।
जेहि दिन हमतौ चढ़िकै जाई अइस डोलवा,
राम! हमारव होत परछनिया हो राम।
काली लै भवानी कलकत्ते की रनिया,
झूलति है लेंवगिया कै डंड़िया छोड़ि दे मतवा,
आइकै कँठा बसि जाउ हो राम।
सूरसती सतवँती मोर मतवा,
थोरेन माँ करौ गुजरवा हो राम।
कोल्हुवा मैं बिरहा सुनवौं जौ जावउ रे,
बेरि-बेरि तोहैं बरजौ रे किसनवा ...
कोल्हुआ माँ बरघा जुटावउ कि ...
मेंटिया धरी छुट्टी कोल्हू बिच घानी परी ...
जिया भरा है बिरोग कि अंखिया पानी भरी ...

बिकसे गगनवा का फूल जुन्हिया मुसकाय रही।
सरसर बरद बयार जियरवा कपाय रही।
मिटियन नेह भरावउं हिये सुख सरसावौं रे।

पहिले मैं गायी गियानी अपने रामजी का

पहिले मैं गायी गियानी अपने रामजी का,
जेह पर देवै कै दीन।
अब दीन हँड़वा माँ हँड़वा जोरि,
बिधना पर चमड़ा रँग दीन।
बरसै देउ मोरे रमवा जपूँ मैं तुहारै नमवाँ।
मरे गोदिया माँ लै लीन।
ऐसे लीन मोरी मतवा बलकवा पै फरेउँ हथवा,
अरे! बलकवा का देउ गियान।
तुलसी हाथ गरीब पर गजब परे परभू,
हिंया हरि के सहारे बिना रहि नहिं जाय।
अब मुये चाम की साँस से गजब परे परभू,
हिंया लोहा भसम होय जाय।
ऐसे जाय देबी तू बइठौं अबला केरि दहिनी बगल।
एक दिन तुलसी परे रहैं गजब परैं परभू,
माँगे मिलय न चून।
किरपा भई रघुनाथ की गजब परैं परभू,
लुचुई खाय दूनौ जून।
दूनौ जून रामा रतिया बजे बनाँ माँ बँसिया,
बाजहौं जमुना कै तीर।
कहौं तुलसी कै बिरवा बाग माँ गजब परै रसिया,
तनिक सींचे से कुम्हिलाय।
रहै सहारा राम कै परभू,
हिंया परबत पै हरियाय।
रामै-राम कै लागत है बजरिया
औ हीरेन मोती बिकाय।

धान कूटते समय का गीत

कूटें कुटनहारिन धानु कँड़िया भरि लागी हो

कूटें कुटनहारिन धानु कँड़िया भरि लागी हो।
दोहरा मूसर धमकै रे चुनिया झनकि लागी हो।
चौगिरदा होत कुटनिया सखिन सब हरसय हो।
घर-घर मूसर धमकै कुटौनी गीत सँचरै हो।
काहे डेरायो धनि मूसरू धमकियान हो।
हे धन जनम्या तू धनवा की कोखिया,
पहिल मूसर गिरि है दूसरु उठिहैं ओसरिन लागी हो।
जल्दी-जल्दी मारै मूसर झूलै दूनौ बहियँन हो।
हालै गोरी के जोबना अँचरवा के छँहियाँ हो।
ठाढ़ अँगनवा माँ देवरा, देखि मन लरजै हो।
छाय पताय, अँगनइया से दुवो घूमि रहे हो।
भौजी मोरी एक बतिया जौ सुनतिव तौ मूसर धरतिव हो।
जाव-जाव देवरा मैं बतिया, तोरी समझौ हो।
देवरा! चारि-चारि तोरी बहिनी आनि लावउ हो।

चिउरा कूट चिउरा कूट मोरी तिरियवा र

चिउरा कूट चिउरा कूट मोरी तिरियवा रे।
अरे! हम जइबै मगहर देसवा रे।
रोइ-रोइ तिरिया चिउरा कूटैं रे।
हँसि-हँसि बाँधै समिया रे।
कै महिनवा कै परदेसिया हो
कतने दिनवा रहिहौ मगहर देसवा रे।
छौ महिनवा रहिबै मगहर देसवा,
बरीस रहिबै मोरँग देसवा रे।
का करै जइहौ सामी मगहर देसवा,
का करै जइहौ मोरँग देसवा रे।
पान लागि जइहै मगहर देसवा
सुपारिन लागि जइहै मोरँग देसवा रे।
कहिके सरउता सामी कटिबै सुपरिया
केहिके कइँचिया पनवा कटिबौ रे।
सोने के सरौता से कटिबै सुपरिया
रुपवै के कइँची से कटिबै पनवा रे।
जाउ तू जा रे मगहर देसवा
आपनि कुसल सब भेजिहौ तू रे।

सासू जी चली अपने नइहरवा

सासू जी चली अपने नइहरवा,
कूड़ भरा कना ताय चली नाय।
टोला बखरिन सब भूखन मरत रहिन,
कुड़वा भरा का किह्यो नाय।
बहुअरि कुड़वा भरा कना का किह्यो नाय। ... 2
टोला परोसिन भूखन मरत रें,
चुटकी-चुटकी बाँट दिह्यो नाय।
जौ तू बहुअरि कना बाँट दिह्यो नाय।
मोर कुड़वा भरा कना आनि दिह्यो नाय।
यतना सनेसवा जाय कहेव दादा के अगवा
सगरिव कुटना दिलाय दिहिन नाय।
यतना सनेसवा कहव भइया के अगवा,
भइया कुड़वा भरा कना लाय दिह्यो नाय।
कूटि-कूटि धनवा नइहरवा भरावै
बहिनी कुड़वा भरा कना लाय दिहेन नाय।

शीला बीनने का गीत

सिंकिया कै बीनी डेलरिया हो शीला बीनै जाब।
यहि रे! बीनी डेलरिया मां भरि लै चंदिनिया हो। शीला बीनै जाब।
यहि रे डेलरिया मां सुरुज कि रनिया,
शीला की बीनी चूनि भरिहैं बखरी हो। शीला बीनै जाब।
संइया कै मैं बनू दुलरिया हो। शीला बीनै जाब।

ओसाई का गीत

बीती आजु रासि कै ओसइया मैं फूली समां नाहीं गुइयां।
बीती खलिहान कै संझंइया मैं फूली समां नहीं गुइयां।
आजु खलिहनवा मां बाजय डुगडुगिया, किसना कै फिरत है दुहइया। मैं फूली.....
गोड़े कै पसिनवा मैं मुड़वा चढ़ायों, देहियां सुहरावै पुरवैया। मैं फूली....
आजु सनि पायों कोइलिया कै बोलिया, गमकै चइता सुरसतिया। मैं फूली.....
लोढ़ै बयार खरिहनवा के अंगना, बंसिया बजावै अमरइया। मैं फूली.....
झंपि-झंपि अंखिया झमकि चढ़े निंदिया, लपटि लागी पलकनि की छइंया। मैं फूली.....
आजु के सेजरि राजा धवली सेजरिया, आइकै बिछइहैं चंदा मइया। मैं फूली....
चइता सुनायके मैं पियवा सोअइबा, जगायो ना जागयं सोवइया। मैं फूली.....
गेडुंवा कै पनिया मैं पियवा जगावौं, जागा कुंभकरन कै भइया। मैं फूली.....

बुवाई-गीत

1

रामा ओ हो-हो
कान्हा बजाइन मुरलिया, कहां परै झनकार।
गोकुल बाजी मुरलिया, भाई रे मथुरा परी झनकार।।
सोवत राधा उंचकि गयीं, लै हाथ मथनिया।। रामा.....
जरि जाय, बरि जाय तोर मुरलिया, भाई मरि जाय बजावन हार। रामा.....
बच्चे से दहिया विचुक गये, मटका नाही आवै हाथ। रामा.....
ठन्डे पानी गरम धरियो, नैनू उठाय लेव हाथ। रामा......

2

धान बोवौ भइया धान बोवौ।
जेहसे बहिन धनवंती होय।।
दूध- सींचौ, भौजी दूध सींचौ।
ननद पुतवंती हो।।

3

पथरीला बलम तोरा देस, मोरे अंगुरी कै मुरक गै बिछिया।
हाँ गोरी कउने देस कै तोर बिछिया,
के बनवाई दीन तुहार बिछिया।
अरे! बांदा सहर के मोर बिछिया,
माई ने बनवाय दीन मोर बिछिया।।

मकई तोड़ने के गीत

आव चली करी खेतिया किसानी।
पुरुबे से निकरि आये सुरुज अंगनवा,
ठन-ठन ठनकै कंगनवा पे कंगनवा, मिलि जुलि सखियां सब भरैं पानी।
आव चली करी खेतिया किसानी।
चहंकइं चिरइया अकसवा मां जाइकै, उतरैं सुगनवा बलिया लुकाई कै,
टाकी गुलेलवा बुढ़िया पुरानी, आव चली करी खेतिया किसानी।

चरखा गीत

धरि गये चनन चरखवा, सिरिज गये गजओबरि हो राम।
दिन भर कतबै चरखवा, ओंहरिया ओड़घाय देबै हो राम।
संझइन सुतबै सँवरिया कै कोरवा, हरि का बिसरबै हो राम।
यहि बिधि नियम निबहिबैं, तौ कुलपति रखबै हो राम।

●

मोरे चरखा कै टूटै न तार, चरखवा चालू रहैं।
गांधी महतिमा दुलहा बने हैं, अरे! दुलहिन बनी है सरकार।

चरखवा चालू रहै..... ।
सारे कंगरेसिया बने हैं बराती, अरे! पुलिस बनी है कहार,
चरखवा चालू रहै..... ।
मोरे चरखा कै टूटे न तार, चरखवा चालू रहै।

●

हम भारतवासी पायने रे सुराज सही रे सही।
मिले गांधी जवाहिर, एक बात कही रे कही।
सब मिल कातब चरखवा, सुखकै मूल यही रे यही।
छोड़व कपड़ा विदेशी, खद्दर लेउ गही रे गही।
छोड़व फूहर गारी, लाला भवनी कै बात सही रे सही।
सुन्दर चरखा चलावउ, अब घर-बार सभी रे सभी।
पहिरौ खद्दर धोतिया, सुनौ नर-नारी सभी रे सभी।
पियारे हिन्दू मुसलमान, आपुस मां मेलु चही रे चही।

●

चरखवा कै टूटे न तार चरखवा चालू रहै।
दुल्हा बनिकै गांधी चले हैं, दुलहिन बनी सरकार। चरखवा....
वीर जवाहिर बने सहिबाला, लाट इरबिन बने सार।
सब वालिंटियर बनिगे बराती, नउवा बने थानेदार। चरखवा....
गांधी जी बइठे मन मां मगन होई, दइजे मां मांगै सुराज
सारे इरबिन लोगैं मनावैं, गउने मां देबै सुराज। चरखवा....
पंडित मोलवी साइत सोचैं, गउने का दिनवां कुवांर। चरखवा चालू.....

●

सब सखियां मिलि चरखा चलावहुं हो।
चरखा कै राग अति सुहावनि मनभावन हो।
सब सखियां मिलि चरखा चलावहु देशमुख टारहुं हो।
चरखा कै मनहर रूप सुखद छवि छावहु हो।
सब सखियां घर-घर चरखा चलावहु हो जुग पल रावहु हो।
चरखा सुराज कै सिंगार हिय हुलसावन हो।
सब सखियां बिहंसि-बिहंसि कातउ हो, साज
चरखा सुदरसन चक्र से नसावन हो।
सब सखियां कातउ मनवा लगाय, राम गुन गावहु हो।
ललना जलम कै बधइया मोद बढ़ावहु हो जुग पलटावहु हो।

●

उड़जा रे कगवा लै जा रे तगवा जाइ का दई दिहेव मोरे बाप का।
मैं तौ रहियां न जानौं गउवां न जानौ न जानौ तुमरे बाप का।
नाव बताय देई, गांव बताय देई हम अपने बाप का।
एक ऊंची महलिया हम लालै किवड़िया वहै घर मोरे बाप का।

एक मोरे बाप चारि रे धेरिया चारौं बियाही चार कूर मां
एक बंगालै मां दूजी खादर मां तीजी हरियाणा मां चौथी देशवा मां
मोरे मुड़वा खाटी कगवा हथवा भुवारी भुरट भुवारौं खड़ी-खड़ी
मैं सट-सट मारौं डस-डस रोऊं नाई का तोरे जीवने
बहुत दुखी हूं भागण देश में।

पूड़ी बेलते समय के गीत

भगती से आये भगवान हो सेवरी के घरवा।
कुसकै गोंदरिया सेबरी झारि कै बिछावैं रामा।
आसन लगावैं भगवान हो सेबरी के घरवा
पानी कै कठौता सेवरी जल भरि लावैं।
चरन पखारैं भगवान कैं सेबरी के घरवा।।
रूई कै बाती सेबरी घिया मां सानै
आरती उतारैं भगवान के सेबरी घरवा।।

●

बिन तुलसी आंगन मोरा सूना।
सून मोरा मंदिर एक दीप बिना।।
जइसै जल मां पुरइन डूबैं,
डूबा मोरा कुल एक वंश बिना।
बिना बिरन मोरा नइहर सूना,
सूना मोरा सासुर श्याम बिना।।

●

विदेसिया मोरे गवन लिहे जायं।
दादा रोवैं रंगी महलिया, मैया रोवैं चौपारें, विदेसिया, मोरे गवन लिहे जांय।
मइया तौ रोवैं दुआरे-मुहारे, भउजी रोवै चौपार, विदेसिया मोरे गवन लिहे जांय।
गुड़िया तौ रोवै डेब्बा-पेटरिया, सखियां रोवैं ससुररिया, विदेसिया मोरे गवन लिहे जांय।

●

आंगना मां चुवत है जमुनिया, बजै हरमुनिया।
भितरा चलौ हो बलमा.....2
सरम मोहे लागै गरम मोहे लागै, भितरा चलौ हो बालमा।.....2
पहली अनउनी ससुर मोरे आये, ससुर गोहन नाहीं जाबै।
पायल मोरा बाजै, सरम मोहे लागै हो बालमा।
आंगनवा मां चुवत है जमुनिया, बजै हरमुनिया।
दुसरा अनउनी जियठ मोरे आये
जेठवा गोहन नाहीं जाबै, पायल मोरा बाजै, सरम मोहे लागै हो बालमा।
आंगनवा मां चुवत है जमुनिया, बजै हरमुनिया।
भितरा चल हो बालमा.....।
तिसरी अनउनी देवरा मोरे आये, उनहू गोहन नाहीं जाबै,

पायल मोरा बाजै सरम मोरे लागे, लाज मोरे लागै हो बालमा।
आंगनवा मां चुवत है जमुनिया, बजै हरमुनिया।
पंचई अनउनी पिया मोरे आये, पिया गोहन चली जाबैं,
पायल मोरा बाजै, सरम मोहे लागैं, लाज मोहे लागै हो बालमा।
आंगनवा मां चुवत है जमुनिया, बजै हरमुनिया।

●

चांदनी उजियारी हमारे हिंया। हे! संइया तू पठउ स्कूलवा हमारे हिंया।
बिना कलम बिना कांपी हमारे हिंया। चांदनी उजियारी हमारे हिंया.....।
हे! धना तुम लीपौ, आंगना हमारे हिया। बिना गोबर बिन पानी हमारे हिंया।
चांदनी उजियारी....।
हे! संइंया तुम खेती कै लिह्यो हमारे हिंया, बिन हर बिना माची हमारे हिंया
चांदनी उजियारी....।

पनघट गीत

सासू भर कैसे जाई, रसीले दूनौ नयना।
हम तौ पनिया भरन का जाई, संवरिया रस्ता रोकैं,
सासू! रुकि कैसे न जां, रसीले दो नयना।
सिर पर ओढ़े चटक चुनरिया, सिर पर रख लीन गगरिया।
संग लैली छोटी ननदिया, रसीले दो नयना।
ननदी बइठौ कदम केरि छहियां मैं भरि लॉ गगरिया,
ननदी मलिया से बतुवांय, रसीले दो नयना।

●

सुन्दर नारि हम पनिया, भरब कइसे।
वै रे! कोवां पर ससुरजी कै डेरा, बिना काढ़े घुंघटा चलब कइसे। सुन्दर नारि हम.....
वै रे! कोवां पर जेठ जी कै डेरा। बिना छोड़े जगतिया चलब कइसे। सुन्दर नारि हम..
वै रे कांवां पर देवरजी कै डेरा। बिना मारे नजरिया चलब कइसे। सुन्दर नारि हम.....
वै रे! कोवां पर बलम जी कै डेरा। बिना करे बतिया चलब कइसे। सुन्दर नारि हम....

●

पनिया भरन गयो वहि पनघटवा, रामा घइला भरि-भरि धरेउं कररवा हो।
रामा केहू न मिलत उठवयवा, गोरुवा चरावत चरवहवा हो।
भइया तनिक घइला उठवउतिव, गोरुवा चरावै रहिमन भइया हो।
कइसे घइला उठवावौ तोरी, अरे! गउवा परय खेत खरिहनवा हो।
लेहु न भइया मोरा रेसम का डोरिया, गउवा बांधौ लेवंगिया की डरिया हो।
घइला उठावत रहिमन पकरिन गोरी बहियां, जौ रहिमन हमही लोभान्या हो।
रहिमन धरती के लहंगा लै आवा, रहिमन बदरे के ओढनी ले आवा हो।
धुअंवा कै चोलिया सियावा, रहिमन कगदे पिनस लै आवा हो।
रहिमन रतिया कै जनमा चारि कहंरवा हो।

●

रामा गहरी नदिया अगम बहै पनिया।
पियवा जौ चले मोरंग देसवा बिहरे करेजवा। जौ हम जनतिंव हरि जइल्या परदेसवा।
कसिकै बंधितिव प्रेम कै डोरिया निरमोहिया। मुंह तोरा देखौं हरी नान्ही-नान्ही मोछिया।
आंख तोरा देखौं हरी अमवां केरा फंकिया।। ओंठ तोरा देखौं हरी चुयेला रतनरिया।
हाथ तोरा देखौं हरी लम्बी रेसमवां।। घर में रोवें हरिनीं, जंगल मां रोवै हरिनवां।
बन मां रोवें चकवा-चकइया विछोहवा रतिया।।

●

घइलवा लइकै ना चलौ सागर डगरिया। घइलवा लइकै.... ।
देखंय लागी वहि विदेसिया का रहिया। देखंय लागी..... ।
घोड़वा चढ़ा आवय राजा कै छोकरवा,
केहकइ धनिया सिर पर धरे गगरिया। केहकइ धनिया..... ।
सासु ससुर कइ भर गगरिया
बिदेसिया कइ ना हम देख रहिया। बिदेशिया कइ..... ।
फेंकि देउ गेंडूरी बहाइ देउ घइलवा
चली आउ सांवरि हमरे गोहनवा। चली आवौ..... ।
जौ हम चली राजा तोहरे गोहनवां,
डगरिया मां राजा का खवउव्या। डगरिया मा..... ।
राजा का खवउव्या घरे हमका
राजा का हो पियउवा घरे हमका। घरे हमका..... ।
डगरा खवइबै रानी माघी ढोली पनवा
घरे पियउबै रानी बकेनवा दुधवा। घरे पियउबै.... ।
चारि दिना पनवा खियउब्या बेइमनवा,
उतारि देब्या जैसे सिर कै पगड़िया। उतारि देव्या..... ।
चारि दिना दुधवा पियउब्या धोखेबजवा,
उतारि देब्या जइसे गोड़े कै पनहिया। उतारि देब्या....

जातीय लोकगीत

बिरहा लोकगीत

अनुभउ रामजी दीन दिखाई

अनुभउ रामजी दीन दिखाई, चौदा तरफ ते सूरति आई,
वहिकै बाढ़ जोति सवाई, मैं हिरदै ते ध्यान लगाई,
माई सुमिरौ मैं आठौं जाम।।
आठौं जाम कीन सुमिरनी जगतारन करौ सहारा जी।
सूरसती कंठे पा बइठौ, राखौ परन हमारा जी।
दरसन दियौ कंठ पा बइठौ करिके रंग उजियारा जी।
पाँचौ चोर पकरि के मइया घर ते करौ निकारा जी।
भीतर भरम रहै ना पावै ख्वालौ धरम केंवारा जी।
जहाँ कुमति औ सुमति नहीं ना छूटि जाँय जम द्वारा जी।
छूके चरन गोसइयाँ के बैकुंठे, करौ सहारा जी।
हाथ घुमाय दियौ जगदम्मा उतरि जाय सिर भारा जी।
पापु देखिकै भसम करौ संकट हरि लेउ हमारा जी।
ऐसी नेह लगाय दियौ भूलै ना करतारा जी।
काट के फंदा तिरगुन के दइ दियौ ग्यानु करारा जी।
पाछे पाँव परै ना माई बिरहा बढ़ै हमारा जी।
चला करै सुर रागु हमारा बाजै जहाँ नगाँड़ा जी।
सूरसती की मरजी सेनी छन्द काफिया ढारा जी।।
छन्द काफिया ढारा प्रथमै सुमिरि के आदि भवानी का।
हरि ते धियान लगा हमरा औ ग्यान बतावै भवानी का।
नगर चले पा मिलेव सारदा कसिकै कमर कटारी का।
अइसी बुद्धि दियौ मइया दुसमन न बढ़ै अगाड़ी का।
आजु हौंसिला पूर करौ मेटौ ना गरब गुमानी का।
हम चेला अहिनि गुर साहेब कहब पुरानी बानी का।।
कहब पुरानी बानी का सभा मा आयकै।
और छोटे बड़े सबन के सीस नवायकै।
बिरहा सम्भारौ सूरसती माता तुम आयकै।
किरपा करिहैं रामचन्द्र बिरहा बनाय कै।।

माई सुमिरौ मैं आठौ जाम।।
सूरत रही कंठ दरसाई, पलटू बिरहा लीन बनाई,
निराला पंथ पंथ होय जाई, सैदी कबौ पा ना पाई,
हमका रामै नाम ते काम।।

तुम्भी नाम लखे ना पाई

हमने नाम की जिकर सुनाई, तुम्भी नाम लखे ना पाई,
बिरहा हम दंगल मा गाई, का सिखेव है नाम के ऊपर ज्याब।।
नामै ते जब कार चला नामै ते रचना होई जी।
कुणुम निरंजन सिव सक्ती नामै ते पैदा होई जी।
कुणुम निरंजन का गाते बनते बड़े लसोई जी।
पलटूदास वस्ताज कहैं सहै जम की लातै जी।
आवत जात कोऊ ना द्याखा सबै राम का भजता जी।
जपत निरंजन कोई न द्याखा सुमिरत राम क द्याखा जी।
उन्हैं पुरिस भगवान अहीं हम बदिकै हाथ का मारा जी।
रा रंकार कहौ किनका तुम कहौ दोस निरवारा जी।
हममा तौ कुछु गुन नाही मालिक जाय पुकारा जी।
मालिक चहैं तो पार करैं हरि हमरी ओर निहारा जी।
पल्टू सीतल रामनाथ सिखा है ग्यानु करारा जी।
भरिकै मिसला झोंक दिया सैदी होइ गवा किनारा जी।
ठीक-ठीक हम बिरहा गाई तुम गारी गाउ गँवारा जी।
बड़ा बेसरमा सरम न आई मैं फल मा गोता खाई जी।
परा सामना आजु हियाँ पा भागे राह ना पाई जी।
पलटूदास वस्ताज कहैं पाछे का नरमाई जी।।
का सिखेव नाम के ऊपर ज्याब।
अइहैं दूत पकरि लै जइहैं, जाय नकर कुँड मा धरिहैं।
कितौ होइहौ कुत्ता कितौ होइहौ घोड़।।

चारिउ मुलुक औ चारिउ कही वानी

हम नाम कहित हवै आला, हवै को नाम परखनेवाला।
नामै-नामै के बने सेवाला, तहिमा बइठे मोहन लाला।
ओढ़े हैं वै कम्मर काला, दुनिया सब रही उनिकी आसा मा लागि।।
चारिउ मुलुंक औ चारिउ कही बानी।
ना रहे पताल नाहीं तौ आसमानी।
ना रहे रसातल नाहीं तौ पवन पानी।
ना रहे कुणुम नाही रहे रक्ता की हानी।
ना रहे नीरंजन नाहीं सकती भवानी।
सत्तै बीच की हुँवा नाहीं सहिजानी।

तुमका तौ सुनत रहेन बड़े ग्यानी।
थोरी सी बात पूँछी ना किहेव नादानी।
नीरंजन के आगे जाय सकती सयानी।
पैदा भये पुरिस नाम पा लय लाई।
बइठे बइठे पुरिस रुख का दौराई।
सारे धुंधकार की खबरि लइ आई।
महागढ़ी म महापुरिस का बनाई।
औ महापुरिस महापूँजा का चढ़ाई।
मंडिल गुफा कै सोभा बरनि ना जाई।
पलटूदास रारि का बराई।।
रारि का दोस बराय दिया हिरदै ते ध्यान लगाई जी।
अइसा महापुरिस देखा ना रहा रूप न देखा जी।
कउन भजमी पा पाँव धरै ना हमते कहौ संदेसा जी।
काग ते हंसा ना होइहैं चाहै कोटिन करौ उपाई जी।
गौंसठि करिके गाय रहेव कुछ सकौ न दोस बनाई जी।
धमकी हमे बताय रहेव धमकी का नहीं डेराई जी।
पलटूदास के बिरहन ते हम धरबै ज्वाब सवाई जी।।
दुनिया सब रही आसा मा लागि।।
गड़िगे नाम के जौनु भाला, सैदी आप सामने ब्वाला।
वहिके हनौ नाम कै ग्वाला, सुनि-सुनि कै जिगर जाई फाटि।।

जे कोउ नाम का पकरे पाई

साधु रामै नाम सुनाई, जे कोउ नाम का पकरे पाई।
दुनिया नाम भजे तरि जाई, साधु रामै नाम पा अड़े आप।।
नाम की सुमिरन कीन है हरदम नाम कै हाल सुनाई जी।
नामै ते वै गनिका बेड़िन चढ़ी बेवान बजाई जी।
चढ़ी बेवान बजाय रही हरि ते दुःख छुड़ाई जी।
नामै वे पहलाद भक्त वै आपनि मुक्ति बनाई जी।
काग बसन्द हरकि चढ़ि बइठे जहाँ काल ना जाई जी।
नाम कै धक्का काल के लागै कालौ ने सिर नाई जी।
उड़ी जहाज समुन्दर मा पकरै को सदन कसाई जी।
खेय जहाज किनारे लावै सदन का लीन बचाई जी।
भगत दास रैदास चमारा बइठे धियान लगाई जी।
वही समै मा तुलसी बाबा गंगा चले नहाई जी।
हाट लगा रैदास भगत कै हुवाँ पा पहुँचे जाई जी।
कहा भगत रैदास चमारा हमरी अरज वोनाई जी।
राम-राम औ दुआ बन्दगी सो परनाम अटाई जी।
हमरे हाट प आवो स्वामी हमरिव अरज वोनाई जी।

तुलसीदास रैदास भगत के पासै पहुँचे जाई जी।
चरन की तईं रैदास भगत जी दूनौ हाथ अटाई जी।
अपने मन या तुलसीदास जी सो संछेप चलाई जी।
भगत दास रैदास चमारा मन कै भरम मिटाई जी।
मारा राँपी पेट पा अपने परदा खोलि देखाई जी।
राम नाम कै लागी गठरी अन्दर परी देखाई जी।
नाम ते तुलसी नीचे आये फिरि ऊँचे चढ़ि जाई जी।
नाम केरि गति ना जानेव तुम कइसे ज्ञान चढ़ाई जी।
नाम बिना तुम मारे जइहौ केहिते काह बताई जी।
साधु रामै नाम पा अड़े आय।।

ग्यान सभा मा दिल खोलि कही जौ आस लगी महरानी ते।

पहिले सूरति का दौराई, लज्जा राखौ हरवा माई।
मिसिला किसिम-किसिम के गाई, ग्यान हम कही सभा मा दिल खोलि।।
ग्यान सभा मा दिल खोलि कही जौ आस लगी महरानी ते।
अबहिन ते चेति चलौ नहिं चेतिहौ का बुढ़ाने मे।
धोखे म जिनगानी जाय रही है जैसे बुल्ला पानी मे।
ई सायर हैं बड़े चूतिया घुसैं मकोइया झाली में।
घुइयाँ केरा सुवाद ना जानै बंडा ह्यारै बारी में।
अगड़-बगड़ ज्यादा करि हौ तौ डंडा ख्वाँसब गाड़ी में।
सत्य बीज के गाने वाले यै घूमै अभिमानी में।
मुकुति तुमारी नहीं बनेगी सत्त बीज के गाने में।
पौनु तुमारा डोलि सकी ना वै मट्टी के पाये ते।
भजन करौ परमेसर कै बनि जइहै गुन गाये ते।
आपनु-आपनु ग्यान कहौ फइदा ना रारि बढ़ाये ते।
पलटूदास वस्ताज कहैं मिलिहैं राम मिलाये ते।।
ग्यान हम कही सभा मा दिल खोलि।।
मालिक दुनिया अजब दीन लगाई, उइ तौ पाँचइ तत्त बनाई।
हँसा वै रहे काया के बीच बोलि।।

हनुमान तेरी मैं कीन सुमिरनी।

हनुमान तेरी मैं कीन सुमिरनी।
दहिने आय के आँड़ौ बजरंगी।।
आय आँड़ौ बजरंगबली तुम दहिनी भुजा प फरकौ जी।
सीता काज नेवारन का हनुमान समुन्दर तड़कै जी।
रावन की फुलवारी मइहाँ बाँदर बनिकै लटकेउ जी।
तरा-तरा के फल खायउ नहीं कोहू का भटकेड़ जी।
झाड़ उखारि समुन्दर फँइकेउ मनमानी फल गटकेउ जी।।

येक समै कै जिकर सुनौ कंस राज की।
सादी होन की लगा लगी खूब समाद से।
बासदेउ देउकी का भँवरी फेरा।
घर मा भये अनन्द बाग मा परे डेरा।
उई समै कै जिकर सुनौ मालिनि उठी सोय कै।
करै असनान सारी का लाई निचोय कै।
अँधेरे मा फूल पाती टूरै टोय-टोय कै।
देवी जी के मंदिर गई झट-पट खोलि कै।
करै हौन धिया तौ लागी जरने।
मालिन कै नाक कासटि लिया हरने।।
दहिने आय कै अड़ौ बजरंग।।
मालिनि नाक पताल मा काटिनि, जौन धरिकै रूप धड़ंग।।

अइसा खेल राम जी कीन

अइसा खेल राम जी कीन, सुनदरि द्याँह मानुस के दीन।
कोऊ-कोऊ राम-राम ना लीन, जतने लटे करम का कीन।
काया पाप ते खुब भरि लीन, यहिमा का लाग हरि का।
मूरख समुझि परा ना तुमका।।
तुमका समुझि परा ना मूरख बार-बार समुझाय रहे।
गरभ बास अउ पेट के अन्दर अगिनि कै पिंड जमाय रहे।
गरभ बास मा हंसा तेनी रामजी कौलु कराय रहे।
चलत कि बेरिया आस लगाइनि राम कै रूप निहारि रहे।।
करब तपसिया तुमरे नाम कै दिल मा यहु ठहराय रहे।
बाहेर आये कहाँ-कहाँ मा हरि कै सुधि बिसराय रहे।
पिये दूध मुसकाय मगन मा परे गोद किलकारि रहे।
बाढ़े पैर चलन जौ लागे खेलै कूदै जाय रहे।
बालापन कै नई जवानी रंग मा अपने माति रहे।।
करनी के फल पावहुगे जमराजन के फेरा परि हैं।
तब का ज्वाब लगाओगे जमराजहु तौ सवारी करि हैं।।
मौका परी जमराजन ते वही ठईं।।
तौ जमराज सवारी करिहैं, सारा भेद वै तुमते पुँछि हैं।
बतलाय का परी हुवाँ सही-सही।। मौका परी...।।
झूठी-फुरी एक ना मनि हैं, साँची बात सही वै मनिहैं।
अब का करिहउ हाथ मली।। मौका परी...।।
राम कै भेद धरे ना पइहौ, उनिकै आगे मुँह फैलइहौ।
लइकै डंडा जमराज गढ़ी।। मौका परी....।।
बिनु सतगुरु का अरझि हुवाँ जइहौ, जमराजन के जूता खइहौ।
पलटूदास नाम का गही।। मौका परी....।।

मौका परी वहीं ठइयाँ तौ का ज्वाब लगाओगे।
पकरि कै तुमका जमराजा जौ भौसागर मा छोड़ेंगे।
छोड़ि दूयाहैं भौसागर मा बूड़ोगे उतराओगे।
चाहे जतरे ग्यानी होइहौ राम कै रूप ना पावोगे।
खता हमारी माफ करौ जौ बना तौ गाय सुनावोगे।
पलटूदास वस्ताज के चेला सबके सीस नवावेंगे।
पहिले तौ सुनि ल्याबै सायर पाछे का सान देखावेंगे।।
मूरख समुझि परा ना तुमका।।

अइसी गति कुदरति कै न्यारी

अइसी गति कुदरति कै न्यारी, अहमक समुझै नहीं अनारी।
पहिले पुरिस तौ पाछे नारी, स्वारा सुत मा बहिनि भै एक।।
स्वारा सुत मा बहिनि येक जिन भजत रहे हमेसा जी।
हलाहल्ला जौ नहीं रहा तौ पुरिस कै सोभा बरनी जी।
भरा रसातल झलकि रहा खइचिं लिया तन स्वाखा जी।
अंधाधुंध धुंधै कै मेला गुरु रहा ना च्याला जी।
गरजि घुमरि कै बरसि रहा खुब धरिकै सिकोरा जी।
अब ग्यानी हे पूँछि परेन है तीनि लोक कै नाका जी।
ग्यानी ग्यान जबै सुनि पावा चक्कड़ खाय कै जागा जी।
मतऊदास वस्ताज कहैं का हमका बड़ा अँदेसा जी।।
हमका बड़ा अँदेसा है का हम्मा गुन कुछ नाहीं ना।
जानि लीन है तुमरे मन कै तुम्मा करतब नाहीं ना।
कहै मा सेर बड़े हौ मुल बूझै मा कुछ नाहीं ना।
गुरु तुम्हारेन का सिखवा कुंजी ताला नाहीं ना।
बिटिया होतू घर बसि जातै मरदन मा तुम नाहीं ना।
सब करतब्य राम के हाथे औरु करतव्य नाहीं ना।।
सुरू हमारा नाम ते गाना।।
नामते परघट भये तीनि देवा, बरँभा बिसनू अउरु महदेवा।
बरँभा जी ने कीना सिरिट पसार।। नाम ते....।।
नामते बरँभा रचा फुलवारी, नामै ते पइदा भये नर नारी।
नांमै ते पइदा भवा संसार।। नाम ते....।।
पाँच पचीस पाँच पर कत्ती, बिना नाम का सब हवैं रद्दी।
तिनिके आगे हवैं अंधियार।। नाम ते....।।
पलटूदास सतगुरु का माना, सतगुरु दीना नाम खजाना।
नाम का मारब बार-बार।। नाम ते....।।
स्वारा सुत मा बहिनि भै येक।।
सायर अकिलि तुमारी मारी, परिगेव टट्टी कै रखवारी।
आगे पहुँच नहिन तुम्हारी, जगा उई रहे पखाने का ढूँढ़ि।।

माया फइली हवै बिसनू कै

माया फइली हवै बिसनू कै, पिंजरा खूब बना हवै गढ़िकै।
तेहि मा जीउ परा हवै बढ़िकै, हंसा कउनी जगा ते रहा बोलि।।
कउनी जगा ते हंसा ब्यालै जीवन कै खोलौ बानी।
कै सुर चलै कै नारी ड्वालै कउने घाट भरा पानी।
साहूकार और चोरवन तेही कतने बीच कै सहिजानी।
कतना छाया हवै बिरिछ मा पेड़ कै होती मेहमानी।
दूनउ बइल बराबरि न यक बइल कै होती सानी।।
दूनउ बइल बराबरि भे तब गोई बढ़िया मनमानी।
खुराफाँस ते पार ना पइहौ राम नाम हवै सहिजानी।
लइके नाम हलै दंगल मा सत्तिनाम हवै हक्कानी।
बारु उखारा ना उखरी सिर धुनिकै मरि जइहौ ग्यानी।
भाई-बन्धु मा मिलि लियौ ए बोलि-बोलि मधुरी बानी।
बार-बार मउका ना आई चारि दिना कै जिन्दगानी।
पलटूदास के दहिने पा हवै सूरसती जी महरानी।।
भजु राम नाम का मनुवा रे।।
जौ तुम सायर नाम का ना भजिहौ, जमराजै के डंडा खइहौ।
हुवाँ का सायर अकेले तुम जहहौ, कोऊ चली न तुमरे संघ मा रे।। भजु राम...।।
परनारी ते नेह लगइहौ, दस दिन कै सोभा तुम पइहौ।
जलम-जलम कै गठरी बाँधिहौ, जमराजौ हलइहै पल मा रे।। भजु राम....।।
जौ अधबिच मा बोरे जइहौ, जमराजा ते काह बतइहौ।
सायर रोय-रोय मरि जइहौ, जौ सूझी भौ जल मा रे।। भजु राम....।।
जौ मालिक दाया करि हैं, तबहिन हंसा नरक ते उबरि हैं।
पलटूदास हरि क गुन गइहैं, तौ जियरा होई मगन मा रे।। भजु राम....।।
राम नाम का भजि ले रे नही तौ ध्वाखा-ध्वाखा है।
वादा कै ब्यादा होई जाई साँसा का नाहिं भरोसा है।
मिढ़ति बनी तौ कसिकै बाजी नाही तौ कउन अँदेशा है।
जिनिकै फल भारी लागै गहिरे मा मारिनि गोता है।
उनिकै मुकुति बनी पहिले उई बाँधि कै चले लँगूवाटा है।
पलटूदास वस्ताज कहैं जिउ जात नहीं कोउ दूयाखा है।।
हंसा कउनी जगा ते रहा बोलि।।
आवाज काया के भीतर ते आई, सायर हलिकै पता लियौ लगाई।
सारा भेद दियौ बतलाई, कुंजी तुम आजु काया कै दियौ खोलि।।

कतना छ्वाटा कतना म्वाटा

निराकार कतना हवै लाँबा कतना चउड़ा, कतना छ्वाटा कतना म्वाटा।
कउनी जगा पा बहु हवै ल्वाटा, कतनी उमिर कै वहिकै थाह।।

कतनी उमिर कै थाह रही औ कतने तल कै हवै च्वाला।
बिना नाम तुम कहिका गइहौ कउन बतइहौ गुरु द्वारा।
लिहे निंदिया सुख ना सोइहौ परिजइहौ जम के द्वारा।
जिनिके नाम भये जग जाहिर हरि भौ पार करनेवाला।
सैदी कै मन ढील पड़ा पलटू कहता अनमोला।
बड़े बड़ेन कै हस्ती नहीं ना रदूदिनि का हमने ठेला।
जे कोउ कहा कि हमहिन आहिनि वाहिका राम खतम कीन्हा।
राम कै नाम सफर मा रहता ना लागै सीढ़ी ना जीना।।
चले सुर धाम नाम का भजिकै।।
नाम का भजा दुरपति माता, परभू जिनिकै राखिनि हवै लाजा।
गिरा दुसासन द्वारा बेईमान।। नाम का भजिकै.....।।
नाम का भजा सबरी आस लगाये, जिहिके बैर परभू हित मा आये।
वई लछिमन का जियाइनि प्रान।। नाम का.....।।
नाम ते अहिल्या का सरन मा लगावा, जिनिका परभूत बैकुण्ठ पठावा।
आवा गवन ते भयउ निहाल।। नाम का ....।।
नाम कै महिमा बड़ी हवै भारी, नाम भजे तरि जायँ नर-नारी।।
पलटूदास नाम मा कीना मुकाम।। नाम का.....।।
भजि कै नाम गयें सुखधामा मूरख होइकै जानै का।
सायर नही हैं बने जनाना बिटिया बहिनी गायउ का।
लाठी-डंडा छोड़ि कै सायर ग्यान मा हमते गायौ का।
नीक-नीक तुम सुनि लियौ सायर जोड़ ते बतलइहौ का।
पलटूदास वस्ताज कहैं सरम हुवै तो गइहौ का।
कतनी वहिकी उमिर कै रही थाह।।
दिल ते बात कहा दिलबासा, अनघर चलत नहीं कोऊ द्याखा।
को खोला अगम गम कै राह।।

राम नाम हरदी गिरा रगरे ते रंग सरियाय

राम नाम हरदी गिरा रगरे ते रंग सरियाय।।
राम समुन्दर मथन चले है मन मा कीन बिचारा जी।
काल नाग जउ सुनि पाये हैं बहै नैन ते धारा जी।
काल नाग का पकरि मँगावै लपटि जाँय जस नारा जी।
ऐंड़ छोड़ि कै मथन लागि तौ चौदा रतन निकारा जी।
चौदा रतन निकारि लीन तौ आगे का पग धारा जी।
चकई चकवा खेल कीन मालिक ने खेल पसारा जी।
साह करन ध्वाड़ा यक छूटे जइसे पौन झक्वारा जी।
ऐरावति हाथी निकरे इन्द्र कै वह दै डारा जी।
हलाहल्ल हुवहिन पा निकरा महादेउ संभारा जी।
बिष अमरित दूनौ निकरे का देउतन का दै डारा जी।

मदिरा निकरी दैत्त पीकै होइगे पूर गँवारा जी।
तहिमा यक लछिमी निकरी माया खेल पसारा जी।
वही मा येक चन्दरमा निकरा जोति है अमल अपारा जी।
रम्भा जाति पतुरिया निकरी तीनि लोक बिस्तारा जी।
धनुहा बान दूनउ निकरे परसुराम का दै डारा जी।
वही धनुहा का परसुराम जी रामचन्द्र का दीना!जी।
सोने कै लंका भसम कीन रावन कै भुजा उखारा जी।
भारी सेन लंका कै मारा बहै खून कै धारा जी।
नाम कै महिमा बड़ी अपरबल बहुतन का सम्भारा जी।
येक समै हरिचन्द भरथरी दुरपती ने धीर का धारा जी।
अरजुन भिम्मा सबै पांडवा बन का इन्हौ सिधारा जी।
बहुतै पापी जगमा तरिगे जे कोउ नाम पुकारा जी।।
रगरे ते रंग सरियाय।।

पलटू ग्यान सभा मा ख्वाला

पलटू ग्यान सभा मा ख्वाला, हंसा यहु काया ते ब्वाला।
तागा टूटि गवा नहि ड्वाला मट्टी आवै नाक उनेव काम!
तुमका गारी क बकना हवै हराम।।
गारी बकना हराम हवै जिनगानी दिहेउ बिताई जी।
नीक बेकार पेट भरि खायउ कबहुँ स्वादु ना पाई जी।
उइ मालिक कै नाम न लीन्हेउ जिन यहु जनम बनाई जी।
ई नगरी ते निकरा हंसा कोऊ देखे ना पाई जी।
सुनि-सुनि कथा पुरान भागवति तोरी समझ ना आई जी।
अतरे दिन भईं गारी गावत कउनि मउज तुम पाई जी।
चाहे जतना गरियाय ले सायर हमका नहिन बुराई जी।
ज्वाब दियै मा कसरि ना रखबै जउ हमरे मन आई जी।
हमरा तुमरा ग्यान सभा मा दूनौ तउला जाई जी।
गावा बिरहा दीन चेतौनी सुनि लेउ ध्यान लगाई जी।
मरद हुवौ तौ बूड़ि मरौ नहीं हुवौ मेहरुवा जाई जी।
तौ छपरा पर घास जामी जौ भारी बरिखा आई जी।
लाग घाम तौ सूखि गई कोऊ सींचि ना पाई जी।
वही तिना ते ग्यान तुमारा उखड़ि-पुखड़ि सब जाई जी।
वही तिना के गुरु तुम्हरे तुमका ग्यान सिखाई जी।
हवै सेर मा संगति सायर सियार लगे ना आई जी।
यही तिना के जनखा होइगे सभा म भंग कराई जी।
गंगा जी ले अटैं न पाइनि गढ़ही लीन नहाई जी।
परे नरक मा किरवा परिगे बहुत रहे घबराई जी।
पलटूदास राम का भजिकै फरहा दीन बसाई जी।।

फरहा दीन बसाई झगड़ा हमते न ठानौ।
साँची बात क वै मानत हैं झूठी बात क न मानौ।
खुराफाँस का गाय गयेव रामचन्दर का न जानौ।
नही करेव सन्तन कै संगति परे-परे सेतुवा सानौ।
मतऊदास कहैं पलटू से जल्दी इनिका पहिचानौ।
कहैं जगन पलटन तेनी इनिके ऊपा ठठ्ठा तानौ।।
गारी का देना हवैं हराम।
जगमा नेकी बदी उठायेउ, हंसा निकरा कोऊ न आड़ेउ।
मालिक भौ सागर ते उबारेउ, इनही बातन कै करउ परमान।।

गदहा लादे लादी चला जाय।

गदहा लादे लादी चला जाय।।
जम के दूत भयानक धोबी डंडा चारि लगाय।
लाद लदाय चले जमपुर का लइगे नरक लेवाय।। गदहा लादे....।।
मोह सराँय मा निसिदिन सोवत, सुधि बुधि बिसराय।
ना हरिभगति न सन्त कै सेवा मिथ्या जनम नसाय।। गदहा लादे...।।
यहु भौसागर गहिर महा अति जग बूड़ै उतराय।
बिनु सतगुरु कोउ थाह न पावै अधिक-अधिक अरझाय।। गदहा लादे...।।
माया मोह खोह मा लटके हाय-हाय चिचियाय।
पिया अपने का खोज न कीन्हें माति रहे बिस खाय।। गदहा लादे...।।
राम बिना जग जनम अकारथ काहू काम न आय।
माँस अहारी रत परनारी सूकर स्वान कहाय।। गदहा लादे...।।
रामदास यह मानुस देंही अमित पुन्नि फल पाय।
ताहि पाय जौ ना हरि सुमिरै फिरि चउरासी जाय।। गदहा लादे...।।

करि दीना देस तबाह खूब लाटरी

करि दीना देस तबाह खूब लाटरी बटिया पार दिहिसि।
देसु के कोने-कोने मा मचाय हाहाकार दिहिसि
यक दुई की नाहिन गिनती घर लाखन लाटरी उजार दिहिसि।
खाने का मोहताज भये दर-दर कै बनाय भिखियार दिहिसि।
सूरति पा अट्ठारह बजि रहें सेखी सगरी झार दिहिसि।
बची ना कानी कउड़ी पहिनाय कंगाली कै हार दिहिसि।
सोवति जागति चैन परै ना करि जीना दुसवार दिहिसि।
सड़क छाप होइ गये बनाय लाखन का करजदार दिहिसि।
ल्वाटा थारी बची ना साबित गिरस्ती सब बेकार किहिसि।
धनौ गवा इज्जति भी गै जियतै पुरिखन का तार दिहिसि।
फाटि मिया कै मियानी ढीला कै बीवी क सलवार दिहिसि।
सूढ़ि गये छुहारा हसि चिन्ता कै चढ़ाय बोखार दिहिसि।

अपनेन हाथन ते खुद पावन मा कुल्हारी मार दिहिसि।
हर तरफ मचाये धूम मेहरिबान लाटरी।
हर येक के दिल मा हवै समान लाटरी।
ख्यालैं हीरो हीरोइन पहलवान लाटरी।
लरिका बूढ़ि जवान खुब ख्यालैं नवजवान लाटरी।
बिटियै खेलती हवै घमासान लाटरी।
ख्यालैं अच्छे अच्छे इंसान लाटरी।
मेहरियै खेलती है सीना तान लाटरी।
मजदूर भिखमंगे खेलै धनवान लाटरी।
हुवत सुबा लाटरी इसटालन पा लगै भीर भारी फौरन।
मचि जाये हाहाकार बटुरि सब जाँय नर नारी फौरन।
बड़ी अदा के साथ जेब मा हाथ दियैं डारी फौरन।
हाथ नचाय कै मुँह मटकाय कै करैं ख़्वाब जारी फौरन।
कोउ कहै दियौ पंजा कोऊ सत्ता देय फारी फौरन।
कोऊ कहता दुक्की हमका उठाय दियौ सगरी फौरन।
कोऊ एक्का देउ घर आजै हम मारी फौरन।
कोऊ माँगै संगम कोऊ कहै देउ रेउती करारी फौरन।
कोऊ माँगै महाबली मन सुमिरि कै तिपुरारी फौरन।
कोउ कहै अइसा घर देउ जीत हुवै हमारी फौरन।
आपनि-आपनि तानि रहे सब जतने पुजारी फौरन।।

सर पा सीता सूरसती सुभ सीस

सर पा सीता सूरसती सुभ सीस सिरी सुन्दर बइठे।
माथे पा मोहनी मधुर मनमोहक मुरली धर बइठे।
भँउहन पा भगवान भगौती भैरूँ भौं भीतर बइठे।
नैनों पा नर निरख नरायन निरंकार नाहर बइठे।
नाक पइहाँ नरतकी निरंजन नक बेसर बइठें।
कान पा काली कला निराली कर मा लै खप्पर बइठे।
गाल पा गिरिजा बसैं गोसँइया गनेस जी गुन पर बइठे।
ओंठ पा अपसर ओमकार ओम नम सीवा संकर बइठे।
बत्तीसी पर हवैं ब्रज नागरिया बासदेउ बलधर बइठे।
जिभ्या पा जगदीस जलंधर जबाँ पे दो अच्छर बइठे।
गले मा हैं गोविन्द गुरुद्वारा गुरु का खुब्ब हुनर बइठे।
कंधे पा कैलास पती कुलि काया के अन्दर बइठे।
बाजू पा बलराम बसैया ब्रन्दावन घर-घर बइठे।
कलाई पा कानून कुदरती अंगूरी पा अनवर बइठे।
पंजे पा हवैं पारबरम पूजन पा पाँच पहर बइठे।
सीने पा सुरताल सूरसती स्वयं सारदा सर बइठे।

पेट मा पाया पाँच तत्व पाँचौं मा परमेसर बइठे।
कमर पा कुबजा बसे कन्हैया कुबरी साथे कमर बइठे।
घुटनन पा हैं घटोत्कच्च खुब गरजि घोर घनकर बइठे।
ऐड़ी पा ईसान इलम औरेन का सीखि हुनर बइठे।
तलुवा मा तत्काल तान करि तीर सहन खंजर बइठे।
मस्ताना ते खबरदार हर बदू झुकाय कै सर बइठे।
भवानी कै ग्यान सुने अब तोरी नानी मर बइठे।।

सर के ऊपर सिरीराम जे जग के

सर के ऊपर सिरीराम जे जग के हवै करतार सही।
आँख के भीतर अलख निरंजन जग कै वहै अधार सही।
कान के अन्दर बसैं कन्धइया सुनि लेउ बात हमार सही।
नाक के भितरे नागेसुर है रहे खुब भनकार सही।
मुँह के अन्दर बसी मोहनी करतहवन हर बार सही।
गले के अन्दर गनेस जी बइठे सूँढ़ लपेकार सही।
हाथ के अन्दर हरिश्चन्द जिनिका जानै संसार सही।
सीना के अन्दर सूरसती बुद्धी ग्यान कै है भंडार सही।
पेट के अन्दर पारबरम जे जगत के सिरजनहार सही।
पीठके अन्दर परमेसर हवैं साथ मा लछिमी नार सही।
कमर के अन्दर कालीमाता बइठी जीभ निकार सही।
पैर के अन्दर बसैं परी ऊ दौड़ै चारिउ वार सही।
बेचूलाल ते गाने म पाऊँ न गवइया पार सही।
टेकचन्द रोसन के पट्ठन कै बिकट करारी मार सही।।

सीस के ऊपर सूरसती सिरी सारद

सीस के ऊपर सूरसती सिरी सारद महरानी बइठी।
कान के ऊपर काली माँ भौं पा भैरवी भवानी बइठी।
आँख के ऊपर अंजनी माँ औ नाक पा नन्द रानी बइठी।।
मुँह मा बसी मोहनी गालन पा गिरजा रानी बइठी।
कंधे पा बइठी कालका हाथे हिंगलाज रानी बइठी।
होंठ के ऊपर हटके सुरी दाढ़ी पा दुर्गे महरानी बइठी।
गरदन पा गउरा सीना पा सीता सयानी बइठी।
पंजे मा पारबती अँगुरी पा अन्नपूरना अगवानी बइठी।
पीठि के ऊपर पारसरी औ पेट मा परबानी बइठी।
कमर के ऊपर कलावती जाँघन मा जैसानी बइठी।
घुटनन पा घटघटी तारका तलुये प तीर तानी बइठी।
बेचूलाल की कलम मा देबी तैंतीस कोटि ग्यानी बइठी।

चली पिया का ढूँढ़न गोरी बस्ती गाँव सहर ढूँढ़ा

चली पिया का ढूँढ़न गोरी बस्ती गाँव सहर ढूँढ़ा।
असाढ़ मा असाम, अलीगढ़, अम्बाला, अमिरितसर ढूँढ़ा।
सावन मा संडीला, सोनीपत, सीतापुर, सांभर ढूँढ़ा।
भादौं मा भूपाल, भाखड़ा, भिंड, और भदावर ढूँढ़ा।
कुवार मा कोट कसौंदी, कोटा, कास्मीर, कवियर ढूँढ़ा।
कातिक मा कामरू कमछा, कलकत्ता दर-दर ढूँढ़ा।
अगहन मा अहमदाबाद अजमेर अउध अलवर ढूँढ़ा।
पूस मास पूना पीलीभीत, पटियाला, पेसावर ढूँढ़ा।
माघ मा माड़ौ मंसूरी, महमूदाबाद, घर-घर ढूँढ़ा।
फागुन मा फारस, फतेहपुर, फिलिस्तान, जाकर ढूँढ़ा।
चइत मा चेरापूँजी, चीन, चमबल, घाटी जमकर ढूँढ़ा।
बइसाख मा बाँदा, बम्बई, बहराइच, बढ़िकर ढूँढ़ा।
जेठ मा जालौन, जबलपुर, जालंधर, जयपुर ढूँढ़ा।
मिला कहूँ बाहेर ना साजन मिला जौ घर अन्दर ढूँढ़ा।।

विशेषः उपर्युक्त लोकगीत में जिस अक्षर से महीने का नाम प्रारम्भ हुआ है उसीा अक्षर से शहरों के नाम भी प्रारम्भ हुए हैं। ये एक विशेष प्रकार की अलंकारपूर्ण शैली है।

सरकाय लेव घंघरी खसकि परै

सरकाय लेव घँघरी खसकि परै, फारौ न डारि-डारि एड़ी तरे।।
अजब जुलाहा घंघरी बीना, बीनै मा लागे सवा नौ महीना।
लाग निराला पाँच रंग कै ग्वाटा, तीन जरी कै परा नारा म्वाटा।
सत्तरि हजार बहत्तर तार लागे खरै।। सरकाय...।।
बड़ी अजब हवै काया घँघरिया, पहिना राम औ किरसन सँवरिया।
तुलसी सूर जतन ते पहिरा, मीरा औ सेबरी का काउ कहना।
पहिन कै जस कै तस कबीर धरै।। सरकाय...।।
दाग परै ना हुवै पावै मैली, पहिरौ सँभारि जतन ते सिलबैली।
जाई पिया घरै जिहि दिन गवनवा, डंडा मारि-मारि पुँछिहैं सजनवा।
ऐ हरजाई ये तू का करै।। सरकाय...।।
अइसी घँघरिया कठिन हवै मिलना, सबके बसि कै नहिन हवै सिलना।
गजब नगरु यक दरजी खास हवै, बीनै वहै बसि बारौ मास हवै।
नये-नये डिजाइन कलर भरै।। सरकाय...।।
तुम असि फूहरि पहिरै ना जानौ, ल्वाटौ भईंस असि लेंवाड़ा सानौ।
कहत हवै बेचूलाल मसताना, परिहै पिया के घर मा पछिताना।
कहैं किरसन सब नखरा झरै।। सरकाय...।।

हमरे लरिका हवैं साढ़े बारा

येक कहै का कही हमरे लरिका हवैं साढ़े बारा गोइयाँ।
पेट का निकरै तौ होइ जावै पूरे-पूरे तेरह गोइयाँ।
आजिज करै परान बड़ी करैं गुल्ल गप्पारा गोइयाँ।
माँगि रहें खाना-पानी छिन-छिन, फ्यारा-फ्यारा गोइयाँ।
हगाई औ सौंचाई मा दिनु बीति जात सारा गोइयाँ।
मिलै ना फुरसति पल भरि कै जीना दूभर हमारा गोइयाँ।
कहा कराय ले नसबन्दी माना ना दहिजारा गोइयाँ।
कमाई कम खरचा ज्यादा पूरा न परै चारा गोइयाँ।
येक बार ते नसीब खाना होय न दुबारा गोइयाँ।
कबौ-कबौ पानी पीकै करित हवै गुजारा गोइयाँ।
साबित तन पा नहिन हवै कपड़ा भारी पँवारा गोइयाँ।
लटकाये चिरकुटी कोउ-कोऊ धूमै उघारा गोइयाँ।
हाल ओ बदतर जाड़े मा ना जाये गुजारा गोइयाँ।
राति बिताई पैरा मा या आगि कै सहारा गोइयाँ।
कौनउ लदा पीठि या कौनउ गरे बाँह डारा गोइयाँ।
कौनउ खींचै चोटी कौनउ बाल किहे उघारा गोइयाँ।
होस नहिन अतनेउ पा मदमाता करारा गोइयाँ।
कौनिउ तरह ते समझाई दै-दै कै टारा गोइयाँ।
नसबन्दी के नामै ते फन्नावैं जैसेन फेंटारा गोइयाँ।
काउ कही कुछ कहत बनै ना बहुत हवै नकारा गोइयाँ।।

बीबी नखरेदार मिली वह देखाय आपनु कमाल दिहिस

बीबी नखरेदार मिली वह देखाय आपनु कमाल दिहिस।
नाचैं मियाँ इसारे मा वह जादू अइसेन डार दिहिस।
घर मा भंडा फोर मचाइस बिगारि सबै तुक ताल दिहिस।
मैया बाप ते लरिका बन्द करवाय बोल चाल दिहिस।
बूढ़ी बुढ़वा पानी का तरसै बहुत बुरा कै हाल दिहिस।
मेहरी के बस मा बेटवा बीबी बहुत डारि नक्काल दिहिस।
माय-बाप पा काउ बीतै बेटवा न उधर कुछु खयाल किहिस।
सास-ससुर माँगैं खाना तौ बीबी मचावै भारी बवाल दिहिस।
पटकि दीन थारी ल्वाटा मिलाय यक्कै मा आँटा दाल दिहिस।
ब्वालै का मन करैं मियाँ बीबी करि आँखी लाल दिहिस।
जाब चली नैहर का अपने फौरन दागि सवाल दिहिस।
मियाँ के भवा जुलाब तीर अइसा करेजे मा डार दिहिस।
कहै बाप कुछु बेटवा ते तौ बीबी डाँटि ततकाल दिहिस।
बइठि रहौ चुप्पे नाहीं तौ घर ते बाहेर निकाल दिहिस।

बुताऊ धना घंघरी मा लागी आग

बुताऊ धना घंघरी मा लागी आग।।
लागि आग लहँगा रहि-रहि कइ सुलगै,
तुम सलबैली निहारि रहिउ अलगै।
सइयाँ रिसैहैं जउ परि जइहै दाग ।। बुताऊ ... ।।
मद मा हउ माती ना तन कइ होस हवै,
काबू मा नाही जवानी जोस हवै।
हे रे अभागिनि नींद ते जाग।। बुताऊ ...।।
पाँचउ छिनरवा ठाढ़ि दूर ताकत,
घुँघुटा के आंड़े उन्हैं का तू झाँकत।
पाँचउ छिनरवन ते मन तुम्हरा लाग। बुताऊ ... ।।
जाई गउन जउ अखरी बहुत तउ,
कउन जबाब देहउ पुंछिहैं पिया जउ।
नैहर नगरिया मा खुब खेलेउ फाग। बुताऊ ... ।।
पइहौ नाहिं फिरि अइसी घंघरिया
कहैं मसताना हवै दूरि बजरिया।
पहुंचै हुवां जिहिकइ बड़ी भाग ।। बुताऊ ... ।।

आजु चलिहैन येकौ बहाना

आजु चलिहैन येकौ बहाना, भूलि जइहौ गाल कै बजाना।।
सात द्वीप पा कतने हवैं खाना, छूटै ना येक नाम सबके गिनाना।
सील दीप कहवा हवै लखाना, दया दीप ते दूरि कतनी बताना।
नाहीं गायौ दुबारा ना गाना। भूलि ... ।।
सात कमल मा परगटत कै रंग हैं, कतने रंग के मन कै अंग है।
कउनी जगा ते उठे काम कै उमंग है, बहै कउनी घाट अमीरस रंग है।
सबै अलग-अलग समझाना।। भूलि ... ।।
कतनी नारी सात नाल है, कै नाड़ी नाभी का बोये जाल हैं।
कै अमिरत कै बिस के ताल हैं, कहां काल कहां बइठे दयाल हैं।
कइसे हंसा काल पहिचाना।। भूलि ... ।।
रामदीन के सेर हक्कानी, गंगाराम ते चली ना ऐंचातानी।
मिलै रूयाज तौ मरि जाइ नानी, बेचू लाल मसताना ते ग्यानी।
कबौ भूलेउ नहीं टकराना।। भूलि ... ।।

पार ना पइहौ उखमज के जोते

पार ना पइहौ उखमज के जोते।।
मारग महा कठिनु अँधियारा, आगे सूझइ वार न पारा।
बिनु सतगुर के बतावै को द्वारा, होस करउ कउनी गफिलत मा सोते।। पार.. ।।
आपनु रूप सरूप बिचार, बिसै बासना आसा मार।

पाँच-पचीस तीनिउ मद जार, भउ सागर मा नहीं खइहौ गोते।। पार ... ।।
तिरकुटी घाट ते घाट नीचे बारा, बहै जहाँ सात बिसम कइ धारा।
घाट-घाट जम जाल पसारा, बिररै हंसा पार सुनउ होते।। पार ... ।।
निरगुन सरगुन दूनउ छाने, आतम-परमातम पहिचाने।
हंसा अंटा वही ठउरु ठेकाने, कहैं मस्ताना नरक मा बाकी रोते।। पार ... ।।

राँड़ यह नकटी पाछे पड़ी रे

राँड़ यह नकटी पाछे पड़ी रे।।
माया ठगिनी का भलि-भलि त्यागौ,
छोड़ै ना साथ बहुत बिधि भागौ।
हरकि राह होय आग खड़ी रे।। राँड़ यह ... ।।
ना सोवत जागत चैन कांटा कोंचै,
नख ते सिख तक दतैया हसि नोचै।
सुख ते रहै ना दियै याकौ घड़ी रे ।। राँड़ यह ... ।।
बज हरजाई महा छरछन्दी
बिस कइ गठरी लिहै फरफंदी।
चौडगरा मा रहै हरदम खड़ी रे।। राँड़ यह ... ।।
जोगी जती सती सन्यासी,
सबके डारउ गले मा फांसी।
नखरैली चंचल चतुर बड़ी रे।। राँड़ यह ... ।।
बेचूलाल मसताना कहत हैं,
सतगुर सरन जे कोऊ रहत हैं।
जोरे हाथ उनिके आगे खड़ी रे।। राँड़ यह ... ।।

आजु गवइया तोरि हियाँ याक चली न कलाकारी जी

आजु गवइया तोरि हियाँ याक चली न कलाकारी जी।
ग्यानु तोरा कटा चेहरे कै उतरी रंगति सारी जी।
जबाब तेरा दिया हमने अब आई तुम्हरी बारी जी।
कहै मस्ताना जबाब दियौ या मानि के बइठो हारी जी।
पढ़न की खातिर पहलाद भगत जौ पाठसाला मा जात रहे।
जपौ राम कै नाम सदा सब लरिकन का समझाते रहे।
हर यक तिना ते रोजु गुरू सिखलाते और चमकाते रहे।
किसी तरह प्रहलाद मुला नहीं राम कै नाम भुलाते रहे।
साथमा अपने सब लरिकन ते तखती पा लिखवाते रहे।
पहिली सतर मा परमपिता परमातमा पतित पावन लिखते।
दुसरी सतर मा दीनबन्धु दयानिधि दुस्ट दलन लिखते।
तिसरी सतर मा तिरलोकी तिरभवन पति तिरलोचन लिखते।
चउथी सतर मा चतुरभुजी चक्रधारी चतुरानन लिखते।

पचई सतर मा परषोतम परभू प्रेम ते प्रजापालन लिखते।
छठई सतर मा छलछंदी छलिया और छमाकरन लिखते।
सतई सतर मा सच्चिदानन्द सीता के साजन लिखते।
अठई सतर मा आदि अमर अबिनासी आनंदघन लिखते।
नवई सतर मा निराकार निरबानी नारायन लिखते।
दसई सतर मा द्वारका पत दयासागर दुखहरन लिखते।

(विशेष : उपर्युक्त लोकगीता में गिनतियों के प्रथम अक्षर से ही भगवान के विशेषणों, पर्यायवाची शब्दों और नामों की शुरूआत की गयी है; ये एक अलंकार युक्त विशेष शैली है।)

करवा चौथ का गंधारी गजपूजन का अनुस्ठान किया

करवा चौथ का गंधारी गज पूजन का अनुस्ठान किया।
बजवाया ढिंढोरा नगर भरे मा पहुँचाय निमंत्रण सबका दिया।
बिकराल भयंकर महाअद्भुत गज सोने कै बनवाय लिया।
गजपूजा कै सुनिकै खबर कुंती का महा घबरान जिया।
अफसोस के मारे माँ कुंती दिल ही दिल बेहाल बहुत भई।
छबि छीन मलीन भई मुख कै रो-रो कै आंखी लाल भई।
भूलि गईं सुधि तन मन कै अइसी उई रंजो मलाल भई।
मुख ढाँपि परी सिसकैं-फटकैं बहु चोट बड़ी बिकराल भई।।
माँ कुन्ती ते बोलि परे अरजुन काहे गमगीन नजर मइया।
नैनन ते गिरैं आँसू झर-झर रोती हौ रहि-रहि जइसे गइया।
रंजोगम अलम ना जरा करौ जौ लगि मै जिन्दा तोरा गइया।
पारथ के कसम तुमका जननी बतलाओ हाली परूँ पइया।।
कुन्ती ने कहा कहि जावे ना कुछ हाल का तुमका बतलाई लला।
गज सोने कै पूजि हैं गंधारी गज सोने कै कहँवा पाई लला।
हवै पास म हमरे छदाम नहीं सोना कहाँ ते अतना लाई लला।
यहिते बेहतर जीवै ते गरब मुँह आपन केहिका दिखाई लला।

चारि बेद छा सास्त्र अठारा पुरातन कै सार भागवति है

चारि बेद छा सास्त्र अठारा पुरातन कै सार भागवति है।
हरी के चरनन ते सिखलाती करना प्यार भागवति है।
भौ सागर मझधार ते बेड़ा करि रही पार भागवति है।
दुख दरिद्र औ पापन कै करि रही उद्धार भागवति है।
अग्यानिन के घट मा ग्यान कै करै उँजियार भागवति है।
हरि दरसन और मुकती बतलावति द्वार भागवति है।
हुवत जहाँ पा हरि कथा हरि के गुन गान जी।
साथ लछिमी के हुवाँ पर रहत हवैं भगवान जी।
तैंतीस कोटि देउता रहत बिराज मान जी।
है धन्नि वो गाँव और वहु अस्थान जी।

अमिरित गयी हरि लीला जहँवा होति बखान जी।
पसु पच्छी उड़ नर नारी बहुत भागिमान जी।
हरि लीला वन का करत हवैं अमिरित रस पान जी।
परत अवाज जहाँ तलक जिहिके कान जी।
दसवाँ अंस पाप का नासै और हुवै कल्यान जी।।

सारे अरब मा मचा रहै सेरे दावर आवै वाले हैं

सारे अरब मा मचा रहै सेरे दावर आवै वाले हैं।
हरम मा पइदा हुइ करिकइ वो बाहर आवै वाले हैं।
लकब अली हवैं अबू तालिब के घर आवै वाले हैं।
मौतु बुतन कइ आई फताहे खैबर आवै वाले हैं।
सब्र सखावत का बनिकइ उई समन्दर आवै वाले हैं।
मजहबे इसलाम वो करइ अजहर आवै वाले हैं।
बाजुए-वली नबियों के वलियों के वली बनकर आवै वाले हैं।
लाउत उज्जा मौत हुबल कइ लेकर आवै वाले हैं।
लहरावै इसलाम कइ परचम घर-घर आवै वाले हैं।
दिखलावै जुल्फेकार कइ परचम घर-घर आवै वाले हैं।
पहिले आये गवन्नर अब कमान्डर आवै वाले हैं।
बादशाह ला सरीक डिक्टेटर आवै वाले हैं।
गौस कुतुब अबदाल के इंजन डरैवर आवै वाले हैं।
साबिर कर ताजीब अदब दो हैदर आवै वाले हैं।।

ई समै हवै फैसन मा देवानी दुनिया सारी अब

ई समै हवै फैसनमा देवानी दुनिया सारी अब।
जवानिन बूढ़ि सबै चूर इंगलिश फैसन मा भारी अब।
साठि साल के बुढवौ चाहत फाँदै अटारी अब।
पहिरै बिलाउज चोली कट दस लरिकन की महतारी अब।
सीना हवै साफ मगर बाडी का कसे करारी अब।
मूति रहीं सड़कन के ऊपर ठाढ़ी-ठाढ़ी नारी अब।
भूलि गयीं हिन्दी भासा इंगलिस मा देती गारी अब।
चलाय रहीं सैकिल सन सन लउँडा आगे बैठारी अब।
उड़ाय रहीं सिगरेट भकाभक पैमाना पैकारी अब।
लरिका पइदा करन लगी हवै बहुत लरिकिनी क्वाँरी अब।
बोलि रहे इंगलिश मा बोली कूकुर औरु बिलारी अब।
माई गाड रटत हवै तोता सीताराम बिसारी अब।
बहुतै लउंडा बने जनाना टेढ़ी माँग निकारी अब।
सरमाती रंडियाँ चाल चलत अइसी न्यारी अब।
बहुवैं सास की सास बनी देंय खसम क लाखन गारी अब।
ससुर क मारैं लातन देवर जेठ की मोछ उखारी अब।

गरभ बास मा कौलु कीन क्या हवै यहु तुमका ख्याल नहीं

गरभ बास मा कौलु कीन क्या हवै यहु तुमका खयाल नहीं।
भवा मोह मद मा आँधरा समझा माया कै जाल नहीं।
अंत समै पछिताय कामु आवै कौनउ दलाल नहीं।
हियैं परा रहि जावे सब संग जाई इ धन और माल नहीं।
काँचे तत्तन कै यह काया छोड़े यहिका काल नहीं।
अबै सबेरा होस मूढ़ कर ज्यादा कूद उछाल नहीं।
करनी कै फलु अवसि मिलै ई सकता कोऊ टाल नहीं।
हरी नाम ते प्रेम करौ बेमतलब पाल बेवाल नहीं।
सत्तिनाम का भूलि गवा तौ कोई पुरसा हाल नही।
पटकि-पटकि कै मारेंगे जम राखै साबित खाल नहीं।
मतलब कै दुनिया सगरी कोऊ केहू कै यार नहीं।
सुर नर मुनि सबकै ई रीती बिन स्वास्थ ब्यौहार नहीं।
कपट कै फैला जाल जगत मा मोह कै कम रुजगार नहीं।
अंत समै कामु ना आवै धन माल औरु परिवार नहीं।
रंग-रंगीली दुनिया कै यहिकै कौनउ इतबार नहीं।
पता नहीं कब छूटि जाय ई तन कै कौनउ करार नहीं।
करै क हवै नेकी करि ले आज काल्हि मा टार नहीं।
आपनि करम आपु ही भुगतै हवै कोऊ हकदार नहीं।

अगर पिया दिलदार मोरा तो हमहूँ दिलबर जानी हूँ

अगर पिया दिलदार मोरा तोर हम हूँ दिलबर जानी हूँ।
अगर पिया तू चाँद तौ मैं तारन कै राति सुहानी हूँ।
अगर पिया फरहाद है तू तौ मैं सीरी दिवानी हूँ।
अगर पिया तू सागर मैं धारन कै मौज लसानी हूँ।
अगर पिया तू बनै समां मैं परवाना आजानी हूँ।
अगर पिया तू बनै कन्हैया मैं भी राधा रानी हूं।
अगर पिया तू राम मूर्ति तौ मैं सीता रानी हूं।
कहते सायर हमहूं तुमरी मासूका कहै पुरानी हूं।
कहौ जोगिनिया बनूं नाम के ओढ़ चुनरिया धानी हूं।
अकड़ि कै बोली है सराब तुम काहे झगरा ठाना जी
अकड़ि कै बोली है सराब तुम काहे झगरा ठाना जी।
तानि रहेउ आपनि-आपनि का हमका ना पहिचाना जी।
हमारि हमसरि नाही दुनिया मा हमार अचूक निसाना जी।
बांभन छत्री बैस सूद्र हर जन हमार दिवाना जी।
जिधर उठैहो नजर हर तरफ मिलै हमार रिन्दाना जी।
गली-गली कूचे बजार हर जगे खुला मैखाना जी।

जमी हवै मैफिल टूटि रहा पैमाना पा पैमाना जी।
हमका पिये ते तबियत मा रवानी आ जावे।
तारीफ करी का वो मजा लासानी आ जावे।
सगरे जहां कै मौजे जिनगानी आ जावे।
कसमें खुदा के सान वो मरदानी आ जावे।
लड़े का सेरौ ते हिम्मत तूफानी आ जावे।
हमका जौ बुढढा पी लियै जवानी आ जावे।
सुनिकै ग्यान हमार मुंह मा पानी आ जावे।
कहैं मस्ताना दुसमन का याद नानी आ जावे।

सुन्दर भूलेउ नाम वहिकइ अनारी राम

पइदा कीना जिहिने दिया रूप सुन्दर भूलेउ नाम वहिकइ अनारी राम।
छाँड़उ गरूर भजउ नाम घमंडी नाहि देहैं पेट जम काँड़ी राम।
सोरहौं करम करि डारैं जीउ कइ देवैं नरका मा छाँड़ी राम।
जम के मारया खाय गयौ गोता बड़े-बड़े सूर खिलाड़ी राम।
घूमत फिरत हवैं लिहे डुगडुगिया तुम जइसे लाखन मदारी राम।
मारै झपट्टा काल सुनउ जेहि दिन भूलि जाई सारी मक्कारी राम।
बिनसि जाई यहु रूप सुनउ पलमा जस कच्ची माटी कइ हाँड़ी राम।
कोउ ना पूछी रूप का वहि दिन बन्द हुवैं जउ नारी राम।
परि जाई कीरा रूप मा सरिकइ माटी मा देंय जउ गाड़ी राम।
अतनेउ पा होस करत नाहीं भकुहा सेखी रहेउ खुब झाड़ी राम।
सुने ग्यान सैदी का उतरि गा चेहरा मुँह होइगा भखुरी सुपारी राम।
सूरति के ऊपा बजे साढ़े बारा जैसेन हवै हारा जुवाड़ी राम।
रामदीन के पट्ठन का ग्यानी झोंका सकौ ना आँड़ी राम।
सुनौ ग्यानी जरा देर ठहरों अबही बाजी सभा मा ताड़ी राम।
चाहै बटुरि कइ गाय लियउ घर भरि रोवाँ ना सकउ उचारी राम।
जाय बसाय रूप सरि गलिकइ कीरा परैं गुजवाड़ी राम।।

मजेमा धान परोसिन कूटउ

मजेमा धान परोसिन कूटउ।।
मूसर परै कँड़िया मा हनि-हनि,
एक सै आठ पूरे मारउ गनि-गनि।
तब लियउ साँस लार का घूटउ।। मजे मा ... ।।
अस कूटउ चउर आवैं चमक री,
बाहर ना निकरैं पावै धमक री।
जानै ना कोउ सँभार धना कूटउ।। मजे मा ... ।।
उठउ पछिलहरा धान दियौ छाँड़ी,
हुवत सुबेर पछोरउ अउ काँढ़ी।

डेलनवा उठाय कोठरिया का फूटउ।। मजे मा ... ।।
सिरिज रसइयाँ जेइ अचय कइ
अटखुर-बटखुर जतन ते धयकइ।
चढ़ि सतखंडा मजा का लूटउ।। मजे मा ... ।।
कूटि गई मीरा अउ सबरी,
कइ गई नाम जगत मा कुबरी।
तीनिउ लोक ते नाता टूटउ।। मजे मा ... ।।
कूटि-कूटि लगाऊ असि कूरा,
चुकै ना रहै जनम भरि पूरा।
तब तउ करम जाल ते छूटउ।। मजे मा ... ।।
चेतिउ ना जवानी म कहैं मस्ताना,
परी बुढ़ापा मा कुछ पछिताना।
कहै र्याज केहिते रोइहौ कलूटौ।। मजे मा ... ।।

सदा भगत कै रच्छा करती मैया सेरावाली जी

सदा भगत कै रच्छा करती मैया सेरावाली जी।
दया की सागर प्रेम उजागर महिमा अहै निराली जी।
चरन सरन सरनन मा तेरे हरदम है खुसहाली जी।
भगत द्वार ते कबहुँ तुम्हारे गवा नहीं है खाली जी।
तोरे द्वार पा मानै मानता लाखन अहैं सवाली जी।
कोऊ प्रेम ते चढ़ा रहा ह्वै फूलन कै डाली जी।
सदा करै गुनगान आपकै बजाय-बजाय ताली जी।
सेवा हरदम करैं तुम्हारी प्रेम ते ह्वैं माली जी।
हना दुस्ट दुसमन का फौरन धरि रूप काली जी।
लै खप्पर रही घूमि मात हाथन नीच भुजाली जी।
मारि दीना हवै भैंसासुर बनि काली कंकाली जी।
ढूँढ़ि-ढूँढ़ि पापिन का मारा कइसी सक्तिसाली जी।
करैं बन्दना प्रेम ते तुम्हरी देखौ बंगाली जी।
भाउ भगत ते दूरि नाहीं हवै मइया नेपाली जी।
र्याज अली मिसिरन का चुनि चुनि कै ढाली जी।।

कारीगर करतार ने कइसी तन सायकिल बनाया जी

कारीगर करतार ने कइसी तन सायकिल बनाया जी।
अमरलोक मा बनाय कइ मर्त्यलोक मा इसे चलाया जी।
सर का समझौ गद्दी जिहिपा मन डरेबर बैठाया जी।
लगा डायनमो हवै आँखिनि कइ अजब उजाला छाया जी।
फ्री व्हील दिल का समझौ हिकमत कइ धुरी लगाया जी।
हड्डिन का फिरेम समझ जिहिका कहते तन काया जी।

मटगाड समझिये चामा कइ यम दल की ओर बचाया जी।
साँस का समझौ चैन गेर के ऊपर जिसे चढ़ाया जी।
नसन का इसपोक समझि लेउ तेल खून दौड़ाया जी।
पुरजा यहिमा तीन सौ साठि मजबूती अजब दिखाया जी।
दया-धरम कइ टैर टूब ग्यान कइ हवा भराया जी।
अगर सायकिल बिगरि गई तउ अस्पताल पहुँचाया जी।
लइकै सुलेसन सिविल सारजन यहिका खुबै सजाया जी।
अगर बनाई नहीं बनै तउ रद्दी खाना भेजवाया जी।
कहूं जराई गईं कहूँ माटी के नीचे दबाया जी।
कहते काली चरन सायकिल तन काया कइ माया जी।
मुँह का समझौ घंटी परभू कइ पुकार सुनाया जी।

नाम हरी का लीना जी

नर तन पाके जिसने नाही नाम हरी का लीना जी।
मानुस नाही वहु है निसचर वहि सम नर नाहि कमीना जी।
लानत अइसी जिनगानी बेकार जहाँ मा जीना जी।
नाम भजे बिनु भउसागर ते होय पारन सफीना जी।
उलटा लटकाय कइ जम मोगदर ते कूटैं जउ सीना जी।
नरक-कुण्ड मा जायके बोरें जावै त्रस सही ना जी।
बरम रूप बेद गुरु निन्दक पावै ठौरु कहीं ना जी।
देखउ बेद पुरान छानि गर आवै नहीं यकीना जी।
नाम बिमुख नर का जिस जगह यक बूँद भी गिरै पसीना जी।
होइ जाती अपबित्तर जगह हवै बेद पुरान आइना जी।
भूले-भटके भी जिहिने हरनाम कइ सुमिरन कीना जी।
नास भवा पापन कइ वहिके जनमों कइ कोढ़ धो दीना जी।
पिया ना जिहिने नाम जाम वो महा करम कइ हीना जी।
कहता है सतसंग बहुत मुक्ती कइ मारग दीना जी।
जिहिकी घट मुँदरी के भीतर नाम कइ गढ़ा नगीना जी।
मुँह पा चमकै तेज सदा ना रहता कबहुँ मलीना जी।

जीबे का धिक्कार

नर तन पाके भूलौ नाहीं मजहर कइ ठौर अनारी है।
सरग नरक ना ठौर कहूँ जिसने हरि नाम बिसारी है।
जीबे का धिक्कार हवै जो नाम कइ नहीं पुजारी है।
हरी नाम चही सबका भजना चाहै नर हो या नारी है।
नामै ते निस्तार जीव कइ कहता बेद पुकारी है।
कहैं संत अउ सतसंगति नामै ते जिउ का तारी है।
नाम अमीरस पिया है जिहिने मिटी कल्पना सारी है।

सात नाल की खुली केंवरिया भई घट कइ दूरि अँधियारी है।
दुक्ख कलेस कट छिन मा जे प्रेम ते नाम पुकारी है।
कीन पुकार नाम कइ तो दुरपती कइ बाढ़ी सारी है।
खैंचति-खैंचति थका दुसासन दुस्ट नीच अहँकारी है।
नाम भगत प्रहलाद पुकारा नरसिंह खम्भा फारी है।
गज डूबत गजराज बचाया नाम कइ महिमा भारी है।
ई मूरख की समझ ना आवै करने चला गँवारी है।
मानै उल्टा सीध नही मुँह जोर बड़ा तकरारी है।
कहूँ नहीं देखा अइसा बेगैरत अउरु लबारी है।
गाय-गाय हर जगह पा उखमज इज्जत लिया बिगारी है।
पावैं नहीं जबाब कबौ खीसै रहि जाय निकारी है।

पुरान फैसन छोड़ि

पुरान फैसन्न छोड़ि गवइया फैसन नवा सुनावा कर।
कहा बाप ने लरिका ते तू बढ़िया ठाठ बनावा कर।
धन-दौलत कै कमी ना घर मा मौज ते रकम उड़ावा कर।
धोती-कुरता ठीक नही पैंट-शर्ट सिलवावा कर।
किरीम पौडर और टाई का उठिकै सुबह लगावा कर।
दुई सौ डालर कै सारी तू छाँटि कै बढ़िया लावा कर।
किरीम पौडर औ लाली ते पतोह का चमकावा कर।
जोरि कै कंगन रोज सनीमा सहर घूमने जावा कर।
बड़े-बड़े होटलन मा जायके थमसप खुब पिलवा कर।
तरह-तरह कै चाट मिठाई मेज के ऊपर खावाकर।
सुबह-साम तू उठि करिकै बीवी के पाँव दबावा कर।
अगर बहू टट्टी का जावै लोटा तू धरि आवा कर।
बाटा के चप्पल जौ मारै परसाद समझि कै पावा कर।

अहीरों के गीत

ताल में चमकै ताल की नेरुइया खेतवा में गेहूँ क बालि।
सभवा में चमकै पिया की पगड़िया अँगना छुलाछनि जोय।।

●

गाय चरावों सुपास न पावों, भैंस चराओं लम्बी दूर।
अपने बाप की छगड़ी चरावों, हिला हिला करे जी जाय।

●

रहिउ करम की पातरि गोरिया भइउ गड़िवनवा क जोय।
सारी राति पिया पहिआ ढकेलैं राति रतौंधी होय।
राम क बगिया सिता कै फुलवारी।
लछिमन देवरा बइठ रखवारी।
फरि गये नेबुआ लटकि गई डारी।
तोरि तोरि नेबुआ पठावैं ससुरारी।।
वोहि नेबुआ क बनै तरकारी।।

●

कौन चिरैया पोथिया बाँचै, कौन खेवत दरबारा
कौन चिरैया कै लम्बी लम्बी टँगिया, कौन कै चाँवर बार।।1।
मैना चिरैया पोथिया बाँचै, सुगवा खेवै दरबार।
हंसा चिरैया कै लम्बी टँगिया, बकुला कै चाँवर बार।।2।।

●

चींटी मरी पहाड़ पर नौ सै लागि चमार।
प्यारे, नौ सै लागि चमार।
कलजुग माँ ससुरारि पियारी।
सो भाई प्यारे कलजुग माँ।
चारि रोज का बेटा गये ससुरारी।
गये ससुरारि सासु के भयो लरिका।
गलियन गलियन सासु पुकारै,
दमाद का खर्च कहाँ ते चलाई।
दमरी कै दाल छदाम के चाउर,
घी का अंस न देत दिखाई।।
हाथ माँ खुरपा बगल माँ खारा।
घास छोलन चला लरिका बिचारा।।
पाछे ते मेहरी ललकारा,
डारि दियो खुरपा बहाय दियो खारा।
छाँड़ि दियो ससुरारी को सहारा।।

लाउ छुरी गला काटि मरी
ससुरारि की गलियाँ कबहँ न चली।
चींटी मरी पहाड़ पर नौ सै लागि चमार।
नाघा छवार की गन्ती नाहीं
जूता बने एक सै नौ हजार।।
सो भाई प्यारे।।

●

जब से छूटि रेल कै गाड़ी, कटिगा जंगल पहाड़।
पैसा रहा सो गोड़े क सौंपेउँ, पेटवा पीठि का हाड़।।

●

नीकी भुइयाँ नीकी भवानी, नीके नगर के लोग।
नीकी पंचो सभा तुम्हारी, बैठी आसन मारि।।
भुइयाँ मनावन चली ग्वालिनी, लै लोटा भरि दूध।
पूजि पाजि ठाढ़ी भइ ग्वालिनि, भुइयाँ देओ असीस।।
धोरी धोरि गैयाँ बछरा बिअइयो, बहुयें खेलावैं पूत।
भुइयाँ दई असीस।।

●

अमवा क लाग टिकोरवा रे सँगिया, गूलरि फरी है हड़फोरि।
गोरिया क उकसा है छाती का जोबनवा, पिया के खेलौना रे होइ।।

●

गोरिया के छतिया प उठा रे जोबनवा, हँसैं सहरिया के लोग।
लै ला गोरी दमवा दै दा जोबनवा, तोहँसे जतनवा न होइ।।

●

बने बने गइया चरावे रे कन्हइया, घरे घरे जोरत पिरीत।
आनकी बिअहिया क सान मारि आवै अखिर त जतिया अहीर।।

●

गोरी गोरी बहियाँ गोरी गोदना गोदावैं, जै चुनरी रँगै रँगरेज।
छतिया प गोदि दे अरे गोदनहारी, वहि रे छयलवा क नाँव।।

●

पिसना के परकी जाँते क मुसरिया, दुधवा क परकी बिलारि।
आपन जोबना सम्हारेउ रे चिरई, रहरी में लागा थै हुँडार।।

●

बहै पुरवइया झपसि आवै अमवा रे, ठाढ़ि देहिया रे मटियाय।
जियरा में करकै गोरी क नजरिया, घर बन एकौ न सुहाय।।

●

कछुई बिआनी कछुवा रे रामा, गँगाजी बियानी ह रेत।
छोटि छोटि बिटिया त बेटवा बिआनी, बजर परै रे यहि पेट।।

●

बड़ निक लागै गाइ चरवहिया, भुइयाँ जो परती होय।
बड़ निक लागै मेहरी क कोरवा, जब ले लरिकवा न होय।।

●

बैठि के माँजै रे गोरी बटलोइया, तोरि तोरि लोटवा प तान।
जेतना कमा थे मोर परदेसिया, ओतने क कचरी थे पान।।

●

पिया पिया कहत पिअरि भई देहियाँ, बैदा बतावै पिंडरोग।
गौंवाँ क लोगवा मरमियो न बूझैं, भई है गवनवा के जोग।।

●

नदिया के ईरे तीरे उपजी कुसाड़ी।
गउवा चरावइँ किसन मुरारी।।1।।
बीच बना में कान्हा कँबरी बिछावइँ।
सब सखियन का पकरि मँगावइँ।।2।।
कोइ सखि गावै कोई बजावै।
कोइ सखि काँधा कि मुरली चोरावै।।3।।
सिसुकत के काँधा घर का चले।
भितरा ते निकसीं जसोमति माता।।4।।
के तोहैं मारा के तोहैं गरिआवा।
के तोहैं बतिया डोकरि गोहरवा।।5।।
नहिं कोई मारा नहिं त गरियावा।
नहिं कोई बतिया डोकरि गोहरवा।।6।।
हमरी त बंसी चोराई लिहिन राधा।
यही प रोवत हम घर चलि आई।।7।।
बाँसे की बंसी तू जाइ द्या लाला।
तोहें सोने के बंसी हम देब बनवाई।।8।।

●

चन्दा बरन बर मिलि गये, सूरज से मिलि गये जेठ।
बिजुरी सी चमकत ननदी मिली, बदरी बरन मिली सास।।

●

गोरी क जोबना हुमसन लागे, जैसे हिरनियाँ क सींग।
मूरख जाने कुछ रोग उठत है, ऊ तो पीसि लगावें नीम।।

●

फूल मँदारे क फूलै रे बौरा, पिपरे मँ फूल न होय।
काउ टटोले डाढ़ीजार के अरे जोबना में हाड़ न होय।।

●

अँगिया जो उधड़ी करै कर, दरजी क दोष न होय।
उठत उमिरि दूनो जोबना, निकरे पँसुरिया फोर।।

बिरहा गावउँ बाघ की नाई, दल बादल घहराय।
सुनि के गोरिया उचकि उटि धावै, बिरहा क सबद ओनाय।।

●

लजिया क बतिया मैं कैसे कहौं भउजी, जे मोरे बूते कहलो न जाय।
परके फगुनवा में सिअली चोलियवा में, असौं न जोबनवा अमाय।।

●

अहिरा का सोभेला जे ललकी लउरिया,
बभना का ललका जनेउ।
नोनिया का सोभेला जे कान्हे प फरुहवा,
जे छत्री का तीर तरुआरि।
औ पंचा के सोभेला निआउ।

●

कौनु राति-दिन परा रहति हइ, कौनु रात-दिन ठाढ़।
कौनु राति-दिन चला करति हइ, इनके कौन सुभाउं।।1।।
धरती माता परी रहति हइँ, राम राति दिन ठाढ़।
पवन पानी चला करति हइ, इनके यही सुभाउ।।2।।

●

गगरी में फँसरी लगाय के पतरकी इनरा में दिहे लटकाइ।
निहुरि निहुरि तै तो पनिया भरत बाटे जोबना के पड़े परछाइँ।

●

दरुआ भकोसि सड़किया प गिरबे आपन दँतवा निपोरि।
मुँहवा में कुकुर मूती टँगिया उठाइके हँसि देई सगरी बजार।।
डिपटी साहेब के नाहीं जानल बेहरकू गारी दीहैं पनर हजार।
अन्हरी मैं अन्हरू तू देबे जुरमनवा बिकि जइहैं झुलनी हमार।।
बुढ़वा बाप तोर करैला नोकरिया माई तोर जाँता पीसी खाय।
परई में दालिभात पुरवा में पानी ई गति भइली तोहार।।
बारबार तोके बरजीं बलमुवा तुँ जनि कलवरिया में जाय।
धैके पिअदवा अंधेरिया मजिटरी में दिहैं जुरमनवा कराय।।

कहारों के गीत

दिनवा दिनवा मैं गिनों बलमुआ छोटे लड़िकाराम।
अँगुरी पकरि दुलहा लै गायों बजरिया
पुछही नगरिआ के लोग राम।।
कि तोरा लागे भइया रे भतिजवा
कि या तोरा लागे लहुरा देवरवा राम।।
नाहीं लागे हमरा भइया रे भतिजवा।
नाहीं लागे हमरा भइया रे भतिजवा
नाहीं लागे लहुरा देवरा हो राम।।
पुरबुज कमैया दुलहा पायेवँ छोटे लड़िका राम।।
जहाँ देखे लाई गट्टा तहाँ मचलाई राम।
टोपिया बदल दुलहा खाइ लाई गट्टा राम।।
सरसों कै तेल ककुन कै बुकवा राम।
सारी मीजि दुलहा कई लेबे सयनवा राम।
दिनवा दिनवा मैं गिनों बलमुआ छोटे लड़िका राम।।

●

सोच मन काहे क कारी। मोरे मालिक सिरी भगवान । टेक।।
जहाँ लेत नित रैन बसेरा बधिक लगावत फाँस।
कूद कादि के हरिनी निसरिगै हरिन क परिगा फाँस।।
सोच मन0।।1।।

इही पार से हरिना पुकारै सुनु हरिनी मोरी बात।
विधना के घर खरच खोटाने बेंचि खात मोर माँस।।
सोच मन0।।2।।

वही पार से हरिनी बोलै सुनु बधिका मोरी बात।
हमहूँ क बाँधु पिया सँग मोरे खोउ न मोर अहिबात।।
सोच मन0।।3।।

यतनी बचन कहि तुरत हरिनिया गई बधिकवा के पास।
यतनी बचन जब सुने बधिकवा अनी धना कै
सुधिया जो आई, काटि दिये गलफाँस।। सोच मन0।।4।।

तेलियों के गीत

बिरहा गाना सहज है ग्यानी, जोड़ कै मिलाना काम।
भाँग का खाना सहज है ग्यानी, लहरि बचाना काम।।1।।

●

जहँ पंच तहँ परमेसर भाई, जहँ कुअँना तहँ कीच।
वहिय कीच का बना चउतरा,
हाँ, सब पंच नवावइँ सीस।।1।।
पंचा क बैठि मेड़रिया, मेड़रिया छोटा बड़ा एक फूल।
केकरे मैं अर्ती उतारउँ रामजी, केकरे खोंसउँ बेइलीक फूल।।2।।
पंचा क आउब बहुत निक लागै, जौ घर संपति होइ।
आवत के पंचा के सिसिया नवावउँ,
जात के पैयाँ पड़ रे जाउँ।।3।।

धोबियों के गीत

मन तोरा अदहन दिल तोरा चाउर, नयन मूँ कै दालि।
अपने बलम कै जेउना जेवउँतिउ बिनु लकड़ी बिनु आगि।।

●

सासु गोसाई तोरी पइयाँ जे लागउँ,
माता लदे सन कै डोर।
आँचर खोल जल भरउँ माता,
मइका केऊ न कहैं लड़कोर।।

●

अरे कुअना की पनिहारिनि, कहो तू का मन झुरये ठाढ़ि।
अरे की कुअँना तो हार गिरा बा,
जा कै बिछुड़ी हो पनिहारि।।1।।
अरे ना कुअँना मोर हार गिरा बा, ए परदेशी
नाहीं बिछुड़ी हौं पनिहारि।
अरे नन्हन कन्ता गये विदेसवा, तोहरिउ हाँ अनुहारि।।2।।
मोतियन से तोरि मँगिया गुहैबै,
हाँ सोनवै लहवइबै सरीर।
घइला धइ द्या कुअना जगत पर,
बारी नायिका हो, चलो हमारे साथ।।3।।

सोनवा गलै सोनार दुकनिया,
अइ छइला, अब मोती झोंकावउ भार।
हंस मुरइला कि जोड़िया छोड़िके,
हम काग संग ना जाब।।4।।
एतनी बचनिया पहलेइ कहतिउ वारी नयिका हो,
हम पुरुख तुम नारि।।5।।

●

निबिया कै पेड़वा जबै नीक लागे जब निबकौरी न होय।
मालिक, जब निबकौरी न होय।।
गोहूँ कै रोटिया जबै नीक लागै घी से चभोरी होय।
मालिक, घी से चभोरी होय।।1।।
अच्छा धोबिया जबै नीक लागै धोवै बकुला के पाँख।
अच्छा समिया जबै नीक लागै नोकर क खुश कै देय।।
मालिक नोकर क खुश कै देय।।2।।

●

बिरहा के मोटरी उठाउ परमेसरी
की लेइ चलु धोबिया दुआर।
आधा तो बिरहवा जे धोबी मटिअवलेन
की आधे में दुनिया संसार।।1।।
सतगुरू लकड़ी बिलाई टाँग पकड़ी कउआ रँगवलन ठोर।
गिरगिट उठवलन ढाल तरुवरिया भइले अजोधिया सून।।

●

मोटी मोटी लिटिया लगैहै धोबिनियाँ,
कि बिहनै चलै का बा घाट।
जोड़ी बिहनै चलै का बा घाट।।1।।
तीनहि चीज मत भुलिहै धोबिनिया
कि टिकिया तमाखू थोड़ा आगि रे।
जोड़ी, टिकिया तमाखू थोड़ा आगि रे।

●

धोबी क चहिये चारि मेहरिया एक घर का एक घाट।
एक मेहरिया रोटी पकावे, एक बिछावे खाट।
दुलहिन एक बिछावै खाट।
चिरई एक बिछावै खाट।

●

छिओ राम छिओ। छिओ राम छीओ।
अँगिया चुलिया मैली रे हुइ गइ बिन धोबी को गाँव।।
कै धुबिया पिअ लाय बसावौ कै धुबिया के जाँव।
छिओ राम छीओ, छिओ राम छीओ।।

●

ना बिरहन की खेती पाती न बिरहन को पंज।
जाही पेट से बिरहा उपजैं गाऊँ दिना औ रात।
छिओ राम छीओ, छिओ राम छीओ।

●

थोर-थोर कपड़ा दिहा गहांकिया, धोबिया के नरम है करेज।
कि हां भाई धोबिया कै नरम है करेज।।
तोहरा धोबियवा कइव रंग धोवै, खलवा से धोय-धोय ऊंचवा बिछावै।
लाल-लाल आगरे मूंगा तिरबेनी कै छींट, कि हां भाई तिरबेनी कै छींट।
के लै दीना आगरे कै मूगा, हाले गले के बीच, कि हां हाले गले के बीच।।
आधा लहेंगवा करिया रंगाई दिहौ, आधा रंगाई दिहौ लाल।
कि हां आधा रंग दिहो लाल।।
दुइनौ जोबनवा पे कलई कटाई दिहौ, चीकन कराय दिहौ गाल।
कि हां चीकन कराई दिहो गाल।
करिया लहेंगवा तूलै कै ओढ़नी अवन भुजावै जाव।
कि हां भाई अब न भुजावै जाव।
किसुन बाय भुजवा कै लड़िका हमै दिहिस गरियाय।
कि हां भाई हमै दिहिस गरियाय।।

●

पहिले सुमिरौ परमेसर का, हे रामा! जेहिसे बना संसार।
पीछे सुमिरो माई-बाप का, हे राम जे किहिन दुलार।
भारत कै महिमा सबका सुनाय देई, हे रामा जियरा सुखी होइ जाय।
माथे मुकुटवा हिमालय है जेहके, जे राम महिमा कही न जाय।
गंगा, जमुना, सरजू नदिया हे रामा! शोभा बरनि न जाय।
दूर देसवा से आवै नहाय हे रामा! है गांधी हियां पर आय।
अमर संदेसवा दिहिन सबका, हे रामा, गियान भगती समझाय।
सीता, पारवती, अनुसुइया भई अस नारि,
हे राम! पतिवरता कै महिमा दिहिन बताय।
वेद पुरान, गीता, रामायन रचे गए सबु हिंयय कही हम समुझाय।
कालीदास, वियास, बाल्मीक सब हे रामा! तुलसी भये कवि सूर।
धोबिया पंचौ कहां तक गावै, हे रामा! फैला सुजस बड़ी दूर।

●

सब पंचन का राम-राम सन्तन का परनाम।
बाभन का पहुंचे पइलगी, ठाकुर का जइराम।
अइसन बिरहा गायी भाई, पूरा बदन हिलि जाय।
चारि कड़ी कै धोबिया बिरहवा, चहै कांटा कै लेव।
पहिला सुमिरनी शिवशंकर कै, गउरा घोरि पियावैं भंग।
मथवा मां उनके तिलक चंदरमा, जटवा से बहइ गंग।

पहिली सुमिरनी राजाराम के, दूसरा विकरमाजीत।
तीसर सुमरिनी वही नाग कै, जे रहै धरती के नीच।

●

सब तौ गावै रोजै के रोजै, हम तौ गाई पूरे साल कै बात।
अपने गुरू कै नाम लिहेन है, सब लोगन ने ललकारा है।
दुनिया के अन्दर मां भाई, अन्ने सबते पियारा है।
एतनेन पर गोहूं उठि बोले, हमरी ओरिया ख्याल करौ।
गुड़िया फगुई हमै बनायो, दुनिया मां याद रखौ।
यतना सुनिकै धन गरजे, हमै बिना अंधियारा है।
दाल-भात कै बनी रसोइया, राजन कै ज्योनारा है।
यतनेन पर बजड़ी उठि बोलैं, हमरी वरिया ध्यान धरा।
कतनौ खूंदौ कतनौ पीटौ, हम बलुरी मां रहब परा।
एतने पर जोंधरी डाटै, हमरी वरिया ध्यान धरा।
सब बतियन मां सरवर करै, सबसे लावा मोर बड़ा।
यतना सुनतै बजड़ा जरिगा, हमरिउ वरिया धरिया ध्यान धरा।
माघ पूस मां जौ हमका खावा, चहे उधारे रहा परा।
यतनेन म कोदौ उठि बोले, हमरी वरिया ध्यान धरा।
सेर भरे कै बिगहा बोवा, हम गगरी मां रहब परा।
यतनेन पर लाहा उठि बोले, हम हैं न भइया मरदाना।
हमका खाये सबके भैया, जीवां रहय ठिकाना।
हरे राम जब बोली मसुरिहा, मारिन सबका ताना।
अपने चाल से गोंइयां, हम होई गई बेगाना।
अन्त में मूंग की दाल बोली, हमका जे खावा भाई।
जूड़ी-बुखार सबि भाग जाई।

●

पत्नी - अरे! जउने दिना ननदी कै भइया मंगिया सेन्दुरा डारिन
वही दिन से नइहर होइगा सपना हो राम।

पति - अरे! भरि गई नदिया उमड़िगा नरवा,
धना! कइसे जाबू तू नइहरवा हो राम।

पत्नी - अरे! सिंकिया चीर-चीर नइया बनइबै,
पिया! ताहि पर चढ़ि, जइबै वही परवा हो राम।

पति - अरे! जब तू जइबे नइहरवा ना,
तौ केहका लइकै जियरा बुझइहौ हो राम।

पत्नी - अरे! माई तोरा घरही बहिन तोहार घरहिन ना,
आपनि जियरा बुझइब्या भउजिया लइकै हो राम।

पति - अरे! माई मोर अन्हरी, बहिनी ससुररिया,
भउजिया हमरी तौ सूतैं भइया केरि गोदिया हो राम।

●

उत्तिम कुंदरू परवर किस्सा, अउरत गावै गारी मां।
आलू गोभी बनै मजे मां, कोइरी बोवैं बारी मां।
जो चाहे करइला लावव, खावउ मास कुआरे मां।
भिन्डी के खाए से कटै रोग भारी, बालेपन से रोवै सेम बेचारी।
जिमीकन्द जब डांटन लागे, कदर हमार है भारी।
राह बाट मां हमका ढूंढ़त कतनउ ढूंढ़ै आजारी।
गंजी अपने सान मां अइठीं, सुथनी का मारै ताना।
गाजर-गंजी दूनौ बइठिकै पंचायत करैं बेगाना।
कहै करमुआ कोदेव से, बढ़िया हमरौ है बाना।
जीर जवाइन बूंक कै छोड़ौ, बन जाय उम्दां खाना।
सोवा, मेथी, पालक कै सनदर साग सुहाना।
केरा, कटहल खांय लोग, करत है बड़ाई।
एतने पर हिनोना जरिगा, हम बड़े फरहारी।
यतना सुनकै खरबुज्जा डाटै, हम सबसे हन भारी।
बासी मुंह हमै जे खावै, मानौ परसी हैं थारी।

●

धोबिया तू मरि जइहौ चादर लिहेव धोय।
चादर लिह्यो धोय मइलिया बहुत समानी।
चलो सतगुरू कै धार, भरा जहां निरमल पानी।
सत्संग मां बइठि गियान कै साबुन लीजै।
सत कै सौदा लीजै नाम कै कलम कीजै।
छुटिहैं निरगुन दाग, नाम जौ मन मां लइहौ।
चलिहौं चादर ओढ़ि बहुरि भव जल न आवै।
पल्टू अइसन करौ कि मन न मैला होय।

●

निबिया कै पेड़वा जब नीक लागै,
जब कि निबकौरी होय। कि हां मालिक जब निबकौरी होय।
गोहूं कि रोटिया जब नीक लागै।
घिवेव कै चभोरी हो, कि हां मालिक घवि कै चभोरी होय।
अच्छा धोबिया जब निक लागै,
कपड़वा धोवै बगुलवा कै पंख, कि हां मालिक धोवै बगुलवै के पंख।
अच्छा सामी जब निक लागै,
धोबिया का खूब देय, कि हां मालिक खूब देय।

चर्मकारों के गीत

पंडित मुनि बड़ ज्ञानी। जल छानि के पीवत पानी।
वही सूत का बने जनेवा उसकर पाग बनाई।

●

धन्य है पुरुष तोरि भागि करकसा नारि मिली।
सात घरी दिन रोय के जागी लिहिन बढ़निया उठाय।
निहुरे निहुरे अँगना बटोरैं घर भर को गरिआय।।
करकसा0।।1।।

बखरी पर से कौवा रोवै पहुना आये तीन।
आवा पाहुन घर माँ बैठा कण्डा मैं लाऊँ बीन।
करकसा0।।2।।

हँडिया भरिके अदहन दीहिन चाउर मेरइन तीन।
कठउल भरिकै माँड पसाइन पिया हिलोर हिलोर।
करकसा0।।3।।

सात सेर के सात पकाइन नौ सेरे का एक्कै।
तुम दहिजरऊ सातो खायेउ मैं कुलवन्तिन एक्कै।
करकसा0।।4।।

देहरी बैठे तेल लगावै सेंदुर भरावै माँगि।
अँचल पसारि कै सूरज मनावै होइहौं कब मैं राँड़ि।
करकसा0।।5।।

विविध लोकगीत

●

भीखि दे माता असीस दे, मैं तो बरुआ बराभन रे।
यही भिखिया के ही कारन चलेउं मैं कासी बनारस रे।
भीखि दे आजी असीस दे, मैं तो बरुआ बराभन रे।
भीखि दे भाभी असीस दे, मैं तो बरुआ बराभन रे।
यही भिखिया के ही कारन चलेउं मैं कासी बनारस रे।
काहे जइहौ कासी बनारस रे पूता, घरही मा दादा तोहार बेद पढ़ैहैं रे।

●

छोटिनि बहिनी सितल रानी गोड़वा घुंघुर सोहे हो।
माता ठाढ़ी जमुनवा के तीर तौ गोड़िया पुकारै हो।
अरे अरे गोड़िया बेटौना नवरिया लैके आवहु रे।
मोरी लसकरि परवा उतारहु मैं देसवा देखन जाव्यों रे।
का तुंहू देसवा देवा देखन जाव्यू देसवा भिहावन रे।
माता घर घर हनिगै केंवरिया त लोगवा दुखित भये हैं।
जातै केंवरिया खोलउबै औ दियना बरौबै हो।
गोड़िया गरबी कै गरब नेवरबै दुखिवा नेवजउबै हो।

●

लीपी पोती ओबरिया त जगर-मगर करै,
संखिया बिन रे सन्तति घर सून मैं केहिका जगावौं।
राजा के दुआरे एक चेरिया त चेरिया बालक लिहे,
चेरिया आपन बालक हमें देतिउ त जिउ समुझाइत।
नोनवा तो मिलहि उधरवा औ तेल व्यौहरवा हो,
रानी कोखिया कै कौन उधार चहत नहीं पावै।
अरे अरे नग्र के बढ़ई बेगहि चलि आवौ रे,
बढ़ई गढ़ि लावौ काठे कै पुतरिया मैं पलना झुलावौं।
तेलवा लगावैं बुकउना नयन भरि काजर हो,
रानी उलटि पलटि पुतरी चूमैं पुतरिया नांही बिहंसै।
अरे अरे काठे कै पुतरिया तु रोइ सुनवतिउ,
पुतरी सुनते नगरिवा के लोग बांझिनि घर सोहर हो।

●

सासु हमरी कहेलि बंझिनिया ननंद ब्रजबासिन[8],
जेकर मैं बारी बिआही वै घरा से निकारैं।
रोवत कि निसरी बहुअवा बिन्द्रावन ठाढ़ी भई,
बना से ज निकरी बघिनिया तौ दुख सुख पूंछै।
जहवां से आइउ रानी तहवां चलि जावहु,
रानी तुंहका ज हम भच्छि लेबै हमहु बांझिन होबै।
उहवां से निकरी बहुववा नदी तीरे ठाढ़ी भई,
तहंवा से निकरी नगिनिया त दुख सुख पूंछइ।
जहंवा से आइव तुहुं रानी तहां चली जावहु,
रानी तुहंवा ज हम डसि लेबै हमहुं बांझिन होबै।
उहवां से चलिले बहुवा त बाबा द्वारे ठाढ़ी भई।
घरवा से निकरी महतरिया त दुख सुख पूंछई,
जहंवा से बेटी आइउ तहां चलि जावहु,
बेटी तुमका ज हम राखि लेबै बहुववा बांझिन होइहैं।
उहवां से चलली बहुववा त बृन्दावन ठाढ़ी भई
वट तर ठाढ़ नरायन त दुख सुख पूंछइ।
जहवां से रानी आइउ तहां चली जावहु
रानी आजु के नवये महिनवा होरिल तोरे होइहैं।
आठ मास नवम लागत होरिला जनम लिहे हो,
रामा बाजै लागी अनंद-बधैया उठन लागे सोहर।
सासु मोरी कहै लाग बहुववा ननंद भौजइया
जेकर बारी बियहवा रनियां गोहरावैं।

●

गंगा औ जमुनवा के बिचवा तेवइया एक तपु करै हो।
गंगा एक लहरि हमैं देतिउ मैं लहरि मा डूबि मरौं हो।
की तोहे सासु ससुर दुःख की रे नइहर दुख रे।
तेवई की तोरे हरि परदेस कवन दुख डूबहु रे।
ना मोरे सासु ससुर दुख नाहीं नैहर दूरि बसै हो।
माता! ना मोरे हरि परदेश कोखि दुःख डूबव हो।
जाहु रे तेवइया घर अपने लहरि नाहीं देबइ हो।
तेवइ आजु के नवयें महिनवा होरिल तोहरे होइहैं।
आठ मास नवम बीतत होरिला जनम लिहे हो।
रामा बाजे लागी अनंद बधैया उठन लागे सोहर हो।
गंगा गहबरि पियरी चढ़ौबै ललन भुइं लोटइं।

●

नंनद भउज मिलि केलि करैं बाबा की ओबरि बीच हो।
भौजी जौ तोरे होरिला जनमिहैं कंगन हम लेइहौं।
तोहरी वचन फुरि होइहैं ज ननद गोसाइन।

ननदी कंगना कै जोट पछेलिया बेसरि पहिरउबै।
पहिरि ओढ़ि ननदी ठाढ़ि भई सुरुज मनावइं।
सुरुज मनावत रहिली मनवइउ न पवेलीं
होत बिहान पह-फाटत होरिला जनम लीन्ह
बाजै लागी अनंद बधैया उठन लागे सोहर
भौजी पुरवा बिधाता हमार कंगन हम लेबै।
नंनद कंगना त हमरे भइया केर हमरे बपइया गढ़वावा
ननदी कंगना के जोट पछेलिया बेसिर नहिं देबै।

●

आई हैं ननदी ड्योढ़ि चढ़ि बैठी कगन मोरा मांगै हो धीरे-धीरे।
नाहीं तोरे मइया गढ़वावा न बाबा पहिरावा कंगन नहि देबै हो।
सभवा बैठे हैं भइया कवन रामा, बहिनि फिरियादैं हो धीरे-धीरे।
देहु न धनियां लोटा औ डोरी बनिज चला जाबै हम धीरे-धीरे।
कंगन लै अउबै धीरे-धीरे बहिन पहिरउबै हो धीरे-धीरे।
लेहु रे लेहु ननदी मोरा कंगना बहुरि मत आइउ हो धीरे-धीरे।
यहि रे होरिल के मुड़ने-बिआहे ननदी तू जिन चली आइउ धीरे-धीरे।
यहि रे होरिल के ब्याहे भौजी तिलरिया हम लेबै हो धीरे-धीरे।

●

अरे अरे नग्र के नउआ बेगिहि चलि आावहु
नउआ रगि रगि पीसउ हरदिया रोचन पहुंचावौ।
पहिल रोचन राजा दसरथ दुसर कोसिला रानी हो।
रामा तिसरा रोचन लछिमन देवरा रमैया न जनाएव, पपीवा नजनाएउ हो।
दसरथ दीना पटना कौसिला रानी अभरन हो
रामा लछिमन दीना आपन घोड़वा त नौवा बिदा कीने हो।
चारि चौखट कै पोखरवा त राम तदुइन करैं हो
भइया महर-महर करै माथ रोचन कहां पायो, हमहिं न जनायो हो।
हमरी त भौजी सितल रानी बसहिं अनंद बन हो।
भइया उनहीं के भये नंदलाल रोचन हम पायउं हो।
अरे अरे लछिमन भइया तु बड़ छल कीन्हेउ हमैंन जनाएउ हो।
भइया वहि तपसिनिया के नउआ हमहुं कुछ देइत हो।
राम जे चिठिया पठाया है दिहेउ सितल देई हाथ।
सीता बरह औगुन मोरा बकसहु अजोध्या पग-धारहु।
जिनि कोउ चिठिया का बांचै न बांचि कै सुनावै हो।
रामा बहुत सांसति कीन्हें राम मैं सपनेउं न देखउं।
जौ पूता जनमतेउ अजोधिया हमहुं मुंख देखित
राजा दशरथ पटना लुटौंते कौसिला रानी अमरन हो।
रामा तरर-तरर चुवै आंसू पटुकवन पोंछे हो।
तोहरा कहा गुरु करबै परग दुइ चलबै
गुरु अब न अजोधिया जाब औ बिधि न मिलावै।

●

एक साध मन उपजी जबै बिधि पूरवै
राजा हमरे नइहरे तक जात्यो पियरि लै अवतेउ।
तुम्हरा तो नइहर दूरि बसै कोसवन को चलै हो
धना! घरही मा हरदी बढ़ावो पियरि रंग पहिरौ।
राजा तुमरी तौ पियरी नितै करि नित उठि पहिरब हो।
राजा बिरना के पियरी सगुन केरि पहिल चउक कै हो।
बरहे बरिस जब लौटे मलिन घर उतरे
मालिन केहि घर बजत बधैया गवत सखि सोहर हो।
जौ मैं अस जनतेउं बहिन के लाल भएं हमरे भयने भए हो।
मालिन बेचतेउं मैं ढाल तरवरिया पियरि लै अवतेउं,
बहिन पहिरउतेउं सधिया पुरउतेउं।

●

अबहिं मोरे को सुनरा घर जाई।
बालम पूछै अपनी धना से काउ बहिन का चाही। अबहिं....
मोरे अंगनवा चन्दन एक बिरवा वहिमा डरायौं रेशम डोरी, अबहिं...
ननदी बंधयो ननदोइया बंधायों और ननद का भाई। अबहिं....
अतलस कै लंहगा बनारस कै चुनरी इहै ननद का चाही। अबहिं...

●

अरे अरे कारी कोइलिया अंगन मोरे बोलौ, तोरी बोलिया सुहावन।
कोइलरि आजु मोरे पहिल बिआह नेउत पहुंचावौ।
नेउतेउं मैं अरगन-परगन औ अजियाउर ननियाउर हो
सासू एक नहिं आये बीरन भैया मैं कैसे जियरा समुझावौं।
सासु भेंटहिं आपन भैया ननद आपन देवर हो।
सासु छतिया ज मोरी घहरानी मैं केहि उठि भेंटौं।
भभकि कै चढ़ी है अंटरिया खिरिकियन झांके हो।
ननदी जनु मोरे आवैं बिरन भैया, पगड़ि फहरावैं।
आगे आगे आवे घिउ गागरि पियरी गहबड़ि हो।
रामा लीले घोड़े भइया असवरवा त डंड़िया भउज चढ़ी हो।
दुआरे घोड़ा हिहिनाने पथर फहराने हो।
बहुवा भेंट लेहु भैया वेदनैता सगुन शुभ गावौ, चउक चढ़ि बैठो।

●

कुंअना जगत परा भुंजिया कै धन्हवा, चिरई कवन रामा भूंज हो।
अरे चिरई उनके बाबा, चिरई उनकै दादा, चिरई उनकै आजा भूंजहौ
तहवां कवन बरुआ मचली पसारे अरे लोटनी पसारैं
लेबै दादा बाबा मूंजे कै जनेउ अरे लेबै आजा मूंजे कै जनेव।
झारेनि-पोंछेनि जांघ बैठारेन देबै पूता सोने कै जनेव।
मूंजे कै जनेवना नाती कांधा छिल जइहैं देबै नाती सोने का जनेव।

●

माता तोय शोभा, दुर्गा जी तोरी शोभा खूब बनी।
माता के मांग सेनुर भल सोहे, बिसतिया बोलाय माता खूब बनी।
माता के गले गजरा भल सोहै, मलिनिया बोलाय माता खूब बनी।
माता की नाक नथुनि भल सोहै, सुनरा बुलाय माता खूब बनी।
माता की अंग चुनरी भल सोहै, रंगरेजवा बोलाय माता खूब बनी।

●

जादू टोना लगाव दुलहे के।
चलहु बुआ रानी मोरी अदरैतिन सुनरा के घर जाइय जी।
गढ़ सुनरा गढ़ सुनरा एकही तबीजिया एक मुहर तुम पाइय जी।
अरे पटेहेरवा बेटौना तबीज एक गाठौं, तुमहू मोहर एक देबै जी।
चलहु बुआ जी मोरी अदरैतिन सासुर के घर जाइय जी।
सासु के बेटौना बड़ा दुलवौरा इहै तबीज पहिनाइय जी।
जोग न जानउं जुगुति नहिं जानौं दुलहिन जोग सिखाइस जी।
द्वारे जात मोहि कागा जनाइसि मंड़ये म भंवरा बनायसि जी।
कोहबर[8] जात मोहिं बन्दरा बनायसि बहुतै नाच नचायसि जी।

●

पुरइन पात पै सोवैं गौरा रानी सपना देखै अजगूत।
केकरे देश बाबा बाजन बाजत केकरे होत बिआह।
राजा हिमंचल के बाजन बाजल शिव कै होइ बिआह।
आगे-आगे बिप्र बराभन टठिया अक्षत लिहे
लाल पवरिया ओढ़े बाबा गौरा देई कै करै दुआरे कै चार।

●

काहे को व्याही विदेश हो सुन बाबुल मोरे।
काहे के खातिर बाबुल हरदी कै बिरवा, काहे को हम धिया होंइ।
नाम की खातिर बाबुल हरदी कै बिरवा, धरम खातिर बेटी होउ।
बाबुल मैं तो तोरे आंगन की चिरैया भोर होत उड़ि जाब।
मइया के रोवबे छतिया फटत है, बाबुल खड़े पछितांय।
माया के रोवले गंगा बढ़ि अइली, बपई के रोवले न ओर।
भइया के रोवले चरन धोती भीजै, भौजी नयनवा न लोर।
बहिनि बिदा कैके लौटे त बैठे हैं मांथ नवाय मुंह लटकाय।
भरि कै पटेहरे मं गुड़िया भरी है को यह खेलै आय।

●

सुरुजु किरिन से निकरी हैं बेटी घाम देखे मुंह कुम्भिलाय।
कहहु त बेटी मोरी तंबुआ तनावौं, कहौ त छत्र कै छांह।
काहे का बाबा मोरे तंबुआ तनैहो, काहे का छत्र कै छांह।
होत बिहान चिरैया एक बोले लगिहौ सुनर वर के साथ।
एक बन गई है दुसर बन गई हैं तिसरे मा कोउ न हमार।

बाट कै चलत बटोही भइया हितवा हमर सनेस लिहे जाव।
हमरा सनेस जाइ बाबा से कहियो, भइया से कहियो
अम्मा से कहियो समुझाय।
कहा सुना बाबा सब माफ कीहो बटिया-बहोरेया हमारि।

●

कंहना से डिबिया मंगाइन सेनुर भराइन हो।
ए हो कहना से लागीं पिरितिया, पिरितिया मा जग मोंहे हो।
मिथिला से डिबिया मंगाइनि सेनुर भराइन हो
ए हो अवध से लागी पिरितिया, पिरितिया मा जग मोहे हो।
मंड़ये मा ठाढ़ि सितलरानी बहुत अरज करै हो।
ए हो कहां गई भौजी हमारि सेंदुर भल देवहिं हो।
भितरा से बोली सितलरानी सुना मोरी ननदी हो।
ननदी छिन एक घड़िया नेवारौ सेनुर मांग देहों हो।

●

सिय राम की जोड़ी अजब सोहे हो।
राम कौन तपस्या तुम कीन्ह्यो सितल सुन्दरि पायो।
बाबा तौ पूजेनि महादेव भैया गौरा रानी हो।
एक हो हमतो पूज्यों काली मैया सितल धना पायउं।
बिच बिच गोटवा लगायों चुनर भल सोभै
सीता कौन तपस्या तुम कीन रमैया बर पायो।
माघे नहायों मक्कर अगिन नहीं ताप्यों हो
ए हो बरत रहिउं इतवार रमैया बर पायों।
भूखी मैं रह्यों एकादशिया दुदसिया कै पारन हो
एहो दैवा मनायों गनेश रमैया बर पायों हो।

●

केकरि बंसिया बाजै गहागह कौन बिआहन जांय।
आजा की बंसिया बाजै गहागह, उनकै नाती बिआहन जांय।
लाली बरिछि कर घोड़ा साजा है देवी मैया अपनी बराति।
गांव के डिवहार साजउ साजउ करैं, संग सथिया के होइ।
सथिया त होइहै उनके दादा रामा जेकर पुतवा बिआहन जांय।
मड़ये मा भूलेहैं दुलहे रामा चलउ चलउ करैं
है रतनारी बदरिया उनए जिनि बरसउ।
छतवा बिन बाटें कवन रामा जेकर दुलरू बिआहन जांय।

●

परिछन करन चली है कवन देई हांथ सिंधौरा मुख पान।
की हम परछैं सिर कै मउरवा कि हम तिलक लिलार।
तू तौ चलेउ पूता गौरी बिआहन मोरे दुधवा कै माले कै देहु।

गैया भंइसिया मैया त उरिने नाहीं तोरे दुधवा उरिन कैसे होय।
हमतो खेउब तोहरी नैया हो मैया धना होइहैं दासी तोहार।

●

मंगल आरति साजि करहिं सब परछन हो।
आरति ले दुलहे आरति आरती संपूरन होय।
मुसरा ले दुलहे मुसरा संपूरन हो।
लोढ़वा ले दुलहे लोढ़वा संपूरन होय।
कलसा ले दुलहे कलसा संपूरन होय।
सुपवा ले दुलहे सुपवा संपूरन होय।

●

सोने के सिंहासन सिव बैठे, गौरा अरज करैं हो।
स्वामी हमरे सन्तति कै साध सन्तति हम लेबै हो।
भल बौरानिउ गौरा त केन बैरावा है हो।
गौरा पुरुब-जनम कर पाप सन्तति नहिं पाउबि हो।
चलहु न हे शिव गंगा त गंगा नहावै हो।
स्वामी गंगा मैया होइहै दयाल सन्तति हमैं देहैं हो।

●

चला देखि आई भोला कै लाल गली, चला देखि आई।
केऊ चढ़ावै अक्षत चन्नन केउ चढ़ावै सुन्नर चुनरी। चला....
राजा चढ़ावै अक्षत चन्नन, रानी चढ़ावैं सुन्नरि चुनरी। चला....
राजा चढ़ावैं फुलन कै हरवा, रानी चढ़ावैं घिउ-टिकरी। चला.....

●

गांयो मैं माता रे गांयो भवानी, गायों मैं सब देवथानि।
तुमरी सरन दाता मैं जगि रोपेउं मोरी जगि पूरन होय।
घिया गुर मैया मैं होम करइहौं मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न सितल रानी बैठो मोरे मड़ये मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न कालिका मैया बैठो मोरे मड़ये मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न भुइयां भवानी बैठो मोरे अंगना मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न दुर्गा महरानी बैठो मोरे मंड़ये मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न फूलमती मैया बैठो मोरे अंगना मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न सातौ बहिनी बैठो मोरे मंड़ये मोरी जगि पूरन होय।
घिउ गुर मैया मैं होम करौबै, मोरी जगि पूरन होय।
आवौ न सरग जे आजा बाबा चाचा दादा बैठो मोरे अंगना
    मोरी जगि पूरन होय।

●

देवी परसन्न भईं मोरे अंगना।
सोने की थारी मा जेवना बनायों देवी जेंवाय दीन्ह अपने अंगना।

सोने के गेडुआ गंगा जल पानी, देवी घूंटि गई मोरे अंगना।
पान पचीसी कै बिरवा लगावों, देवी कूंचि गई मोरे अंगना।
फूल चुनि चुनि सेज बिछायों, देवी सोय गई मोरे अंगना।

●

चला पूजि लेई शंकर का आजु लली,
चला देखि आई भोला कै लाल गली। चला.....
केहू चढ़ावै अक्षत चन्दन केहू चढ़ावै लाल चुनरी। चला.....
पिया तौ चढ़ावैं अक्षत चन्दन, प्यारी चढ़ावैं लाल चुनरी। चला....
पिया तौ चढ़ावैं फूलन कै गजरा, प्यारी चढ़ावै सोन मुंदरी। चला....
पिया त पावैं अन धन सोनवा, प्यारी पावैं अंखिया-पुतरी[3]। चला....

●

मोरे मन बसि जातेउ हनुमाना, मोरे मन....
केकर पूत केकर अहूया पायक केकर पाया बरदाना। मोरे मन....
अंजनि पूत राम कै अहूया पायक सीता मैया के पाया बरदाना। मोरे..
तुमरी सरन मैं आयो बीर बाबा हमरौ करा कल्याना। मोरे....
अनधन फुलवा तुहुंका चढ़ौबै हरि लेत्यो मोर अगियाना। मोरे....

●

नाग देवता कै होइगै धमारि आवा चली पूजा करी।
जे नाग देवता कै पूजा करिहैं उनकै फरिहैं लिलार। आवा....
अन धन सोनवा औ माल खजनवा से भरि जाये सब भण्डार। आवा.
लरिका-परिका औ खेती-बारी कै सबहिन कै पूर-रखवार। आवा...
इनकी पूजा ते सब सिधि होये, भूल्या ना कबहूं गंवार। आवा...

●

अपने करन नाग जंतवा पिसायें, तीनि लोक भिखिया मंगाये हो
मोरे नाग दुलरुवा।
जे मोरे नाग का गोहूं भीखि देइहैं बरह बैल कै दंवारि हो। मोरे...
जे मोरे नाग का चाउर भीखि देइहैं लाले लाले ललना खिलैहै हो।
जे मोरे नाग का कोदौं भीखि देइहैं बिटिया होवइहैं हो। मोरे....

●

पूजा करहिं श्रीराम कै सब सखि मंगल गावैं।
केकर बिन मोरी सूनी अजुध्या केकर बिन चौपारि।
केकर बिन मोरी सूनी रसोइयां घेरे बिपति हजारि।
राम बिना मोरी सूनी अजुध्या लछमन बिन चौपारि।
सीता बिना मोरी सूनी रसोइयां घेरे बिपति हजारि।
बड़ि-बड़ि बूंदन मेंहा बरीस्सै पवन चलै हरुवाई।
कौन बिरिछ तर भीजत होइहैं राम लखन दुनौ भाई।
भूख लगे भोजन कंह पइहैं पियास लगे कहां पानी।
नींद लगे डासन कहं पइहैं कांटा कुश गड़ि जाई।

●

काली भवानी कलकतवा कै रानी कहंरा कल से राख्यूना।
कलकतवा मा कंहार का तनि कल से राख्यू ना।
काली का चढ़ौबै राम करिया खंसियवा।
महरानी जी का ना चढ़ौबै हरदी कै धरिया, महरानी जी का ना।
काली का गावौं भवानी का गावौं अरे मरी का गावौं ना।
करिया-बभना का सुमिरि कै अरे मरी का गावौं ना।

●

काली मैया की आरती उतारौं, मैया के मंदिरवा मां आरती उतारौं।
कंचन थार कपूर की बाती, चउमुख दियना झलामल बारौं।
भेटौं मैं नरियर धुजा तिरंगा, कंवल कै हरवा गरे बिच डारौं।
काली मैया सिरजनहारी, मइया की भगतिया मा तन मन वारौं।

●

जौ हम होई सतवन्ती हो ना, मोरे अंचरा भभकि उठै अगिया हो ना।
हे मोर सुरुज हमार पति राखेउ, जो हम होई सतवन्ती हो ना।
जब बहिनी चली हैं गंगा किरियवा, तब गगरी गइली झुराइ हो राम।
जब बहिनी चली हैं सुरुज किरियवा, उवत सुरुज गये छिपाई हो राम।
जब बहिनी चली हैं अगिनि किरियवा, खौलत तेल जुड़ पनिया हो राम।

●

मचियइ बैठीं दुलहिन रानी पिया से अरज करैं हो।
पिया हमरे सन्तति कै साध सन्तति हम लेबै।
भल बौरानिउ रनिया तु भल बौरानिउ हो।
रनिया पुरुब जनम कर पाप सन्तति नहिं पउबै।
चलहु न हे पिया गंगा अरे गंगा नहाबै हो।
पिता पुरुब जनम कर पाप खण्डित कै अउबै।
नहाय धोय रनिया ठाढ़ी भई केसिया सुखावैं हो।
पिया छिन एक करव अराम निदरिया हमरे आवै हो।
सोइ के जागी रनियवा सपन एक देखै, सपन एक देखै हो।
पिया सपने कै करहु बिचार सपन एक देखेउं हो।
गइया त देखेउं घर बिच बभना पोथिया लिहे हो।
पिया कोछियां मा हरी हरी दूब त अमवा घबद लिहे हो।
दियना त देखेउं कलस पर गेडुंआ पैंततर हो।
पिया धनवां त देखेउं दुढारे त पनवा ढेपारे।
चुप रहु रनिया तु चुप रहु सपन बड़ सुन्दर हो।
रनिया आजु के नवयें महिनवा होरिल तोरे होइहैं।
त गंगा मैया भई है दयाल साध तोरी पुरिहैं।

●

कंहवई से माता आइउ औ कहंवा का जाब्यू हो।
माता कहंवा परी है भुलानि कहां तोरा नैहर हो।

परबत से माता आईं अजुधिया का जइहैं रे।
माता गांव मां परी हैं भुलाय जनकपुर नैहर रे।
अरे अरे नग्र के मलिया बेगेहि[5] चला आवौ रे।

●

मलिया बिचे बिचे बगिया लगावौ बिन्ध्याचल मइया बिरमैं।
अरे अरे नग्र के कहंरा बेगेहि चला आवौ रे।
कहंरा बिच बिच कलसा भरावहु मैया जल पियैं रे।
अरे अरे नग्र के बढ़ई बेगेहि चलि आवहु रे।
बढ़ई चनन कै पलंगा सलावहु त इंगुर ढरावहु रे।
अरे अरे नग्र के पटहेर बेगिहि चला आवौ रे।
पटवा काचे पाटे बिनो पलंगरिया रेसम उरदावन रे।
अरे नग्र के सोनरा बेगेहि चला आवौ रे।
सोनरा सोने रूपे घुंघरू लगावौ विन्ध्याचल मइया बैठें।

●

बड़ी बड़ी अंखिया पुतन कई कजरवा भल सोहे हो।
सखिया देति सुनरिया एक नारि अंगुरिया न डोलइ हो।
हंसि हंसि पूछे सखिया त सखिया सहेलरि हो।
सखिया कवन किहिउ ब्रतनेम होरिल बड़ सुन्दर हो।
भूखी मैं रहेउं एकादसिया दुदसिया कै पारन हो।
बहिनी सुरुज कै रहेंउ अइतवार[1] होरिल बड़ सुन्दर हो।
नदिया के तीरे तीरे तुलसी अरे तुलसी नहवायउं हो।
बहिनी भूखल बंभना जिवायउं होरिल बड़ सुन्दर हो।
बहिनी सासु कै पूजेउं चरनवा नंनद न टुकारेउं।
हुकुमवा मान्यो सामी कै होरिल बड़ सुन्दर हो।

●

भुंइया महरानी की जै बोलो।
साठी कै चाउर मैया कैसे चढ़ाऊं पंछिन दीना है जुठारी। भुंइया...
गइया कै दूध मैया कैसे चढ़ाऊं बछड़ा ने दीना जुठारी। भुंइया....
बाग कै फूल मैया कैसे चढ़ाऊं भंवरन दीना है जुठारी। भुंइया...
घिउ गुर मइया मैं होम करौबे भूलिउ न खबर हमारी। भुंइया...
दूध पूत मैया तुम्हरै दीन है सबकै करिउ रखवारी। भुंइया...

●

मांगों मांगों बरदान देवी के मंडिलवा मां।
अरे मांग्यो मैं हरी हरी चुरियां सेन्दुर भरि मांग। देवी...
अरे मांग्यों मैं सात-पांच भैया बहिन अकेलि। देवी...
अरे मांग्यों मैं सात-पांच देवरा ननद अकेलि। देवी....
अरे मांग्यों मैं सात-पांच लरिका तौ कन्या अकेलि। देवी...

●

पिया हो मोरे पिया तुमहीं मोरे पियवा।
पिया बिन रे सन्तति कुलहीन मैं जोगिन होइ जाबै।
पिया वहि रे बिन्दावन बीच में कुटिया रमैहौं जोगिन ह्वै जैहौं।
पिया जी रे आवैं सिरीराम मैं ओरहन देबै।
पिया केहू का दीन्हेनि दुई चार केहू का सात पांच हो।
रामा मोरे घर फेरवौ न कीन्ह त हमरी कवन गति हो।
रानी केहू का दीन्ह्यों दुइ चार त केहूं का सात पांच रे।
रानी तोरे घर फेरवां न कीन्ह त तुमरे करम-गुन रे[3]।
सासु के सेवा न कीन्ह ससुर गरियायो[4]।
रनिया जेठवा का बोली-ठोली बोल्यूं वही से राम रूठेन रे।
सासु कै सेवा में करिहौं ननंद दुलरैहौं रे।
रामा जेठवा का रचबै रसोइयां मैं दादा कहि बुलइहौं हो।
सब देवता मिलि मत करैं और सुमति करै हो।
ब्रह्मा तिरिया बहुत अकुलानी बलकु एक देत्यो हो।
जाउ न रनिया घर अपने त अपने सजन घर हो।
रनिया आजु के नवयें महिनवा होरिल तोरे ह्वैहैं।
आठ मास नौ लागत होरिला जनम लीन हो।
रामा बाजै लागी अनंद बधैया उठन लगे सोहर हो।

●

भरत जी कपि से उरिन हम नांही।
पैठि पताल तूरि जमकातर बैठि रहा मठ माहीं।
अहिरावन कै भुजा उखारिसि फेंकि दिहिस दलमाहीं।
सक्ती जबै लागि लछिमन के सोचु भये दलमाहीं।
धौलागिरि पर मूल संजीवनि लै आवा छनमाहीं। भरत जी....
सौ जोजन मरजाद सिन्धु कै लांघ गावा छिनमाहीं।
लंका जारि सिया सुधि लावा गरब नहीं मनमाहीं। भरतजी....

●

आरती गंगा मातु तुम्हारी।
भरि कै कमण्डलु भगीरथ लाये, सब देवतनि कै सीस चढ़ाये।
करि स्नान निर्मल भये मनुवो छूटि जात आवागमन कै तनवा।
सब तिरथन सोहैं मैया पटरानी नारद सारद सभै बखानी।

●

अरे अरे नग्र के नउवा बेगेहि चला आवहु रे।
नौवा झारि के गोतिन बोलावौ मैं गंगा पूजै जइहौं रे।
अरे अरे नग्र के बजजा बेगेहि चला आवहु रे।
बजजा सतरंग चुनरी रंगावौं मैं मैया पूजै जइहौं रे।
अरे अरे नग्र के डोमवां बेगेहि चला आवहु रे।
डोमवा[7] सात बाजन ले आवौ मैं गंगा पूजन जइहौं रे।

गंगा के किनारे एक गोरिया तौ गंगा मनावहि रे।
गंगा लेउ न अपनी लहरिया मैं चुनरी चढ़इहौं मैं पियरी चढ़इहौं रे।
जौ तुम चुनरी चढ़इहौं अरे पियरी चढ़इहौं रे।
रनिया सात बालक तोरे होइहैं तुमहिं सुख दैहैं रे।

●

महल ते निकरी तिरियवा आंगन बिच ठाढ़ी भई रे।
द्वारे ते आये देवरवा त कस भौजी अनमनि रे।
देवर हो मोरे देवर तुमहिं मोरे देवर हो।
देवरा तोरे भइया बोलत हैं बोल करेजै मोरे साले,
कबहुं नहि बिसरई हो।
भौजी हो मोरी भौजी तुमहिं मोरी भौजी हो।
भौजी उवत के सुरुज मनावौं ललन तोरे होइहैं।
आठ मास नौ लागत होरिला जनम लीन हो।
रामा बाजै लागै अनंद बधाव उठन लागे सोहर हो।
बलि तौ मैं जाऊं देवता सुरुज केरि अपनी करम केरि हो।
रामा वलि तो मैं अपने देवर की जै बुधि हमैं दीन्हीं।

●

देवता इन्दर मोरे भइया तौ बदरी बहिनियां हो।
बदरी, जाइ बरसौ वहि देस जहां पिया छाये हो।
देवता जाइ बरसौ वहि देस जहां पिया वेलमंइ हो।
बदरी तौ उठि बरसन लागी रजवा भीजन लागे हो।
राजा भीजत भीजत घर आये दुअरे पै ठाढ़े भये
बरोटे मां ठाढ़े भये हो।
लाओ न घिउ गुर चाउर बनवहुं जाउर हो।
देवता पूजा मैं करिहौं तोहार जनुक पिया आयल[5] हो।

●

पूजत गौरी गणेशहिं बहु बिधि पूजा बनाइ।
पहले तौ पूजै उनके बाबा रामा लड्डू मोरी थार भराय।
दुसरे त पूजै आजी कौसिला देई मोतियन मांग भराय।
तिसरे म पूजै माया कवन देई बहुबिध चौक पुराय।
चौथे म पूजै चाची कवन देई बहुविध बिंजन रचाय।
पंचये म पूजै बिटिया कवन रानी जेकरे मांग सेन्दुर दइ जाय।
छठये मा पूजै दुलहे कवन रामा गैया कै गोबरा मंगाय।

●

कालिका महरानी राखु गुसांइनि मैया।
जाप कीन्ह्यो थाप कीन्ह्यो दियना बार्‍यों घिउ का।
मुंडन माल करत सेवा पहिर निकरी कालिका।
मइया हिर झिर हिर झिर नदिया बहति है

तहना सातों बहिनी बइठि नहाय। मैया. कालिका......
कौन बाबा राम दुआर कौन चाचा राम दुआर रचा है बिआह।
ऊंचे कंगुरवा निहले दुअरवा हथिया झुकै दरवाज,
इहै बाबा राम दुआर इहै चाचा राम दुआर। मैया कालिका.....
घिउ गुर की मैया होम चढ़इहौं जगि करौ पूरन मैया कालिका।
सोने कै मौर धरि विअहौ दुलरुआ मैं जगि राखौं तोरि।

●

मैया लक्ष्मी की बलिहारी तुम्हरे आवन की बलिहारी।
मैया के हांथे बढ़नी सोहे सहस कलस सिर भारी। मैया आवन...
लाल घंघरिया मइया पियरी ओढ़निया वहिमा लागी किनारी। मैया...
सेतुआ राब कुंआरिन खावा बुढ़ियन खांड़ सोहारी।
बासी भात चहू अग पूजा ऊपर सिकरन भारी। मैया आवन...
लंगुरे नाव खेइ लइ आवौ बूड़त नाव हमारी।
धन सम्पति मैया हमका देओ हम हैं तोर भिखारी। मैया....
सात सुपारी मैया धुजा नारियल यह लेओ भेंट हमारी।

●

परसन होवहु सीतला माय मोर मन दरसन का।
नींबिया की छांह मैया बड़ी नीकी लागै बहै जुड़ली बयार। मोर...
बबुर[5] की छांह मैया अति नीकी[6] लागै जहां चुअत हेवारु। मोर...
मैया के गोड़े बिछुआ भल सोहै, वामें पायल की झंकार। मोर...
मैया के तन पियरी भल सोहै, गोद लालन की किलकार। मोर...
मैया मोरा भरौ भण्डार मोर लालन करैं किलकार। मोर....
घिउ गुर मैया होम लेओ मोरी लपसी पूड़ी की भरमार। मोर....

●

ऊठहु संकठा मैया मुंह हाथ धोवहु मुख मा खावहु बीरा पान।
कैसे कै जत्री मुंह हाथ धोवहु कैसे कै खावहु बीरा पान।
जन हमरे एक गाढ़ परा है तुरत उतारौं वोकै गाढ़।
काहेन की मैया नाव नवरिया काहेन की पंचडोरि।
कौन खेवैया मैया पार उतारै कौन का होय बेड़ापार।
अगरु चन्दन की नाव नवरिया रेशम की पंचडोरि।
धरमी धरमी पार उतरिगे पापी बहैं मझधार।
पापी औ धरमी बिनती करत हैं पापिउ लगावहु पार।
पापी औ धरमी पार उतरिगे जप तप होति तुम्हार।
पान सुपारी मैया धुजा नारियल यह लेओ भेंट हमारि।

●

गंगा महरानी सब सुख दानी यहि जग मा।
जोगिन ह्वै बन सेयों रे दाता यहि जग मा।
काहे के कारण जत्री यह बन सेयो काहे की आस लगायो। यहि...

दूधा के कारण मैया बन सेयो पूत की आस लगायो रे दाता।
महला दुमहला मैया मनही न भावे टुटी झोपड़िया मन लाग्यो।
साल दुसाल[1] मैया मनही न भावे फटही गुदरिया[2] मन लाग्यो रे दाता।
खांड़ चिरौंजी मैया मनहीं न भावे सूखी भंवरिया मन लाग्यो रे दाता।
दूध लै लोटिया पूत लै कनिया हंसत खेलत घर जावो रे जत्री, यहि...
सतरंग चुनरी और धुजा नारियल यहि लेओ भेंट हमारी रे दाता।

●

कीरति अजब अहै शीतला माय की।
देवी के पिछवारे बांझिनि पुकारे औ बिलखाय हो।
की बांझिनि तोरा अनधन थोरा की तोरा हरि परदेस हो।
ना मइया मोरा अनधन थोरा ना मोरे हरि परदेस हो।
मइके जाऊं रहन नहीं पाऊं ससुरे मां बांझ कहाऊं हो।
कह्हु त बांझिनि अंगुरी लगाय देओं कहौ ता गोद भरि देउं हो।
अंगुरी लगाये मैया मोल कहावैं गोदी के अपन कहावै हो।
दूध लेओ लुटिया पूत लेओ कनिया हंसत खेलत घर जाहु हो।
नवएं महीना बांझिन फल पावै, सबका देओ भाय हो।
बाजत आवे ढोल मंजीरा नाचत आवै वह बांझ हो।
जस परसन मैया बांझ बंझिनिया वैसे करौ सब कोय हो।

●

मोरी दुर्गा महरनिया पियवा कल से राख्यूना।
ऊंचे मंडिलवा बना देवी कै, लाल धुजा फहराय।
दीपक बारि धरेनि मठ भीतर तीन लोक उजियार। पियवा....
अंधरन आंखी मैया कोढ़िन काया बांझिनि लाल खेलाव।
जो कोउ ध्यावै सोई फल पावै रक्षा करौ दुर्गा माय। पियवा...

●

अरे अरे देवता सुरुज मनि बदर छिपि रहत्यो हो।
देवता सात बरस कै कवन रामा घामे कुम्हिलइहै हो।
देवता अक्षत चनन पूजा करबै अरघ नित देबै हो।
बाबा तौ उनके सबै जानै अति गुन आगर कि छत्र छवावैं हो।
आजी तौ उनकै दुलहिन देई अंचर मुख पोंछै हो।

●

इन्द्र घटा घन घोरि बरासन आयहु हो।
ओठियां से उठे राजा दसरथ दुनहू कर जोरहिं हो।
हाथ जोरि विनती करहिं सुनहु इन्द्र देवता हो।
देवता आजु दिवस जिन बरसहु मोरे घर राम कै जनेउ।
भितरा से निकरी कौसिला रानी दूनौं कर जोरहिं हो।
देवता आजु दिवस जिन बरसहु आजु मोरे पूता के बिआह।

भितरा से निकरे दुलहे रामा दुनो हाथ जोरहिं हो।
देवता आजु दिवस मत बरिसहु आज मोरा पहिल बिआह।
भितरा से निकरी दुलहिन देई इन्द्र मनावहिं हो।
देवता आजु दिवस मत बरिसहु मोरे सामी भीजहिं हो।

●

परबत परबत सिव बसैं परबत होत अनन्द।
परबत से उतरे महादेव दस गज नरियर हाथ।
तहवां से उतरी गौरा देई सोहाग डिबिया हाथ।
उहवां पे बैठे दुलहे राम सिव से अरज करैं हो।
उहवां पे बैठी दुलहिन रानी गौरा से अरज करैं हो।
देवता आजु मोरे पहिल बिआह सेनुरा अमर कइ देव हो।
देवता भांग धतुरवा कै भोगवा लगैहौं फूलन कै गजरा पहिरैहों हो।
घुमरि घुमरि सीता फुलवा चढ़ावैं शिव बाबा देइं असीस।
जौन मंगन तुहुं मांगौ सितल रानी उहै मंगन हम देब।
अनधन चाहै जो दिहा शिव बाबा सामी दिहा सिरीराम।
पार लगावैं जो मोरी नवरिया जेहि देखे हियरा जुड़ाय।

●

गलियन गलियन फिरहिं सितल रानी कोलियन पूछै बात।
केहि की दुलारी की जग्गि रची है जगि देखन हम जाब।
भितरा से निकरीं माया कवन देई देवी से अरज करैं हो।
देवी! आवहु बैठहु मोरे अंगना देउं सतरंगिया बिछाय।
तोहरी सरन दाता मैं जगि रोपेउ मोरी जगि पूरन होय।
घिउ गुर मैया होम करौबै मोरी जगि पूरन होय।
घिउ गुर जब तुहुं होम करैहौ दैहो सतरंगिया बिछाय।
सोने कै मौरु धरि बिअहउ अपन धेरिया बार न बांका जाय।

●

गज कै फन्द छुड़ाये कसत हरी।
गज औ ग्राह लड़ैं जल भीतर, गज बूड़न नहिं पायो। कसत हरी...
गज की टेर सुनी रघुनन्दन पांव पयादें धायो। कसत हरी...
सेवरी के बेर सुदामा के तन्दुल हंसि हंसि भोग लगायो। कसत हरी...
दुरजोधन घर मेवा त्यागे साग बिदुर घर खायो। कसत हरी...
खम्भ फोरि हरिनाकुस मार्‍यो नरसिंह नाम धरायो। कसत हरी...
तुलसीदास भजो भगवानहिं सीता बिअहिं घर लायो। कसत हरी...

●

अबहिँ मोरे को सोनरा घर जाई। अबहिं...
साठ लै आयउं पचीसौ न पायउं काउ दिहिउ भौजाई। अबहिं...
भइया पूछैं अपनी धना से काव बहिन का चाही। अबहिं...

अतलस कै लहंगा बनारस कै चुनरी इहै बहिन का चाही। अबहिं...
मोरे अंगनवा चन्दन एक रुखवा वोहि मा डरायो रेशम डोरी। अबहिं
भोर होन दे भोर होन दे भोरहि करौं मैं न्याई। अबहिं...
ननदा बंधायो ननदोइया बंधायों और ननद का भाई।अबहिं...
मोरे पिछवरवा बढ़इया बेटौना वहि से मुंगरा गढ़ाई। अबहिं...
ननदा का मारौं ननदोइया का मारौं और ननद तोर भाई। अबहिं...

●

अस्सी कोस मोरी ननदी आपुइ चली आवइ।
भौजी हनि लीना बजर केवार खिड़िकिया मा कील ठोकें हो।
एहि बतिया कै सोच नाहीं और बिरोग नाहीं।
भौजी तनियक पनिया पिअवतिउ लवटि घर जाइत।
कंहरा बेटौना देस गये और बिदेस गये
मोरी ननदी कुंवना परा हरताल लवटि घर जावहु।
एहिउ बतिया कै सोच नाहीं और बिरोग नाहीं।
भौजी तनियक भइया देखउतिउ लवटि घर जाइत।
भइया त तोहरे ससुरारी गये लरिकन के ननियउरे गये।
ननदी भइया का जनमा बेटौना भेंट घर जावहु।

●

पलंग जौ आये बिकाय पलंग अति सुन्दर।
मोरी सासू का देउ बोलाय पलंग वह लेहैं होरिल भुइयां सोवैं।
गरब की माती बहुरिया गरब मत बोलहु।
मांगि पठाओ अपने नैहर होरिलवा सोवावौ।
हंकरौ ना नग्र के नउआ बेगेहि चला आओ।
नउआ हमरे नइहरे तक जावो पलंग लै आवौ होरिल भुंइ सोवैं।
सभवा में बैठे कवन बाबा नौवा अरज करै।
साहेब धेरिया के भये नन्दलाल पलंग वोइ मांगें।
हरियर चनन कटायन पलंग बनायेन।
चारहु पावन ईंगुर ढरायन रेशन ओरदावन।
पलंग जो आई पलंग अति सुन्नरि।
मोरी सासू का देउ बोलाय पलंग वोइ देखइं।

●

(अ) कै मन कूटौं भइया कै मन पीसौं रे ना।
भइया कै मन रीन्हौं रसोइयां रे ना।
सासू पनिया पताल से भरावैं रे ना।
सासू खाची[1] भर बसना मंजावैं रे ना।
सासू भइया बपई गरियावैं रे ना।

(ब) ई दुःख जिनि कह्या भइया मैया के अगवा रे ना।

ई दुःख जिनि कह्या भइया बपई के अगवा रे ना।
भइया भंदई गंगा थहइहैं रे ना।
भइया माया बिरोगे मरि जैहैं रे ना।
ई दुःख जिनि कह्या भइया भौजी औ चाची के अगवा रे ना।
भइया सुनि सुनि हंसिहैं सब लोगवा रे ना।
ई दुःख कह्या भइया उनहीं पंडित के अगवा रे ना।
भइया जिन मोरी शदिया करावैं रे ना।
भइया जिन मोरी जवानी माटी कइलेन रे ना।

●

उठत रेख मसि भीजत पियवा विदेस गये हो।
मोरी बरहा बरिस कै उमिरिया उमिरि कैसे बितिहैं हो।
काव[6] पिया तोहरे घर रहे काव विदेस गये हो।
पिया हंसि कै धरेउ न कबहूं अंचरवा न कबहूं कोहानेउ हो।
कारी चुनरि नांही पहिरेउ पियरि नाहीं छोरेउं हो।
पियवा गोदिया न लीन्हेंउं बलकवा छठिया नाहीं पूजेउं।
छोड़ि जाबै घर भर सोनवा महलि भर रुपवा हो।
पियवा छोड़ जाबै लहुरा देवरवा तोहरेन संग रहबै।

●

राजा काहे तोर देहिया दुबरायल त मुंहवा उदासल
हमैं तो बतावहु ना।
राजा सासु ननद कुछ कहेलीं कि केहू कुछ अनबन हो।
रानी मइया बहिन ना कुछ कहेली नाहीं केहू से अनबन हो।
रानी मोगल बजजवा कै रुपया त उहै मोसे मांगै हो।
एतनी बचन सुनि रनिया त सुनइव न पाइन हो।
रनिया अंगवा[13] का गहना उतारि पेटरिया काढ़ि फैंके हो।
राजा दै देउ मोगल बजजवा बिहंसि अब बोलहु ना।
राजा गहना कपड़ा नहिं साध न एकौ मोहीं भावै ना।
राजा तुहीं जब रहिव्या हरिअर त गहनै बिना सोभव हो।
राजा तुही त मोर गहनवा तुही मोरा जियरा हो।

●

काली मैया के दुआरे बड़ी भीड़, दुआरे बड़ी भीड़ भवन कैसे लीपा जाय।
मैया के दुआरे एक अंधरो पुकारै देउ नयन घर जायं। भवन...
मैया के दुआरे एक कोढ़ी पुकारे, देउ काया घर जाउं। भवन...
मैया के दुआरे एक बांझ पुकारे, गोदिया भरौ घर जाउं। भवन...
मैया के दुआरे एक तिरिया पुकारे, स्वामी देउ घर जाउं। भवन...
जो जस ध्यावै मैया तस फल पावै, बिमुख न कोउ जाय। भवन...

●

अल्हर चनना कटायेनि पलंगा बनायेन हो।
मचवन ईंगुर ढरायन रेशन ओरदावन हो।
तेहि पर सूंतहि कवन रामा कोरवा कवन देई हो।
चेरिया त बेनिया डोलावैं नींद भलि आवइ हो।
पियवा वारे ललन कै झंगुलिया पसनिया सिआवउ हो।
कहंवा कै दरजी बोलैहो तो कहंवा कै सुइया हो।
कैसे के बन्द लगइहौ ललन पहिरैहो हो।
आगरे कै दरजी मंगइहौं पटने कै सुइया हो।
रानी बत्तीस बन्द दगइहौं ललन पहिरइहौं हो।
हाथन सोने कै खेलौना पायन पैंजनिया हो।
लालन मोरा खेलिहैं बरोठवा दुनौ जन देखब हो।

●

मोरे पिछवरवा जम्हिरिया त लहर लहर करै महर महर करै हो।
ओके छहर छहर करै वास जम्हिरिया सुहावन हो।
कटैहों मैं बिरिछ जम्हिरिया त पलंगा सलैहौं।
पिया सोइ पलंग हम सोउबै त तोहरेनि कोरवा[7] हो।

●

टटिया के ओलते दुलहिनि रानी उनुकि ठुनुकि बोलै हो।
राजा हमरे तिलरिया कै साध तिलरी हम लेबै।
एक तौ कारी कोयलिया दुसरे छछुन्दरि हो।
रानी तोहरे तिलरिया कै साध तिलरि नाहीं सोहै।
एतनी बचन सुनली रनिया त जियरा बिरोग भरी हो।
रनिया जाय बैठीं गजओबरि बोलाये नाहीं बोलैं।

●

धनि धनि रे पुरुष तोरी भाग कर्कशा नारि मिली।
सात घरी दिन सोय के जागी लिहिन बढ़निया उठाय।
निहुरे निहुरे अंगना बटोरइ घर भर का गरियाय। कर्कशा....
बिरवा पर से कौवा रोवे पाहुना आये तीन।
आवा पाहुन घर मा बैठा कन्डा मैं लाऊं बीन।
हंडिया भरि के अदहन दिहिले चाउर मेरवलीं तीन।
कठवत भरि कै मांड़ परोसें पिया हिलोरि हिलोरि। कर्कशा...
सात सेरे कै सात पकाई नौ सेरे कै एक
ये दहिजरऊ सातौ खाये मैं कुलवन्ती एक। कर्कशा...
डेहरी बैठे तेल लगावैं सुंदुर भरावैं मांग
अंचरा पसारि कै सुरुज मनावैं कब होबैं मैं रांड़। कर्कशा...

●

पनवा कतरि कतरि भाजी बनावउ लौंगा दिहौ धोंगारि।
अच्छे-अच्छे जेवना बनावौं मोरी कामिनी हमहूं जाबै गंगा नहाय।

केका तू सौंपेउ अनधन सोनवा केका नौरंग बाग।
केका तू सौंप्या हम अस धनिया तू चल्या गंगा नहाय।
बाबा का सौंपेउ अनधन सोनवा मइया का नौरंग बाग।
माया का सौंपेउ तुहैं अस धनिया हम चले गंगा नहाय।
घर ही में कुंइया खनावौ मोरे सइयां घरही मां गंगा नहाव।
मैया बपैया कै धोतिया पखारहु वोनहीं है गंगा तोहारि।
इहैं हय धरम तोहार।।

●

धरती मैया सदा बरदानी हरियर तोरा अंचरवा हो राम।
तोहरी ही कोखिया मां ठाढ़े बिरिछ बन
तोहरी ही गोदिया मां खेत खरिहान।
नदिया कै पानी मैया लहर लहर करै बहै जुड़ली बयार।
लहलह लहक्यो मैया कबहुं न हरक्यो अनधन पूरन होय।
भुइया है माता भुइंया पिता है भुइंयै उगावै सब अन्न।
भुइयैं जीवन है भुइंयै परान है भुइंयै कै पूजा सम्भार।
सिर सोहै मलमल की पगिया मौरा की छबि छाई।
माथे सोहै मलयागिरि चन्दन सुरमा अजब बनाई।
अंग सोहै खासै कै जोड़ा नीमा की छबि भाई।
फाड़े सोहै गुजराती फेंटा, पायन में सकलाती जूता।

●

हमका तौ गहना कै साध सजन गहना हम तो लेबै।
ककना तोरे ढाके कै मंगावौं ऊपर पहुंची यों बनी।
राजा छल्ला मुंदरिया यो बनै, हथफूल गलफूल यों बने।
राजा छन्नी पछेला यों बने, राजा ढार औ कटिया यों बने।
राजा झुकका औ वारी यों बने, राजा माथें की बेंदी यों बनी।
राजा नेकलेस हरवा यों बने, राजा कमर की पेटी यों बनी।
राजा पैर की छागल यों बनी, राजा झांझ औ लच्छा यों बने।
राजा कड़ा औ छड़ा यों बने, राजा पांव कै बिछुवा यों बने।

●

धै देत्यो राम हमारे मन धिरजा। धै देत्यो....
सबकी महलिया राम दियना बरत हैं हरि लेत्यो हमरो अंधेर। धै...
सबकी महलिया राम जेवना बनत हैं हरि लेत्यो हमरो भूख। धै...
सबकी महलिया राम सेजिया बिछत है हरि लेत्यो हमरो नींद। धै...
सबकी महलिया राम गेंडुवा घुटत है हरि लेत्यो हमरो पिआस। धै...

●

भुखिया न लागै पिअसिया न लागै, हमके मोहिया लागै हो।
पुरुब से आई रेलिया पछिम से जहजिया पिया का लादि लै गइली हो।
रेलिया होइगै मोर सवतिया पिया का लादि लै गइली हो।
रेलिया न बैरी जहजिया न बैरी उहै पइसवा बैरी हो,

देसवा देसवा भरमावै उहै पइसवा बैरी हो।
सेर भर गोहुआ बरिस दिन खाबै पिया का जाइ न देबै हो।
रखबै अंखिया के समनवा पिया का जाइ न देबै हो।

●

सुखिया औ दुखिया दुइनौ बहिनिया रे ना।
रामा दुइनौ बधावा लैके आईं रे ना।
रामा सुखिया लै आई गोड़हरा रे ना।
रामा दुखिया त दुबिया कै पैड़ा रे ना।
रामा सुखिया का कोंछ भरि मोतिया रे ना।
रामा सैंया चढ़न को हांसुल घोड़वा रे ना।
रामा दुखिया का कोंछ भरि कोदौ रे ना।
रामा दुखिया दुखित होइ गइली रे ना।
रामा गउवा त नघही न पइली रे ना।
रामा दुबिया झरन लागी मोतिया रे ना।
रामा कोठवा से भवजी पुकारै रे ना।
रामा रुठली ननदिया घर बोलावौ रे ना।

●

कंहवा तुलसी कै नइहर कहंवा सासुर हो।
रामा कंहवइ तुलसी जनमी त के जरि रोवहि हो।
बिरिदावने तुलसी कै नइहर गोकुला मा सासुर हो।
रामा मथुरा मा तुलसी जनम लिहीं, तिरियवा जरि रोवहि हो।
की तिरिया तोरा अनधन थोरा की तोरा पति परदेस हो।
तिरिया की तोर सासु गरियवली, त काहे का रोवहु।
नाही मोर सासु गरियवलीं नाही मोरा हरि परदेस हो।
तुलसा बिन रे सन्तति कुलहीन त याही वारे[3] रोवहुं हो।
जाहु तिरियवा घर अपने त दुःख तोरा कटिहौं हो।
तिरिया आजु के नवयें महिनवा होरिल तोरे ह्वैहें हो।
तुलसा जो मोरे होरिला जनमिहैं मैं पूजा तोहरी करिहउं हो।
मैया कातिकहिं व्रत नेम करिहौं त दियना जलइहौं हो।

●

कौन गोरिया उठली रतिया बिरतिया कौन पियवा उठे भिनसार[5]।
अरे दुनो जने मिलिजुलि मत करैं अवरु सुमति करैं हो।
पियवा आजु शिव जी कै शिवराति त बेलपतवा लै आवहु हो।
पियवा अक्षत चनन बैरी फलवा त उखिया के गेंड़ी हो।
पियवा दूनो जनै आजु शिव पूजहुं त शिव होइहैं परसन हो।
पियवा हमका ज देहैं बरदान तबै सन्तति पइहौं हो।
नहाइ धोइ शिव पूजन लागीं पुजइव न पावाहिं हो।
रामा शिव बाबा दिहें बरदान त पूजेहें मनोरथ हो।

●

अंगना बहारि दुअरा घुरवा लगवली हो।
रामा जामि[3] गइली अमवा कै गछिया त गछिया सुहावन हो।
जब अमवा बरिस कर भइले मोरा ससुरु ने भेजा टीवा हो।
रामा बाबा से धेरिया अरज करै और सुमति करै हो।
बाबा कुछ दिन फिर देहु टेवना त अमवा गछिया हुलसइ हो।
अब अमवा पांच बरिस कै भइले त बौरे सुहावन हो।
बाबा कछु दिन फेरहु टिकवा त आम फल खइहौं हो।
बाबा नन्हही से सीच्यों सेयो अमवा त अमवा मोर जियरा हो।
फुलवा लोढ़न हम जाब मोरी सखिया बुढ़उ कै किहिउ रखवारि।
फुलवा लोढ़िय लोढ़ी भरेलीं चंगेलिया त शिवजी का दिहली चढ़ाय।
फुलवा चढ़ावत भोला परसन भइलें कि गोरिया का दिहले अशीश।
अगिले जनमवा बाबा बुढ़वा न दीहा छोटका सजन हमैं देहु।

●

जाने कब होइहै दरसनवा हो मोरे सामसुनर के।
सपने मा रखली भवनवा हो अपने सामसुनर के।
नाहीं जाने कौने करनवा हो कान्हा हमरा कै तजिकै।
कुबजा से नेहिया लगउले हो कान्हा हमरा के तजि के।
आधी रात बोलत पपिहरा हो मोरा जियरा बेधि के।
नयना से झरे मोरे निरिया[14] हो सुमिरि सामसुनर के।

●

पवन तनय आजु होरी मचाई लंका में।
सागर लांघि गयो लंका में तरुपर रह्यो छिपाई।
ब्याकुल देखि सिया माता को मुंदरी दीन्ह गिराई।

सिया सुधि लाइ राम को दीनी तेज बरनि न जाई। आजु.....
जो कोई सुमिरै सोइ फल पावै हनुमत सब की दुहाई।[1] आजु....

●

हनुमान बाबा तुहीं त मोरे मनभावई।
लाल लंगूर को का छबि बरनौ तेज फुलेल लगाई।
एक हाथे बज्र दुसरे धवलागिरि शोभ बरनि न जाई।
केकर पुत्र केकर अहृया पायक केकरे अहा तू दोहाई।
अंजनीपूत राम का पायक लछिमन की हो दोहाई। हनुमान....
हमरेव काजे परोजने देवता करत रहृया हो सहाई। हनुमान....

●

अरे पुरुब से सुमिरौं उगल सुरुजवा पछिमें चंदरमा कै जोति।
अरे उत्तर से सुमिरौं उत्तर देवतवा दखिन के बीर हनुमान।
अरे पुरुब के समिरौं सगरे देवतवा चलि भइलीं कमरु के देस।

अरे होम करेयो जाप कर्‌यो धुववां चला है अकास।
अरे लेहु लेहु देवी-देवता धुंअना कै बसिया नैया लगायेहु पार।
अरे केकरे अंगना अमवा महुअवा केकरि अंगनवा नीमियां गाछि।
कहना ज फूलहि अड़हुल फुलवा त के मोरि जोहइ बाटि।
अरे मलिया अंगनवा अमवा महुअवा सेवका अंगनवा निमिया गाछि।
अरे बगिया में फैले अड़हुल फुलवा सेवका जोहहिं जे तोरी बाटि।

●

कौन फुलवा फूलहिं अधिरतिया त कौने फूले रथ साजे हो।
मइया कौन फूले रहिउ लोभाइ, सेवक बाट जोहइ हो।
अड़हुल फूल फूले अधिरतिया त चम्पा फूले रथ साजे हो।
सेवका वेला फूले रहिउं लोभाई, त सेवका मोरी रथ साजे हो।
अरे अरे सुगना मलियवा जाहु सुगना कमरु के देस।
अरे रूठल देबिया मनाइ लै आवहु सेवका का बिपति हजार।

●

आई बरगदही बरगद पुजावै।
काचे ही सूत का हरदी रंगावौ, बट बाबा कै फेरी लगावहुं।
एक फेरा मांगौ बाबा मांग कै सेन्दुरा दूजै से चुरिया भरि बांह।
तीजे से मांगौ बाबा लाली चुनरिया चौथे मा बिछिया जड़ाव।
पंचये से मांगौ बाबा गोदी बलकवा दूध-पूत कोखि जुड़ाव।
छठये मा बाढ़ै बाबा नइहर सासुर सतउं मा बाढ़ै सुहाग।

●

अरे अरे डिवहार बाबा बेगेहि चला आवहु हो।
बाबा सेवका कै राखहु मान, कहा मोर मानहु हो।
बाबा आजु के दिन देखहु डिहवा त होहु होसयार हो।
बाबा होम जाप पूजा मैं करिहौं शरबिया चढ़इहौं हो।
बाबा जैहौं मैं बिअहन दुलरुवा[2] जागत तनी रहियो हो।

●

कब मिलिहौ रघुनाथ हमारे कब मिलिहौ भगवान हमारे।
जैसे मिल्या प्रभु द्रुपद सुता को खैंचत चीर दुसासन हारे।
जैसे मिल्या प्रभु प्रह्लाद भगत को खंभ फोरि हरिनाकुश मार्‌यो।
जैसे मिल्या प्रभु सबरी चेरी को जूठे बैरि खाय सब डारे। कब....

●

राम भजौ भाई मनुष तन पाइकै।
ई मन बनिया हाट लगावै हीरा मोती बिकाई। राम भजो....
पाप पुन्नि दुइ पलरा बाटे, त्रिभुवन तनवा लगाई।
पांच पचीस दुइ मास बनतवा, दया धरम तन लाई।
तुलसीदास प्रभु आस चरन की, हरि कै चरन चित लाई।

●

कौन रंग मुंगवा कवन रंग मोतिया कौन रंग ना?
सिया दुलही के दुलहा कौन रंग ना?
लाल रंग मुंगवा सफेद रंग मोतिया सांवर रंग ना,
सिया दुलही के दुलहा सांवर रंग ना।
कहां सोहै मुंगवा कहां सोहे मोतिया कहां सोहै ना,
सिया दुलही कै दुलहा कहां सोहै ना?
मांगा सोहै मुंगवा मौर सोहै मोतिया, पलंग सोहै ना,
सिया दुलही के दुलहा पलंग सोहै ना।
छिटि जइहै मोतिया बिखरि जइहैं मुंगवा रिसाई[1] जइहैं ना,
सिया दुलही के दुलहा रिसाइ जैहैं ना।
बिनि लेबै मुंगवा बटोरि लेबै मोतिया मनाइ लेबै ना,
सिया दुलही कै दुलहा मनाइ लेबै ना।

●

कारे बदन लिहे खप्पर हांथ मा, कालिका के भवन कहां।
मैया के गले मुंडमाल भल सोहे, तीखे हैं दांत हंहा। कालिका...
मैया के पांव तर लोथिया भल सोहै, मुरदन के बास कहां। कालिका..
मैया के हांथ तीर तरवरिया खप्पर रकत से भरा। कालिका...
मैया के जिभिया अति नीकी लागै नगन है देहिया हंहा। कालिका...
जो तुम्हें पूजै मैया डर नाहीं दूजै, बैरी न दुस्मन तहां। कालिका...
तिरिया लाई फुलन कर हार - हो मैया कालिका।
हारु पहिनि मैया नाचन लागी, मोहे सकल देवथानि। हो मैया...
मांगै का होय जो मांगौ रे तिरिया जो तेरे हियरे समाय। हो मैया...

अनु-धनु मैया सब तुम्हरो दियो है पियवा अमर कइ देव। हो मैया..
पान सुपारी औ धुजा नारियल यह लेउ भेंट हमारी। हो मैया...

●

लक्ष्मी मैया दयालु भई आजु यहि बेरिया मा।
मैया के हांथे चंदन कर खोरिया मोरे अंगना मा छिटिकि गई। आजु..
मैया के हाथे फूलन भरी डलिया फूला बिखेरि गईं। आजु...
मैया के हाथे अनधन सोनवा मोर बिपति नेवारि गईं। आजु....
मैया के कोंछे सुन्दर बलकवा मोरे अंगना किलकारि भई। आजु....

●

का बरनौं वहि गेगांसा कै घाट का जहां वास करैं संकट हरनी।
अगल बगल महादेव बिराजैं, बीच संकठा हैं जलनी।
अंधेरेन आंखी मैया कोढ़िनि काया, बांझिनीं बलका दिहिउ जलनी।
घिउ गुर फूल लेउ मोरी मैया, हमहूं का राखि लेउ जलनी।

●

अवसान मैया तुंहसे उरिन हम नाहीं।
तोहरे दीन मैया हमरा ललनवा, तोहरिन बहुआ पिआरि। अवसान...
तोहरे दीना मैया अनधन सोनवा, तोहरे दीन पियवा हमार। अव...
भूल चूक सब माफ किहियु मैया, हम अही तिरिया गंवारि। अव...
हमरे सजन कै बाढ़ै उमिरिया, करबै हम पूजा तोहारि। अवसान....

●

धरती मैया के अंचरवा सोना मोती झरै हो। धरती मैया....
धरती मैया बड़ी बरदानी सब देउतन कै रानी,
मैया तोहरिन पूजौ सेंवरिया सेवरिया मा जग मोहै हो।
मैया लहलह करै फसलिया त फसलियै तोरा जिव हो।
मैया अन धन से भरौ मोर बखरिया मैं पुजिहौं तोहे दिन रतिया हो।
मैया जुग जुग जियें मोरा पियवा, बइल कै जोड़ी हो।

●

अरे अरे गोड़वा खरउवां सुरुजु देव तिलका लिलार।
अरे हंथवा मा सुबरन संटिया सुरुजु देव अरघ देवउत्यहु हो।
मइया के कोरवा मां सुतले सुरुजु देव मोरा होइ गयउ बिहान हो।
अरे हाली हाली उगत्यु सुरुजु देवता अरघ देवावहु हो।
फल फूल लिहले मालिनि घेरिया सुरुजु देव का बिनवइ हो।
अरे हाली हाली उगत्यु सुरुजु देवता अरघ दियावहु हो।
दूध-घिउ लिहले गोलिनि घेरिया सुरुजु देव का बिनवइ हो।
अरे हाली हाली उगत्यु सुरुजु देवता अरघ देवत्या हो।
धूप जल लिहले बंभन घेरिया सुरुजु देव का बिनवइं हो।
अरे हाली हाली उगत्यु सुरुजु देवता अरघ देवउत्या हो।
गोड़वा दुखत मोरा अंग अंग फाटत कब से अहउं हम ठाढ़ हो।
अरे हाली हाली उगत्यु सुरुजु देवता अरघ देवउत्या हो।

●

गोड़वा खरउंवा सुरुज देवता कै त हंथवा लिहे सुब्रन सांटी।
कन्धवा जनेउवा सुरुज के सोहै, चन्दा सोहे लिलार हो।
सब ही तिरियवा देवता छेंकली दुअरवा, त सबका दिहूयो बरदान।
देवता हमरी ओर फेरवौ न कीन त कौनी करम गति हो।
छोड़ु छोड़ु तिरिया हमरी दुअरिया कौने गुन छेंकलिउ दुआर।
सासु मोरी बोली बोले त ननंद गरियावै हो।
देवता जेकर बारी बिआही वे घर से निकारैं हो।
जाहु रे तिरियवा घर अपने तोहिं केहू न बोलिहि हो।
तिरिया अगिले कतिकवा लालन होइहैं कोखिया जुड़वइहैं हो।

●

गेहुंआ बेसाह्यों बजरिया त घिउना परोसिन घरे हो।
देवता गमकिल बनायों जेवनार त कौने गुन रूठ्यो हो।

मोरे सुरुजा कौने गुन अरधि न लेहु ससुर बोली बोलै।
देवता बंझिनी के हांथे कै पकवनिया छुतिहा जानौं मान्यौ।
जानौ अरघ कै जल रहा जुठइल त घिउना परोसिन केर हो।
देवता हम पर होहु दयाल सेजरिया साजन बिलसइं हो।

●

कोंछवा अछत लिहे हंथवा मा फूल लिहे त गेडुववा जुड़ पानी।
रामा तिरिया खड़ी एक बिनवै त अदित मनावै।
देवता हम पर होहु दयाल सेजरियौ मोरी सूनी त कोखियौ मोरी सूनी।
देवता एक सन्तति बिना एक रे बलक बिना हो।
देवता थोर न लेहइौं बहुत नाहीं मंगिहौं हो।
देवता पांचहिं पुतर एक कन्या हमारे घरे हुलसइं हो।

●

सुरुज बाबा लेहु न अरघ हमार हमार पति राखहु हो।
सोने कै गेड्डुवा गंगा जल पानी अक्षत बिरिया हार।
हाथ जोरि तोहरी बिनती करहुं बाबा देहु न अपन उजियार।
नहाय धोय ननदी ठाढ़ी भईं सुरुज मनावैं लागीं।
मोरे सुरुज हम पर होहु दयाल कंगन हम पाउब।
सुरुज मनावत ज रहिली मनवइय न पवलीं ललन भुंइ लोटइं।
लट' खोले नाचै ननदिया कंगन भौजी लेबै होरिल का खेलौबे।

●

अमिली कै पेड़वा सुरुहुर अवरि कि ढुरहुर हो।
रामा तेहिं पर ठाढ़ी कवन देई दैवा मनावइं कि इन्द्रका मनावैं।
जनि दैवा अर्जहु जनि दैवा गरजहु औ जनि आजु बरसहु हो।
दैवा आवत होइहैं मोर सामी झिनिहिं बुंनिया भिजिहैं।
दैवा अक्षत चनन फूल हरवा त पूजा तोहरी करिहउं तोार जस गइहउं।

●

चनन कै बिरछा हरेर तौ देखतै सुहावन।
रामा तेहि तर ठाढ़ि कवन देई दैवा मनावइं।
दैवा सामी मोरा गयउ परदेश जियरा विरोग भरे।
दैवा एक रे सन्तति बिना एक रे बलम बिना रे।
दैवा हमरा जौ मिलै नंदलाल सजन मोरा अवतेन।
दैवा हमरौ दिना बहुरउत्या त बिपतिया हटउत्या।
दैवा पूरी पकवान मिठाइन कै भोगवा लगउतेंउ पूजा तोहरी करतेउं।

●

पिपरा कै पेड़वा हरियर तौ पतवन झालरि लागी हो।
रामा तेहि तर ठाढ़ दुलहे रामा बदरिया मनावे त दैवा मनावइं।
जनि दैवा गरजौ घुमरौ औ जिनि तुम बरसहु।
दैवा भीजैं मोरा बाबा उमराव त हमरेहि कारन।

दैवा भीजै मोरा काका उमराव त हमरेहि कारन।
दैवा भीजै मोरा बपई उमराव पतोहिये के कारन।
दैवा बिअहि कै लउटब दुलहिनिया त पूजा करवइबइ।

●

मोरे मन बसि जातेउ हनुमाना, मोरे मन...
केकर पूत केकर अहूया पायक केकर केहूया तू सहाया। मोरे...
अंजनी कै पूत राम कै पायक, सीता कै केहूया हो सहाया। मोरे...
वाटिका उजारि सगर फल खाया सीतौ कै सुधि लै आया। मोरे...
लंका जराइ निसाचर मारूया लछिमन का फिरि से जियाया। मोरे...
अक्षत चनन देवता लड्डुआ चढ़ौबे हमरौ किहूया हो सहाया। मोरे...

●

काली औ हनुमाना भजौ रे भइया।
कहा रहै काली औ कहां हनुमाना। भजौ रे भइया।
कलकतवा की तौ काली माई अवधपुरी हनुमाना। भजौ रे भइया
काव खांय काली औ काव हनुमाना। भजौ रे भइया
पान बतासा खाइं काली देवी लड्डू खांइ हनुमाना। भजौ रे भइया
काव हिले काली औ काव हनुमाना। भजौ रे भइया
खप्पर लिहे काली औ गदा लिहे हनुमाना। भजौ रे भइया

●

राम नहिं जाने तौ और जाने से का भा?
फूल तौ उहै जौन राम जी को सोहै
नाहीं तौ बेला लगाये से का भा?
कपड़ा उहै जौन राम जी को सोहै
नाहीं गुलाबी रंगाये से का भा?
जिभिया उहै जौन राम नाम जपै
नाहीं देहिया धराये से का भा?
अंखिया उहै जौन राम जी का देखै
नाहीं तो मानुष तन पाये से का भा?
बेटवा वई जौन गया कई आवै
और कुपन्थी के जनमें से का भा?

●

रामहिं राम रटन लागी जिभिया। रामहिं...
गोड़वा कहे हम तीरथ करबै, हंथवा कहै हम करबै दान। रामहिं...
अंखिया कहै हम दरसन करबै, कनवा कहे हम सुनबै पुरान। रामहिं.
जिभिया कहै हम राम राम रटबै, मनवा कहै हम धरबै धियान। रामहिं

●

चन्दन कै गछिया अति हरियर त देखतै सुहावन हो।
हेइहो केहि घर बाजत बधैया त केहि घर सोहर हो।

हेइहो केहिकर मतवा बेहाल त बपई दुःख बेलपई हो।
नन्द घर बजत बधैया जसोदा घर सोहर हो।
हेइहौ देवकी मैया परी हैं बेहाल त बपई दुःख बेलपइं हो।
जिन रोवहु मैया तु जिनि रोवहु नाहीं तुम अनमनि हो।
मैया कंस बधन हम करिहौं दुखिया नेवजइहौं हो।

●

ये रतनारे होरिलवा चैत जिनि जनमेउ
सब सखि पुजिहैं दुर्गा मैया त हम कइसे पूजब।
ये रतनारे होरिललवा सावन जिनि जनमेउ
सब सखि पूजिहैं नाग-देवता त हम कइसेन पूजब।
ये रतनारे होरिलवा कुआर जिनि जनमेउ
घर घर अइहैं पितरवा दुखित होइ जइहैं त हम कैसेन पूजब।
ये रतनारे होरिलवा कतिक जिनि जनमेउ
सब सखि पूजिहैं देवरिया त हम कैसे पूजब
ये रतनारे होरिलवा माघ जिनि जनमेउ
सब सखि गंगा नहइहैं त हम कैसे जाबै।
ये रतनारे होरिलवा फागुन तुम जनमेउ
अमवा बिरिछ लदि जइहैं जाड़ौ नहिं होइ हैं।

●

कुंवना खोदाये कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
झोंकवन भरे पनिहारि तबै फल होइहैं।
बगिया लगाये कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
राहे बाटे[2] अमवा जे खइहैं तबै फल होइहैं।
पोखरा खोदाये कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
गउवा पियै जुड़ पानी तबै फल होइहैं।
पुतवा के जनमें कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
दुनिया अनन्द जब होइहैं तबै फल होइहैं।

●

हेइहो केहिकर मतवा बेहाल त बपई दुःख बेलपई हो।
नन्द घर बजत बधैया जसोदा घर सोहर हो।
हेइहौ देवकी मैया परी हैं बेहाल त बपई दुःख बेलपइं हो।
जिन रोवहु मैया तु जिनि रोवहु नाहीं तुम अनमनि हो।
मैया कंस बधन हम करिहौं दुखिया नेवजइहौं हो।

●

ये रतनारे होरिलवा चैत जिनि जनमेउ
सब सखि पुजिहैं दुर्गा मैया त हम कइसे पूजब।
ये रतनारे होरिललवा सावन जिनि जनमेउ
सब सखि पूजिहैं नाग-देवता त हम कइसेन पूजब।
ये रतनारे होरिलवा कुआर जिनि जनमेउ
घर घर अइहैं पितरवा दुखित होइ जइहैं त हम कैसेन पूजब।
ये रतनारे होरिलवा कतिक जिनि जनमेउ
सब सखि पूजिहैं देवरिया त हम कैसे पूजब
ये रतनारे होरिलवा माघ जिनि जनमेउ
सब सखि गंगा नहइहैं त हम कैसे जाबै।
ये रतनारे होरिलवा फागुन तुम जनमेउ
अमवा बिरिछ लदि जइहैं जाड़ौ नहिं होइ हैं।

●

कुंवना खोदाये कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
झोंकवन भरै पनिहारि तबै फल होइहैं।
बगिया लगाये कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
राहे बाटे[2] अमवा जे खइहैं तबै फल होइहैं।
पोखरा खोदाये कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
गउवा पियै जुड़ पानी तबै फल होइहैं।
पुतवा के जनमें कवन फल सुना हे मोरे साहेब।
दुनिया अनन्द जब होइहैं तबै फल होइहैं।

●

४. अवधीभाषी क्षेत्र

४. अवधीभाषी क्षेत्र